ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर-प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन-मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, श्रृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन-मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। -श्रृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान

१ 12 03 1962 रात्रि महाभारत काल के पश्चात् का समय

जीते रहोदेखो !, अभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। !मुनिवरों !

पूज्य महानन्द जीः गुरुजीआपका पर्ययण समय समाप्त हो रहा है !, परन्तु आज के वेद पाठ में एक वेदमन्त्र अशुद्ध उच्चारण हुआ। हम आपसे अधिक वाक्य इसलिए उच्चारण नहीं किया करते, क्योंकि गुरुओं का आदर करना हमारा कर्त्तव्य है, परन्तु एक मन्त्र की अशुद्धि होना भी तो आपने एक प्रकार का पाप ही कहा है।

पूज्यपाद गुरुदेव बेटा ऐसा तो नहीं हो सकता। !

पूज्य महानन्द जीः तो क्या गुरुजीहमने आपके समक्ष मिथ्या उच् !चारण कर दिया।

पूज्यपाद गुरुदेव बेटायह अभिप्राय नहीं। तुमने जो कुछ कहा है !, सत्य ही कहा है। तुम उच्चारण करो, वह कौन सा मन्त्र था द्वितीय उच्चारण कर दें।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जी आपका दसवां मन्त्र था। !

(मंत्र उच्चारण के पश्चात)

पूज्यपाद गुरुदेवः तो महानन्द जी यही वेदमन्त्र था। !

पूज्य महानन्द जीः हां भगवानजैसे आपने मधु विश्वान्त शब्दों का उच्चारण किया !, यह पूर्व लुप्त हो गए थे।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा, चलो, कोई बात नहीं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्बात तो बहुत है। हमसे यदि किसी स्थान पर अशुद्धि हो ! जाए, तो न प्रतीत क्या हो जाए।

पूज्यपाद गुरुदेवः चलो, महानन्द जीइस वार्त्ता को त्याग देना चाहिए !, आगे का समय व्यतीत होता चला जा रहा है। उस अमूल्य समय को शान्त कर देना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः कृपा कीजिए।

आत्मा का भोजन

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंआज ह !म सभी महानजनों से क्षमा चाहते हैं। आज एक वेदमन्त्र अशुद्ध उच्चारण हो गया। हमें इसमें कोई विरोध नहीं। महानन्द जी ने जैसा कहा हमने वैसा स्वीकार कर लिया और उस मन्त्र को द्वितीय उच्चारण कर

दिया। तो अभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। हम वेदों का पाठ कर रहे थे, और ऐसा प्रतीत होता था जैसे परमात्मा आज हमें कोई विभूति प्रदान कर रहे हों। हम उस परमात्मा को 'दुर्गे' शब्दार्थो से पुकार रहे थे। आज के वेद पाठ में कई स्थानों में मग्नता आई, और क्यों आई? क्योंकि आत्मा को भोजन मिलता है। जैसे माता का प्रिय बालक माता के गुणगान गाता हुआ, मग्न हो जाता है इसी प्रकार जब यह आत्मा उस परमपिता परमात्मा का अन्तःकरण से गुणगान गाती है तो वास्तव में मग्नता उत्पन्न होती है, क्योंकि आत्मा को भोजन प्राप्त होता है। आज हमें विचारना चाहिए, हम उसी स्थान पर जावें, उसी योग्यता और महान् उसी ज्ञान को पावें, जिससे हमारी आत्मा में बल आवे, और आत्मा को भोजन मिले। तो आज हम परमपिता परमात्मा की पूजा कर रहे थे।

आज के वेद पाठ में 'दुर्गेवेति' कहा जा रहा था। देखो, परमात्मा 'दुर्गेवेति' है जो हमारे दुर्गुणों को शान्त करने वाला है। हे माताहम तेरे बालक हैं !, हमें नाना प्रकार की शिक्षा दे। हे माताहम तेरे समक्ष आवें और तेरी उस वेदवाणी को धारण कर ! अन्तःकरण को पवित्र बनाएं और अन्तःकरण में जों नाना प्रकार के हमारे जन्म जन्मान्तरों के संस्कार, पाप और पुण्य दोनों ही जमे हुए हैं वह सब समाप्त हो जावें। हमें ऐसी सत्ता को प्रदान कर।

माता दुर्गा शृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

तो मुनिवरों वह परमात्मा !'दुर्गेवेति' है और हमारे दुर्गुणों को समाप्त करने वाला है। आत्मा परमात्मा का सम्बन्ध एक महान है जैसे माता और बालक का होता है। वैसे ही परमात्मा दुर्गे है, आत्मा उसका बालक है, उसके आँगन में जाना चाहता है, परन्तु क्या करें, मानव ने जो तुच्छ कर्म किए हैं, तो माता उसे अपने आँगन में धारण नहीं करती है। क्यों नही करती है? क्योंकि माता का बालक अयोग्य होता है, महान दुराचारी हो जाता है, तो उस समय वह बुद्धिमती माता उसे स्वीकार नहीं करती। जब तक हम उस माता के अनुकूल जो उसने हमें शिक्षा दी है, अपने जीवन को बनाएंगे, तब तक वह माता हमें अपने आँगन में कदापि भी धारण नहीं करेगी, इसलिए हमें

विचारना चाहिए। उस माता के आँगन में जाने के लिए सुन्दर योजना बनानी चाहिए। जहाँ बेटासंसार को मृत्यु से और न !ाना प्रकार के दुःखों से मुक्त हो जाएंगे। यदि उस विधाता की गोद में चले जाएं तो हमारे अन्तःकरण में, हमारे हृदय में ज्ञान की अमृतधारा बह करके हम संसार को प्रकाशित करने वाले बन जाएंगे। जैसे मुनिवरों ! बालक को क्षुधा लगती है, माता अपनी लोरियों में लगा लेती है, तो उस बालक के आनन्द का पार नहीं रहता। इसी प्रकार हम माता दुर्गे के अनुकूल कर्त्तव्य करेंगे तो माता अपनी महान् आनन्द रूपी लोरियों में लगा लेगी उस समय हमारे आनन्द का भी पार न रहेगा।

तो मुनिवरोंहम दुर्गे किसको उच्चारण कर रहे थे। दुर्गे माता है !, संसार को उत्पन्न करने वाली है। महान प्राण रूपी सत्ता इस शून्य प्रकृति को देने वाली है, जिससे यह अपना कार्य करने वाली है। परमात्मा को माता और पिता दोनों ही नाम से पुकारा गया है। तर्क के अनुकूल और जब दार्शनिक विषय आता है, तो यह विचार आता है, कि परमात्मा को हम माता और पिता दोनों किस प्रकार मानें? इसका उत्तर यह है कि जो वह माता है वह शून्य प्रकृति को सत्ता देने वाली है, और सत्ता दे करके हमें जनने वाली है। वह जो माता की वाणी है, वह हमारे अन्तःकरण को पवित्र बना देती है, दुर्गुणों को नष्ट कर देती है, इसलिए परमात्मा को माता रूप से पुकारा जाता है। परमात्मा को माता रूप तो कह दिया है, परन्तु पिता कैसे माना जाए? बेटावह ! पालन करने वाला है और पालन करने के नाते परमात्मा को पिता रूप से मान रहे हैं, परमात्मा हमारा पालन करता है। हमारे लिए इस सृष्टि को प्रारम्भ कर देते हैं और उस परमात्मा के गर्भ में रहने के नाते वह परमात्मा हमारा, माता और पिता दोनों ही है। जिस समय प्रलयकाल आता है तो ये चार प्रकार की सृष्टि जो देखो, स्थावर है, जंगम है, अण्डज है, उद्भिज है, यह पृथ्वी में लय हो जाती है। और पृथ्वी जल मे लय हो जाती है जल को बेटा हिरणाक्ष रूप !से पुकारा गया है। यह महान जल अग्नि में लय हो जाता है, अग्नि वायु में रमण करती है, वायु अन्तरिक्ष में रमण करती है, अन्तरिक्ष तन्मात्राएं बन करके अम्बर में लय हो जाती है। यह सब लोक

लोकान्तर जो तुम्हें प्रतीत हो रहे है यह सब जड़ पदार्थ बन जाते है वास्तव मे तो अब जड़ पदार्थ हैं, परन्तु उनमें जो प्रकाश तुम्हें दृष्टिगोचर आ रहा है, वह इस प्रकार नहीं आएगा। आत्मा इन दोनों के मध्यम में रहता है। यह प्रकृति शून्य रूप बन करके, सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणु बन अन्तरिक्ष में रमण करते हैं और महान आत्मा परमात्मा के गर्भ में चला जाता है। आत्मा परमात्मा के गर्भ में होने के नाते उसके पश्चात् जब आत्मा की वाणी परमात्मा के समक्ष जाती है तो उस समय परमात्मा तन्मात्राओं से इस संसार को पुनः से उत्पन्न कर देते हैं, और हम कर्म करने के लिए उद्यत हो जाते है।

प्रलय काल की स्थिति

हमारे वेदाचार्यो ने अंगिरा मुनि आदि आचार्यों ने ऐसा वर्णन किया है कि जिस समय प्रलयकाल आता है उस काल में सूर्य में प्रकाश नहीं रहता, चन्द्रमा में कान्ति नही रहती, पृथ्वी में उपजाऊँ करने की सत्ता नही रहती, अग्नि में उज्ज्वलता करने की सत्ता नहीं रहती, जल में उत्सवता नहीं रहती, वायु में प्राण सत्ता नष्ट हो जाती है। जब समय आता है तो परमात्मा के नियम के अनुकूल जैसे बेटापूर्वकाल में वर्णन कर ! चुके हैं मानव का शरीर है, बाल्य अवस्था हैं, युवा है, मध्यम है और वृद्ध अवस्था है। ऐसे ही सृष्टि का काल आता है, और काल आ करके सृष्टि समाप्त हो जाती है, और सब परमात्मा के गर्भ में चले जाते हैं।

आज यदि कोई मानव यह कहता है कि यह सृष्टि किसी ने नहीं बनाई, यह तो वैसे ही अनादि है। इसको न कोई बनाने वाला है, और न नष्ट करने वाला है। तो उन व्यक्तियों ने उस वेद की विद्या का स्वाध्याय नहीं किया। आत्मा को स्वतः ज्ञान होता है, परन्तु हमारे कर्मो के वश, हमारे प्रकृति के आवेशों में आने के कारण हम उस ज्ञान को भूल बैठे हैं। उस ज्ञान को प्रज्ज्वलित करने के लिए, हमें आध्यात्मिक परिश्रम की आवश्यकता है, तब आत्मा का ज्ञान और प्रयत्न जो स्वाभाविक है वह प्रत्यक्ष हो जाएगा।

आज का हमारा आदेश प्रारम्भ हो रहा था, कि परमात्मा को 'दुर्गेवती' कहा जाता है। वह हमारे दुर्गुणों को समाप्त करने वाला है। परमात्मा को माता पिता दोनों नामों से पुकारा जाता है। अब हम महानन्द जी से प्रार्थना करेगें कि वह कल के आदेश के अनुकूल अपने प्रवचनों को प्रारम्भ करें।

पूज्य महानन्द जीः आप ही प्रारम्भ कर देते, हम आपके समक्ष उच्चारण करते क्या सुन्दर लगेंगे।

पूज्यपाद गुरुदेवः नही बेटाजैसा भी तुम्हारा व्याख्यान हो !, जैसा हमने तुमसे कल कहा था, उसी आदेश के अनुकूल अपने व्याख्यान को प्रारम्भ करो जैसा कल तुमने कहा की संसार में महाभारत के काल का समय कैसा, उसके पश्चात् का समय कैसा?

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवान जैसी आपकी आज्ञा। !

महान जनोंआज हमारा बड़ा सौभाग्य है। गुरु जी से इस महान समाज में हमें कुछ ! प्रवचन देने का अवसर मिला। हम गुरुजी से प्रार्थनाकरेंगे कि यदि हमसे किसी प्रकार की त्रुटियां हो जाएं, तो उन्हें क्षमा कर दें और भी जो ऋषिजन समाज में विराजमान हैं वे भी हमारा जो वाक्य अशुद्ध हो जावे, उसे क्षमा करें।

कल गुरुजी ने ऐसा कहा कि महाभारत के समय को हमने पाया, परन्तु उसके पश्चात् के समय को नहीं पाया, जिसमें इतनी बड़ी अज्ञानता, जो तुम उच्चारण कर रहे हो आई। तो गुरु जी ने उस काल को नहीं देखा, परन्तु हमने गुरु जी की कृपा से उस योग्यता का पाया। अपने उस अभ्यासी शरीर से सूक्ष्म, कारण और स्थूल तीन शरीरों को जाना और जानने के कारण अब तक अपनी योग स्थितियों में धारण होते चले आए हैं, उन्हीं का अभ्यास करते चले आए हैं। इस काल को जैसा हमने देखा उसके अनुसार हम अपना व्याख्यान देंगे।

वेद विद्या की लुप्तता

गुरु जीहम आपके समक्ष कुछ उच्चारण तो कर नहीं सकते !, क्योंकि आपका ज्ञान तो बहुत ही विलक्षण है। उसको पाते पाते हमारी आत्मा मुग्ध हो जाती है। आज हमारा

आत्मा, परमात्मा का प्रश्न नहीं, हमारा तो प्रश्न है कि वेद की विद्या संसार में कैसे लुप्त हो जाती है। कैसे कैसे इस काल में लुप्त होने लगी और कैसे इसका विकास हुआ।

राजा जन्मेजय का यज्ञ

गुरु जीमहाभारत के काल के पश्चात् ! यह तो आपको प्रतीत ही है, कि जब राजा परीक्षित के पुत्र जन्मेजय हुए और जिन्होंने एक सर्वस्व यज्ञ किया। जितनी उनके द्वारा सम्पत्ति थी, सब यज्ञ में अर्पण कर दी। जब गरुदेवमहाराज जन्मेजय ने यह ! निश्चय किया, कि जितनी मेरी सम्पत्ति है, वह सब यज्ञ में अर्पण हो, तो वहाँ कुछ ऐसा पाया गया, कि उस कार्य में आदि ब्राह्मणों को निमन्त्रण देकर यजन किया गया। महर्षि जैमिनी मुनि उस यज्ञ के ब्रह्मा बने और ब्रह्मा बन, उस यज्ञ को पूर्ण कराया। पूर्ण कराकर ऐसा कार्य हुआ, कि आचार्य जी ने भविष्य की वार्त्ता उच्चारण करते हुए कहा कि आपका यज्ञ सफल नहीं होगा। महाराजा जन्मेजय यज्ञमाननी सहित विराजमान थे। वहाँ एक ब्राह्मण ने मग्नता मनाई, तो उनके हृदय में यह भावना प्रगट हुई, कि यह ब्राह्मण तेरी मग्नता मना रहा है। उसने उस ब्राह्मण के कण्ठ से ऊपर के भाग को, अपने वज्र से अलग कर दिया। देखिए गुरुदेवजब उसको यज्ञशाला में ! अर्पण कर दिया, तो यज्ञ भ्रष्ट हो गया, जब यज्ञ भ्रष्ट हो गया, तो वहाँ ब्राह्मणों ने त्याग किया, कि हम कदापि भी द्रव्य न लेगें, दान के पात्र नहीं बनेंगे। जब महाराजा जन्मेजय ने यह वार्त्ता सुनी तो उन्हें ज्ञान हुआ, कि तेरे गुरु ने तुझे संकेत किया था, परन्तु तब भी तूने ब्राह्मण के शीश को समाप्त कर दिया, अब तुझे क्या करना चाहिए?

जातिवाद का प्रारम्भ

तो गुरु जी हमने ऐसा पाया है कि ब्राह्मणों को द्रव्य दे करके, भूमि का दान दे करके, वहाँ से पृथक कर दिया। वहाँ से गुरुदेव जातिवाद प्रारम्भ !हो गया। उसके पूर्व वर्ण व्यवस्था थी। जो ब्राह्मण के कर्म करने वाले थे, वह ब्राह्मण बने रहे और भगवन्इसके पश्चात् जिन्होंने त्याग दिया !, उन्हें त्यागी रूपों से पुकारने लगे। अब यहाँ से जातिवाद का भेद बन गया।

संप्रदायवाद

इसके पश्चात् भगवन्आगे काल चलता रहा !। जब अज्ञानता आई, तो ब्राह्मणों ने विद्या की सूक्ष्मता कर दी। सूक्ष्मता के कारण क्षत्रियों में जो वास्तविक शिक्षा थी, वह समाप्त होने लगी। वेद की विद्या लुप्त होने लगी। आगे काल आया, जितने संन्यासी बने, परन्तु कोई यथार्थ संन्यासी बना, तो उसकी यथार्थ विद्या को न मानना और अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर मनमानी वार्त्ता चलने लगी। जब यहाँ नाना प्रकार की जातिवाद चलने लगा, तो जो जिस कार्य को करता था, वह उसी नामों से नियुक्त होने लगा, और एक दूसरे से घृणा होने लगी। देखो, मनु महाराज ने जो भी आदेश दिया, उन पर न चलना। राजाओं में नाना प्रकार की त्रुटियाँ आ गई, दुराचार की भावनाएं आने लगीं। नाना देवियां उनके स्थान में रहा करें। यहाँ देवियों की विद्या और जो उनकी प्रतिभा थी, वह समाप्त होने लगी। उसके पश्चात् यहाँ धर्म के विषय पर सम्प्रदाय चल गए। जिससे घृणा की, उसी का सम्प्रदाय पृथक बन गया।

जब यहाँ सम्प्रदाय बनने लगे तो यहाँ एक वाममार्गी सम्प्रदाय चला। हमने जो इनका दुराचार देखा, उस दुराचार को तो हम आपके समक्ष वर्णन नहीं करेंगे, परन्तु वेद की विद्या उन्होंने नष्ट कर दी। वेदों का कुछ भाष्य किया, परन्तु वह भाष्य भी अनुचित्त कर दिया, जिससे संसार में नास्तिकता दौड़ने लगी। कुछ महान व्यक्तियों ने ऐसा कहा, कि यह परमात्मा कोई पदार्थ नहीं, और न परमात्मा की यह वेद विद्या है। यह तो धूर्त हैं, यह तो महान दुराचारी और पिशाचरों ने वेद की विद्या को प्रकाशित किया है, हम इस वेद की विद्या को कदापि स्वीकार नहीं करेंगे । तो गुरुदेवजब ! वाममार्गियों ने ऐसा किया, तो वेद की विद्या लुप्त होने लगी। वह सम्प्रदाय बड़ा दुराचारी था। दुराचारी होने के कारण राष्ट्र में अज्ञानता आने लगी।

रूढ़ि से गो मेध यज्ञ

जब यहाँ नाना प्रकार के सम्प्रद्राय चलने लगे तो यहाँ एक महावीर नाम के व्यक्ति आ पहुँचे। उन्होंने अपनी दार्शनिक बुद्धि से कुछ विचारा कि यह तो बड़ा अनर्थ होने लगा है। उस काल में क्या होता था? गुरुदेवइन वाममार्गियों ने ऐसा किया कि जब !

अजामेध यज्ञ करते, अजा कहते हैं बकरी को। जैसा आपने पूर्व कहा है, अजामेध यज्ञ जब इन्होंने समझा नही तो क्या किया कि यज्ञ में अजा को लेकर वेदमन्त्र का पाठ करें, चक्षुनते शुन्धामि जिस अंग का नाम आए, उस अंग की आहुति देने लगे, और उसे अजामेध यज्ञ वर्णन करने लगे। जब गो मेध यज्ञ का वर्णन आता, तो वहाँ गो माता की आहुति देकर, यज्ञशाला में अर्पण करने लगे। यहाँ ऐसा अधोगति का काल आया। दार्शनिक समाज और वैज्ञानिक समाज तुच्छ होने लगे। वेद की विद्या लुप्त होने से सभी संसार अधोगति को चला गया। गो मेध यज्ञ को समझा नहीं, गो कहते है, पृथ्वी को और पृथ्वी की विद्या को जानना ही गो मेध यज्ञ है। उन्होंने इसको समझा नहीं। उन्होंने केवल यही समझा, कि गो मांस की आहुति दो तब ही तुम्हारा यज्ञ सफल होगा।

अज्ञानता छा जाने के कारण, आगे चलकर अश्वमेध यज्ञ होने लगे। गुरुदेवउन्होंने ! अश्वमेध का अभिप्राय, जो वेद में वर्णन किया है, कि जब राजा अश्वमेध यज्ञ करता था, तो वह घोड़ा छोड़ता था और जो उस घोड़े को रोक लेता था, राजा उसके साथ युद्ध करता था। उसके पश्चात् उसे अश्वमेध यज्ञ करने का अधिकार था। गुरूदेवहमने ! उन वाममार्गियां को देखा, जिन्होंने देखो, प्राह गणे ते अचते देखो, इनके लिंग यज्ञते महान यज्ञ मानस्य, वहाँ दुराचार, भ्रष्टाचार होने लगे। नास्तिकता आने लगी। परमात्मा को शान्त कर दिया, कि परमात्मा कोई पदार्थ नहीं।

भगवान महावीर

महावीर नाम के दार्शनिक ने दार्शनिकता से विचारा और उन्होने कहा कि अहिंसा परमोधर्मः वह दार्शनिक तो बने, वेद के कुछ अंग को तो जाना, परन्तु वेद की विद्या को नहीं जाना और न जान करके, उन्होंने कहा कि वेद की विद्या सब निरर्थक है। यह कोई वेद की विद्या का वाक्य नहीं, और न वेद कोई पदार्थ है। अहिंसा परमोधर्मः का तो कुछ पाठ किया, वेद के कुछ अंग का प्रचार किया, परन्तु उन्होंने कहा कि आत्मा परमात्मा एक ही हैं। न कोई इस संसार को बनाने वाला है और न संसार

किसी स्थान में बनता है। यह तो ऐसे ही अनादि चला आ रहा है। यह आत्मा ही परमात्मा बन जाता है।

महात्मा बुद्ध

भगवन्आगे काल ऐसा चलता रहा। नाना प्रकार की त्रुटियां आने लगीं। उसके ! वर्ष का समय 2500 पश्चात् परमात्मा ने कुछ विभूतियों को भेजा। आज से लगभग हो गया जव यहाँ महात्मा बुद्ध का आगमन हुआ। उन्होने इस संसार का कुछ निर्माण किया। द्वितीय राष्ट्रों में भ्रमण करके, उन्होंने कहा कि अहिंसा परमोधर्मः। । जब उनके समक्ष नाना वाममार्गी शास्त्रार्थ करने के लिए आए, तो उन्होंने कहा कि भाई! तुम हमें वेद का प्रमाण देते हो, जिस वेद में ऐसा प्रकरण हो, हम उस वेद को कदापि भी स्वीकार नहीं करेंगे जिसमें पापाचार हो, हिंसा हो। उन्होंने क्या विचारा? उन्होंने वेद का स्वाध्याय करना समाप्त कर दिया। वास्तव में तो वह बड़े ऊँचे थे, बड़े दार्शनिक बने। राजा थे, राजा से संन्यास धारण किया, सर्वज्ञ साँसारिक ऐश्वर्य को त्याग करके, ऐसे अगाध अन्धकार में आ कूदे। उन्होंने क्या किया? बहुत से राष्ट्रों का निर्माण किया, वेद के अंगों का पालन किया। जब महात्मा बुद्ध समाप्त हो गए, तो जो उनके अनुयायी थे, उन्होंने महात्मा बुद्ध के विचारों को न मान करके नाना प्रकार का दुराचार करना प्रारम्भ कर दिया।

महात्मा शंकरचार्य

जब दुराचार होने लगा तो भगवन्वर्ष या कुछ अधिक वर्ष हो गए 2200 आज से ! वर्ष के थे 12 जब महात्मा शंकराचार्य आ पधारे। जिस समय वह, अपनी माता से कहा मैं तो इस संसार को जगाना चाहता हूँ। यह संसार मुझे अन्धकारमय प्रतीत हो रहा है। महात्मा शङ्कराचार्य पूर्व जन्म के कुटली मुनि महाराज थे। उनकी आत्मा ने यहाँ आकार जन्म धारण किया। परमात्मा के अनुकूल ऐसी ऐसी महान् आत्मा, यौगिक आत्मा संसार में आती रहती हैं और आ करके धर्म का कुछ न कुछ पालन करा ही देती हैं। देखो, उसकी माता ने कहा, हे बेटातुझे धन्य है !, जो तूने ऐसे महान विचारों का संकल्प किया है। इन विचारों को संसार के समक्ष नियुक्त करो,

जिससे यह संसार अन्धकार से पृथक हो जाए। तो हे गुरुदेवउस महात्मा शंकराचार्य ! ने आ करके, इस संसार का निर्माण करना प्रारम्भ कर दिया। महात्मा बुद्ध और महात्मा महावीर के मानने वाले जो अनुयायी थे उनसे शास्त्रार्थ किया। मूर्ति पूजा के विषय में शास्त्रार्थ करते थे। उनका यह कथन था, कि मेरा यह नियम है, कि मैं शास्त्रार्थ में हार जाऊँगा तो मैं मूर्ति पूजक बन जाऊंगा और यदि नहीं हारा, तो तुम्हारी इन मूर्तियों को नष्ट भ्रष्ट कर दूंगा। हे गुरुदेवहमने महात्मा शंकराचार्य को ! देखा। वह शास्त्रार्थ करते थे और आत्मा, परमात्मा के विषय में और जब विपक्षी थकित हो जाते थे, तो अपने खांडे को लेकर, मूर्तियों पर आक्रमण करते थे। उनको, उनके स्थान से पृथक कर दिया जाता था। महात्मा शंकराचार्य ने बहुत कुछ उपकार किया था। धर्म का बहुत बड़ा कल्याण किया था। आत्मा परमात्मा को पृथक् मान करके, उन्होंने और बौद्धमत के अनुयायियों को चकित कर दिया। एक समय अभाव में आ करके, उन्होंने वेदान्त का पाठ किया, और वेदान्त कही महान ऊँची गहराई में जा करके, उन्होंने कहा कि भाईआत्मा और परमात्मा का भाव एक ही प्रतीत होता ! है। परन्तु फिर भी उन्होंने यह नही कहा, यहाँ भाव तो एक ही है। जैसे माता का बालक है, और माता के गर्भ में रहता है, माता के समक्ष नहीं होता, न माता को ही दिखता और न संसार को दिखता, ऐसे ही हम आत्मा जब मोक्ष में जाते हैं तो परमात्मा के गर्भ में चले जाते है परमात्मा के गुण हममें प्रविष्ट हो जाते हैं उस समय हम अपने को परमात्मा मान लेवें तो कोई हानि नहीं। परन्तु वास्तव में हम परमात्मा तो नही है। हम किसी को तभी पावेगें जब उनके गुण में रमण करेंगे, उसके गुणों की वार्त्ता उच्चारण करेंगे, अन्यथा हम किसी प्रकार भी रमण नहीं करेंगे।

मंदिर निर्माण का सुझाव

गुरुदेवशंकराचार्य ने इन विचारों का कथन किया !, तो आगें चल करके उपनिषदों का स्वाध्याय करते हुए, ऐसा कहा कि आध्यात्मिक विचारों को लेते हुए प्रतीत होता है कि आत्मा से बढ़कर भी कोई सत्ता अवश्य हैं। जब महात्मा शंकराचार्य ने वेद की स्थापना की। वेद की विद्या को ऐसा जान लिया तो नाना मत वालो से शास्त्रार्थ कर

वेद की स्थापना की वेदांगों का मन्थन किया और उनका पालन किया और एक महान समाज बना दिया। उन्होंने कहा कि देखों जैसे तुम जैनियों के और इनके मन्दिरों और स्थानां में जाते हो इससे तो तुम एक कार्य करो, कि तुम अपने मन्दिर बनाओ और उन्हीं में एकांत स्थान में विराजमान हो करके उस परमपिता परमात्मा को जानने का प्रयत्न करो, जो तुम्हारी आत्मा के समक्ष बैठा हैं, तुम्हारा पालन कर रहा है तुम दूसरे स्थानों में क्यों जा रहे हो। यथार्थ वाक्य था। सबने स्वीकार कर लिया।

ईसा मसीह

आगे चल करके भगवन्देखो !यहाँ बहुत से मत आ गए। उसके पश्चात भगवन् !, ईसा मसीह नाम के आ कूदे। द्वितीय राष्ट्र में उत्पन्न हुए, उन्होंने आ करके काशी स्थान में आयुर्वेद की शिक्षा का पान किया। आयुर्वेद का स्वाध्याय करके, इस विद्या को जाना, कि नेत्रों की दृष्टि से मानव के विज्ञान को जाना जाता हैं। भगवन्काशी ! में एक विरडी नाम के आचार्य थें। उनसे उन्होंने आयुर्वेद की शिक्षा पाई, और पा करके महान बने। इस राष्ट्र से भगवन्अपने राष्ट्र को चले गए। वहाँ जाकर उन्होंने ! अपनी विद्या का प्रचार किया, और उन्होंने निराला मत उत्पन्न किया, जिससे भगवन उनहोंने एक अच्छी प्रकार तो समझा नहीं, और जाना नहीं, परन्तु इसी में, उनका एक महान मत बन गया। उसके द्वारा क्या विशेषता थी? आयुर्वेद की विद्या जो हमने अभी उच्चारण की, उस विद्या के जानने से और योगाभ्यास करने से इसके तत्त्वों को जानना, मानो नेत्रों की दृष्टि से, मानव के अवगुणों को शान्त करने की शक्ति आ जाती है। तो भगवन्जब इसमें यह सत्ता आ गई !, तो वह बड़ा तपस्वी बना, और तपस्वी बन करके, उन्होंने वहाँ के व्यक्तियों को कुछ उद्धार किया। परन्तु भगवन उसको भी इस संसार ने समाप्त कर दिया। उन्होंने भी एक समाज बनाया और उस समाज में यथार्थ शिक्षा दे करके, वे भी चले गए। आगे उनके अनुयायियों ने उनका दुरूपयोग करना प्रारम्भ कर दिया। हे भगवन् उन्हें असली रूप में न छोड़ा। !

मुहम्मद

भगवन्आगे चल करके !, मुहम्मद नाम के एक यवन हुए। भगवन्वास्तव में देखा ! जाता है तो वह यवन ही थे। जैसा आपने वेद की विद्या में कहा है। यवनों को दैत्य कहा जाता है और वह दैत्य प्रकृति के थे एक छोटे से घर में जन्म ले करके, महान एक राजा बनने की अपेक्षा की, राजा बने। अबुबक्र उनके एक मित्र थे, परन्तु उनको अत्तुत बनाया, और बना करके मन्त्रियों से अपने नाना पाखण्डोंसे शिष्य बनाए, शिष्य बना करके, संग्राम किया, और अन्त में राष्ट्र पर उनका अधिकार हो गया। ज्ञानी काल था, विद्या थी नहीं। जब भगवन्राजा बन गए !, तो उन्होंने आसवाती नाम के वृक्ष में, एक पुस्तक बना करके अर्पण की और उसके पश्चात् राष्ट्र के महान चुने हुए, व्यक्तियों का समाज एकत्रित किया, और कहा कि भाईमुझ परमात्मा के दर्शन हुए ! हैं, और परमात्मा ने मुझे एक पुस्तक दी है, जिसको मैं महान बनाना चाहता हूँ। आज मेरे इस वाक्य को स्वीकार करो। उन्होंने उस वृक्ष का वर्णन किया। उन व्यक्तियों ने उस वृक्ष को समाप्त कराया तो उन्होंने देखा, कि उसमें वह पुस्तक वैसी ही थी। उन्हें विश्वास हो गया। हे गुरुदेवप्रहादी मनः वाचे वह उनकी विचारधारा !, जो पुस्तक में थी, वह प्रजा के समक्ष आ गई। उन्होंने सोचा कि भाईयह तो बड़ा सुन्दर ! है, और उन्होंने मुहम्मद की वार्त्ता को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार देखों, यवन मत हो गया।

उन्होंने देखो, भगवन्द्वितीय राष्ट्र पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। कितना बड़ा ! संसार मे ं अन्धकार आया। वहाँ कैसा कारण हुआ देखो, एक माह के संग्राम के पश्चात, मुहम्मद ने युनान राष्ट्र पर विजय प्राप्त की। उस संग्राम में दिवस में युद्ध करते, सायंकाल युद्ध करने वालों से कहा करते, अरे, भाईतुम रात्रि में भोजन ! किया करो, और दिवस में युद्ध किया करो। दो समय रात्रि का भोजन किया करते थे। उन्होंने उसका एक सम्प्रदाय बना लिया। गुरुदेवबड़ा अच्छा वाक्य है !, क्या उच्चारण करें, उसे वह रोजे कहा करते है। युद्ध का काल था, वह रोजे प्रारम्भ हो गए। भगवनकैसा काल आ गया !, आपको तो बड़ा कष्ट हो रहा होगा, क्योंकि आपने तो दार्शनिक समाज को देखा है, जिस दार्शनिक समाज में मानव का बहुत बड़ा

विकास होता है। यह अज्ञानता की बात कहाँ आपके आँगन में आ रही होगी, विषय बहुत लम्बा उच्चारण कर दिया, अभी तो बहुत काल रह रहा है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा उच्चारण करते चले जाओ। !

पूज्य महानन्द जीः तो हे गुरुदेववास्तव में तो हमारा बड़ा सौभाग्य है !, जो गुरु जी के प्रति कुछ उच्चारण कर रहे हैं। गुरुदेवदेखिए आगे चलकर कैसा अज्ञान छाया। ! जब यवनों ने यहाँ आकर के जिस राष्ट्र में आपकी और हमारी यह आकाशवाणी मृत्त मण्डल मे जा रही है और जिस स्थान पर महाराजा युद्धिष्ठिर ने किसी काल में यजन किया था, आक्रमण किया। भगवन्हम एक वार्त्ता और उच्चारण करना चाहते ! है। जब यहाँ जैन मत आया और नाना प्रकार की अज्ञानता फैली, तो भगवन् ! जैनियों ने यहाँ जो सतोयुग के काल के त्रेता के महान हमारे दार्शनिकों के वाक्य थे, ग्रन्थ थें, अग्नि में भस्म कर दिए। जब यह पुस्तकालय भस्म हो गए, तो अब क्या करें, अज्ञानता तो आनी थी। वेद किस प्रकार बच गए ? वेद किसी के गृहों में रह गए, किन्हीं बुद्धिमानों के कण्ठ रह गए, उन्होंने वेद की विद्या का प्रसार किया। परन्तु यहाँ सब पुस्तकालय समाप्त हो गए। अहा !वह विद्या कहाँ से लाएं जैसा हम आपसे प्रश्न किया करते हैं कि वह प्रमाण अब क्यों नहीं मिलते? वह इसीलिए नहीं मिलते, क्योंकि वह पुस्तकालय ही अब समाप्त हो चुके हैं, जो हमारे पूर्व दार्शनिकों के वाक्य थे।

हे गुरुदेव आगे चल करके यहाँ यवन आए और भी नाना !सम्प्रदाएं चले। जातिवाद का बहुत बड़ा विवाद चल गया। राष्ट्र में जो कार्य हो, वह जातिवाद से चलने लगा। वर्ण व्यवस्था की जो विद्या थी, वह लुप्त होने लगी। उसके पश्चात् गुरुदेवआगे जो ! काल आया, देखो, यहाँ यवन आ गए जैसे मुहम्मद ने अपने जीवन में ग्यारह संस्कार कराए। ऐसे ही इन विचारधारा वालों ने आ करके इस संसार को अधोगति में पहुँचा दिया। हमारी जो माताएं थीं, भगिनियां थीं, वह बड़ी विदुषी थीं। महान सीता का आदर्श, उनके समक्ष था परन्तु विद्या लुप्त होने के नाते, माताओं की विद्या समाप्त हो गई। महान पुस्तकालय, तो जैनियों के काल में समाप्त हो चुके थे। यवनों का काल

आया, तो उसको और समाप्त कर दिया गया, और अज्ञानता फैला दी। माताओं को बड़े बड़े कष्ट देकर तथा उनके साथ महान् दुराचार कर इस संसार को अधोगति में पहुँचा दिया।

गोस्वामी तुलसीदास

जब यवनों ने महान विद्यालय समाप्त कर दिए, तो यहाँ गोस्वामी तुलसीदास जी आ गए। उन्होंने पुरुषार्थ किया और विद्या का कुछ प्रसार किया। बिचारे इतने बुद्धिमान तो थे नहीं, परन्तु काव्य उनका बहुत सुन्दर था। काव्य सुन्दर होने के नाते उनकी वार्त्ताओं को स्वीकार कर लिया। धर्म का प्रचार होने लगा।

स्वामी दयानन्द

भगवन्उसके पश्चात् अभी सौ वर्ष भी नहीं हुए हैं एक दयानन्द नाम के आचार्य आ ! पहुंचे। जब उन्होंने संसार को इस प्रकार का देखा, तो क्या किया? गुरुदेवहमने तो ! कुछ ऐसा अनुभव किया है कि द्वापर काल में जो महर्षि अटूटी थे उनकी आत्मा ने आ करके दयानन्द के शरीर में प्‌्रवेश किया। यह संसार बड़ा अधोगति में चला जा रहा था। उन्होंने माता पिता का ऐश्वर्य त्याग दिया, और पूर्व ऋषियों का जो मार्ग था उसे अपनाया।

जैसे शंकराचार्य ने पूर्व महान आत्माओं के कथन को अपनाया, ऐसे ही इस महान दयानन्द ने यहाँ आ करके संसार में ज्ञान का प्रसार किया। वह नाना मूर्तिपूजकों के समक्ष पहुँचे, शास्त्रार्थ किया। जैसे शंकराचार्य के ऊपर बड़ी बड़ी महान आपत्तियां आयी, इसी प्रकार दयानन्द के समक्ष आयी, परन्तु पूर्वजन्म के ऋषि होने के नाते, इस संसार का उत्थान करने के लिए, परमात्मा के नियमों का पालन करने के लिए वह संसार में आए और वेद की विद्या को खोजा और जहां भी वेद की विद्या मिली ग्रहण किया। ग्रहण करके, नाना पर्वतों में भ्रमण कर, उन्होंने वेद की विद्या का प्रसार किया। उन्होंने उन शास्त्रों की वार्त्ताओं को अपनाया, जिन्हें हमारे जैमिनि मुनि ने, हमारे गुरु ब्रह्मा आदि सबने अपनाया। स्वामी शंकराचार्य ने जिस मत को माना और जिस दार्शनिक विषय को माना, वह उन्होंने मान करके, इस संसार में प्रसार प्रारम्भ

कर दिया। उन्होंने बड़ी ऊची वेद की विद्या को समत्त कर दिया, परन्तु जो मानव समझ नहीं पाते, वे न समझें। परन्तु वह वेद की विद्या के एक बहुत ही ऊँचे महान माने गए हैं।

भगवन्आधुनिक काल में तो उन्हें महर्षि नाम की उपाधि प्राप्त हो गई है !, क्योंकि आधुनिक काल में ऐसा महान व्यक्ति जब आ जाता है तो संसार को कुछ देकर चला जाता है। आचार्य दयानन्द के सिद्धांत में बड़ी ऊँची वार्त्ता है, जिसको हर व्यक्ति को मानना चाहिए। देखो, इस वेद की विद्या में कुछ लुप्तता हो गई है। इसकी कुछ संहिताएं नहीं मिली हैं, जिनका अभी तक प्रसार नहीं हुआ है। कुछ ऐसा तो माना है कि आचार्य दयानन्द ने चारों वेदों की संहिताओं को तो नियुक्त कर दिया है, परन्तु जब न मिलें, तो बिचारे कहाँ से लाते। उनका तो जितना ज्ञान था उसका प्रसार कर गए। जैसे गुरु जी के द्वारा ज्ञान का समुद्र है ऐसे ही उनकी विद्या समुद्र थी क्योंकि पूर्व अटूटी नाम के ऋषि थे, उन्हीं की आत्मा ने आ करके, इस संसार का कल्याण करने के लिए जन्म लिया।

हे गुरुदेवकलियुग ! का तो काल था ही। ईसा को मानने वाले व्यक्ति से, जिनका यहाँ राज्य था, उनसे और यवनों इत्यादियों से शास्त्रार्थ किया। भगवन्उनकी विद्या ! अब तक चल रही है, परन्तु उनके अनुयायी, उनके वाक्यों को न समझकर उनको अन्धकार में गिरा रहे हैं। तो यह है भगवन्संसार का अन्ध !कार, जो आता चला जा रहा है।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा, महानन्द जी। यह कैसे उच्चारण कर दिया, कि आधुनिक काल में अन्धकार गिरा रहे हैं, उनका और उच्चारण कीजिए।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्वह यह है कि आचार्य दयानन्द ने ऐसा कहा है !, कि सत्य को मानने में किसी प्रकार की कोई हानि नहीं। परन्तु आधुनिक काल में उनके मानने वाले कुछ व्यक्ति ऐसे आ पहुँचे हैं, जिन्होंने सत्यता को स्वीकार करना ही समाप्त कर दिया है। जब वह सत्यता को नहीं मानते, तो उनके वाक्यों में या उनके बनाए हुए जो महान नियम हैं, उनको समाप्त करना प्रारम्भ कर दिया है। यथार्थ को

यथार्थ मानने में, किसी को किसी प्रकार की आपत्ति नहीं। उसको मान लेना चाहिए। संसार में बहुत सी ऐसी वार्त्ताएं हैं, जो बुद्धि का विषय नहीं, बुद्धि से परे का विषय है आज अनुसंधान करो, बुद्धि से परे की वार्त्ताओं को विचारो, योगाभ्यास करो, आत्मा को परमात्मा के समक्ष पहुँचाओ। योग को जान करके, संसार को जानने वाले बनो। तो यह है भगवन्जो आपने !, हमसे अनुरोध किया था। यहाँ महान आए, तुच्छ भी आए और इस संसार को अधोगति को पहुँचा दिया।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटातुम्हारे वाक्य तो बड़े ऊँचे। हम तो यही मान बैठे !, कि महानन्द जी तो कुछ जानते ही नहीं। आज तो महानन्द जी ने अपने ज्ञान को पोथी ही ले ली। चलो, कोई बात नहीं यह तो संसार की गति है, चलती रहती है। हमें तो परमात्मा की उपासना करनी चाहिए, संसार की त्रुटियों पर दृष्टि नहीं पहुँचानी है। जिस कार्य के लिए हम आए हैं, वह कार्य हम भी करके समाप्त हो जाएंगे। संसार की गति है, हमें त्रुटियों पर नहीं जाना चाहिए। आध्यात्मिक विज्ञान तो बेटातब तक ! नहीं आएगा, जब तक राजा स्वयं ही आध्यात्मिक, वैज्ञानिक नहीं होगा। यदि राजा आध्यात्मिक विज्ञान को जानने वाला होगा तो उसकी प्रजा भी उस विज्ञान को जानने वाली होगी। जिस राष्ट्र में राजा आध्यात्मिक न होगा, उसका राष्ट्र सात जन्म में भी आत्मिक उत्थान करने वाला न बनेगा। यह महाराजा उद्दालक मुनि महाराज का एक आदेश है। याज्ञवल्क्य से राजा जनक ने एक प्रश्न किया कि भगवन्मेरा राष्ट्र स्वर्ग ! कैसे बन सकताहै? तो महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा, राजन्जब तक तुम योगी नहीं ! बनोगे, ब्रह्मज्ञानी नहीं बनोगे तब तक तुम्हारे राष्ट्र की प्रजा कभी ब्रह्मज्ञानी नहीं बनेगी। राजा जनक ने वही कार्य किया। बेटातुमने देखा होगा उनका राष्ट्र !, कितना स्वर्ग तुल्य था। उनके राष्ट्र में आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान दो विज्ञान थे उनके राष्ट्र में दुराचार और और नाना अज्ञानता न थी हमारा यह कथन नहीं कि हम भौतिक विज्ञान को न जानें, हमारा तो कथन है कि दोनों प्रकार की विद्याओं को जानो और जान करके अपने राष्ट्र का कल्याण करो। अपने काल को ऊँचा बनाओ।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव यह वाक्य आपका सत्य है। !

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीहम एक वाक्य और उच्चारण करना चाहते हैं !, कि जैसे अभी अभी तुमने मुहम्मद और ईसा का वर्णन किया, इन दोनों में कौन महान था।

पूज्य महानन्द जीः यदि यथार्थ माना जाएँ, तो इन दोनों में से कोई नहीं था।

पूज्यपाद गुरुदेवः यह क्यों बेटा?

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेववह यह है !, कि अपने स्वार्थ के पीछे लग गए। मुहम्मद ने तो कई संस्कार किए और स्वार्थी थे, और ईसा इतना महान था, वह ब्रह्मचारी था परन्तु अपने स्वार्थ के अनुकूल होने के नाते उसको अधिक महान नहीं कह सकते।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा महानन्द जीजैसे तुमने शंकर और दयानन्द का वर्णन ! किया, इनमें कौन महान था। ?

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेवकाल के अनुकूल दोनों ऊँचे थे। उन्होंने र !ाष्ट्र का और समाज का कल्याण किया।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटाजैसा तुमने बुद्ध और महावीर को कहा !, इन दोनों में कौन ऊँचा?

पूज्य महानन्द जीः भगवन्दोनों ही ऊँचे थे !, परन्तु अज्ञानता यह थी कि यह भी अपने स्वार्थ के बस हुए। संसार का तो इन्होंने बहुत कुछ कल्याण किया, परन्तु अज्ञानता यह थी कि इन्होंने वेद का प्रसार नहीं किया।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा चलो, यह तो समय की परिस्थिति है। जैसा समय, वैसा ही वहाँ के व्यक्ति और वैसे ही उसका काल। इसमें व्याकुल होने का वाक्य नहीं, कि संसार अधोगति को चला गया। बेटायह कोई न !वीन वाक्य नहीं। जो वाक्य महाराजा कृष्ण ने कहा था वह वाक्य बेटा यथार्थ था। !

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेवकल समय देंगे !, तो ज्ञान के विषय में वर्णन करेंगे, कि आधुनिक काल में कैसे कैसे व्यक्तियों पर कैसे आरोप?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाकल नहीं !, किसी और समय।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवान जैसी आपकी इच्छा। !

पूज्यपाद गुरुदेवः महाराजा कृष्णा ने कहा था कि आगे जो काल आने वाला है, उस काल में महान् को महान नहीं माना जाएगा, उन पर नाना प्रकार के आरोप। जहाँ तक आत्मा, परमात्मा का विषय है, महर्षि शंकराचार्य ने और महर्षि दयानन्द दोनों ने ही जैसा मुझे महानन्द जी ने निर्णय दिया, महान् व्यक्तियों की विद्या तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर दी। उनकी वार्त्ताओं को मानना ही तुम्हारा गौरव है। अपने जीवन पर, अपनी विद्या पर गौरव होना चाहिए। जब हमारी विद्या पूर्ण होगी, तभी हमारा राष्ट्र ऊँचा बनेगा। वह विद्या कौन सी है? वह वेद की विद्या है। जिस वेद की विद्या से भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों को जानकर अपने समय का उत्थान किया करते हैं। तो यह आज का हमारा आदेश, अब समाप्त हो गया है। महानन्द जी ! तुम्हें, बार बार धन्यवाद है, आज तुमने उस काल का वर्णन किया, जिस काल में अज्ञानता आई।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्समय सूक्ष्म होने के कारण पूर्ण तो न दे सके !, त्रेता के समय में राजाओं की वार्त्ता और आधुनिक राजाओं की वार्त्ता आती, तो आप चकित रह जाते।

पूज्यपाद गुरुदेवः चलो बेटा ओर कोई समय दिया जाएगा। !

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव कल का समय दीजिए। !

पूज्यपाद गुरुदेवः कल का समय, बेटाऐसा नहीं। कल तो हमारा कुछ आत्मा ! परमात्मा का विषय आ रहा है। और आत्मा परमात्मा का भाव हमारे हृदय से हुआ करता है।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन्आपको जब कहा करते हैं !, तो आप समय दिया ही नहीं करते। आपको तो और समय प्राप्त हो जाता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअच्छा ....., तो बेटाइसका अभिप्राय यह है !, कि हमें इस समय ज्ञान की प्रगति करा रहे हो

पूज्य महानन्द जीः हां भगवन्जिस ज्ञान को आप नहीं जानते !, उसे हम ज्ञान करा दें, तो क्या हानि है।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं, कोई हानि नहीं। अच्छा, धन्यवाद। वेद पाठ।

२ 15 05 1962 योग्य बनने का प्रयत्न करें

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। हम तुम्हारे ! समक्ष मनोहर वेदों का गान गा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन जिन वेद मन्त्रों का हमने अभी अभी तुम्हारे समक्ष पाठ किया। आज हम उस प्रभु को ब्रह्म रूपों से पुकार रहे हैं, गर्भिणी माता के नामों से उच्चारण कर रहे हैं। वह माता हमें जन्म देने वाली है। वह हमारा कल्याण करने वाली माता सरस्वती है। हे माता सरस्वती! तू हमारे कंठ में विराजमान हो, जिससे हमारा कंठ माधुर्य हो और हम अपने जीवन को ऊँचा बना सकें।

कामधेनु

मुनिवरोंआज हमारा व्याख्यान तो सूक्ष्म है। आज तो महानन्द जी ही अपने ! महत्त्वपूर्ण विचार तुम्हारे समक्ष प्रकट करेंगे। आज हम उच्चारण करना चाहते थे, कि जब मानव इस संसार से उत्थान होकर जाता है, तो वह अमृत लोक में चला जाता है, राजा इन्द्र के राष्ट्र में इन्द्रपुरी में चला जाता है। हमारे महर्षियों ने कहा है कि इन्द्र लोक में महाराजा इन्द्र के द्वारा, एक कामधेनु है। वशिष्ठ मुनि महाराज और माता अरूणधती दोनों ने अनुरोध किया तो महाराजा इन्द्र ने वशिष्ठ मुनि को कामधेनु गो प्रदान की। मुनिवरोंआज हमें विचारना चाहिए !, कि वह इन्द्रलोक की कौन सी कामधेनु है। आज हम इन गूढ़ वाक्यों को, जो वेदवाणी में आते हैं, विचार नहीं पाते हैं। अहाजब मानव संसार में आता है !, कामधेनु को प्राप्त करने के लिए आता है। जिसे प्राप्त कर, मानव जीवन का कल्याण हो जाता है।

मुनिवरोंकामधेनु किस को कहा जाता है !? कामधेनु नाम ही यह सरस्वती है, कामधेनु नाम ही यह गायत्री है। जब मानव इस संसार में आ करके, उस कामधेनु अमृती को धारण करता है, अपने कण्ठ में उसके दुग्ध को पान कर लेता है, तो वास्तव में उसका कल्याण हो जाता है। आज हमें उसका पान करना चाहिए। मुनिवरोंजब करोड़ों गायत्रियों का गान किया जाता है !, तो उसमें अमृतधारा प्राप्त हो

जाती है। इसी प्रकार महाराजा वशिष्ठ मुनि महाराज और माता अरूणधती के द्वारा वह महान कामधेनु थी, जिस कामधेनु से जो चाहते थे, वही मनोकामना पूर्ण होती थी। राजा इन्द्र के राष्ट्र में रहने वाले, देवता कामधेनु के पदार्थो का आहार करके, अपने जीवन को मधुर बना लेते हैं और महान बन करके अमर लोकों में पहुँच जाते हैं।

बेटाआज मानव यह मान बैठा है !, कि अमृत कोई पदार्थ नहीं है, इन्द्र लोक भी कोई पदार्थ नहीं है। आज मानव इस पर दृष्टि नहीं पहुँचाता। यह तो विचारने का विषय है। इसको कोई अशुद्ध रूपों से उच्चारण करो या कोई यथार्थ रूपों से उच्चारण करो। जिसे हम माधुर्य लोक कहा करते हैं, ब्रह्म लोक कहते हैं वहाँ ब्रह्म का वास रहता है। हमारे यहाँ लोक माने गए हैं, जहाँ कामधेनु का शासन रहता है, उन्हीं का पदार्थ हमें प्राप्त होता है, और उसी दुग्ध को पान करके, उन लोकों से पार हो जाते हैं। आज हमारा इतना समय नहीं जो पूर्णरूप से अपना व्याख्यान दे सकें। आज तो महानन्द जी अपने विचार तुम्हारे समक्ष नियुक्त करेंगे, जैसा हमने कल कहा था। हम तो परमात्मा से प्रार्थना कर रहे थे, कि हे परमात्माहमें उस महान धेनु को प्राप्त ! कराओ, उस महान् सरस्वती, वेदवाणी का पान कराओ, जिसके दुग्ध को पीकर, हम अमर हो जाते हैं। ब्रह्म लोकों में क्या, अमृत लोकों को प्राप्त हो जाते हैं। आज हम यह नहीं चाहते, कि हम ऐसे ही बने रहें। हम तो चाहते हैं, कि हमारे जीवन का उत्थान हो, हमारा जीवन आपकी शरण में हो, हम निर्द्वन्द्व रहें। तो मुनिवरोंअब हम ! महानन्द जी से अनुरोध करेंगे कि वह अपने विचार हमारे समक्ष नियुक्त करें।

गुरुदेव का जीवन और प्रवचन

पूज्य महानन्द जीः धन्यवादआज हमारा हृदय प्रातः मना रहा है !, कि आज हमारे गुरुजी का आदेश हुआ। जिज्ञासु या शिष्य का पूर्व जन्मों का संस्कार होता है, जो ऐसे महान गुरु हमारे समक्ष, अपने महान विचारों को नियुक्त किया करते हैं और हमारी आत्मा तृप्त किया करते है। आज गुरुजी का आदेश मिला। हम इस योग्य तो नहीं हैं, कि इस सूर्य के समक्ष आ करके हम अपना प्रकाश दें। इनके समक्ष हम

अपने क्या विचार प्रकट कर सकते हैं, परन्तु आज हृदय बड़ा गद् गद् हो रहा है, कि जो आज गुरुजी का ऐसा आदेश मिला और ऐसा प्रतीत हो रहा हे, जैसे हमारा पूर्वजन्म होने वाला हो। जब गुरु का ऐसा आदेश मिला हो, तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपना वाक्य अवश्य प्रकट करें। हमारा उच्चारण करना क्या है? हम नित्यप्रति मृतमण्डल का भ्रमण किया करते हैं, अन्तरिक्ष में रमण करते हैं। गुरु जी के समक्ष जब आना चाहते हैं तो उस समय अन्तरिक्ष में वायु के समक्ष बहुत से विद्वत् समाज को आकर्षित कर लेते है। आज यह एक आश्चर्यजनक वाक्य हो रहा है। यह कोई नवीन वाक्य नहीं, यह तो हमारे गुरु जी का न प्रति पूर्वजन्म का कौन सा अभागा समय बन गया है, जो विद्वत् समाज को ऐसा होना पड़ रहा है। यदि वह पूर्व को भांति विद्वत् समाज में होते या वह विद्वत् समाज इनका होता, तो आज इनकी यह स्थिति ही क्यों होती। यह बड़ा खेद का वाक्य है। वास्तव में हमारे वाक्य जहाँ मृतमण्डल में जा रहे हैं, वहाँ के मानव के लिए यह बड़ा आश्चर्यजनक एक वाक्य बन रहा है। परन्तु कोई आश्चर्य नहीं है। रही यह वार्त्ता, कि आधुनिक काल के व्यक्ति, विद्वत् समाज, कहता है कि यह कोई वाक्य नहीं, परन्तु यह महान हमारे गुरु जी का मनोहर शरीर है, जिसके द्वारा हमारी यह आकाशवाणी जा रही है, यह बालक जो अपनी सुषुप्ति अवस्था में वेदों का व्याख्यान दे रहा है, यह वेदों का वाक्य नहीं? परन्तु जब हम किसी विद्वान से प्रश्न करते हैं, तो प्रश्न के उत्तर में उसकी मधुवाणी शान्त हो जाएगी।

देखो,एक वार्त्ता हम जानना चाहते हैं !, कि यह वेद वाक्य नहीं तो और क्या है? तुमने कौन कौन सी संहिताओं को जाना है। रही यह बात, कि वेदवाणी अशुद्ध होती है। हमारे गुरुवर विद्वत समाज में जो वाक्य उच्चारण किया करते हैं, वह सब यथार्थ हैं। परन्तु वह जो शरीर है, उस वाणी में देखो, अभौतिक शक्ति के कारण वह वाक्य, जाते जाते अशुद्ध हो जाते हैं। वाक्यों का अद्भुत रूप बन जाता है। जैसे आज हमारा एक मधु आदेश चल रहा है। हम इस योग्य तो नहीं कि गुरुजी के समक्ष कोई वाक्य उच्चारण करें।

आज का मानव यह भी कह रहा है, कि न प्रतीत यह महानन्द जी का आत्मा कैसे बोलता है? एक शरीर में दो आत्माएं कैसे आ जाती है? अरे, आज के विद्वत समाज में तार्किकता रह गई है, गम्भीरता का लेशमात्र भी नहीं रहा है। जब मानव में गम्भीरता आ जाती है, अपने आध्यात्मिकता को विचारता है, तो उस काल में विचार आता है कि यह क्या पदार्थ है? आज का मानव भौतिक विज्ञान को ही माने बैठा है। आध्यात्मिक विज्ञान को कोई महत्वदायक नहीं मान रहा है। क्या कारण है? इसका मुख्य उद्देश्य यह ही है कि आज का मानव अपने कर्त्तव्य से, अपने आहार व्यवहार से इतना तुच्छ बन चुका है कि अपनी तार्किक बुद्धि को ही बुद्धि समझ रहा है और यह नहीं विचारता कि आध्यात्मिक विज्ञान भी कुछ महत्वपूर्ण है या नहीं। हमारा व्याख्यान या गुरुजी का आदेश, यह सब आध्यात्मिक विज्ञान के अनुकूल हैं। प्रश्न आता है, कैसे हो रहा है?

मुनिवरोंअन्तरिक्ष में सूक्ष्म शरीर द्वारा महान् आत्माओं से विनोद होता है। यह जो ! आत्मा हमारे गुरुजी के शरीर में विराजमान हो रहा है, जो आज संसार में अज्ञानी बनी बैठी है, पुनरुक्ति होती है, और उस सूक्ष्म शरीर वाले विद्वत मण्डल में जाकर वह ज्ञान प्रबल हो जाता है और इनके पार्थिव शरीर द्वारा गुरुजी के और हमारे व्याख्यानों का इस मृतमण्डल में प्रसार हो रहा है। यह है हमारा आध्यात्मिक विज्ञान। आज मानव यह विचार कर लेवे कि मैं इस तार्किक बुद्धि से इसको विचार लूं, तो कदापि नहीं जानी जाएगी। इसका क्या कारण है? क्योंकि मानव में गम्भीरता नहीं, केवल तार्किकता रह गई है, कि यह वेदमन्त्र नहीं। वेदमन्त्र तो यथार्थ हैं, परन्तु आज के वेदमन्त्रों से क्यों नहीं मिलते?

वेदमन्त्र

क्या इसका कारण यह नहीं कि आज का तार्किक बुद्धि वाला ही वेदमन्त्रों से मिलान कर रहा है परन्तु हमने भी गुरुजी के मन्त्रों का वेदों से मिलान किया है और देखा है कि कुछ वेदमन्त्र मिल जाते हैं परन्तु पूर्ण मन्त्र वेदों में नहीं मिलते, इसका कारण क्या है?

देखो, मुनिवरोंसतोयुग क !ाल में जब ब्रह्मा का काल था, ऐसी महानता आई, कि मूल वेद तो चार ही रहे, परन्तु उनकी संहिताएं और बन गई 1127। कैसे बन गई? यह भी ऋषियों का एक महान् विशेषण है। जिस ऋषि ने, जिस एक विषय को लिया, उसी की संहिता बन गई। हमारे गुरुदेव ने भी त्रेता काल में जिस समय राजा दशरथ के द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ कराया, उस पुत्रेष्टि यज्ञ की संहिता है। जिसे शृंग संहिता कहते हैं। आज जब मानव यही विचार लगाए, कि वह संहिताएं कहाँ हैं?तो हम कहाँ से खोजकर लाए।

तो मुनिवरोंयह है आज का हमारा आदेश !, जो चल रहा था। हमारे गुरुजी के पिता विभाण्डक ऋषि ने यह सोचा कि मैं अपने महान बालक को ब्रह्मचारी बनाऊंगा। उसी बालक की आत्मा का आज मृतमण्डल में प्रसार हो रहा है। जिसे मुनिवरों 178 !वर्ष तक देवकन्या का ज्ञान भी नहीं था, आज यह बालक बना बैठा है। क्या करें, आज का समाज तो कुछ नहीं। आज का संसार तो बड़ा आश्चर्यजनक प्रतीत हो रहा है। हमारा भाग्य है, दुर्भाग्य है, कि ऐसे काल में ऐसी वार्त्ताएं, अपवाक्य प्रकट हो रहा है। हम कहाँ तक इस वाक्य को प्रकट करें। गुरुजी के समक्ष हम उच्चारण करने के तो योग्य नहीं। हम संहिताओं का प्रसार कर रहे थे। आज हमने संसार का बहुत 1127 सा भ्रमण किया और आधुनिक वेदमन्त्रों को देखा, चारों वेदों में भगवन्लगभग बीस ! हजार मन्त्र हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा!

ऋषि दयानन्द का पुरुषार्थ

पूज्य महानन्द जीः तो गुरुजीलगभग बीस हजार मन्त्र चारों वेदों में हैं। इसमें यह ! भी है कि पाणिनीय मुनि के व्याकरण के अनुकूल वह वेदों का पाठ करते हैं। परन्तु मुनिवरोंदेखो !, हमारे गुरु जी ने गुरु ब्रह्मा के महान व्याकरण को जाना और उसी के अनुकूल वह वेदों का प्रसार किया करते है। इसलिए आज के वेदपाठियों के, तार्किक बुद्धि वालों के, कण्ठ नहीं आते, उनके विचार इनसे भिन्न रहते हैं। आज का मानव यह भी मान बैठा है हमने भी गुरु जी से ऐसा सुना है कि अब से कुछ काल

पहले पूर्व यहाँ दयानन्द नाम के आचार्य आ पधारे, जिन्होंने कुछ महान वेदों को जाना और कुछ संहिताओं को एकत्रित किया। आज का तार्किक समाज यही माने बैठा है कि जो दयानन्द आचार्य ने कर दिया, वह ही यथार्थ है। वास्तव में जितना कुछ उन्होंने किया, यह यथार्थ है, बुद्धिपूर्वक है। परन्तु आज का मानव उनकी वार्त्ताओं की गम्भीरता पर दृष्टि नहीं पहुँचाता। आज का तार्किक बुद्धि वाला उनके विचारों से पृथक हो चुका है। हम यही विचार लगाए बैठे रहें कि जो मानव कहता है, वह ही यथार्थ है, तो मानव की बुद्धि सीमित हो जाती है। आज मानव की बुद्धि सीमित है। परन्तु आज हम उनके बड़े आभारी हैं। उन्होंने बड़ा ऊँचा ज्ञान हमारे समक्ष नियुक्त किया, वह मानने योग्य है। परन्तु क्या करें? आज का मानव तो उसके ऊपर भी नहीं चल रहा है। परमात्मा की आज्ञा के अनुकूल वेद का प्रसार करने के लिए महान आत्माएं आती हैं। आज यह हमारा दुर्भाग्य नहीं, तो और क्या है, कि उन्हें कष्ट दें करके, नष्ट भ्रष्ट करके, उनकी आज्ञाओं के अनुकूल भी नहीं चलते। उन्होंने जो कुछ किया, वह यथार्थ किया, परन्तु रही यह वार्त्ता, कि वेदों की 1127 संहिताएं हैं।

पैंतीस हजार वेदमन्त्र

आज हमने बहुत सा खोजा, कण्ठ तो नहीं रहा, चारों वेदों में लगभग बीस हजार मन्त्र हैं। देखो, चारों वेदों में लगभग पैंतीस हजार मन्त्र हैं, वह कहाँ हैं? तार्किक बुद्धि वाले प्रश्न करते हैं, कि इतने मन्त्र कहाँ हैं, जो यह 15, मन्त्र दृष्टिगोचर नहीं हो 000 पा रहे हैं। यह कहाँ मिलेंगे? आज हम यह तार्किक मनुष्यों से प्रश्न करते हैं तो उनकी बुद्धि शान्त हो जाती है। उनकी तार्किकता समाप्त हो जाती है। वह कहेंगे कि जो ऋषि दयानन्द ने कहा है, वह यथार्थ है और हम उन्हीं के अनुकूल चल रहे हैं। अरे, मानवयह तो यथार्थ है !, कि उन्होंने कहाँ कहाँ से निधियों को खोजा और हमारे समक्ष नियुक्त कर दिया। परन्तु तुम्हारा दुर्भाग्य ऐसा है, कि तुम उसके अनुकूल भी नहीं चल रहे हो। आज के मानव के समक्ष तो परमात्मा भी या कोई ब्रह्मा भी बन करके वेदों का प्रसार करने लगे, तब भी यह संसार नहीं मानेगा। उसे भी नाना प्रकार

की ठोकरें, नाना प्रकार के कष्ट और वज्रों से समाप्त कर दिया जाएगा। उनका संसार में चिन्ह भी न रहेगा। आज का मानव तो ऐसा बन रहा है। आगे तो ऐसा काल आने वाला है, कि हमारे जो गुरुजी का शरीर है, इस पर न प्रति क्या कष्ट आएं। क्या क्या वज्रों का प्रकोप हो, यह तो आज हम उच्चारण नहीं कर सकते। यह तो गम्भीर विषय है, इसे तो हम उच्चारण नहीं करेंगे। आज तो हम गुरुजी के आदेश के अनुकूल उच्चारण कर रहे हैं।

आज हम यह नहीं कहते जो कुछ आचार्य ने कहा है, वह यथार्थ नहीं। हम तो बलपूर्वक कहते हैं कि उन्होंने जो कुछ भी कहा है, गम्भीरतापूर्वक, आत्मिक बल के अनुकूल कहा है। परन्तु आज मानव उनके अनुकूल नहीं चल रहा है। उससे विपरीत हो चुका है। आज कोई भी महान आत्मा आ जाए, प्रसार करके चली जाएगी। यह मानव तो ऐसा है, जैसे हमारी यह आकाशवाणी मृतमण्डल में जा रही है, आज का संसार हमारे गुरुजी को कहा करता है, कि अरे, हमें तो यह बड़े महान प्रतीत होते हैं। जैसे यह ब्रह्मचारी इस प्रकार का स्वांग ही करता हो, यह तो कोई आश्चर्यजनक बात नहीं। आज का मानव यह कह दे, तो इससे हमारे ऊपर किसी प्रकार का कष्ट नहीं और न किसी प्रकार की कोई आपत्ति ही आती है।

हम अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा देखा करते हैं, कि गुरुजी का आत्मा आज ऐसा पात्र बन बैठा है। यह भी पूर्व जन्मों का एक महान विशेषण है। आज इस अवस्था में गुरुजी का जो मृतलोकी शरीर है, महान मूर्ख बना बैठा है। वास्तव में मूर्ख है? परन्तु देखो, मानवउस आत्मा का !, परमात्मा का ऐसा ही विधान है। हमें बड़ा आश्चर्य आता है, कि आधुनिक काल में ऐसा जीवन कैसे व्यतीत हो रहा है। ऐसा मधु वाक्य कैसे उच्चारण हो रहा है। बड़ा आश्चर्यजनक वाक्य है। गुरुजी तो उच्चारण कर रहे हैं, कि प्रशंसा न करो।

तो हम क्या उच्चारण कर रहे थे, कि हम पैंतीस हजार वेदमन्त्रों को देखा करते हैं, और खोजा करते हैं। आज भी हमें यह प्रतीत हो रहा है, कि हमें कितनी संहिताएं मिल रही हैं। आज देखो, संसार में दो सौ सत्ताईस 227)) संहिताएं लुप्त हो रही हैं।

क्या करें, उन संहिताओं को कहाँ से लाए। महान गुरुजी ने तो कहा था, हम उच्चारण करेंगे, कि वे संहिताएं कहाँ मिल सकती हैं? परन्तु इसका उत्तर आज हम दे देवें, क्योंकि गुरुजी तो उत्तर देते ही रहते हैं। हमें तो गुरुजी के समक्ष उच्चारण करने का किसी किसी स्थान में ही अवसर मिलता है। परन्तु गुरुजीहम आपके समक्ष क्या ! उच्चारण कर सकते हैं। आप तो सूर्य बने बैठे हैं। हम आपके द्वारा क्या प्रकाश दे सकते हैं। इतने योग्य तो नहीं, परन्तु चलो, न देने से कुछ देना ही सुन्दर है।

अहादेखो !, क्या आदेश दे रहे थे। वह संहिताएं कहाँ मिल सकती हैं। देखो, उत्तराखण्ड के पर्वतों में, अब भी ऐसे ऋषि और महर्षि हैं, जिनके द्वारा भोजपत्रों पर सर्वश सहिताएं नियुक्त हुई बैंठी हैं। आज मानव कैसे खोजेगा, यह तो बड़ा महत्वपूर्ण वाक्य है, आश्चर्यजनक वाक्य है। अहावह तो ऋषि और महर्षि हैं !, वह भी उनको लिए शान्त बैठे हैं। इसलिए कि संसार में जाएंगे, तो संसार के नाना प्रभाव में पड़ करके हमारा जीवन शान्त हो जाएगा। जो यह परमात्मा का आनन्द लेते रहते हैं, वह शान्त हो जाएगा और वेद की जो महत्वपूर्ण संहिताएं हैं, इनका भी संसार में जा करके इतना महत्व नहीं रहने का। गुरुजी तो हमें मूर्ख कहा ही करते हैं, परन्तु हम उन महर्षियों का भी कोई महत्व नहीं मान रहे हैं, जो इतनी महान विद्या संसार से लुप्त है, आज वह विद्या संसार में आ जाए, तो कोई हानि नहीं। परन्तु क्या करे, वह भी यहाँ तक नहीं आते। क्योंकि ऐसी ऐसी महान आत्माओं को जो कष्ट दिए जाते हैं, सुनकर वह संसार में नहीं आते। इसका मुख्य कारण यही है, कि यहाँ आकर कष्टों के सिवाय कोई सुख नहीं मिलता। वह तो आत्मा के आनन्द में बैठे हुए हैं। इसलिए भगवन् हम आपके समक्ष क्या आदेश दें। !

जिस समय यहाँ दयानन्द नाम के आचार्य, शंकराचार्य नाम के आचार्य आए, तो उन्होंने बड़ा बड़ा खोजा। नाना प्रकार के अन्धकार को समाप्त किया, परन्तु दोनों मतों में ऐसी त्रुटियाँ आ गई हैं, कि मानव उन त्रुटियों में जा करके, उस अन्धकार से निकलना ही नहीं चाहता।

महात्मा बुद्ध ने एक वाक्य कहा था, कि हिंसा न करो। परन्तु आज का मानव हिंसावादी बन गया है। जब हम आधुनिक काल के राजाओं को और प्रजा को देखते हैं, तो ऐसा प्रतीत होता है, कि आज के संसार में इतनी तुच्छता आ गई है, कि हम दूसरे जीवों को और उनके गर्भ को आहार करने वाले बन गए हैं। आज जो मानव गर्भों का आहार कर रहा है, अरे, न प्रति उन्हें, क्या क्या कष्ट आएंगे। अरे, जब तुम दूसरे जीवों का आहार करते हो, उनके गर्भो का आहार करते हो, तो यदि आज कोई तुम्हारे गर्भों का आहार करे, तो तुम्हारा हृदय क्या कहेगा? आज मानव इस पर दृष्टि नहीं पहुँचाता। देखो, परमात्मा ने जो महान जीव बनाए हैं, जो भी योनियां दी हैं, इस आत्मा के कारागार के लिए दी हैं। परन्तु मानव योनि, भोग योनि और कर्म योनि दोनों मानी गई हैं। अरे, मानवजब परमात्मा के कारागार वाले जीवों की हिंसा ! करके, अपने जीवन की पूर्ति करते हो, तो एक काल वह आएगा, जब तुम भी परमात्मा के कारागार में अवश्य चले जाओगे। भगवन्आज हम गंगोत्री के तट पर ! भ्रमण कर रहे थे तो वहाँ देखा, कि आचार्यों का शास्त्रार्थ हो रहा था कि हमारे पूर्व के ऋषि मुनि मांस का भक्षण किया करते थे? तो हमने कहा कि चलो, गुरुजी से प्रश्न करेंगे परन्तु गुरुजी का कार्य हमें ही करना पड़ गया।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य !अच्छा बेटा...

पुरातन ऋषियों का जीवन

तो मुनिवरोंआज हम गुरुजी के समक्ष क्या उच्चारण करें !? आज का मानव यह माने बैठा है, कि यह जो जितनी योनियां परमात्मा ने दी हैं, सब मानव के लिए दी हैं, मानव के सुख के लिए दी हैं, यह यथार्थ है। यदि गुरुजी आज्ञा देंगे, तो कल उच्चारण करेंगे, कि कौन कौन सी योनि कितना लाभ देती है। परन्तु आज का मानव तो यह माने बैठा है, कि इन योनियों का आहार करने से ही तेरे उदर की पूर्ति होगी। क्या करें यह संसार महात्मा बुध के अनुकूल भी न रहा, महावीर के अनुकूल भी न रहा। यह संसार न प्रतीत कहाँ से कहाँ पहुँच गया है। गुरु नानक ने क्या कहा कि हिंसा से दूर भागो, अरे, हिंसा न करो। जब हिंसा करोगे तो तुम भी हिंसा वाले बन करके,

संसार में तुम्हारा जीवन समाप्त हो जाएगा। परन्तु उसके मत वाले, उसके अनुकूल न रहे। नाना प्रकार के मत बनाकर वेद के आदेशों को समाप्त कर दिया।

अहाहम क्या उच्चारण कर रहे थे !, कि आज जब हम गंगोत्री के तट पर भ्रमण कर रहे थे तो हमने सुना कि पूर्वकाल के ऋषि गौमांस का भक्षण किया करते थे। आज हम उन पर दृष्टि पहुँचाते हैं, तो वाक्य कहीं का कहीं जाता है। हम उनसे प्रश्न करें, कि भाईकौन स !े ऋषि मुनियों को तुमने ऐसा पाया? जो भी महान आत्मा आती है, वह ही अहिंसा का प्रचार करती है, न कि हिंसा करो। यदि आदि महर्षियों पर दृष्टि पहुँचाते हो, तो उनका जीवन न प्रतीत कितना महत्वपूर्ण था। जब हम यह प्रश्न करते हैं, तो उनके द्वारा कोई उत्तर नहीं रहता। आज के मानव को ज्ञान नहीं, कि वे हमारे महर्षिजन कैसे हिंसा करते थे? कैसा उनका भोग विलास था?

मुनिवरोंपूर्वकाल में महर्षि ऐसा भोग विलास किया करते थे !, ऐसी उनकी महान हिंसा थी, जैसा कल गुरुजी एक आदेश प्रकट कर रहे थे। आज हम उसके विशेषण में कुछ उच्चारण कर देवें, कि हमारे ऋषि महर्षि ऐसे थे, कि कामधेनु के दुग्ध का आहार करते थे, आत्मा को प्रसन्न करने के लिए, जो परमात्मा ने रसदायक पदार्थ दिए, हृदय को उदार बनाने वाले पदार्थो का आहार करके, ऋषि मुनि अपने कर्त्तव्य का पालन करके, इस संसार को ऊँचा बना गए। उन्हीं ऋषियों के काल को सतोयुग कहा जाता है। जिस काल में हिंसा नहीं होती, जिस काल में दूसरों के गर्भ को आहार नहीं किया जाता, वह काल हर प्रकार से श्रेष्ठ कहा जाता है। आज गुरुजी का कार्य तो हमें ही करना पड़ गया। क्या करें, समय ही ऐसा आ गया है।

हम क्या उच्चारण कर रहे थे? हम वेद के सम्बन्ध में व्याख्यान दे रहे थे। आज राष्ट्र के ऊपर दृष्टि पहुँचाते हैं, तो राजा कैसे बन गए हैं? पूर्वकाल में हमारे राजा महाराजा कैसा भ्रमण करते थे? एक समय राजा दशरथ ने महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज से प्रश्न किया था, कि मैं राष्ट्र का पालन करूं, तो कैसे करूं? उस समय उन्होंने कहा था कि कोई भी राष्ट्र का या किसी का पालन तब तक कर सकता है, जब उसके द्वारा त्याग होगा और आत्मिक ज्ञान होगा। आज के समाज को देखते हैं,

राजा, महाराजाओं को देखते हैं, तो उनके द्वारा भौतिक विज्ञान तो है परन्तु आध्यात्मिक विज्ञान पर दृष्टि नहीं पहुँचाते और कहते हैं कि हमारे शरीर में आत्मा है ही नहीं। हमारा शरीर तो पञ्चभौतिक चल रहा है और पञ्चभौतिक में रमण कर जाएगा। यह आत्मा कोई पदार्थ नहीं है। यदि हम उनसे प्रश्न करें कि भाईजब ! तुम्हारा शरीर पञ्चभौतिक तत्त्वों का बना हुआ है, तो पञ्चभौतिक तत्त्वों से बना हुआ तो यह जल भी है। यह जल तुम्हारी भांति व्याख्यान क्यों नहीं कर देता? यह जल तुम्हारी भांति ज्ञान को क्यों नहीं प्राप्त होता? अरे, पञ्चभौतिक से तो यह अग्नि भी बनी हुई है, क्योंकि यह अग्नि वायु में रमण करती है, जल भी रमण करता है, अन्तरिक्ष भी रमण करता है, प्रत्येक तत्त्व पञ्चभौतिक से बना हुआ है तो यह वह कार्य क्यों नहीं कर देता? इसका उत्तर किसी के द्वारा नहीं मिलता। आज का राजा महाराजा कैसा बना बैठा है? कि आज हम खूब अपने उदर की पूर्ति करें, रक्त के आहार को लें। दस इन्द्रियों के आहार को लें, तब ही हमारा राष्ट्र ऊँचा बनेगा। प्रजा भी यह मान बैठी है, तार्किक बुद्धि वाले भी मान बैठे हैं, कि जो कुछ तुमने माना है वह यथार्थ है और उससे परे कोई पदार्थ नहीं है। क्या करें? यह तो हमारा दुर्भाग्य है, राष्ट्र का दुर्भाग्य है, समय की प्रबलता है। जैसे गुरुदेवरात्र !ि को जुगनुओं को प्रकाश मिलता है, महान पिशाच योनियों को प्रकाश प्रतीत देता है, सूर्य के प्रकाश को नहीं लेना चाहता। ऐसे ही आज का तार्किक बुद्धिमान बन बैठा है। आज उस तार्किक बुद्धि को विचार लगाना चाहिए, अपने में गम्भीरता लानी चाहिए।

आज हम अपने गुरुजी के जीवन पर दृष्टि पहुँचाते हैं, तो उनका जीवन इतना महत्वपूर्ण था कि उन्होंने तार्किक बुद्धि में अपने जीवन को ऐसा बनाया कि तार्किक बुद्धि में सौलह प्रकार की बुद्धि का विचार किया। इसके पश्चात् विचार आया कि तार्किक बुद्धि में कोई महत्वता नहीं। उसी समय गम्भीरता आई। गम्भीरता आ करके हमारे गुरुजी को जिस काल में देखो, मृतमण्डलों में आकाशवाणी जा रही है, बालक मात्र पुकारा जाता है, उस बालक ने पूर्व जन्मों में 71 वर्ष तक निद्रा को जीतने 71 वाले कहलाए गएं हैं परन्तु आज हम क्या उच्चारण करें? यह तो दुर्भाग्य है। हमारा भी

कोई दुर्भाग्य है, गुरुजी का तो है ही कि ऐसे काल में आ पहुँचे और गुरुजी के आपत्तिकाल में सहायता देनी पड़ रही है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य......

क्या करें, कुछ कहा नहीं जाता। इस विशेषण में अधिक व्याख्यान नहीं देना चाहते? कल गुरुजी हमें समय देंगे, तो इसके सम्बन्ध में बहुत कुछ उच्चारण करेंगे। यह आज का हमारा एक आदेश था। आज हम किस काल पर दृष्टि पहुँचाएं। कहाँ कहाँ के दृष्टान्तों को लिया जाए? आज हम संहिताओं पर अपना विचार करते हैं 1127, तो हम एक महत्वपूर्ण आदेश को लेते हैं। आज हमने वेदों से गुरुजी के बहुत से मन्त्रों का मिलान किया, तो गुरुजी के कुछ वेदमन्त्र तो वेदों में मिल जाते हैं परन्तु अधिकतर नहीं, परन्तु कुछ कुछ मिलते हैं उसका कारण क्या है? वह कौन सी संहिताएं लुप्त हो रही है। आज की संहिताओं में एक अंगिरस संहिता है जिसका आजकल गुरुजी का पाठ चला रहा है। देखो, कल गुरुजी से अनुरोध करेंगे, कि यह अपना कुछ प्रकाश प्रकट करें, कि जो आदेश हमने दिया है, वह कहाँ तक यथार्थ है। परन्तु आज के मानव को यह नहीं मान लेना चाहिए, कि जो आज मानव कहता है, वह यथार्थ कहता है। हम यह नहीं कहते, कि उनकी वार्त्ताओं में यथार्थता नहीं होती। हम तो यह चाहते हैं कि मानव की तीव्र बुद्धि होना चाहिए, आध्यात्मिक विज्ञान और ज्ञान उसके द्वारा होना चाहिए, जिससे मानव में कुछ न कुछ विशेषता आए। हम तो कहते हैं कि हमारे द्वारा भी कोई त्रुटि रह सकती है। कोई ऐसा अनुचित्त वाक्य उच्चारण हो गया हो, जिसके लिए हम सभी दार्शनिकों से, महानुभावों से, गुरुजनों से, जो यहाँ उपस्थित हैं, उन सबसे प्रार्थना करें, कि वह हमें अवश्य क्षमा करेंगे।

इससे अधिक आज हम व्याख्यान करना नहीं चाहते। गुरुजी हमें आदेश देंगे, तो कल हम उच्चारण करेंगे कि परमात्मा के कारागार में जो इतनी योनियाँ हैं, इनमें क्या क्या गुण हैं? आज मानव यही मान बैठा है, कि जितनी ये योनियाँ है, यह सब भक्षण करने के लिए दी हैं। अरे, नहीं नहीं, भक्षण करने के लिए परमात्मा ने तुम्हें बहुत से पदार्थ दिए हैं। बहुत सोमलताएं दी हैं, महान फल दिए हैं, जिनको पान करके तुम्हारी

बुद्धि तीव्र होती है, सात्विकता आती है, ब्रह्मचर्यता आती है, जिससे तुम्हारा हृदय उदार होता है, महानता आती है। गुरुदेवआज का मानव तो प्रातःकाल में अपने ! स्थानों से अलग होता है, और उस काल में यह विचारता रहता है कि आज मुझे किस जीव के गर्भ को बनाना है। जिससे तेरी रसना की पूर्ति हो। आज कौन से जीव की तुझे हिंसा करना है, जिससे तेरी रसना की पूर्ति हो जाए, जिससे तेरी उपस्थ इन्द्रियों की पूर्ति होगी। परमात्मा ने जितनी भी ये सब योनियां दी हैं, ये सब मानव के भक्षण के लिए दी हैं। अरे, मानवयह इसलिए नहीं दी हैं !, ये तो परमात्मा ने सब मानव कल्याण के लिए दी हैं। आज का हमारा आदेश समाप्त हो गया है। कल गुरुजी का आदेश होगा तो कल उच्चारण करेंगे, यदि गुरु जी का आदेश होगा तो गुरुजी से अनुरोध करेंगे, कि ये स्वयं ही इस व्याख्यान को देंगे। गुरुजी तो बड़े दयालु हैं। न प्रति हमारे ऊपर उनकी कितनी कृपा रहती है। हम तो इनके महान आभारी हैं, जो इस आपत्ति काल में भी हमारी वार्त्ताओं को स्वीकार करते रहते हैं, और हमारे प्रश्नों का उत्तर देते रहते हैं। अब हमारा आदेश समाप्त हो गया है। कल गुरुजी आज्ञा करेंगे तो और सुन्दर आदेश हो जाएगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः धन्यवादअभी अभी महानन्द जी ने जो आदेश दिया !तो मुनिवरों !, वह हमारे अन्तःकरण को छूने वाला था और हमें बड़ा प्रिय लगा। आज हम उनकी सराहना देते रहे। आधुनिक काल के दार्शनिकों और तार्किक बुद्धि वालों की कुछ विचारधाराएं हमारे समक्ष नियुक्त कीं। उनकी ऐसी तार्किक और गम्भीर बुद्धि बनी रहे। महानद जी ने जो आदेश दिया, वह हमें बड़ा प्रिय लगा। आज उन्होंने हिंसा के विषय में एक बड़ा महत्वपूर्ण आदेश दिया। आज के मानव से हम प्रार्थना करें, कि भाईऐसे विचार तुम्हारे समक्ष आएं !, तो उन्हें ग्रहण कर लेना इसमें किसी प्रकार की हानि नहीं। जैसा महानन्द जी ने कहा कि एक मानव या महान आत्मा के आदेश को मानने में किसी प्रकार की कोई हानि नहीं। महानन्द जी ने अभी अभी तुम्हारे समक्ष नियुक्त किया कि एक महान दयानन्द नाम के आचार्य यहाँ आ पहुँचे, उन्होंने वेदों को चुना और चुनकर तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर दिया। उन्होंने जो कुछ कहा है उसकी

महानन्द जी ने बड़ी सराहना की है परन्तु हमें यह विचार लगाना है कि यदि हमारे समक्ष उनके विचारों के अनुकूल या उनकी तार्किक बुद्धि के अनुकूल जो भी व्याख्यान हमारे समक्ष आ जाए, उसको मान लेने में किसी प्रकार की हानि नहीं। बिना अपने विचार में लाए हुए, यह नहीं मान लेना चाहिए कि यह उनके विरुद्ध है, इस वाक्य को हम कदापि नहीं मानेंगे। महानन्द जी के कथनानुसार तो उस महान आत्मा ने तो न प्रतीत क्या क्या माना, परन्तु तुम उसको नहीं मान रहे हो। इसलिए आज तुम अपनी सीमित बुद्धि से उन महान असीमित बुद्धिमानों की वार्त्ताओं की और अपनी वार्त्ताओं की तुलना न करो, तुलना करनी है तो उनके योग्य बनो, ब्रह्मचारी बनो, सदाचारी बनो, जैसा हमारे महानन्द जी ने किया। कैसा ब्रह्मचर्य का पालन किया? आज देखों लगभग लाखों वर्ष हो गएं हैं। जब से इन्होंने किसी योनि में प्रविष्ट नहीं किया है। यह सब देखो, ब्रह्मचर्य और वेदों के ज्ञान का प्रभाव है। अपने गुरुओं की, अपनी महान आत्माओं की आज्ञा मानने का ही प्रताप है। आज जो महानन्द जी ने कहा है कि अनुसन्धान हो रहा है, तो मानव को अनुसन्धान करना चाहिए। हम तो अनुसन्धान के विषय में नित्यप्रति कहा करते हैं कि मानव का जीवन अनुसन्धान है। आज हम महानन्द जी की बड़ी सराहना कर रहे हैं, आज धन्यवाद दे रहे हैं और हृदय से इनका स्वागत कर रहे हैं। आज हमारा यह आदेश समाप्त हो गया। अब वेद पाठ होगा इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः गुरुजीआप तो बड़ी सराहना दे रहे हैं !, क्यों?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य आज तो हमें यह प्रतीत हुआ। ....

पूज्य महानन्द जीः तो गुरुजीआप यह मान बैठे हैं !, कि हम ही बुद्धिमान हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, नहीं, हम तो नहीं मान रहे। हम तो मान रहे हैं कि महानन्द जी बहुत ही तार्किकता और गम्भीरता लिए बैठे हैं।

पूज्य महानन्द जीः हास्ययह तो गुरुजी आपकी ही कृपा है। जब आपकी .... करुणा प्राप्त हो जाती है, तो सब ही प्राप्त हो जाता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंअब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया ! है, महानन्द जी के कैसे विनोद भरे वाक्य हैं। इन्होंने अभी अभी कहा कि आप ही अपने को बुद्धिमान मान बैठे हैं परन्तु कैसा आदेश और कैसा विनोद, चलो आज हमें इनकी वार्त्ताओं से बड़ी मनमन्ता और हृदय गद् गद् हो जाता है। तो यह आज का हमारा आदेश समाप्त हो गया है। कल समय मिलेगा तो महानन्द जी को अवसर देंगे। अब वेदों का पाठ होगा। वेद पाठ। आर्य समाज, मालवीय नगर, नई दिल्ली दिनांक 15 05 1962।

३ 18 08 1962 गणपति की व्याख्या

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम ! तुम्हारे समक्ष, वेदों का मनोहर गान गा रहे थे। आज हमारा हृदय तो यह पुकार रहा था कि वेदों का गान गाते ही चले जाएँ परन्तु हमे इन वैताओं पर नही जाना, हम पूर्व मन्त्री में प्रभु का गान गा रहे थे और उस महान देव की याचना कर रहे थे, जिसको हम गणपति कहा करते हैं, जो महान संसार का स्वामी है, गणों का महान स्वामी है।

आज प्रश्न आता है कि गण किसकी कहते हैं जिसका वह प्रभु स्वामी है। यह बहुत विचारणीय विषय है। हम इन पञ्चभौतिक तत्त्वों को गण कहा करते हैं, वह उनका स्वामी हैं। आज हम इस संसार को गण मानें तो वह भी महान इस संसार का स्वामी भी वह प्रभु है। हम महान लोक लोकान्तरों को गण मानें, तो उनका भी गणपति स्वामी है, यह विचार नहीं आ रहा, कि हम गण किसको मानें और वह गणपति किसका स्वामी हैं?

इसकी उत्तरदायी बनते हुए हमारे आचार्यों ने महर्षि लोमश ने कहा है कि वास्तव में इन पञ्च तत्त्वों को गण माना है, जो गणनीय है, जो गणना में आ जाते हैं। परन्तु ऋषियों ने ऐसा भी कहा है, कि यह लोक लोकान्तर सब गण माने गएं हैं। वास्तव में आचार्यों ने ऐसा भी निर्णय दिया है लोमश मुनि ने ऐसी लेखनी भी दी है, महर्षि व्यास ने भी इसमे ऐसी लेखनी दी है, कि यह जो आत्मा है और प्रभु इसका पिता होने के नाते उसे गणपति कहते हैं।

मुनिवरोंजब यह आत्मा गणानीय हैं और इसका स्वामी गणपति है !, तो विचार आता है कि आत्माएं कितनी मानी गई हैं, जिनकी गणना हो सकती है। महर्षि व्यास ने, नारद मुनि ने, विभाण्डक ऋषि आदि ने ऐसा कहा है कि आत्माओं की कोई विशेष गणना नहीं है, लोमश मुनि ने ऐसा कहा है कि आत्माओं की कोई गणना नही और न आज तक उसकी कोई गणना ही कर सका है। जिस योगी ने इनकी गणना कि है वह सम्मुख आकर इनकी गणना करे।

जब आत्माओं की कोई गणना नहीं, तो आत्मा परमात्मा को एक क्यों न मान लेवें? परन्तु यह मानव की एक मूढ़ता मानी जाएगी, यह मानव का असंगत प्रश्न हो जाता है। असंगत प्रश्न वहाँ किया जाता है, जहाँ असंगत व्यक्ति हों, परन्तु जहाँ संगतिदायक श्रृंखलावद्ध व्यक्ति हों, उनमें शंका का प्रश्न करना चाहिए। इसके सम्बन्ध में ऋषि मुनियों ने हमारे यहाँ ऐसा कहा है, कि आत्माओं की संसार में कोई गणना नहीं कर सकता। जैसे परमात्मा की सृष्टि अनन्त है, प्रकृति अनन्त है, पूर्ण है, ऐसे ही महान परमात्मा भी पूर्ण है। परमात्मा और प्रकृति के मध्य में रहने वाली आत्माओं की गणना अनन्त मानी गई है।

आज यह प्रश्न आता है, कि जब यह अनन्त है, तो प्रभु को गणपति क्यों कहा गया है अन्तर्यामी क्यों नहीं कह देना चाहिए? इसका उत्तर यह है, कि आज इसको गणपति इसलिए माना गया है, क्योंकि वह गणों का, सृष्टि का, लोक लोकान्तरों का पति है।

मुनिवरोंआगे चलकर यह प्रश्न आता है !, कि जब आत्मा की कोई गणना नहीं, तो यह कैसे मान लिया जाएं कि प्रभु इस संसार को रचता है? हम प्रभु को सृष्टि का रचयिता नहीं मान सकते, क्योंकि वह कर्त्ता है। और कार्य से कर्म बना करता है। जैसे एक महान प्रजापति सृष्टि को उत्पन्न करता है, प्रजा के लिए, राजा शासन करता है प्रजा के लिए, शिल्पकार अपनी चित्रकारी करता है कला के लिए। इसी प्रकार वह गणपति परमात्मा अपनी पूर्ण महानता से इस संसार को उत्पन्न करता है आत्मा के लिए।

आगे प्रश्न आता है कि जब आत्मा की कोई गणना नहीं, तो परमात्मा को आत्मा से भिन्न ही क्यों माना गया है और जो आत्मा मोक्ष को प्राप्त हो चुकी है उन आत्माओं की क्या गणना मानी गई है?
इसका उत्तर यह है कि आत्मा अनन्त हैं, और अनन्त ही परमात्मा के आनन्द में रमण कर रही हैं, उस प्रभु की गोद में यह आत्मा पुत्र बनकर जा रहा है। मानो यह उस अनन्द में रमण कर रहा है, जैसे बालक माता की लोरियों में चला जाता है, और लोरियों में जाकर जो आनन्द आता है, उसे अब तक कोई निर्णय नहीं दे सका, कि माता की गोद में लोरियों में लगकर, मैंने इतने आनन्द को प्राप्त किया है। जैसे पिता का बालक पिता का हो जाता है, उसके गुणों का ग्राही बन जाता है, पिता के आनन्द को भोगने वाला बन जाता है, उसकी बनाई हुई सृष्टि को अनुमान से अनुभव कर लेता है, इसी प्रकार मुनिवरोंजब यह आत्मा उस प्रभु के आँगन में चला जाता ! है, उस समय उसको परम आनन्द प्राप्त हो जाता है और आज तक उस आनन्द को किसी योगी ने लेखनी में नहीं दिया और न लेखनी में ले सकता है।
मुनिवरोंएक समय माता गार्गी ने याज्ञवल्क !्य से प्रश्न किया कि परमात्मा ने हमें नग्न उत्पन्न किया है, आज हम किसी के द्वारा क्या वस्त्र धारण करें? उस समय याज्ञवल्क्य ने यह कहा कि हे गार्गीयह बुद्धि का कार्य है !, बुद्धि से कार्य करें। उस समय माता गार्गी ने यह ही कहा था, कि जो परमात्मा के आँगन में चले जाते हैं और बुद्धि को परमात्मा में लय कर देते हैं, तो बुद्धि से कार्य ही कौन करेगा संसार में। यह सब बुद्धि और वाणी का विषय नहीं, वाणी सब परमात्मा में लय हो जाती है। इसलिए आज मानव को नाना भ्रन्तियों में नहीं पहुँचना चाहिए, आज हमें यह विचार नहीं लगाना है, कि आत्मा कितनी हैं संसार में यह अनुभव का विषय है, उच्चारण करने का विषय नहीं, वाणी का विषय होता, तो अब तक कोई न कोई ऋषिवर इस पर लेखनी दे देता, परन्तु आज तक किसी योगी ने लेखनी नहीं दी है।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरुजीइसका अभिप्राय तो यह है !, कि आप रूढ़िवादी बन रहे हैं? यदि किसी भी ऋषि ने इस पर लेखनी नहीं दी है, तो इसमें आपका क्या अनुभव है? क्या आप ऋषियों के आधार पर इसका उत्तर देते चले जा रहे हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं बेटायह बात नहीं !, जो तुम मूर्खो वाले प्रश्न करते चले जा रहे हो। बुद्धिमान होते हुए गम्भीरता का वाक्य क्यों नहीं उच्चारण कर रहे हो? केवल चंचल बुद्धि से कार्य न बनेगा। गम्भीरता से विचारो। बेटाआज यह अभिप्राय नहीं !, कि किसी ऋषि ने इस पर लेखनी नहीं दी, तो आप भी नहीं देते हो। आज हम कैसे लेखनी दें, हमारा तो यह विषय नहीं, वाणी से बाहर का विषय है, जब हमने अपनी वाणी का विषय ही परमात्मा में लय नहीं किया, हमारी बुद्धि भी परमात्मा में लय नहीं हुई है, अभी तो बेटागम्भीर बनते चले जा रहे हैं !, जब बुद्धि और वाणी इन सबको परमात्मा के आँगन में त्याग देंगे, उस समय बेटानिर्णय करा देंगे !, कि आत्माओं की गणना इतनी है, हमने ऋषियों का अनुमान तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर दिया है। परन्तु तुम यह मूर्खों वाले प्रश्न कर देते हो, जिनका कोई भी उत्तर नहीं दे सकता। आगे यह उच्चारण किया करते हो, कि जो तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर नहीं देता, वह कुछ जानता ही नहीं। परन्तु जो मूर्खों वाले प्रश्न करता है, उनका कोई भी उत्तर नहीं दिया जा सकता। बुद्धिमान उत्तर नहीं दे सकता। हास्यतुमने जाना !, बेटाआज ! से तुम्हारी मूर्ख संज्ञा बन गई है।

मुनिवरोंअभी अभी हम एक बहुत दार्शनिक और गम्भीर विषय का अपना निर्णय दे ! रहे थे, परन्तु इसमें अधिक निर्णय न देंगे, और न इस वार्त्ता पर जा रहे थे। वह परमात्मा गणपति है, वह संसार सागर का पति है, जो वास्तविक वस्तुएं हमें दी हैं, वह सब परमात्मा की हैं और परमात्मा उन सबमें व्यापक हो रहा है इसलिए जो वस्तु लाए हैं, वह परमात्मा की हैं, हमारी कुछ नहीं। जैसा पदार्थ परमात्मा से लाए हैं, वैसा ही परमात्मा को देना है, यदि न देंगे, तो मानो परमात्मा के दिए पदार्थो को दूषित बना रहे हैं, अपनी मानवता को नष्ट करते चले जा रहे हैं। बेटाआज यह ! बहुत विचारणीय विषय है।

मानव जिस शरीर को लाया है, वह कहाँ से लाया है? किसने दिया है? मानव ने यह किसी काल में विचार नहीं किया।

मुनिवरोंलोमश मुनि उच्चारण कर रहे हैं !, कि गुरुजी मुझे आज्ञा दें, तो कल मैं चन्द्रमा के विषय में व्याख्यान दूंगा। आधुनिक काल के वैज्ञानिक अन्तरिक्ष में भ्रमण कर रहे हैं और यह जान रहे हैं, कि वायु की क्या क्या गति होती है? परन्तु उन व्यक्तियों ने गम्भीर मुद्रा में जा करके, यह नहीं जाना, कि महान परमात्मा ने यह शरीर दिया है। एक काल में महानन्द जी ने लोमश जी से कहा कि आधुनिक काल में यह कह रहे हैं कि माता पिता के संयोग से यह बालक उत्पन्न हो जाता है, परमात्मा ने क्या दिया है? आज मानव ने अपने उस पुत्राचार को पा करके, अपनी बुद्धि को इतना सीमित बना लिया है, कि अपने तक इन वार्ताओं का निर्णय ले लिया है परन्तु यह नही जाना है, कि आज तक इस संसार में कितने वैज्ञानिक हुए। महानन्द जीतुमने गणना तो की होगी !?

तुम यह जानते हो, कि राजा रावण जैसा संसार में अभी तक कोई वैज्ञानिक नहीं बना जिसके कारागार में सब देवता कार्य करते थे, आज तक उस जैसा वैज्ञानिक कोई नहीं बना। उससे निचले स्थान में राम बहुत बड़े वैज्ञानिक थे, जिसका कोई विशेषण नहीं दिया जा सकता। उन्होंने पृथ्वी विज्ञान को जाना, कि यह भूमि कैसी है, इस भूमि में से हम क्या क्या निकाल सकते हैं, तुमने सुना होगा, महानन्द जीजब ! माता अहिल्या का पुनः उत्थान किया, जो वज्र तुल्य भूमि अहिल्या थी, उसको राम ने वैज्ञानिक दृष्टि से देखा और निषाद राजा से कह करके, कृषि उत्पन्न कराई, उसमें अन्न उत्पन्न हो गया। वह इतने बड़े वैज्ञानिक थे, कि वह जानते थे, कि जल की कितनी तीव्र गति है।

मुनिवरोंदेखो !, हमें इन व्याख्यानों पर नहीं जाना था, हमारा अभिप्राय यह था, कि आज के मानव ने यह नहीं जाना? राम रावण से इसलिए बड़े वैज्ञानिक माने गएं, क्योंकि रावण ने अपने जीवन मे यह नही विचारा की परमात्मा ने यह शरीर मुझे दिया है और राम और रावण मे यह भिन्न भेदता थी । राम यह जानता था, कि

परमात्मा ने मुझे यह शरीर दिया है, दूसरों की आज्ञा पालन करने के लिए, दूसरों की सेवा करने के लिए । परन्तु रावण ने यह किसी काल में नहीं विचारा। रावण केवल यह ही विचारता रहता, कि दूसरों के ब्राह्मणों के द्रव्य को अपने में आकर्षित करके, ऊपरी आनन्दित वार्त्ताओं के भोग को भोगना। राम ने अपनी आध्यात्मिकता से और भौतिकता से भी जाना, कि परमात्मा ने मुझे यह शरीर, माता पिता की आज्ञा पालन करने के लिए दिया है।
मुनिवरों! आज के मानव ने किसी काल में यह नही जाना कि चन्द्रमा की परिक्रमा हो रही है, आधुनिक काल का वैज्ञानिक इस अन्तरिक्ष में भी उड़ान कर रहा है, परन्तु यह नहीं जाना कि अरे, तुम्हारा यह यन्त्र तो चल रहा है, परन्तु तुम्हारा मन ही इतना चल रहा है कि सूर्य मण्डल तक पहुँच जाता है। मन कि इतनी तीव्र गति है मानव ने पूर्व तो यह मन ही नहीं जाना। अरे, जब हमारा योगी, इस मन को जान लेता है अष्ट दिशाओं को, षोडश कलाओं को जानने वाला योगी बन जाता है। तो वह संसार की जानकारी कर लेता है।

विश्व कर्मा

आज मानव क्या मान बैठा है, कि यह जो शरीर है यह माता पिता के संयोग से उत्पन्न हुआ। यह भी यथार्थ है, कि कर्म किया और कर्म करने से फल मिला, परन्तु अरे, मानवतूने किसी काल में यह नहीं विचारा कि तूने जो कर्म किया है !, उसका फल देने वाला तो कोई होगा और वह कौन है?
मुनिवरोंआज तक कोई वैज्ञानिक ऐसा नहीं !, जिसने यह जाना, कि जैसा परमात्मा ने मनुष्य का यह ढांचा बनाया है, जिसमें 72, 72, 10, नाड़ियाँ हैं। इसको 202 नियुक्त कर सके। आज मानव नाना प्रकार की प्रतिक्रिया कर देता है। माता के गर्भ स्थल में, कौन से मानव ने, कौन से वैज्ञानिक ने, जा करके यह मानव का शरीर बनाया है। इसको बनाने वाला, बेटावह विश्व कर्मा है !, जिसने महान अपनी कारीगरी से महान संसार को बनाया है। कितना विलक्षण शरीर, नेत्र, चक्षु, श्रोत्र हैं, ग्रीवा, मुख और नाना इन्द्रियों को घड़ करके, यह शरीर बनाया, तो यह परमात्मा की

कारीगरी नहीं, तो किसकी है? प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या का, एक सा रूप नहीं, परमात्मा की यह महानता नहीं, तो और क्या है? आज मानव को उस विश्वकर्मा की उपासना करनी चाहिए, हमें उस विश्वकर्मा को विचारना चाहिए, और उस स्थान में जाना है जहाँ हमें परमात्मा प्राप्त हो जाएं। जब हम परमात्मा की गोद में चले जाते हैं, उस काल में हमारा जीवन आनन्दित हो जाता है।

मुनिवरोंआज यह भी माना जाता है !, कि यह सब अपने कर्मो का भोग स्वत ही भोगा जा रहा है। यह भी यथार्थ है। परन्तु कोई भी मानव यह नहीं चाहता, कि आज मैं किसी मानव को नष्ट करके, राजा के कारागार में चला जाऊं। इसलिए मानव को परमात्मा को मानना अनिवार्य हो जाएगा क्योंकि वह हमारे कर्मो का फल देने वाला है।

प्रश्न आता है, कि जब हम किसी मनुष्य को नष्ट करते हैं, तो राजा हमें दण्ड दे सकता है। परमात्मा क्या देगा? इसका उत्तर यह है, कि मानव केवल यह ही पाप नहीं करता, यह तो भौतिक पाप हो गया, मानो यह तो कर्म से पाप हो गया, परन्तु मानव बहुत से पाप मन से कर रहा है, और बुद्धि से पाप कर रहा है, और बुद्धि का जो स्वामी है, गणपति है, वह उस पाप को देख रहा है। तो जो पाप छिप करके करा जा रहा है, उसका फल देने वाला परमात्मा है, उसका फल कोई राजा नहीं देगा, वह गणपति ही देगा।

मुनिवरोंदेखो !,आज हमें इन विचारधाराओं को लेकर दार्शनिक बनना है !, गम्भीर मुद्रा में जा करके, हमें भौतिक वैज्ञानिक भी अवश्य बनना है। हमारा यह अभिप्राय नहीं, कि मानव चन्द्रमा में न पहुँचे, सूर्य मण्डल पर न पहुंचे, वृहस्पति मण्डल मे न पहुंचे, हमारा अभिप्राय तो यह है, कि हे मानवजब तुझे जाना है तो परमात्मा को ! साथ लेकर चलेगा, तो अच्छी प्रकार पहुँच जाएगा और यदि तुम अपनी बुद्धि के और महान अपने अहम्भाव के, एक अश्वस्त भूषण को लेकर चलोगें, तो जीवन सफल न होगा, और अन्तिम में क्या गति होगी तेरी?

मुनिवरोंजो चन्द्रमा में जाता है !, सूर्य मण्डलों में जाता है, वह गम्भीर मुद्रा से और यौगिक मुद्रा से अपने इस अन्तःकरण का यन्त्र क्यों नहीं बना लेता। इस यन्त्र के बनाने से मानव लोक लोकान्तरों में रमण कर जाएगा।

मुनिवरोंजब मानव को किसी ! का भय होता है, तो वह बहुत ही शीघ्र समय में सफल होता है, और जिस मानव को भय नहीं होता, जिस मानव के हृदय में आकांक्षा नहीं होती, वह मानव उस कार्य में बहुत देरी से सफल होता है। जैसे मुनिवरोंराज्य का कर्मचारी एक स्थान में विराजमान है !, यदि कोई ठगी करने आ जाता है, तो उसे राज्य के कर्मचारी से भय होता है और जो पाप करने आया था, उस पाप से बच जाता है। इसी प्रकार जो मानव सत्य को अपने समक्ष नियुक्त करता है, और परमात्मा का भय माना करता है, वह मानव संसार सागर से अवश्य पार हो जाता है। परन्तु जो मानव परमात्मा से भय नहीं मानता, उस मानव को भोगना तो अवश्य पड़ेगा, तब उसे ज्ञात होगा। मानव अपने महान, नाना प्रकार के भौतिक आदेशों में अपने जीवन को समाप्त करता चला जा रहा है, इससे मानव की कोई महत्वता नहीं, इससे मानव की कोई मानवता नहीं मानी जाएगी।

आज यह है मुनिवरोंआज हमारा एक महत्त !्व पूर्ण आदेश, आज हम परमात्मा को गणपति उच्चारण कर रहे थे, कि तुम गणपति हो और संसार के गणों का उद्धार करने वाले हो। आज हम केवल परमात्मा को ही गणपति नहीं कहा करते, गणपति हम इस आत्मा को भी कहा करते हैं, जो देखो, इस महान शरीर में रहने वाले नाना प्रकार के मल विक्षेप आदि आवरण, अन्धकार में पहुँचा हुआ, जब महान अपने प्रकाश में पहुँचता है, परमात्मा की सहायता से प्रकाशमान होता है, तो उस समय यह जो गण हैं, आत्मा का परिवार है, इसका महत्व समाप्त हो जाता है और आत्म गणों पर शासन करने लगता है, इसलिए आत्मा को भी हम गणपति कहाँ करते हैं।

मुनिवरोंऐसे ही परमात्मा गणपति है !, जो लोक और लोकोन्तरों को चला रहा है, इस महान संसार को चला रहा है, वायु आदि सबको चला रहा है। इसलिए

मुनिवरोंआज मानव को विचारना चाहिए !, मानव कितनी दूरी चला गया है, अपने पक्ष को कदापि नहीं त्यागना चाहिए।

मुनिवरोंमहाराजा राम ने कितनी सुन्दर आज्ञा का पालन किया !, वह कितने ऊँचे योगी, कितनी ऊँची महान आत्मा वाले, जिन्होंने संसार को पुनः मर्यादा में विकसित कर दिया, आज हम उन महान आत्माओं के आभारी बन रहे हैं।

राम निषाद वार्ता

मुनिवरोंकहाँ एक स्थान में राम का राज्य ति !लक हो रहा था, कहाँ द्वितीय स्थान में माता अपनी महान वाणी से उच्चारण कर रही थी कि राम को वन ही जाना चाहिए, उस मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने जान लिया, कि मैं संसार में आया हूँ, केवल माता पिता की आज्ञा पालन के लिए और अपने कर्त्तव्यों को पूर्ण करने के लिए, उसी समय राम वन के लिए नियुक्त हो गए और कहा हे मातामुझे आज्ञा दो !, मैं अवश्य वन जा रहा हूँ। उसी समय मुनिवरोंतुम अवश्य वन चले !माता ने आज्ञा दी हे पुत्र ! जाओ माता की आज्ञा पा करके राम ने पिता का वियोग नहीं जाना, केवल कर्त्तव्य जानकर वन चले गये।

मुनिवरोंआज का म !ानव कहाँ जा रहा है? महानन्द जी के कथनानुसार आज मानव को सूक्ष्म सी माया प्राप्त हो जाएं, तो नाना पापाचार करने के लिए उद्यत है, नाना पकार के पापाचार करके द्रव्य को एकत्रित करने की इच्छा कर रहा है। अरे, आज हमें वह राम बनना है, उस मर्यादा में बंधना है कि इधर राज्य मिल रहा है, उसकी कोई मग्नता नहीं, वन मिल रहा है उसका कोई शोक नहीं, आज हमें मर्यादा को बाँधना है, और मर्यादा को बाँधकर इस संसार सागर से पार होना है।

मुनिवरोंआज नाना प्रकार के पापाचार करने के लिए एकत्रित हो गए हो !, यह तुम्हारा जीवन नहीं, यह तुम्हारी महानता नहीं, यह तुम्हारी दार्शनिकता नहीं, यह तुम्हारी यौगिकता नहीं, यह तुम्हारी बुद्धिमत्ता नहीं, यह तुम्हारी कोई वैदिक गम्भीरता नहीं। अरे, जो ऐसे मानव हुआ करते हैं, जो द्रव्य को एकत्रित करने में नाना प्रकार का पाप किया करते हैं वह इस योनि को आनन्द से भोग जाते हैं परन्तु अगले जन्मों

में उन्हें वह योनि प्राप्त होती है, जहाँ प्रकाश का अंकुर भी प्राप्त नहीं होता, वह मानव अपने जीवन को यही समाप्त करके चला जाता है, अपने पिछले जन्मों के पुण्य को यही दे जाता है अगले जन्मों में कीट पतंग योनियों में चला जाता है। ,

मुनिवरोंएक समय कर्मों की व्याख्या करते हुए !, राम ने वशिष्ठ मुनि महाराज से प्रश्न किया, कि महाराजउसने !आज मार्ग में एक कीड़ा क्रीड़ा कर रहा था। महाराज ! क्या कर्म किया है।? वशिष्ठ ने कहा आज सृष्टि को बने अधिक समय हो गया है, जब से यह सृष्टि प्रारम्भ हुई, यह कीड़ा तीन समय इन्द्र बना है और इन्द्र बन करके आज कर्मो की गति से यह कीड़ा बना बैठा है।

मानव को उन महान व्यक्तियों पर दृष्टि पहुँचानी चाहिए, आज हमारे द्वारा ऋषि का बहुत बड़ा ऋण है। आज हमें ऋषियों की आज्ञा को मानना चाहिए। राम ने कहा महाराजइसने कौन सा कर्म किया !, जो इन्द्र से कीड़ा बन गया? उस समय कहा इन्द्र उसको कहते हैं, जो एक सौ एक अश्वमेध यज्ञ कर लेता है, मृत्यु को जीतकर यज्ञ करता है। परन्तु अश्वमेध यज्ञ कर लेता है, मृत्यु को जीतकर या करता है परन्तु इन्द्र बन करके ऋषियों की तपस्या को नष्ट करने वाला, अपने स्वार्थ के लिएकि , कोई तेरे राज्य को अर्पण न कर ले नाना प्रकार के पाप करके और नाना बौद्धिक पाप करके आज अधोगति को प्राप्त हुआ है, नाना योनियों में प्राप्त होता हुआ, तीन समय इन्द्र बनने के पश्चात्, यह कीड़े की योनि प्राप्त हो गई है, हे रामइसलिए ! आज विचारना है।

मुनिवरोंजब ऐसे यथार्थ गुरु राजा और महाराजाओं को मिलेंगे !, तो राष्ट्र को पुनः उत्थान हो जाएगा। जब राजाओं के आत्मिक गुरु ही नहीं रहे, जो राजाओं पर ऊँचा प्रभाव पड़ जाएं और राजा धार्मिक रहे। तो आज आत्मिकता या राष्ट्र की संस्कृति कहाँ है? अरे, जब गुरु ही वह न रहे, जो यथार्थ शिक्षा देने वाले हों, और न वह राजा रहे, जो शिक्षा पाने वाले हो ।

मुनिवरोंवशिष्ठ मुनि महाराजा की शिक्षा से मर्यादा राम ने क्या किया !, माता की आज्ञा पा करके बन चले गएं, उनकी भुजों की कोमलता, उनके शरीर की कोमलता,

ऐसी विलक्षण थी, कि मानव चकित हो जाता, राज्य स्थानों में विश्राम करने वाले, परन्तु पर्वतों की शैय्या, केवल मुनिवरोंउस मर्यादा को बांधने के लिए !, माता की आज्ञा का पालन करने के लिए, वनों में चले गये।
आज मुनिवरोंमाता की आज्ञा वह है !, मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक काल में कहा !, कि आधुनिक काल तो ऐसा है कि द्रव्य मिल रहा है, और यदि माता कहे, कि द्रव्य को न प्राप्त कर, तो माता को ही नष्ट कर देवें कि मुझे राज्य नहीं भोगने देती, वन दे रही है।
मुनिवरोंआज मानव को विचारना चाहिए कि आज हम किसी की आज्ञा का पालन ! करने आए हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने माता की आज्ञा पा करके, मर्यादा बांधी और राज्य से चले गए । महाराज राम से एक समय निषाद ने कहा, जब उन्हें वन मिला था, कि महाराजातुम राज्य त्याग करके वन को क्यों जा रहे हो !? उस समय राम ने कहा हे निषादसूक्ष्म सा जीवन है और इस जीवन को पा करके संसार में आए है !ं जीवन को ऊँचा बनाने के लिए, आज हम राष्ट्र में चले जाएंगे, तो प्रतीत नहीं हमारी राजसी बुद्धि बन जाएं हम नाना प्रकार के पाप करने लगे, इसलिए हम माता की आज्ञा पा करके वन जा रहे हैं, वन भोगना ही हमारा कर्त्तव्य है। वन में रहेंगे, तो कुछ पायेंगे और राष्ट्र में रहेंगे, तो अपनी निजी सम्पति खो बैठेंगे।
निषाद ने कहा भगवन्आपका यह शब्दार्थ ऐसा क्यों !?' उन्होंने कहा संसार में जिस मानव ने ख्याति पाई है जो मानव ऊँचा बना है, दार्शनिक बना है, आत्मिक बना है, वेदपाठी बना है, वह वन में रहने से बना है, आज मैं वन में रहूँगा, तो मेरा जीवन महान बनेगा, यौगिक बनूंगा, संसार से इस जीवन में कुछ कमा कर ले जाऊँगा। आज मैं राजा बन जाता, तो राष्ट्र बुद्धि हो जाती, न प्रतीत मैं कितने पाप करने लगता, कितने भी नियम से कार्य करता, परन्तु तब भी पता नहीं, कितनी आत्माओं का ऐसा महान प्रभाव मेरी आत्मा पर, मेरे अन्तःकरण पर आ पहुंचता कि हे निषाद ! अगले जन्मों में पता नहीं कौन सी योनि मुझे प्राप्त करनी पड़ती, इसलिए हे निषाद !

आज मैं महान इस वन को भोगकर, अपने कर्त्तव्य को पूर्ण करके, मर्यादा को बाँध करके, जहाँ से आया हूँ वहीं चला जाऊँगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवान्गुरुजी आज का आपका आदेश तो बड़ा ! गम्भीर और प्रिय लगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यतो महानन्द जी ...., तुम्हें प्रिय लगना चाहिए, हमारा तो वाक्य होता ही रहेगा बेटा जैसा होगा। !

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन्कृपा कीजिए !, हम जो वाक्य उच्चारण करते हैं, उसको आप विनोद में ले जाते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यहमारा यह आदेश समाप्त होने वाला है। आज !तो मुनिवरों .... हमें केवल यह ही व्याख्यान देना था, हम उच्चारण कर रहे थे, कि वह परमात्मा गणपति है, व्याख्यान देते देते कितनी दूरी चले गए, हमें कहना यह था, कि गणपति हम परमात्मा को कहा करते हैं, इस संसार में गणनीय हैं, वह संसार का पालन करने वाला है, बेटाकल समय मिलेगा !, तो गणपति की और व्याख्या करेंगे। अब हमारा आदेश समाप्त हो गया है, कल लोमश मुनि से भी कुछ आदेश की प्रार्थना करेंगे, कि इनका भी कुछ प्रकाश हो जाएं। देखा जाएगा, समय मिलेगा, प्रार्थना करेंगे। अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है, अब वेदों का पाठ करेंगे इसके पश्चात हमारी वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। वेदपाठ बी पार्क विनयनगर.सी.

४ 19 08 1962 यौगिक आत्मा का विश्व भ्रमण

जीते रहो, देखो, मुनिवरों अभी अभी हमारा !पर्ययण समय समाप्त हुआ, आज हम तुम्हारे समक्ष, वेदों का मनोहर गान गा रहे थे, उस प्रभु का ऊँचे स्वरों से गुणगान गा रहे थे, जिस विश्वकर्मा ने, जिस महान विष्णु ने जिस महान ब्रह्मा ने जिस महान शिव ने नाना प्रकार से इस सृष्टि क्रम को चला रखा है।

मुनिवरों कल हम !एक ऊँचा गम्भीर, विषय इस महान समाज में प्रस्तुत कर रहे थे, उसको जानने के लिए मानव को बहुत तीव्र बुद्धि की आवश्यकता है।

आज के वेद मन्त्रों में, सबसे पूर्व, उस प्रभु इन्द्र की याचना कर रहे थे, जो वृष्टि कराने वाला है, इस संसार को नियन्त्रण में कर रहा है, इतने बड़े राष्ट्र का स्वामी है, महान है, पवित्र है और निर्द्वन्द्व है, वह प्रभु इस संसार को रचा रहा है और वह कार्य कर रहा है जो कार्य मानव नहीं कर सकता।

मुनिवरोंआत्मा इस शरीर में आकर बौद्धिक और नाना प्रकार के पाप किया करता ! है जिन्हें राजा नहीं जान पाता, परन्तु वह विधाता इस आत्मा के समक्ष बैठा सब कुछ देख रहा है और अन्त में हमारे पाप पुण्य कर्मो का फल देता है, वह प्रभु इस आत्मा का साथी है और इस संसार की चित्रकारी को बना रहा है।

मुनिवरोंकल हमारे महानन्द जी ने नाना प्रकार के प्रश्न प्रस्तुत किए !, परन्तु हम इस सम्बन्ध में अधिक न कहेंगे, केवल इतना ही उच्चारण करना है कि आज हमारा वैदिक विचार क्या कह रहा था, हमारा आत्मिक विज्ञान क्या कह रहा था, हमारे ऋषियों की वह मोक्ष वाणी संसार के लिए क्या कह रही थी। कल हमने उच्चारण किया कि जो मानव संसार से ऊँचे शिखर पर चला जाता है, पवित्र बन जाता है, वह शान्त हो करके महान आवेशों को जानने वाला बन जाता है। इसलिए आज हमें बहुत ऊँचे बनने की आवश्यकता है, बेटाहम नित्य प्रति यही व्याख्यान दिया करते हैं !, आज हम लोमश मुनि जी से प्रार्थना करेंगे, कि वह अपनी विचारधारा इस महान समाज में प्रगट करें, इससे हमारी आत्माओं में शान्ति प्राप्त होगी, हमारा महान समाज पवित्र बनेगा।

तो मुनिवरोंअब हम शान्त होने जा रहे हैं !, इतना और कहते चले जाएं, कि मानव को ऊँचा जाने के लिए बहुत परिश्रम की आवश्यकता है, बहुत कर्म करने की आवश्यकता है। आज लोमश मुनि जी कुछ आधुनिक काल और कुछ ओर कालों का विवरण तुम्हारे समक्ष नियुक्त करेंगे और तुम्हें प्रतीत हो जाएगा कि आज मानव कितना तुच्छ बन चुका है। अब हम शान्त होने जा रहे हैं, लोमश मुनि से प्रार्थना है कि वह अपनी विचार धाराएं प्रगट करें।

धन्य हो !

पूज्य महर्षि लोमशः ओ३म् तत् स्वरूपा भौति। तत् स्वरूपा भवति ब्रह्मांचे नमो अस्ति। ब्रह्मा यदा नमस्तम्। धारणाम् भवति अस्ते।
हे भद्र प्राणियोंहमें ऐसा अवसर किसी !हे भद्र मेरे महान समाज !हे भद्र पुरुषो ! किसी काल में प्राप्त होता है, मेरे गुरु ने मुझे आदेश दिया और कहा कि लोमश मुनि अपनी कुछ वार्त्ता इस समाज में नियुक्त करें, परन्तु मैं इतना ऊँचा नहीं, जितनी मेरे गुरु ने मुझे मान्यता दी है, मेरी बहुत सूक्ष्म सी, तुच्छ बुद्धि है। उस बुद्धि से गुरु जी के आदेशों का पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। आज हम उन विचारों को प्रस्तुत करेंगे, जो आधुनिक समाज के लिए लाभदायक होंगे, गुरुजी तो नित्य प्रति महान और गम्भीर विषयों पर पहुँच जाते हैं जो हमारे लिए बड़े उपयोगी हैं, जिनको जानने के लिए, मानव के जीवन के जीवन समाप्त हो जाते हैं तब भी वह पदार्थ उसके आँगन में नहीं आता, आज गुरु जी की परम कृपा से हमें उसका एक आदेश मिला, उसी आदेश से हम अपनी विचारधारा प्रगट कर रहे हैं।

ब्रह्मयाग की अनिवार्यता

सबसे पूर्व हम उस विधाता का गुणगान गाएं, जो विधाता हमारी वाणी का, श्रोत्रों का चक्षुओं का, त्वचा का, भुजों का, उपस्थ इन्द्रियों का, पदों का सबका महान पिता है, आज सबसे पूर्व विधाता से इन सबमें बल मांगने की इच्छा करें, यह ही मानव की सर्वप्रथम श्रेणी है परन्तु बल कैसे आएगा, आज मानव इसी को नहीं जान रहा है, गुरु जी तो सब वार्त्ताओं को उच्चारण कर चुके हैं, उनका वाक्य ऐसा है, जो प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या के हृदय में स्थान किए जा रहा है, हम इतने योग्य तो नहीं, जो उनके सदृश अपने विचार प्रगट कर सकें, परन्तु आज हम गुरु जी के आदेश को लेकर, उस विधाता की याचना कर रहे हैं, जो प्रत्येक मानव के हृदय में विराजमान है, और हमारी सब इन्द्रियों का साथी है।
आज का मानव समाज यह नहीं जान रहा है कि मैं कौन हूँ? क्या मेरा कर्त्तव्य है? क्या मुझे करना है? किस लिए में आया हूँ? परन्तु हम इस विषय में अधिक न कहेंगे।

महाराजा कृष्णा

गुरु जी ने तुम्हारे समक्ष महाराज कृष्णा के विशेषरा में बहुत कुछ कहा होगा, महाराजा राम के विषय में बहुत कुछ कहा होगा, परन्तु हम गुरु जी के आदेशानुकूल एक विशेष वाक्य उच्चारण कर देवें, कि महाराजाकृष्णा महान परम योगी थे !, जिन्होंने प्रभु की महत्ता को जाना, हमें उनके दर्शन करने का सौभाग्य मिला, आज के मानव को महाराजा कृष्णा के जीवन पर विचार लगा लेना चाहिए कि वह कितने परम योगी थे और उनका जीवन कितना महत्वदायक था परन्तु आधुनिक काल के व्यक्तियों ने, मेरी प्यारी माताओं ने उस महान कृष्णा को भगवान् कहकर के संसार में उनका कोई मूल्य न छोड़ा।

महाराजा कृष्णा को भगवान कहें, तो कौन सी दृष्टि से भगवान् कहें? कौन सा कथन ऐसा है, जिससे आज महाराजा कृष्णा को भगवान् की उपाधि प्राप्त करा देवें? यह कह सकते हैं जैसे हम अपने गुरु को 'भगवन्' कह दिया करते हैं, इसमें कोई ऐसा वाक्य नहीं, अवश्य कह लेना चाहिए। परन्तु आज हम उन महान आत्माओं को इतनी महानता देते हैं, कि उनकी वास्तविकता को खो बैठते हैं, जब उन महान व्यक्तियों की वास्तविकता चली जाती है, तो संसार में अन्धकार आ जाता है, वास्तविकता को अवश्य विचारना चाहिए।

आज मानव कहता चला जा रहा है कि महाराजा कृष्णा 'भगवान' परन्तु क्या मान बैठे, कि महाराजाकृष्णा की सोलह हजार रानियां थी !, मूल्य खो बैठे उस विधाता का, उस महान योगी की वास्तविकता खो करके संसार में अपने स्वार्थ को पूरा करने लगे, आज यह मानव नहीं, यह कैसा समाज बन गया, आज के संसार को देखकर खेद आ रहा है, गुरु जी तो कुछ देख नहीं रहे, उनका तो आपत्ति काल है, जिसके कारण वह आधुनिक संसार के विशेषरा में कोई आदेश नहीं दे सकते, केवल सुनी हुई वार्त्ताओं का विश्लेषरा कर सकते हैं, उसमें कुछ प्रकाश दे सकते हैं। इस सम्बन्ध में कोई अच्छी प्रकार जानकारी नहीं, हम अपनी आत्मा में सब कुछ जान बैठे हैं।

क्या करें, है तो यह अभिमान का वाक्य, परन्तु अपनी विद्या पर मानव को गौरव आता है, अपनी मानव जाति पर गौरव आता है, गुरु जी तो कहा करते हैं, कि जो गौरव का शब्द कहता है वह अभिमानी कहा जाता है। परन्तु गुरु जी तो यौगिक वाक्य कहा करते हैं, एक गौरव का शब्द भी है यदि मानव को अपनी विद्या का, वेद की विद्या का गौरव होता है, तो मानव का जीवन एक काल में ऊँचा बन ही जाता है। जिस काल में हम महाराजा राम को, महाराजा कृष्णा को परमपिता परमात्मा के रूप में मान बैठे, उसी काल में उनकी महत्ता समाप्त हो गई, आज हमें उनका महत्व समाप्त नहीं करना है।

महात्मा बुद्ध

आज संसार की कहाँ तक विहीनता को वर्णन करें, एक काल में, मेरे विधाता महानन्द ने कहा कि महाभारत के पश्चात् जब से कलियुग आया, यहाँ एक महाराजा बुध नाम के आए और उनको भी यहाँ अवतार मान बैठे। जिन्हें वेदों का पूर्णतया ज्ञान न था। परन्तु उन्हें ज्ञान था 'अहिंसा परमो धर्मः' का जिसको लेकर वह चले और संसार का पुनः उत्थान कर दिया, आज हम उन महान व्यक्तियों को महान ही मानें तो उनकी वास्तविकता है। उन महान आत्माओं ने यह भी कहा कि परमात्मा ने तो यह संसार रचा ही नहीं, अनादि से चला आ रहा है तो क्या आज हम उनको अवतार मान बैठे? अपना भगवान मान बैठें, जिन्होंने परमात्मा के ऊँचे स्वरूप को, उस महान विश्वकर्मा की अचिन्ता को अच्छी प्रकार जाना नहीं, हम यह नहीं कहते कि कुछ नहीं जाना, बहुत कुछ जाना, इस अन्धकार के संसार को प्रकाश देकर चले गये, यह अवश्य कहेंगे परन्तु यह नहीं कह सकते, कि वह परमात्मा का अवतार बनकर आ गया, इसको कोई भी महान आत्मा, कोई भी योगी कदापि भी स्वीकार नहीं करेंगा।

आज हम उन महान आत्माओं को महानता देवें, तो कैसी महानता देवें, कि उनके जीवन पर अपनी दृष्टि पहुँचावें, उनके जीवन का जितना अमूल्य रहस्य हैवह हमारे , अन्तःकरण में समा जाएं, आज हम भी सोलह कलाओं को जानने वाले महान और पवित्र बन जाएंगे, एक दूसरे के लिए सेवा के लिए नियुक्त हो जाएंगे।

आज संसार यह कहता है, कि महाराजा कृष्ण को भगवान मानें, तो अवश्य मानना चाहिए। परन्तु यह नहीं माना जाएगा, कि परमात्मा मान लिया जाए। आज यदि उन्हीं को भगवान कहते हैं, जिन्होंने पितामह भीष्म को छल और नीति से शान्त किया, इसके पश्चात और भी द्रोणाचार्य आदियों को भी छल से, इस महाभारत के संग्राम को कराया, अरे, क्या इसी को भगवान का युद्ध कराया हुआ कहोगे? क्या यह ही परमात्मा का कराया हुआ युद्ध है?

मेरे विधाता महानन्द जी कहा करते हैं, कि और किसने कराया, परन्तु हमने कहा कि आज वार्त्ता देने वाले गुरु जी नहीं, आज हम कह रहे हैं कि यह नीति थी, महाराजा कृष्ण इतने महान थे, परम थे उस अन्धकार में उस वैज्ञानिक संग्राम कराने में इतने पूर्ण थे, कि जैसा समय होता, वैसा वह धर्म नीति के अनुकूल कार्य करते, उसी को संसार में महान कह कहते हैं, उनकी महानता अवश्य देनी चाहिए।

भगवान राम

इसी प्रकार राम को देखा राम के जीवन की घटना को सुना, कितना महान, महान आत्मा, ऋषि आत्मा, सूर्य मण्डलों वाली आत्मा, जिन्होंने यहाँ आकर पुनः उत्थान कर दिया, राजा रावण के उस महान अभिमान को चूर किया और मर्यादा को बांध कर चले गये।

आज का मानव क्या कह रहा है, कि जब महाराजा रावण की बहिन सोमतिति उनके समक्ष आई और अपनी इच्छाएं प्रगट की, तो राम ने उस काल लक्ष्मण को आज्ञा दी, कि इसके नाक कानों को स्पष्ट किए जावें, लक्ष्मण ने अपने विधाता की आज्ञा पा करके, उसके नाम कान काट लिए, क्या आज वह ही तुम्हारा भगवान है, जो देव कन्या पर शस्त्र चलाए, जो क्षत्रिय का भी कर्त्तव्य नहीं, आज का मानव इतनी महानता पर जा पहुँचा है, कि उनकी वास्तविकता को खोकर उनको गड्ढे में गिरा दिया है, यह मान लिया जावे, कि कोई देव कन्या समक्ष आई, उसने अपनी इच्छायें प्रगट कीं परन्तु उसको कटु शब्द उच्चारण किए, तो हे विधाता उसकी तो नाम कान कटने के तुल्य ही हो जाती है, जैसे आज मेरे समक्ष मेरे विधाता महानन्द जी आए

इन्होंने अपनी दुर्भावनाएं प्रगट की और हम उन शब्दों से इनके समक्ष आएं, जिनसे इनको लज्जा आ गई मानो लज्जा आना ही नाक का कट जाना है, आज मानव को यह क्यों नहीं विचार लेना चाहिए, उन वाक्यों को उसी प्रकार मान लेना चाहिए जो वास्तविकता थी।

आज का मानव कहता है कि वास्तविकता तो हमारे समक्ष नहीं, परन्तु समक्ष है, तुम अन्धकार में जाकर के, रूढ़ियों में जा करके, उस सूक्ष्मता को नहीं त्यागते, जो त्यागने योग्य है। आधुनिक काल की लेखनी कुछ कह रही है और पूर्व का वाक्य कुछ और कह रहा, आज आँगन में नहीं आ रहा, इसका सबसे मूल कारण है कि तुम रूढ़िवाद से मान रहे हो कि किसी विद्वान ने, किसी महान ने ऐसी लेखनी दी है, वह मिथ्या नहीं थे, उसकी रूप रेखा अच्छी प्रकार नहीं जान रहे हैं, और इसलिए उन महान आत्माओं की महानता त्याग करके आज बहुत तुच्छ बन गएं हैं, भगवान राम ने, भगवान कृष्ण ने अपने जीवन को बहुत कुछ जाना।

योगेश्वर कृष्ण की महानता

गुरु देव ने तो निर्णय कराया होगा परन्तु मेरी भी एक तुच्छ बुद्धि है, मैं भी अपनी विचारधाराओं को प्रगट कर रहा हूँ। महाराज कृष्ण ने महाभारत का संग्राम कराया, यदि उस काल में वह न होते, तो न प्रतीत यह संसार ने होता क्योंकि जब यह संग्राम हुआ, उस समय यहाँ ऐसे यन्त्र स्थिर हो गएं थे जिनको वायु मण्डल में प्रहार करने से यह सर्वज्ञ संसार समाप्त हो जाता। परन्तु महाराजा कृष्ण ने उन वैज्ञानिक रेखा को जाना, जिससे उन महान परमाणुओं का प्रभाव उस रेखा से बाहर न जा सके, वह रेखा शान्त करती रही, उस रेखा को उस परम योगी ने जाना, आज हमें महानता देनी है, तो इन वाक्यों में देनी चाहिए और उनके जीवन पर इस प्रकार दृष्टि पहुँचानी चाहिए, महाराजा कृष्ण का जन्म दिवस निकट आता चला जा रहा है, हम गुरु जी से निवेदन करेंगे कि उनके जन्म दिवस पर उनके जीवन विषय में व्याख्यान दें, वास्तव में तो गुरु जी इतने महान हैं, कि वह पूर्व ही समय को विचार लेते हैं कि आज कौन सा व्याख्यान देना है जिससे मानव का हृदय उन्हीं व्याख्यानों से पुलकित

हो जाएं, हम इस विशेषण में अधिक न कहेंगे, केवल इतना उच्चारण करना है कि यदि महाराजा कृष्ण को महाराजा राम को महानता देनी है, तो उनके पराक्रम की महानता दें, आज यह क्या महानता कि महाराजा कृष्ण के सोलह हजार रानियां थीं, महाराजा कृष्ण शिशुपाल से संग्राम करके महारानी रूक्मिणी को ले आए और उनके परिवार का कोई भी उनके इस कर्तव्य से सहमत नहीं था, यह तो ऐसी महानता दे दी, जैसे आधुनिक काल मैं इस महान ऋषि भूमि पर जहाँ हमारी यह आकाशवाणी गुरु जी के शरीर द्वारा मृतमण्डल में जा रही है इस पवित्र भूमि पर यवनों का राज्य रहा और यवनों ने इसी प्रकार मनमाने कार्य किये, मेरी प्यारी माताओं को नाना प्रकार के कष्ट दिए और इस संसार को गड्ढ़े में पहुँचाया।

महाभारत संग्राम के पश्चात् यहाँ क्षत्रिय समाप्त होते चले गये, यवनों का राज्य आ गया, यवनों के राष्ट्र ने संसार को अन्धकार में पहुँचा दिया, यहाँ शिक्षा का एक अंकुर भी नहीं पाया। आज इस संसार के बुद्धिमानों पर खेद है, यह संसार कहाँ सो गया, कौन सी सुषुप्ति अवस्था में चला गया। आज वह यवनों का राज्य भी समाप्त हुआ, आज भी हम देख रहे हैं, गुरु जी तो देखते नहीं, मेरे विधाता महानन्द जी देखा करते हैं, इनके भाव से प्रगट होता है कि आज का संसार यह नहीं मान रहा है कि ऋषियों के गौरव को हमने जानना है, कितने खेद का वाक्य है। हमें ऋषियों के गौरव को, माताओं के गौरव को, जिन माताओं ने महाराजा कृष्ण को, महाराजा राम को महाराजा बुध को, महाराजा कोपात्री आदियों को जन्म दिया, आज हमें उन माताओं के गौरव को, उन माताओं के गर्भाशय को ऊँचा बनाना है। आज हम यह विचार रहे हैं कि आज जैसा दुर्भाग्य मानव का कदापि न होगा। आज हमें मातृभूमि को ऊँचा बनाने के लिए बहुत कुछ जानना है।

गुरु जी का तो यह आदेश नहीं था, कि इतने व्याख्यान प्रारम्भ किए जाएं, आज हमारा अमूल्य आदेश यह था, कि आज हमें महान आत्माओं के गौरव को जानना है, समय आगे बढ़ता चला जा रहा है, भौतिक विज्ञान प्रगतिशील बनता चला जा रहा है परन्तु अभी अभी यह विज्ञान द्वापर काल जितने विज्ञान का आधा भी नहीं पहुँचा है।

अवतार

एक समय मेरे विधाता महानन्द जी ने कहा कि आधुनिक काल में कुछ व्यक्ति ऐसा कहते हैं कि जैसे महाराजा राम, महाराजा, कृष्ण और भी नानाएं जैसे वामन, कच्छप आदि अवतार हुए इसी प्रकार इस कलियुग में निष्कलंक अवतार आने वाले हैं परन्तु यह वाक्य यथार्थ हो जाएगा और कैसे हो जाएगा कि कोई न कोई ऐसा वैज्ञानिक अवश्य उत्पन्न हो जाएगा, जो महाभारत जैसे वैज्ञानिक संग्राम के लिए, उन यान्त्रिक रेखाओं को जानेगा। जो महाराजा कृष्ण ने और त्रेता में लक्ष्मण ने जाना, हमारा यह अनुमान है कि जब तक भौतिक विज्ञान का विश्व संग्राम न होगा जब तक कोई ऐसी आत्मा उत्पन्न न होगी। आज मानव कहता है कि यह महान आत्मा कहाँ उत्पन्न होगी कैसी होगी, तो यह तो क्या उच्चारण करेंगे, न प्रतीत कौन आत्मा कहाँ पुनः उत्थान होकर आ जाएं। यह हमारा निश्चय नहीं, परन्तु ऐसा अनुमान है। देखो, महर्षि वशिष्ठ ने महाराजा राम का राजतिलक दिवस नियुक्त कर दिया, परन्तु वह तो शान्त हो गया और राम को वन हो गया, इसी प्रकार मनुष्य के अनुमान होते हैं, अनुमान के आधारों से मानव चलता है, अनुमान से ही संसार चल रहा है, ऐसे ही आज हम अनुमान लगा रहे हैं यह तो प्रभु जाने कि इसमें क्या होगा। !

पुरातन विज्ञान

मैंने गुरु जी की परम कृपा से, परमपिता परमात्मा की महान दया से यह जाना कि आधुनिक काल के व्यक्ति आज चन्द्रमा की परिक्रमा करने जा रहे है, यह भौतिकता में अच्छी ही वार्त्ता है हम नहीं कहते कि यह मानव को अनुमान नहीं करना चाहिए परन्तु आज का वैज्ञानिक यह कह रहा है कि पूर्व में इस विज्ञान को किसी ने नहीं जाना, मेरे विधाता महानन्द जी ने ऐसा कहा, परन्तु आज के मानव की यह महान भूल है, उसने पूर्व संसार के इतिहासों का स्वाध्याय नहीं किया, राजा रावण के पुत्र नारायन्तक ने त्रेता काल में इन यन्त्रों को बनाया, द्वापर काल में भीम के पुत्र घटोत्कच्छ तक ने चन्द्रमा में जाने वाले यन्त्रों को खोजा, मेरे एक परम शिष्य जिनको महर्षि उदांगनी कहा जाता है उन्होंने अपने शरीर के वास्तविक तत्त्वों को जाना और

चन्द्रमा की परिक्रमा की, मैंने भी गुरु जी की परम कृपा से यह जाना कि जब यह मन इस पार्थिव शरीर में रहता है तो इसकी कैसी गति रहती है, वेदों का स्वाध्याय किया और मन की गति को जाना।

अन्तःकरण का यन्त्र व आठ चक्र

मन की गति को अन्तःकरण में नियुक्त करते हुए जैसा गुरु जी कल नियुक्त कर रहे थे इस अन्तःकरण का एक यन्त्र बनाया, इस स्थूल, कारण और सूक्ष्म शरीर को जाना, जितनी चित्तवृत्तियाँ हैं उन सबको एकाग्र कर अन्तःकरण का यन्त्र बन जाता है और मन अन्तःकरण में विराजमान हो जाता है, इस शरीर से उत्थान होता है, वायु मण्डल में, सूर्य मण्डली में विचरण किया करता है। अब वाक्य रह जाता है कि यह योगी कैसे जान लेता है? जब इन पाँचों प्राणों की प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान की एक सन्धि बन जाती है तो सन्धि बन करके मूलाधार से इस आत्मा का उत्थान होता है, आगे नाभि चक्र में जाता है, जब यह मूलाधार में जाता है तो आत्मा अपने पार्थिवता के सम्बन्ध को धीरे धीरे त्यागता है उसके पश्चात् वायु का वेग अधिक रहता है, क्योंकि अपान उसके द्वारा है, प्राण भी। परन्तु पार्थिवता उसको अधिक अपने द्वारा अर्पण किया करती है, परन्तु योगी जब इस पर अधिक परिश्रम करता है, तो चित्त की वृत्तियों को एकाग्र करके आत्मा प्राणों के सहित आगे चलता है, नाभि चक्र में, यहाँ एक ऐसी विसंग रूप रेखा आती है, जिसको जानकर यह आत्मा जान लेता है कि अब तू उस वायु के वेग में जा रहा है, बड़ा भयानक प्रतीत होने लगता है, परन्तु योगी को इस नाभि चक्र से ऊपर पहुँचना है, जहाँ वायु का बड़ा वेग है और जल के तत्त्व अधिक लिए हुए हैं, उस समय शरीर से एक विलक्षणता उत्पन्न होती है। उसके पश्चात् आगे हृदय चक्र आया तो हृदय और नाभि चक्र के मध्य में जो वायु का वेग अधिक था और जल के परमाणु थे, वह शान्त होने लगे हृदय चक्र में वायु अग्नि के तत्त्व अधिक लिए होती है, उस समय इस आत्मा को प्राणों के सहित और तन्मात्राओं के सहित बहुत हल्का रूप बन जाता है, एक महान सूक्ष्म रूप बन जाता है।

सूक्ष्म रूप बनकर जब यह कण्ठ चक्र में जाता है, तो उसके पश्चात् प्रतीत होता है, कि आज तू उस आँगन में आ गया है, जहाँ वायु का वेग बहुत ही सूक्ष्म है, और आत्मा वहाँ भ्रमण कर रहा है। आगे चल करके जब यह आत्मा घ्राण चक्र में जाता है, तो योगी को प्रतीत देता है, कि अब तू उस स्थल में आ गया है, जहाँ चन्द्रमा अपनी कांति दे रहा है ऐसा प्रतीत होने लगता है जैसे चन्द्रमा और सूर्य के मध्य में परिक्रमा कर रहा है, उसके पश्चात उस योगी का आत्मा उस त्रिवेणी स्थान में जाता है और ऐसा प्रतीत होता है, जैसे कि पृथ्वी, चन्द्रमा और सूर्य की सन्धि होने के लिए जा रही है।

आगे चल करके यह आत्मा जब ब्रह्मरन्ध्र में जाता है, तो यह सब कुछ तुच्छ बन जाता है और इस आत्मा को एक महान प्रकाश मिल जाता है और एक मग्नता आती है और परमात्मा की महान सृष्टि को जानने वाला बन जाता है।

इसके पश्चात् जब कुण्डली मूलाधार में रमण करता है तो आत्मा की रूपरेखा बहुत सूक्ष्म बन जाती है और सूक्ष्म बन जाने के कारण, वहाँ जिसको रीढ़ कहते हैं, जिसकी भूर्भुवः निरक्षणी रूपकम्' ऐसा योगियों ने इसकी रूपरेखा निर्णय दी है, कि वहाँ प्रकृति मण्डल, मन का मण्डल, ब्रह्म का मण्डल और महान इन सब तन्मात्राओं का, सबका मण्डल होता है। उसके पश्चात् आत्मा का सूक्ष्म रूप बन करके, यह महान आत्मा निर्लेप होकर के परमात्मा के दर्शन कर लेता है।

जब योगी इतनी जानकारी कर लेता है, तो योगी में वह महत्वता आ जाती है, कि स्थूल शरीर को जब इच्छा हुई त्यागा और लोक लोकान्तरों में आत्मा भ्रमण करने लगता है, हमने इस गति को जानने के पश्चात ही यह निर्णय दिया हैं

हमारे समक्ष प्रश्न आता है, और महानन्द जी अभी अभी प्रश्न कर लें, तो इसमें ऐसा कोई सन्देह नहीं, कि जब परमात्मा के दर्शन वाणी का विषय ही नहीं, तो आपने कैसे उच्चारण कर दिया, परन्तु यौगिक क्रियाओं को अनुभव से जाना जाता है, उसका अनुमान लगा सकते हैं, परन्तु जिस समय यह आत्मा परमात्मा में रमण कर लेता है,

और आनन्द ही आनन्द भोगता रहता है, उस समय उस आनन्द को उच्चारण नहीं कर सकता, यह आत्मा, यह अवश्य है।

हमारा जो गौरव का शब्दार्थ था कि यदि चन्द्रमा की परिक्रमा भी करें, तो अच्छी ही वार्त्ता है। वेद की इस महानता को जाने, परन्तु आज हम देख रहे हैं, कि मानव चन्द्रमा की परिक्रमा भी कर रहा है, नाना प्रकार के विमान भी बनाएं जा रहे हैं। परन्तु संसार को आत्मिक शान्ति प्राप्त नहीं हो रही है। हमारा तो गौरव है कि हमारी संस्कृति सबको शान्ति देने वाली है, आत्मा में वह भाव उत्पन्न करने वाली है, जिससे मातृभूमि राष्ट्र की वह संस्कृति बन जाती है और राष्ट्र में वास्तविक शान्ति प्राप्त हो जाती है, ऐसा वैदिक विचार रहा है।

संस्कृति

आधुनिक काल का राष्ट्र द्वितीय राष्ट्रों की संस्कृति और उनकी वार्त्ताओं को समक्ष ले रहे है, और विचार लगाए चले जा रहे हैं, कि हमें उनके आधार से चलना है। उनका यह वाक्य यथार्थ भी है, क्योंकि हमारा आत्मा इतना निर्बल बन चुका है, कि हमें अपनी संस्कृति को अपनाते हुए भय प्रतीत दे रहा है और वह भय हमारी आत्माओं का है। आज हमारी संस्कृति का अंकुर बहुत सूक्ष्म रह रहा है, उसको अपनाने के लिए हम प्रयत्न नहीं कर रहे हैं, दूसरे राष्ट्रों की वार्त्ताओं पर बल देना चाहते है, परन्तु कोई काल ऐसा था, रघु का राष्ट्र हमने देखा, सर्वत्र संसार में संस्कृति फैली हुई थी, भिन्न भिन्न राष्ट्रों में वेदों का प्रसार होता था, उस काल को देखते हुए, आज हम अपने गौरव की कोई वार्त्ता उच्चारण नहीं कर सकते। आज के मानव को कुछ यवनों का भय है, कुछ महान उन व्यक्तियों का भय है, जिनके द्वारा नाना प्रकार से हमारा जीवन पलता है, भय होने के कारण, आज हमारा आत्मा, हमारा मन, हमारा अन्तःकरण उन समस्याओं को पूर्ण नहीं कर रहा है, मानव अपनी संस्कृति को खो बैठा है और अपने हृदय में यह माने बैठा है, कि यह अपनी संस्कृति क्या शक्ति है, दूसरे राष्ट्रों की वार्त्ता समक्ष होगी, तो वैज्ञानिक तो बनेंगे, परन्तु मानव ने यह नहीं

जाना, आधुनिक काल के राष्ट्रों ने यह नहीं जाना कि अरे, जो संस्कृति आई है, जो विज्ञान आया है वह कहाँ से आया है, कौन सी वह निधि है।

वह निधि महान वेदों में, उपनिषद में, नाना ऋषि, महर्षियों के प्रकरणों में एक एक शब्दार्थ ज्ञान और विज्ञान से छिपा हुआ है, उस ज्ञान विज्ञान को जानने के लिए प्रयत्नशील नहीं हो रहे हैं। हम प्रयत्न कहाँ से करें, खोई हुई वार्त्ता कहाँ से ले आएं, आज वह वार्त्ता खो गई है, वह विज्ञान हमसे दूर चला गया है, क्या करें यवनों ने ऐसा किया।

गुरुदेवहमने इस संसार को अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा बहुत कुछ देखा है !, जहाँ यह आपका मृतलोकीय शरीर है, जहाँ यह आकाशवाणी जा रही है वहाँ आज का मानव भ्रान्तिदायक हो रहा है, गुरु जी के शरीर को ब्रह्मचारी रूपों से पुकारा जाता है और भ्रान्ति में लगा हुआ है कि ब्रह्मचारी जी की यह वार्त्ताएं कहाँ से आती हैं, कैसे होती हैं? यह समस्या बड़ी विलक्षण बनती चली जा रही है, यह भी महान संस्कृति का गौरव है।

गुरु देव का यौगिक विषय

गुरु जी के शरीर की व्याख्या हम नहीं दे सकते, परन्तु आज यह अवश्य है कि गुरुजी के यौगिक आदेश के अनुकूल आत्माओं का पुनः उत्थान हुआ, अन्तरिक्ष मण्डलों में सूक्ष्म शरीर वाली आत्माओं से सम्बन्ध हुआ और व्याख्यान प्रारम्भ हो गये। यह जाना कैसा जावेगा? आज यह मानव तार्किक बुद्धि से जानना चाहता है, विज्ञान से जानना चाहता है, महान अपनी तुच्छ बुद्धि से जानना चाहता है, जिस बुद्धि से सांसारिक व्यवहार कर रहे हैं, तो इस बुद्धि से यह वाक्य नहीं जाना जाएगा, यह यौगिक विषय तभी जाना जाएगा, जब हम चन्द्र लोक में, सूर्य लोक में, बृहस्पति लोकों में और नाना लोकों में बिना यन्त्रों के भ्रमण करेंगे, यह विषय उस काल का है, आज का मानव इस काल में जानना चाहता है कदापि नहीं जाना जाएगा।

आत्मा की गणना

आज का मानव यह भी कह रहा है, कि यदि आत्मा परमात्मा और प्रकृति यह तीनों पदार्थ अनादि हैं, तो हम यह जाने कि आत्मा कितनी हैं, आत्माओं की क्या गणना है? परन्तु यह विषय तो बहुत अनुसन्धान का है। परमात्मा की अनन्त सृष्टि है, अनन्त लोक लोकान्तर हैं, इनकी कौन कहाँ तक गणना कर सकता है, परन्तु गुरुजी किसी अवसर पर समय देंगे, तो किसी काल में देखेंगे । वास्तव में गुरुजी कहा करते हैं कि यहाँ आ करके आत्मा और मानव के विचार शान्त हो जाते हैं, यह वाक्य यथार्थ है, ऐसा कह दिया जाएं क्योंकि यह वाक्य एक महान यौगिक विषय है, जो महान परमात्मा के आँगन में जा पहुँचा हो, उनका विषय है जैसे राष्ट्र के कर्मचारी अपने राष्ट्र की गणना को जान लेते हैं, ऐसे ही हम भी परमात्मा के पूर्ण राष्ट्र में तो पहुँचे नहीं, परन्तु प्रयत्न करेंगे, कि परमात्मा के कुछ लोकों की गणना अवश्य ही कर देवें, अनुसन्धान करेंगे इस विषय में।

धन्यवाद !

कर्म का भोग

हम उच्चारण कर रहे थे, गुरुजी के कुछ वाक्य, गुरु जी का पुनः आत्मा इन सूक्ष्म शरीर वाली आत्माओं में आ पहुँचा, और पूर्व की भांति, वही शिक्षा हमें प्रदान करके चले जाते हैं। आज हमें इसका भी बड़ा खेद है कि गुरुजी का कोई दुर्भाग्य है, परन्तु हमारे मुखारबिन्द से यह शोभा नहीं देता, कि आज हम गुरुजी का दुर्भाग्य कहें, क्योंकि गुरुओं का कभी दुर्भाग्य नहीं हुआ करता, आज के इस महान स्वार्थी संसार को जानकर बड़ा आश्चर्य आ रहा है, कि विधाता ने गुरु के उन तुच्छ कर्मो ने ऐसे काल में उन्हें जन्म प्रस्तुत किया, परन्तु खेद होने से क्या होता है, मानव जो कर्म करता है, वह भोगना ही अनिवार्य है।

आज का मानव तो कह रहा है कि राम राम किया और पाप समाप्त हो गए, राधा कृष्ण, राधा कृष्ण कहा, पाप समाप्त हो गएं। परन्तु आज मानव को विचारना चाहिए,

कि जिस महान आत्मा ने, अपने सौ सौ वर्ष वेद में स्वाध्याय में लगाए और उसका सूक्ष्म सा, तुच्छ कर्म आया तो आज यह गति बन गई।

शान्ति की प्राप्ति

आज मानव को विचार लगा लेना चाहिए कि ऊँचा बनने से, ऊँचे बनेंगे, जब तक मन की गतियों को नहीं जाना जाएगा, अपनी मानवता पर दृष्टि नहीं पहुँचाई जाएगी, अपने आहार व्यवहारों को सबको नहीं विचारेंगे मानव के आत्मा में शान्ति प्राप्त न होगी, मानव जो कर्म करता है, वह भोगना ही पड़ता है। **शान्ति के लिए मानव को स्वच्छ आहार, स्वच्छ व्यवहार को अपनाना है और नाना बौद्धिक पापों से बचने का प्रयत्न करना चाहिए, यह मानव के चलने के लिए प्रथम श्रेणी है।**

महानन्द जी ने जैसा कहा कि आज का मानव आहार और व्यवहारों पर दृष्टि नहीं पहुँचा रहा है, और तब ही यह संसार अधोगति वाला बन गया है और इसे शान्ति मिलनी महान दुर्लभ हो रही है।

तो यह हमारा एक बुद्धिदायक आदेश था, हमारी जितनी तुच्छ बुद्धि थी, उतना हमने आदेश दिया और हम गुरु जी से प्रार्थना करेंगे, कि अब उन्हें जो अपनी विचारधाराएं उच्चारण करनी हैं, प्रगट करें। एक वाक्य और उच्चारण करना है, कि मानव ऊँचा बने, महान बने, पवित्र बने, राष्ट्र की संस्कृति को अपनाए परन्तु इस भूमि पर गौरव होना चाहिए।

माता गार्गी

मेरे प्यारेअन्य ऋषियों ने ऐसा कहा है !, कि हमारा जन्म हो, तो महान इस पवित्र भूमि पर हो, जहाँ मेरी माताएं और मेरे प्यारेविधाता ब्रह्मचर्य का पालन करके !, अपने राष्ट्र को, अपने जीवन को ऊँचा बना गएं हैं। माता गार्गी के जीवन से प्राप्त होता है, कि उन्होंने कई जन्म जन्मान्तरों में वेदों का स्वाध्याय पाते हुए जब राजा जनक के काल में जन्म हुआ तो वर्ष तक क्या 25, वर्ष तक वेदों का स्वाध्याय 41 किया आर अन्त में वैराग्य प्राप्त हुआ। आज माताओं के गौरव को इतना हताश बना दिया है, महान उसके गौरव को शान्त कर दिया है। कैसा अन्धकार का काल आया।

माताओं को शिक्षा देने के लिए, तार्किक बन बनकर आए और कहा कि देवियों को, कन्याओं को शिक्षा देना महान पाप माना जाएगा, यह कैसा महान, दुर्भाग्य, यहाँ आया, कैसे महान स्वार्थी आचार्य आ पहुँचे, जिन्होंने अपने स्वार्थ को सिद्ध करना चाहा, परन्तु तब भी उनका स्वार्थ सिद्ध न हो सका।

महान आत्मा

यहाँ तो उन आत्माओं की आवश्यकता है, जो आत्मा यहाँ आ करके वैदिक पथ को दर्शा जाएं, यहाँ उन आत्माओं की आवश्यकता नहीं, जो अपने स्वार्थ को पूर्ण करने वाली हों और वेद के विपरीत चलने वाले हों। यदि यह संसार एक साथ मिलकर प्रभु से याचना करें, कि हे प्रभुहमारे मध्य में उस व्यक्ति को न भेज !, जो हमारी आत्माओं के उत्सव को हताश बना दे, वह आत्मा आए, जो यहाँ आ करके वेदों का प्रसार करें और महान सब वेदों को और संस्कृति को जानने वाले बने। हमारे शरीर से जो महान रश्मि उत्पन्न होवे, वह वेद से भरी हुई हो, हमारी वाणी मातृ संस्कृति से भरी हुई हो। विधाताऐसा महान व्यक्ति हमारे मध्य में आना चाहिए। जिस प्रकार ! महाराज कृष्णा आए और नाना देवियों को नाना पुरुषों को वैदिक पथ पर चला कर चले गए। अब हम शान्त करते चले जा रहे हैं, गुरु जी अपनी विचार धाराएं प्रगट करेंगे। धन्यवाद।

पूज्यपाद गुरुदेवः मुनिवरोंलोमश ने जैसा कहा है !अभी अभी मेरे प्यारे !, वह बड़ा बुद्धिवर्धक, महान और विचित्र था, हमें इनकी वार्त्ता बड़ी प्रिय और सुशोभित लगी। हम इन्हें बारम्बार धन्यवाद दे रहे हैं। हमें जो कुछ उच्चारण करना था, वह प्रारम्भ में उच्चारण कर चुके हैं, लोमश मुनि ने बहुत कुछ कहा है, अब तो यह इच्छा हो रही है कि इन सब व्याख्यानों को समाप्त कर देना चाहिए, वेद मन्त्रों का पाठ हो जाएं और शान्त हो जाएं।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जी आज अपने तो कुछ कहा ही नहीं, आप भी तो अपना कुछ प्रकाश दे दीजिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीअब हमारा वाक्य तो कल होगा !, लोमश मुनि ने बहुत कुछ कहा है।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा धन्यवाद। !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंअब हमारे यह वाक्य समाप्त हो गएं हैं !, कल हमारा वाक्य जो कल प्रकरण हमने त्यागा है, उससे आगे प्रसार किया जाएगा। लोमश मुनि से किसी काल में द्वितीय वाक्य प्रसार कराएंगे जैसा इन्होंने कहा है, यह अपने विचारों पर अनुसन्धान कर लेंगे, उसके पश्चात अपने विचार प्रगट करेंगे। अब हमारा वेदों का पाठ होगा इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। धन्यवादपार्क .सी.बी !, विनय नगर, नई दिल्ली दिनांक 19.08.1962।

५ 28 07 1963 पुष्प 04 देवयान और देवता

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम तुम्हारे समक्ष कुछ वेद मन्त्रों का पाठ कर रहे थे। आज का हमारा वेद पाठ बड़ा मधुर और सुन्दर था और हमारे हृदय को स्पर्श करता चला जा रहा था। पूर्व के मन्त्रों में उन देवताओं की याचना करता चला जा रहा था। पूर्व के मन्त्रों में उन देवताओं की याचना कर रहे थे, जो हमारे मनुष्यत्व में नाना सहायता दिया करते हैं। जिन देवताओं के आधार से यह सृष्टि चल रही है। जिन देवताओं के आधार से यह प्राण स्थिर रहता है। उन देवताओं के लिए हम याचना करते चले जाएं। सर्वप्रथम हमें उस देवता की पूजा करनी चाहिए, जो देवताओं का भी देवता है। मुनिवरोंवह है ! परमपिता परमात्मा। जिसकी याचना करते हुए, देवता भी कार्य करते हैं। आज हम उस परमपिता परमात्मा का गुण गाते चले जाएं। हे देवआ और हमारा कल्याण ! कर।

मुनिवरोंआज हम व्याकुल हो रहे हैं !, हमारा जीवन क्षणभंगुर है। इस क्षणभंगुर जीवन में भगवन्आपकी महिमा का कुछ तो गुणगान गाएं !, आपकी अलौकिकता पर तो दृष्टि पहुँचाएं। हे देवआपकी उस महान दया को विच !ारते चले जा रहे हैं, जो सृष्टि के प्रारम्भ से चली आ रही है। आज हम उस भूषण को चाहते है जिससे

भगवन! हमारा वास्तविक कल्याण होता है, हमें वह भूषण नहीं चाहिए, जो क्षणभंगुर हो, इस अलौकिकता पर प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या को विचार करना है।

मुनिवरोंआज हम उ !स गुणगान को गाएं, जिससे हम देवता बन सकें और संसार को देवता बना सकें। हमें वह देवता बनना है, कि हम कम से कम एक व्यक्ति को तो अपने सदृश्य देवता बना ही सकें। उस देवत्व की हमें देव से याचना करनी है। जब तक हम उस देव का अनुकरण नहीं करेंगे, तब तक हमारा जीवन ऊँचा नहीं बनेगा।

कल मेरे प्यारेमहानन्द जी ने प्रश्न किया कि देवयान और पि !तृयान किसे कहते हैं, आज के वेदपाठ में देवयान और पितरयान का बड़ा सुन्दर वर्णन आ रहा था, देवयान और पितृयान किसे कहते हैं, यह संसार जानता हुआ भी नहीं जानता, आज हम तुम्हें इसका ज्ञान कराएं कि क्यों नहीं जानता और क्यों जानता है।

मुनिवरोंजानता तो इसलिए है !, कि जब इसका आत्मा शरीर से निकलता है तो अन्तरिक्ष में और देवयान में चला जाता है। जानता हुआ जानता इसलिए नहीं, क्योंकि यह बुद्धि से अनुकरण करता है, यह बुद्धि से दूर का विषय है, बुद्धि में विचारने से बुद्धि शान्त हो जाती है, वाणी भी उस महिमा का गुणगान नहीं गा सकती।

देवयान

मुनिवरोंदेखो !, महर्षि पारा मुनि से एक समय महर्षि व्यास ने प्रश्न किया, कि भगवन्जब यह आत्मा शरीर में निकलता है !, तो किस किस दिशा में कहाँ कहाँ जाता है? कौन कौन कर्म करने से देवता बनता है? देवता किसको कहते हैं?

मुनिवरोंदेखो !, पारा मुनि ने कहा कि भाई मेरी किंचित्त बुद्धि है, मैं अपनी सूक्ष्म बुद्धि के अनुकूल कुछ उच्चारण करूंगा। यदि कोई बुद्धिमान इससे ऊँची वार्त्ता प्रकट करे, तो उसको भी स्वीकार कर लेना, यह ऋषियों का वचन है। कोई ऋषि, महर्षि अपनी बुद्धि को ऊँचा नहीं कहता, यह क्या है? यह विचार में नहीं आता कि प्रत्येक बुद्धिमान, गम्भीर और तपस्वी अपनी बुद्धि को किंचित्त ही कहते चले आए हैं। वह

इसलिए कहा है, कि इस किंचित्त बुद्धि से कोई वाक्य अशुद्ध हो जाए, तो उस अशुद्धता का भार अपने ऊपर न बने, बुद्धिमान उसका निर्णय दे दें।

महर्षि पारा मुनि ने कहा कि हे व्याससंसार में जब यह आत्मा शरीर में आकर ! पवित्र बनने का प्रयत्न करता है, अपने जीवन को तपस्वी बनाता है, यज्ञमय बनाता है, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान करता है, जिज्ञासु बनता है और ऊँचे कर्म करता है तो वह कुछ देवयान में रमण करता है। जहाँ देवात्माएं रमण करती हैं। हमारे शास्त्रकारों ने ऐसा भी माना है कि जो यहाँ तुच्छ कर्म करते हैं और पापाचार करते हैं उन्हें जैसा मैंने पूर्वकाल में कहा है कि उन्हें अश्वस्थी वायु में मरण करके स्वतः ही माता के गर्भस्थल में जाने की आवश्यकता रहती है। उनके अन्तःकरण में इतने पाप एकत्रित हो जाते है कि वह माता के स्थल में उसी दिशा में फिर स्थापित हो जाता है और निम्न योनियों में जन्म ग्रहण करता है।

मुनिवरोंइसी प्रकार आज हमें इस ! विचार पर पहुँचाना चाहिए, कि पितृयान और देवयान किसको कहते हैं। इसके लिए आज मुझे विवाद में नहीं जाना है। मुझे तो अपनी किंचित्त बुद्धि से, जो प्रभु ने दी है उस बुद्धि से ऋषियों का प्रमाण देकर कुछ उच्चारण कर रहा हूँ, हो सकता है, निर्णय देने में कुछ त्रुटियाँ हो जाए।

मुनिवरोंसुनो !, ऋषि ने कहा देवयान उसको कहते हैं, जहाँ देव आत्माएं रहती हैं। जहाँ वायु, अग्नि आदि की प्रधानता वाले शरीर होते हैंअन्तःकरण में पुण्य की , स्थापना होती है और वहमुनिवरों! पवित्र और विचित्र लोक में विचरती हैं जिसको देवलोक या देवयान कहते हैं।

आज प्रश्न होता है, कि क्या देवयान में सत्संग भी करते हैं? क्या प्रश्न उत्तर भी करते हैं।

तो मुनिवरोंदेखो !, देवता प्रश्न उत्तर नहीं करते, वे तो अपने आनन्द में रमण करते हैं। वे तो मुनिवरों! संसार को देखते हैं, यहाँ किस वस्तु की आवश्यकता है, संसार में वैदिक निधि शून्य होने पर उसको उच्च बनाने के लिए, देवता स्वयं इच्छा के अनुकूल प्रकट हो जाते हैं और उस महानता का प्रसार करके यहाँ से चल बसते हैं।

भगवान् कृष्णा का पूर्व जीवन

मुनिवरों जैसे भगवान् कृष्णा के पूर्व जन्म का विवरण !मिलता है, भगवान् कृष्णा इस कृष्णा जीवन से पूर्व मध्यूनपान ऋषि महाराज थे। मध्यूनपान ऋषि महाराज जब देवयान में विचरण करते थे, तो संसार को देखा करते थे, कि यहाँ क्या हो रहा है? यह कौन सी प्रगति को जा रहा था जब यहाँ वैज्ञानिक यन्त्रों का आविष्कार किया जा रहा था और राजा कंस के अत्याचारों से महापाप छा रहा था, उस काल में मध्यूनपान ऋषि ने माता देवकी के यहाँ आ करके, उस महान कष्ट यात्रा में माता के गर्भस्थल में धारण होकर माता यशोदा के गृह में पहुँचे। उन्होंने आ करके संसार को ऊँचा बनाया और अर्जुन से कहा कि मैं सब प्रकृति को जानता हूँ, परन्तु मैं उस कर्म को नहीं करूंगा, जिस कर्म के करने से, यह संसार तुच्छ बन जाए, मुझे तो वह कर्म करना है, जिससे यह संसार ऊँचा बने। तो मुनिवरोंउसका नाम देवयान है !, जहाँ संसार को देखा जाता है।

महर्षि अटूटी

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे महर्ष !ि अटूटी महाराज का विवरण दिया कि वह देवयान में रमण करते थे, जिनके जीवन की कुछ घटनाएं प्राप्त होती हैं।

महर्षि अटूटी की माता का नाम सोमवती था जो महर्षि कोलशती की पत्नी थी। उसने अपने जीवन में सोचा कि मेरा पुत्र देवयान में विचरने वाला हो। पुत्र उत्पन्न होने के पश्चात्, माता ने सोचा, कि मैं तो अपने बालक को अटूटी नाम से उच्चारण करूंगी, जिसकी परमात्मा में अटूटी धारणा हो, तो देवताओं के लिए अपने पुत्र को अर्पण करती हूँ।

उस समय देखो,उस बालक अटूटी ने माता के महान आदेशों को पालन करके ! ब्रह्मचारी बन करके, देवयान का प्रयत्न किया। धारणा ध्यान समाधियों में संलग्न होकर इस अन्तरिक्ष को और तीनों प्रकार की वायु से जैसा मैंने पूर्वकाल में कहा है कि जैसे सोमहिति, मध्यान और इन्द्र वायु हैं, ऊपर के स्थान में, जिसको देवयान कहा जाता है, उसमें विचरने वाले बने। माता ने उसको आदेश दिया था, कि यह वेद की

अमूल्य निधि है। हे पुत्रजब ! जब यह लुप्त हो जाए, तू इसको ऊँचा बनाना। तो मुनिवरों !उस माता के बालक ने वेद की अमूल्य निधि को जानकर देवयान में रमण किया। इसके पश्चात् जैसा मुझे मेरे प्यारेमहानन्द जी से सूचना मिली है !, कि उसी आत्मा ने इस कलियुग में आकर, माता के गर्भ में जन्म लिया और जन्म पा करके, संसार को ऊँचा बनाने का प्रयत्न किया।

आज हमें देवयान की वार्त्ताओं का स्वीकार कर लेना चाहिए। जो देवता हमें आदेश देकर, यहाँ से देवयान चले जाते हैं और देवयान से आकर हमारे कल्याण के लिए सोचते हैं। आज उन देवताओं की वार्त्ता को स्वीकार कर, संसार में ऊँचा बनना है। आज हमें उस निद्रा में व्याकुल नहीं होना है, जिस निद्रा में प्रमादी और आलसी बन करके, अपने जीवन को शान्त किया करते हैं। हमें देवयान की वार्त्ताओं को और देवताओं के वचनों को स्वीकार करके संसार से चलना है।

मुनिवरोंदेखो !, महाराजा कृष्ण के समय कितना दुराचार आ चुका था, कितना विज्ञान आ चुका परन्तु भगवान् कृष्ण के जीवन को न छू सका, देवता उसी को कहते हैं जिसके जीवन को यह रजोगुण तमोगुण से भरा हुआ संसार न छू सके। उनका जानो, वह देवयान से आए हैं, वह संसार में कुछ कर्म करके जाएंगे, तो देवयान में ही जाएंगे। देवयान उसको कहते हैं जहाँ देवात्माएं रमण करती हैं।

चन्द्रमा में पिशाच योनियाँ

मुनिवरों महा पिशाच भी !रहते हैं। पिशाच उन्हें कहते हैं जिनका पुण्य अधिक होता है और पाप सूक्ष्म, वह यहाँ के संसार का उच्च अध्ययन करते हुए देवयान में जाने का प्रयत्न करते है। देवयान से निचले स्थान में आने से उन्हें पिशाच कहते हैं। वह अन्तरिक्ष में रमण करते हुए अपने पर विचार करते हुए सोचा करते हैं, कि प्रकाश मिले तो हम प्रकाश में रमण करें। जैसी मुझे सूचना मिली है, इस चन्द्रमा में पिशाच योनियाँ रहती हैं।

मुझे मेरे प्यारेलोमश मुनि महाराज ने एक समय निर्णय दिया !, और इन्होंने मुझसे अब से लाखों वर्ष पूर्व कहा था कि गुरूदेवमैं चन्द्रमा में गया। चन्द्रमा में मैंने देखा !,

कि वहाँ शीतल अनुगच्छित महान योनियाँ रहती हैं, जिनको पिशाच कहते हैं। उन पिशाच योनियों के वहाँ सब ही कुछ हैं। उनके कार्यालय भी हैं। परमपिता परमात्मा के गुणगान के सुन्दर सुन्दर स्थान भी हैं। परन्तु आज मुझे लोमश मुनि के आदेशों की कुछ पुनरूक्ति नहीं करनी है। मैंने तो भाई देखा नहीं, वैसे ही उच्चारण करूं, परन्तु सुना अवश्य है।

आज कोई मानव यह कहता है, कि देवयान नहीं। यदि होगा, तो प्रेत योनि भी होगी, जैसा मुझे महानन्द जी ने निर्णय कराया। इन्होंने कहा था कि आधुनिक संसार यह कहता है कि जब देवयान है, देव योनियाँ हैं, देवता हैं, तो देखो, प्रेत योनि, भूत योनि भी अवश्य होगी।

मुनिवरोंदेखो !, देवयान को तो आज हम देख रहे हैं, इस लिए गौरव के सहित कह सकते हैं, कि यह देवयान है। जहाँ सूक्ष्म शरीर वाली आत्माएं एकत्रित होकर, अपना अनुकरण करती हैं, और अपनी महान विचित्रताएं और सत्संग भी करती हों।

मुनिवरों एक समय महाराजा अर्जुन ने महाराजा शिव के द्वारा !देवयान और देवताओं की वाणी पान करने के लिए एक वैज्ञानिक यन्त्र को खोजा था। महाराजा अर्जुन ने महाराजा शिव से कहा था कि हे शिवमैं देवयान के देवताओं की वाणी का ! अनुकरण करना चाहता हूँ। उनको यन्त्रों में लाना चाहता हूँ मुझे ऐसे यन्त्र बनाने की प्रतिक्रिया निर्णय कराइए । महाराजा शिव ने उस यन्त्र का सब विवरण कह सुनाया। ऐसा कहा जाता है, कि उसी समय अर्जुन ने यन्त्र बनाया, जब उसका प्रहार किया जाता था, तो वह यन्त्र अन्तरिक्ष में रमण करता था और ऐसा कहा जाता है कि उस महान अर्जुन ने उस यन्त्र द्वारा देवताओं की वाणी को श्रवण किया, आधुनिक विज्ञान जैसे मेरे प्यारेमहानन्द जी ने निर्णय कराया और यदि इसको द्वापर के भौतिक ! विज्ञान से तुलना करते हैं, तो आज के संसार का विज्ञान हमें आधा प्रतीत होता है।

देवता

मुनिवरोंआज देवयान की चर्चा कर रहे थे। सूक्ष्म शरीर से अन्तरिक्ष में रमण ! करने वाली आत्माओं को देवता कहते हैं। देवता वह होते हैं जो हमें कुछ देते हैं। वे

आत्माएं, इस संसार को देखा करती हैं। जब यहाँ किसी पदार्थ की सूक्ष्मता हो जाती है, तब ही आ कूदते हैं, और हमारे कल्याण के लिए सोचते हैं। हमारे कल्याण के लिए हमें कुछ देते हैं। हमें ज्ञान देते हैं। हमें उस महिमा का प्रदर्शन करा जाते हैं, जिससे हमें शान्त की गई, वस्तु प्रकट हो जाती है, और प्रकट हो करके हमारा जीवन लौकिक बन जाता है। आज हमें विचारना चाहिए। इसको महानन्द जी देवयान कहते हैं।

आज महानन्द जी कहेंगे, कि वह कर्म तो निर्णय नहीं कराया, जिस कर्म को करने से देवता बनते हैं।

मुनिवरोंमैंने अभी ! अभी महर्षि अटूटी का कुछ विवरण दिया। भगवान् कृष्ण के पूर्व जन्म की कुछ वार्त्ता प्रकट की। आज हमें विचारना यही है, कि हमें देवताओं के लिए क्या करना है। हमें सबसे पूर्व इस संसार में देवता बनना है। महर्षि पारा मुनि ने कहा था, कि यदि आज तुम्हें संसार में देवता बनना है, तो इसके लिए सबसे सहज यही है, कि इस संसार को ज्ञान की दृष्टि से देखो, । यह संसार तुम्हें छूं न ले । इस संसार में ऊँचा बनने का प्रयत्न करो, जैसे जल में कमल रहता है, जल उस कमल को छू नहीं सकता। इसी प्रकार आज देवता बनने के लिए कमल बनना है, जिससे लक्ष्मी तुम्हारे में रमण हो जाए। कौन सी लक्ष्मी?

जो लक्ष्मी महान सरस्वती है, कहा जाता है, कि कमल से लक्ष्मी का जन्म हुआ है, वह कमल क्या है? वह कमल यह ही है, कि जिस महान आत्मा को संसार न छू सके, उससे उत्पन्न होने वाली वह श्री' सरस्वती मानव को देवता बना देती है, वह हमें उन देवताओं की शरण में पहुँचा देती है। आज हमें अन्तः करण की दृष्टि से देखना चाहिए। हमें उन चक्षुओं से देखना चाहिए, जो वास्तविक चक्षु है। हमें पाप के नेत्रों से, यह संसार नहीं देखना है, हमें अन्तःकरण के चक्षुओं से देखना है, जो देवताओं के देखने वाले होते हैं। जो चक्षु परमात्मा के दर्शन कराने वाले होते हैं। जो चक्षु हमें कमल बना देते हैं, जो चक्षु हमें सरस्वती की गोद में धारण करा देते हैं। महर्षि पारा मुनि ने कहा था, कि हे पुत्र व्यासय !दि तुम्हें संसार में ऊँचा बनना है,

और देवता बनना है तो तुम आज संसार से ऊँचा उठो, वह कर्म करो, जिस कार्य के करने से तुम्हारी संज्ञा ऊँची बने, विलक्षण बने, तो मुनिवरोंयह देवयान और ! देवताओं की श्रेणी में जाने का प्रयत्न है, यह कर्म है।

मुनिवरोंयज्ञों को क !रने वाले और यज्ञों में ब्रह्मा बनने वाले विशेषकर देवताओं की श्रेणी में जाते हैं, परन्तु ऐसे ब्रह्मा नहीं, जैसे मेरे प्यारेमहानन्द जी आधुनिक ब्रह्माओं ! का निर्णय करते हैं, जो अपने उद्देश्य को नहीं जानते, ब्रह्मा वह है, जिसका वेदमय जीवन हो। वेद कहते हैं प्रकाश को, जिसका प्रकाशमय जीवन हो।

ब्रह्मा यज्ञशाला में विराजमान हो रहा है, यज्ञशाला क्या है? यह ज्योति यज्ञशाला है, उस वेद की लौ, उसकी वेदी है। ब्रह्मा उस लौ के प्रकाश में रहता है, उसकी भावना, उस महान प्रकाश के साथ साथ जाती है। देवता उसकी भावनाओं को स्वीकार करते हैं, स्वीकार करके, एक समय वह आता है, कि वह भी देवताओं की श्रेणी में विराजमान हो जाता है आज हमें वह कर्म करना चाहिए, जिससे हमारे जीवन की महिमा ऊँची बने, जिससे हम देवताओं में रमण करने वाले बनें। जहाँ बेटाहमारे ! आदि ऋषिवर चले गए हैं।

मोक्ष और देव आत्माओं में अन्तर

पूज्य महानन्द जीः भगवन्एक वार्त्ता और जानना चाहते हैं कि मोक्ष आत्माओं में ! और देव आत्माओं में क्या अन्तर है?

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीदेवता उन्हें कहते हैं !, जिनकी सूक्ष्म शरीर की संज्ञा समाप्त नहीं होती और मोक्ष वह है, जो इन बन्धनों से पार हो चुका हो, जहाँ अन्तःकरण, बुद्धि और महान इन्द्रियों के विषय नहीं रहते, उसको बेटामोक्ष कहते ! हैं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्एक समय आपने कहा था !, कि अन्तःकरण आत्मा के साथ चलता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं, ऐसा तो नहीं कहा, बेटातुम कैसे उच्चारण कर र !हे हो?

पूज्य महानन्द जीः नहीं भगवन्आपने कहा है !, और यह कहा है कि अन्तःकरण उस आत्मा के साथ साथ चला करता है, जो मोक्ष में जाता है। आपने ऐसा भी कहा है, कि यदि अन्तःकरण साथ न जाए तो फिर आने की आवश्यकता नहीं रहती।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जी! यह तुम व्यर्थ उच्चारण कर रहे हो। इसमें कोई सात्विकता नहीं मानी जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्यह तो आप ही जान सकते हैं !, कि आपके वाक्यों में सात्विकता है या नहीं है। हास्य....

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीऐसा नहीं कहा !, किसी द्वितीय महान आत्मा के विचार, तुम्हारे समक्ष निर्णय किए होंगे। अन्तःकरण देवताओं की संज्ञा में जाने का विषय है, मोक्ष में जाने का विषय नहीं। यह तो कहा था कि आत्मा को ज्ञान स्वतः रहता है, और यह परमात्मा के आनन्द में रमण करता रहता है।

पूज्य महानन्द जीः 'चलो भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंदेखो !, अभी अभी हम देवयान के सम्बन्ध में उच्चारण कर रहे थे, यह भी निर्णय कराते चले जाएं, कि परमात्मा जिन ऋषियों को वेदों का ज्ञान देता है, वह ऋषि भी देवता कहे जाते है, जब यह प्रलय काल आता है, उस समय सूर्य नहीं रहता, चन्द्रमा नहीं रहता, लोक लोकान्तर नहीं रहते, पृथ्वी मण्डल नहीं रहता, यह सब कुछ शान्त हो जाता है। सूक्ष्म परमाणुओं में इसका रूपान्तर हो जाता है। रूपान्तर हो जाने के पश्चात् जैसा मैंने किसी समय निर्णय भी दिया होगा, आज भी मुझे परमपिता की अनुपम कृपा से सौभाग्य प्राप्त हो रहा है प्रलय काल में देवयान भी नहीं रहता।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन्जब अन्तरिक्ष !, यह सब कुछ शान्त हो जाता है, क्या देवलोक समाप्त नहीं होता?'

पूज्यपाद गुरुदेवः सुनो बेटा पहले उस वाक्य को पूर्ण श्रवण कर लिया करो। !

पूज्य महानन्द जीः कृपा कीजिए भगवन् । !

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीजैसे ! प्रकृति सूक्ष्म रूप से परमात्मा में रमण करती है, इसी प्रकार यह आत्मा भी परमात्मा के आँगन में रमण करता है, जब फिर सृष्टि आरम्भ होती है, तो प्रकृति अपने रूपों में आ जाती है और देवात्माएं प्रकट हो जाती हैं, और प्रकट होकर उसी नियम से उस महान विज्ञान का प्रसार करती हैं, जो नियम सृष्टि में पूर्व थे, वह देवता उसी प्रकार परमात्मा की सहायता से वेदों का ज्ञान इस संसार में प्रकट कर देते हैं, यह महान यहाँ देवता और देवकन्याएं हैं। तो मुनिवरोंज्ञान ! विज्ञान पूर्व सृष्टि के आधार से ऋषि मुनियों के द्वारा सृष्टि के आरम्भ में प्रकट होता है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्बहुत से व्यक्ति ऐसा कहते हैं !, कि जितना मनुष्य का आज विकास हो रहा है उतना विकास पूर्व नहीं था। इस वाक्य की आप कहाँ तक चुनौती दे दें।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीइस वाक्य को कहाँ तक चुनौती दें !? जहाँ तक तुम कहो, वहाँ तक देते हैं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन् !जो यथार्थ चुनौती हो, दे दीजिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीहमारे यहाँ ऐसा माना गया है !, कि सृष्टि के प्रारम्भ से आर्य आए हैं, आर्य कहते हैं श्रेष्ठ को, जो श्रेष्ठ है, उसके द्वारा ज्ञान और विज्ञान दोनों होंगे। आज से कई गुना प्रकाश पूर्व भी हो सकता है, और था भी। आज भी विकास है, पूर्व भी विकास था। परन्तु जो विकास त्रेता काल में था, वह द्वापर में नहीं और जो द्वापर में था, वह महाभारत काल के पश्चात् न रहा, जैसा मुझे महानन्द जी ने निर्णय कराया, आज के प्रकाश का, मुझे कोई ज्ञान नहीं परन्तु अनुमान से प्रकट कर सकता हूँ कि आज जितना विकास है, यह कोई महत्वदायक नहीं। यह वह विकास है, जिसमें प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या चिन्तित होता चला जा रहा है, आज उस विकास की आवश्यकता है, जो द्वापर में था, जहाँ देखो, महानन्द जी के कथनानुसार राष्ट्र को राम राज्य बनाने की योजना सोची जा रही हो, जहाँ गुरुओं का और आर्यों का एक महान प्रदर्शन कराया जा रहा हो, प्रत्येक राष्ट्र में ओ३म् की पताका लहराई

जाती हो सर्व संसार में शान्ति का प्रदर्शन कराया जा रहा हो 'उसको विकास कहते हैं। जिस विकास में ज्ञान विज्ञान से मनुष्य अपने जीवन का मन्थन करता हो, उसको शान्ति का विकास कहते हैं, उसको मनुष्यत्व का विकास कहते हैं।

मुनिवरोंजब यहाँ आपस में मतभेद हुआ और ऋषियों का शासन कुछ सूक्ष्म बना !, उस समय स्वयम्भु मनु महाराज ने यहाँ आकर राष्ट्र का विधान बनाया। बेटातुम ! उनके वचनों को स्वीकार करो और देखो, तो तुम्हें ज्ञात हो जाएगा, कि मनु महाराज ने जो राष्ट्र का निर्माण किया उस समय कितना विकास था, उस विकास को जानने के लिए मानव की लालयित होना चाहिए और उस विकास का पुनः लाना चाहिए, वह वास्तविक विकास था, जिस विकास में एक दूसरे के शत्रु हों और व्यभिचार की लहर दौड़ती चली जा रही हो, क्या उसको तुम विकास कहोगे? या सदाचार को विकास कहोगे? तुम्हारे वाक्यों से यह अवश्य मानना चाहिए, कि आज भी विकास है, परन्तु पूर्व के विकास से सन्तुलन नहीं करना चाहिए।

मुनिवरोंमहानन्द जी से ऐसी भी सूचना मिली है !, कि आज का समाज यह कहता है, कि पूर्व का ऋषि मण्डल, पूर्व का मानव मांस का भक्षण करता था। आज के संसार को इस भ्रांति में नहीं जाना चाहिए। आज मैं यह जानना चाहता हूँ, कि जब परमात्मा ने यह नाना वनस्पतियाँ व फल आदि हमें दिए हैं, तो क्या इसको पान करके मनुष्य जीवित नहीं रह सकता? क्या इनको पान करने से बुद्धिमान नहीं बन सकता? तो मुनिवरोंवनस्पतियों का आहार करके !, सोमरस का पान करके हमारे पूर्वज ऋषि बने। आज हमें उनके जीवन पर विचार करना चाहिए। हमें महर्षि बाल्मीकि के जीवन की कैसी महानता प्राप्त होती, कि उन्होंने राम रमेती शब्द की याचना करते करते, अपने शरीर पर मुनिवरों! जीवों को अपना गृह बनाने दिया हो और शरीर में अस्थियों का पिंजरा और महान प्राण रह गया हो। आज हमें उन ऋषियों को कितनी महानता देनी चाहिए। आज का हमारा यह विषय नहीं, आज तो हम देवताओं की चर्चा कर रहे थे। अरे, मानव आज तुझे देवता बनना है। !

मुनिवरोंदेवता यह भी है और देवता यह भी है जैसे अग्नि !, वायु, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी यह सभी देवता माने गए हैं। चन्द्रमा हमें कान्ति देता है, सूर्य प्रकाश देता है। अग्नि भी हमें प्रकाश और उत्साह देती है, पृथ्वी हमें वनस्पतियाँ देती है, जल भी देवता है जो महान वनस्पतियों को उत्पन्न करता है, हमारे शरीर को चलाता है, इन देवताओं को भी पूजा करनी चाहिए।

तो मुनिवरोंयह सब कुछ हमारा जीवन है। इसके ऊपर पुनः से विचार करना ! चाहिए और देखना चाहिए कि हम द ेवताओं की पूजा करने से देवता बन सकते हैं। यह आज का हमारा आदेश है।

पूज्य महानन्द जीः धन्यवादकहा तो सुन्दर है !भगवन् !, परन्तु भ्रांतियाँ हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या?

पूज्य महानन्द जीः भगवन्हम यह जानना चाहते हैं !, कि इस समय देवलोक में कितनी आत्माएं होंगी?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअरे ....., सुनो मूर्खानन्द की वार्त्ता। कहाँ से लाए हैं वार्त्ता की भ्रांति हो रही है कि देवयान में कितनी आत्माएं हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जी इसकी गणना तो किसी काल में की नहीं। !

पूज्य महानन्द जीः भगवन् !जब आपने गणना ही नही की तो आपने उच्चारण किया ही क्यों ?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य महानन्द जी! इसका अभिप्राय यह नही, इसका उत्तर किसी द्वितीय काल में दिया जाएगा'

पूज्य महानन्द जीः भगवन! कल

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाकल नहीं। किसी द्वितीय !, तृतीय, चर्तुथ काल में देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवन्न भी दो !, यह भी तो हो सकता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्ययदि इसकी गणना न हुई !हाँ बेटा ....., तो न भी दिया जाएगा। इसमें क्या है।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् । !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंअभी ! अभी मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ !प्रश्न करते चले जा रहे थे। साधारण सी वार्त्ता में प्रकट कर दिया, कि इसका उत्तर किसी द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ काल में दिया जाएगा। संक्षेप सा उत्तर यह है, कि देवता तो न्यून होते हैं, परन्तु भोगी संसार में अधिक होते हैं। इन भोगों से उठने वाले बहुत सूक्ष्म होते हैं। पापों को न छूने वाले संसार में सूक्ष्म होते हैं। पापों में आ जाने वाले अधिक होते हैं। बेटातुम्हें यह मानना अनिवार्य है !, कि देवता न्यून होते हैं। अनुमान से, उच्चारण करने से मिथ्या भी हो सकता है, परन्तु देवताओं की गणना करेंगे, किसी स्थान पर अवसर मिलेगा, तो निर्णय कराएंगे, आज तो समय आज्ञा नहीं दे रहा है, आज तो समय ही समाप्त हो चुका है और बेटा अभी तुम्हारा एक प्रश्न रह ही चुका है। !

पूज्य महानन्द जीः देख लो भगवन्अभी तो आपका बहुत समय है !, यदि इसकी अधिक व्याख्या है तो कल ही उत्तर देना। भगवन् जैसा मैंने !कल कहा था, कि बुद्धिमान तो उसको कहते हैं, जो संक्षेप में उत्तर दे दे, आप विस्तार में क्या, कुछ संक्षेप में उत्तर दे दीजिए, कल इसका विस्तार कर दीजिएगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यकल ही विस्तार हो जाए !बेटा ....., इसमें तुम्हारी कुछ हानि तो नहीं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्हानि तो नहीं !, परन्तु जब आपने यह कहा था, कि कल दोनों प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा, तो दोनों का देना ही चाहिए था।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटायह तो हमने नहीं कहा ! । तुम कैसे मिथ्या उच्चारण कर रहे हो? यह कहा था, कि कल का कल देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन्हम उसमें अनुमान लगा लेते हैं !, कि गुरुजी कल दोनों प्रश्नों का उत्तर अवश्य दे देंगे।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यतुम अधिक विनोद न किया करो !बेटा ....., इससे तुम्हारी हानि हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः 'अच्छा भगवन् । !

वेद

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा वाक्य चल रहा था। महानन्द जी कुछ विनोद की वार्त्ता प्रकट करते चले जा रहे थे। इनके प्रश्न का विस्तार से उत्तर तो कल ही दिया जाएगा, परन्तु इतना अवश्य कह सकते हैं कि सृष्टि के प्रारम्भ में चारों वेद, चार ऋषियों से प्रकट हुए, परमपिता परमात्मा न उन्हें विशेष ज्ञान दिया, चारों वेदों का संसार में प्रकाश हुआ। इसके पश्चात् ज्यों ज्यों समय आया, ऋषियों ने इन चारों वेदों को संहिता रूपों में लाए, क्यों लाया गया? कैसे लाया गया? इसका उत्तर किसी द्वितीय काल में दिया जाएगा, यह कह सकते हैं, कि हमारे आचार्यों ने इन चारों वेदों की शाखाओं की गणना कराई है 1127, जिनमें से महानन्द जी के संकेतानुसार इस समय संसार में 800 के लगभग प्रकट हैं 900, कुछ शाखा लुप्त हो चुकी हैं और उनकी कुछ खोज नहीं मिल रही है। आज का बुद्धिमान तो यह कहता है, कि यह मिथ्या है, परन्तु आज का बुद्धिमान तो यह कहता है कि यह मिथ्या है, परन्तु आज का बुद्धिमान उस संसार में होता, जब हमारे पुस्तकालय के पुस्तकालय शान्त किए गए, जहाँ निधि की निधि अग्नि में भस्म हो गई हों, हो सकता है, उस समय यह शाखाएं भी भस्म हो गई हों।

आज यह माना जाता है कि वेदों का ज्ञान कंठस्थ होता है, और कंठस्थ होकर यह बचा है। परन्तु बुद्धिमान को यह भी मानना चाहिए, कि एक मानव सब शाखाओं को कंठस्थ कर सकता है, परन्तु कोई न कोई शाखा अवश्य ऐसी रह जाती है, जो कण्ठ नहीं रहती, इसको पुस्तक रूप में लाने में बहुत कठिनाई होती है, इस पर विचार करना चाहिए, विचार करने से इसमें कुछ और ही पाया जाएगा, आज विचार करने से ही हमारा कार्य बनेगा।

मुनिवरोंरही यह वार्त्ता !, जैसा कि हमने पूर्व कहा था। कि सृष्टि के आदि में ब्रह्मा के व्याकरण में और महर्षि पाणिनी ऋषि के व्याकरण में कुछ भिन्नता है, परन्तु आज का बुद्धिमान यह कहता है, कि कोई भिन्नता नहीं है। मेरे प्यारेमहानन्द जी के ! कथनानुसार यदि आज का बुद्धिमान उस व्याकरण को देखता कि आदि गुरु ब्रह्मा की व्याकरण की क्या संज्ञा थी, तो उसको भिन्न भेदता ज्ञात हो जाती, इन सब ही वाक्यों

पर विचार करना चाहिए। पाणिनी ऋषि महाराज द्वापर के प्रारम्भ में हुए, परन्तु वेदों का उच्चारण, वेदों की प्रतिक्रियाएं, आज से नही अरबों वर्षों से चली आ रही हैं, इन सब ही पर विचार करना चाहिए।

यह भी माना जाए जैसा महानन्द जी कहा करते है, कि हर युग में पाणिनी ऋषि भी हो सकते हैं, है तो यह मूर्खों वाला वाक्य, परन्तु हो सकता है कि हर युग में पाणिनी ऋषि महाराज हों, परन्तु ऐसा नहीं पाणिनी ऋषि और पूर्व की व्याकरण में कुछ भिन्नता है, जिसका कल कुछ विस्तार से विवेचन करेंगे, कुछ अपने विचार प्रकट करेंगे, और कुछ ऋषियों के भी मन्तव्य देंगे, अब हमारा आदेश समाप्त होने वाला है।

मुनिवरोंआज का हमारा मुख्य उद्देश्य देवताओं के सम्बन्ध में था !, हमारा यह वाक्य अभी पूर्ण तो नहीं हुआ। यह मूर्ख महानन्द पता नहीं कहाँ से आ जाता है, इनके प्रश्नों की पोथी की पोथी बन जाती है, उन पोथियों को उच्चारण करना नहीं चाहते, देवताओं का कुछ विवरण रह गया है, समय मिलेगा तो द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ काल में प्रकट करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्चतुर्थ में क्या !, आप इन वाक्यों को प्रकट ही न करना, क्या आप कल कहीं जाएंगे? इन सब वाक्यों को कल प्रकट कर देना।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य .....'अच्छा बेटा देखा जाएगा। !'

मुनिवरोंहमारी यह वार्त्ता अब समाप्त हो ग !ई है। आज का हमारा मुख्य आदेश देवताओं के सम्बन्ध में था, देवता बनने का आदेश था, अब यह आदेश समाप्त हो चुका है, कल समय मिलेगा, तो शेष वार्त्ता कल होगी, अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। 8 । रात्रि(वेद पाठ). मालवीय नगर। 30 दिनांक 28 07 1963।

६ 09 11 1963 पुष्प 06 सदाचार

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ, आज हम पुनः की भांति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का पाठ गा रहे थे, आज हम उन वेद मन्त्रों का पाठ कर रहे थे, जो मानव जीवन के लिए एक महान आदेश देते चले जा रहे थे,

आज हमें पुनः से उन वेद मन्त्रों पर विचार करना है, उस ज्ञान पर विचार करना है, जो परमपिता परमात्मा ने, सृष्टि के प्रारम्भ में मानव कल्यग्ग के लिए दिया हैं।

मानव का कर्तव्य

मेरे प्यारेआओ !ऋषि मण्डल !, सब से पूर्व उस प्रभु का गुणगान गाओ, जो हमारा कल्याग्ग करने वाला हैं। मानव का कर्तव्य यह है कि वह प्रातः वह सांय प्रभु का चिन्तन करे, और प्रुभु से कहे –प्रभु! यह सब कुछ आपका है, मेरा नही। प्रभु! मैं तो आपका सेवक बनना चाहता हूँ। मैं आपके इस रचाए हुए संसार में आया हूँ। मेरा कर्तव्य है कि मैं इस संसार की सेवा करूं। मैं आपके उद्देश्यों का पालन करने आया हूँ, उल्लंघन करने नहीं। विधाता! यदि मैं आपके आदेशों का उल्लघंन करूंगा, तो मेरा जीवन समाप्त हो जाएगा। तो मुनिवरोंसबसे पूर्व प्रभु को अपने को सौपना हैं !, विधाता जो यह तेरा है। इसे तू अच्छा बना, पवित्र बना, महान बना, और मानव बन। तो मुनिवरोंयोग मार्ग ! पर सब से पूर्व मानव को अपने नाना अवगुणों को, नाना संकल्प विकल्पों, नाना समस्याओं को, सबको विधाता को देना चाहिए। उस समय मानव निर्द्वंद्व हो जाता हैं और प्रभु के समीप पंहुचने के लिए, उस मार्ग को अपना लेता हैं जिस मार्ग पर चलकर हमारे ऋषि और मुनि संसार से पार हो जाते है। ,

समर्पग्ग

आज यह कैसा अमूल्य समय है, जिस अमूल्य समय में, मेरा हृदय क्या क्या पुकार रहा है। कौन कौन सी योजनाएं बना रहा हैंइन नाना समस्याओं को विधाता , को अर्पग्ग कर दूं। मेरा अन्तःकरग्ग नाना अवगुणों से भरा हुआ है, हे प्रभुमैं आपको ! अपनाना चाहता हूँ, प्रभु! जब आपने प्रेरग्गा ही नही दी तो मैं पाप ही पाप करता, शुभ कर्म कहाँ होता। प्रभु! आज मैं आपकी प्रेरग्गा का इच्छुक हूँ, मुझे अपनी प्रेरग्गा दो। तू ही मुझे महान बना सकता है संसार में, और कोई नहीं।

मुनिवरोंआज मानव कैसे अपने को सौंप सकता हैं !? मैने एक समय संध्या का उपदेश दिया था और कहा था कि जहाँ भी मानव देखता है, जहाँ तक भी उस की दृष्टि जाती हैं, वहाँ परमात्मा की अमूल्य महिमा को देखता है सब जगह प्रभु प्रतीत

होता है, वैराग्य उत्पन्न हो जाता है, पाप करूंगा तो परमात्मा सब जगत देखने वाला हैं, जब मनुष्य इस विचार पर पंहुचेगा, तो उसके अवगुण समाप्त होने लगेंगे। उसकी आन्तरिक वृत्तियां स्थिर होकर गम्भीर हो जाएगी और धारणा ध्यान समाधियों में लय होने लगेगा।

मुनिवरोंआज का मेरे ! प्यारे महानन्द जी का समय !है आज तो मुझे सूक्ष्म सा आदेश देना हैं। आज तो केवल प्रभु का गुणगान गाने आया हूँ। आज तो मेरे प्यारे ! महानन्द जी कुछ कहेंगें। मुझे उच्चारण करनाहै कि हे प्रभुतू कल्याण करने वाला ! हैं। तुने ऋषि मुनियों का कल्याण किया है, विधाता! हमारा भी कल्याण कर। तू हमें भी यहाँ से ले चल, जहाँ एक दूसरे की त्रुटि हों, एक दूसरे पर क्रोध न्यौछावर किया जाता हों यह संसार मुझे नही चाहिएं। मुझे तो वह कजली वन चाहिए, जिस कजली वनों में सिंह दहाड़ते हों, जहाँ हाथी ध्वनियां कर रहे हों, जहाँ विधाता नाना सिंह ध्वनियां करते करते, उस अमूल्य आत्मा के द्वारा आकर, वेदों को श्रवण करने वाले हों। आज के मानव से वह सिंह ऊँचे हैं, जो ऋषि मुनियों की वार्त्ता पान करते हैं।

मुनिवरोंआज का मानव तो सिंह से भी परे हैं !। यह वेद की वाणी को पान करता है, परन्तु पान करके भी एक दूसरें को नष्ट करने की सोचता है। सिंह, जब वेदों मन्त्रों का पान करते थे, तो वह ऋषि मुनियों के चरणों में ओत प्रोत होते थे। आज का संसार तो जैसा महानन्द जी से ज्ञान हुआ है, एक दूसरे की समलोचना, एक दसूरे की निन्दा और एक दूसरे पर क्रोध न्यौछावर करने वाला हैं।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे एक वाक्य कहा था, वह मुझे अब तक कंठ हैं कि हे बेटायदि तुम्हें अपने जीव !न को ऊँचा बनाना है और अपनी मानवता को जानना है , तो मानव से दूर जा। तू उन सिंह में चल, जिनकी उदर पूर्ति, भोग योनि है। वह तेरी वेदवाणी को पान करेंगे, तेरे चरणों में ओत प्रोत होंगें। आज तू वैराग्य की स्थिति को उत्पन्न कर। वैराग्य कब आता हैं? जब मनुष्य विचारता हैं, कि विधाता ने यह क्या संसार रचा हैं, यह विधाता कितना अमूल्य और पवित्र हैं, कितना महान है, कितना राष्ट्र नायक है लोक लोकांतरों को रचाने वाला है, ऋषि मुनियों को प्रेरणा देता हैं।

परमात्मा की अमूल्य सृष्टि को जान करके और उस पर गम्भीरता से विचार करते करते मानव उस स्थिति पर पंहुच जाता हैं, जहाँ मुनिवरोंहमारे आदि ऋषि पंहुचे ! चुके हैं, महाराजा सनत् कुमार ने नारद मुनि से यह ही कहा था हे नारदआज तुम्हें ! योग में जाना हैं, अपने जीवन को प्रभावशाली बनाना है। अपने जीवन की महत्वता ऊँचा बनाना है, जिससे तुम्हारी योग में प्रवृत्ति हो जाएं। प्रत्येक इन्द्रिय पर शासन करना हमारा योग हैं। जिस समय प्रत्येक इन्द्रिय पर हमारा शासन हो जाएगा, उस समय हमारे द्वारा सब कुछ आ जाएगा हमारा जीवन अमूल्य हो जाएगा।

अब मेरा यह आदेश समाप्त हो रहा है, अब मेरे प्यारेमहानन्द जी अपने उदार ! वाक्य, इस महान यज्ञ वेदी पर उच्चारण करेंगें। अपनी कुछ अमृतधारा बरसाएंगें जैसे गंगा की धारा शीतल है, मेरे प्यारे महानन्द जी !का शीतल प्रवचन होगा। मेरे प्यारे ! महानन्द जी के द्वारा मानव की नाना समस्याओं की एक पोथी है, उस पोथी को पुनः से खोलना चाहते हैं, अब मैं महानन्द जी से प्रार्थना करूंगा, कि वह आए, और महान अमूल्य वेदी पर, अपने उदार वाक्यों को उच्चारण करके हमें भी, ऋषि मण्डल को भी और हमारी वाणी मृत लोकों तक जा रही है, उन सबको उदार करें।

पूज्य महानन्द जीः हास्य आज मेरे पूज्यपाद ने मेरे उच्चारण करने से पूर्व ही यह ... अमूल्य समय दिया है। मैं हर समय कितना आभारी बना रहता हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव का।

मम गुरु अस्विति सुप्रजा मानः अस्ति सुघृता नरोति कामः।

यह गुरुजन संसार में कितने दयालु हाते हैं, आज मुझे यह अमूल्य समय, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कुछ समय के पश्चात दिया, आज इस अमूल्य समय में, मैं कुछ उच्चारण करता चला जाऊं। आज मेरा विषय हैसदाचार आज मैं सूक्ष्म शरीर द्वारा , इस यज्ञशाला में भ्रमण कर रहा था। जहाँ इस यज्ञशाला में भ्रमण कर रहा था इस यज्ञशाला अप्रति भूषणाम् मम त्वा आस्ता यज्ञो वेरी नामः अस्ते। आज का प्रत्येक बुद्धिमान मण्डल और प्रत्येक साधु मण्डल सदाचार को पुकार रहा हैं । मैंने आज से पूर्व काल में कहा था और मेरे गुरुदेव भी कहा करते हैं, कि जब तब वक्ता स्वयं ही

सदाचारी नही बनेगा, तो यह संसार भी सदाचारी नही बनेगा। मैंने आज से पूर्व कहा था कि बुद्धिमान मण्डल को, आज के संन्यास आश्रम वालों को राजा से जाकर कहना चाहिए, कि हे राजातेरे राष्ट्र में सबसे अमूल्य वस्तु की सूक्ष्मता है !, और वह है सदाचार। आज तू अपने राष्ट्र में उन वस्तुओं को न रहने दें, जिससे दुराचार आए।

अपने गुरु की आज्ञानुसार यह भी उच्चारण करता चला जाऊं, कि सदाचार कहाँ से आया हैं। अहा, यह जब यह सदाचार संसार में आया, तो सदाचार ने ब्रह्मा से कहा था, विधाता! संसार में मुझे ओत प्रोत न करो। यह संसार मेरी आड़ में ऐसा विचित्र बन जाएगा, कि यह सदाचार सदाचार पुकारेगा, परन्तु मुझे भ्रष्ट करता चला जाएगा। मैं इस महान व्याकुल संसार में जाना नही चाहता । तब ब्रह्मा ने कहा अरे, तुम्हें तो संसार में जाना हैं। यदि तुम किसी भी मनुष्य को सदाचारी बना दोगे, तो उसका जीवन संसार में अमूल्य बन जाएगा। हे मेरे प्यारे यह सदाचार !मानव समाज !ब्रह्मा के कमण्डलु में से आया था। यह ब्रह्मा के कमण्डलु में पवित्र था, और सदाचार हमेशा पवित्र रहेगा। किसी काल में भी यह क्षीण नही होता, नवीन रहता हैं। कदापि शान्त नही होता। आज तो मानव सदाचार को नही अपना रहा हैं, वह मानव ही समाप्त हो जाएगा, परन्तु सदाचार समाप्त न होगा।

हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैं आज के संसार की स्थिति को देखा करता हूँ, आज जो सदाचार का वक्तव्य देने वाले हैं, वह भ्रष्टाचारी हैं। यहाँ क्यों न संसार में भ्रष्टाचार का प्रचार होगा।

आज मैं अपने महान विद्वत मण्डल से कहूँगा कि आज तुम्हें पुनः से सदाचारी बन जाना है। जब तुम सदाचारी बन जाओगे, उस समय तुम्हारी आत्मा की आकाशवाणी से, यह संसार सदाचारी बन जाएगा यहाँ देखो, आर्यों से, ब्राह्मणों से और साधु मण्डल से राष्ट्र पवित्र बनता हैं, राष्ट्र का कल्याण होता हैं। आज मुझे बड़ा खेद आ रहा हैं, आज सबसे पूर्व अपने को अपनाना है, अपने को विचित्र बना लेना हैं

सदाचार का आधार

आज तुम जिस वाणी का वक्तव्य दे रहे हो, उस वाणी को एकान्त स्थान में विराजमान हो करके विचारो, कि जो वक्तव्य हमने दिया है, इसका क्या तात्पर्य है? जिस वक्तव्य को हम दे रहे हैं, उस पर चलने वाले है या नहीं। आज यदि हम चलने वाले है, तो उस वक्तव्य को देने के अधिकारी हैं और उसका प्रभाव होगा, यदि हम नही है, और हमारे द्वारा नाना त्रुटियां हैं, सदाचार के सम्बन्ध में और सदाचार का वक्तव्य देते चले जा रहे हैं, तो प्रजा के ऊपर कोई प्रभाव न होगा।

आज मुझे बहुत प्राचीन समय की वार्त्ता कण्ठ आ होती चली जा रही हैं, यहाँ देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज आए, बहुत सूक्ष्म सी तपस्या की, सदाचार का प्रसार करने इस संसार में आए, परन्तु उनका कोई प्रभाव न हुआ, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने क्या किया? पर्वतों की कन्दराओं में जाकर, उन गुफाओं में जाकर तपस्या की, जहाँ मानव का जीवन उज्ज्वल और पवित्र बन जाता हैं, प्रकाशवान बन जाता हैं। प्रकाशवान बन करके, जब द्वितीय संसार क्षेत्र में आए, तो राजा जनक जैसों को सदाचारी बना दिया । राजा जनक ने अपने राष्ट्र में ओ३म् की, वेद की पताका लहाराई।

आज देखो, तुम सबको याज्ञवल्क्य बनना हैं, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपनी तपस्या में संलग्न हो गए और सदाचार को अपनाने लगे, तो नित्य प्रति सबसे पूर्व अपने को परमात्मा को अर्पण कर देते थे, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी उच्चारण कर रहे थे, कि सबसे पूर्व मानव को परमात्मा के अर्पण करना है, जब मानव अपने को अर्पण कर देता हैं, जो उसका आत्मा निर्मल और पवित्र हो जाता हैं। धारणा, ध्यान, समाधियों में लय हो जाता हैं। इसके पश्चात जब वह अपने ज्ञान का प्रसार करता है, तो मानव समाज सदाचारी बन जाता हैं। आज सदाचारी बनाने से पूर्व, अपने को सदाचारी बनाना हैं।

आज यहाँ द्रव्य की पूजा करने से सदाचारी नही होंगे, आज तुम द्रव्य के लिए स्थान स्थान पर वक्तव्य देने से सदाचार नही बनेगा, आज सदाचार, त्याग और तपस्या से

आएगा। आज तपस्या करो माँ गायत्री की गोद में जाकर मग्न हो जाओ । जैसे माता का बालक, पूर्व माता की गोद में जा कर आनन्द मनाता है, विनोद करता है और माता उसे चूमने लगती हैं, इसी प्रकार जब तुम सदाचार की लहरों में जाओगे, मां गायत्री की गोद में जाओगे, तो मां गायत्री तुम्हें चूमने लगेगी, संसार में जाओगे तो संसार तुम्हारे वाक्यों को चूमेगा। जैसे माता अपने पुत्र को चूमा करती हैं। आज तुम्हें वह नही बनना है, कि तुम्हारे वाक्यों से दुनिया दूर चली जाएं।

पूज्य महानन्द जीः मैने आज से पूर्व कहा था कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा हमारी आकाशवाणी मृत मण्डल में जा रही हैं, यहाँ वेद की विषय में नाना प्रकार के वक्तव्य हैं, मुझे समय मिले, तो सब ही कुछ उच्चारण कर सकता हूं, परन्तु मेरे गुरुदेव मुझे समय देते नही, इसका सबसे मुख्य कारण है कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव यह कहा करते हैं, कि मेरा भोग हैं, मैं अपने भोग को किसी को देना नही चाहता, मैं अवश्य यह उच्चारण करता चला जाऊं, कि यह मेरी भूमि हैं, जहाँ परमात्मा ने, ब्रह्मा ने उस सदाचार को भेजा और संसार से कहा कि तुम इसमें ओत प्रोत हो जाओ, संसार तुम्हें अवश्य अपनाएगा। तुम निर्द्वन्द्व हो, यदि नही अपनाएगा तो मानव अपना ही कुछ शान्त कर देता हैं, तुम्हारा कोई दोष नही है, आज मान को सदाचार अपनाना हैं।

आचरण में सदाचार

सदाचार वह वस्तु है, जिससे महाराज ध्रुव ने ध्रुव लोक को पा लिया था। ध्रुव ने माता सुरुचि के आदेश को पान करते हुए, विष्णु को पाया और विष्णु को पा करके, वह ध्रुव मण्डल में जाने वाला बन गया। आज तुम्हें ध्रुव बनना हैं।

मुझे अपने गुरुओं के चरणों में विद्या पान पाने का अवसर मिला। मेरे गुरुदेव ने इन्द्रियों पर शासन करा करके, आज मुझे इस स्थिति पर पंहुचा दिया है, कि आज सूक्ष्म शरीर द्वारा इस संसार को देखा करता हूं। मैं आज आर्य मण्डल को देखा करता हूँ, और बड़ा आश्चर्य करता हूँ, कि पूर्व का आर्य मण्डल कैसा था, और आज

का आर्य मण्डल कैसा हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत वाक्य उच्चारण किए हैं, मैं अपने गुरुदेव के समक्ष आज ऐसे, जैसे सूर्य के समक्ष दीपक।
मेरे गुरुदेव वह सूर्य है, जिनकी वेदवाणी को कजली वन में सिंह भी आ करके पान किया करते थे, आज मेरे गुरुदेव का वह अभागा समय है, कि आज के संसार का व्यक्ति इन वेद मन्त्रों को कहता है, वह पाखण्ड है, उस वेदवाणी पर और आज की वेदवाणी पर विचार करो। यह क्या है? आज देखने से पूर्व मानव अपने को भूल बैठा है, यहाँ द्रव्य का पुजारी बन करके, मानव मानव को समाप्त करने के लिए उद्यत हो रहा हैं। आज मानव को समाप्त नही करना। मानव के ऊपर दया करनी हैं। आज तुम्हें योग में पंहुचना है, गम्भीरता में पंहुचना हैं। ध्रुव बनना है। सुरुचि जैसी माता को ढूढ़ना हैं । आज वक्तव्य देने वाले सब ही से प्रार्थना किया करता हूँऔर नम्रता से , कहा करता हूँ कि यथार्थतामें कटुता होती हैं, मेरे द्वारा, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे कई स्थानों में मधु उच्चारण का आदेश दिया करते हैं, परन्तु मै क्या करूं। जब संसार की स्थिति देखता हूँ तो नेत्रों में जल आ जाता हैं। विचारता हूँ और पुकारता हूँ अरे, संसार! तू कहाँ चला गया? अरे, आर्य मण्डल! तू कहाँ चला गया? अरे, ऋषि मुनियों की सन्तान! तू कहाँ चली गई हैं।
तुम अपने पथ से बहुत दूर चले गएं हो। ऋषि मनि दूसरे जीवों की रक्षा करते थे। आज वही ऋषियों की सन्तान, दूसरें जीवों का भक्षण करने लगी हैं। आज मुझे आश्चर्य आता है, संसार को देख कर रोष आता है । बारम्बार व्याकुल ही होना पड़ता हैं, और कुछ नही सुहाता। मैंने आज से पूर्व, लगभग एक वर्ष हो गया, कहा था, कि जिन पर्वतों की कन्दराओं पर ओ३म् की, वेद की पताका लहराई थी, आज स्वार्थी संसार ने रक्त धारा बहाई हैं। क्या इसी का नाम सदाचार हैं? इसको तो रक्त का चार कहना चाहिए।
मैं विद्वत मण्डल से प्रार्थना करूंगा, कि सदाचार के वक्तव्य देने से पूर्व, तुम्हें सदाचारी बन जाना हैं। जब तक यहाँ व्यक्तव्य देने वाला सदाचारी ओजस्वी नही होगा, तब तक यह संसार सदाचारी नही बनेगा।

आज ब्रह्मचर्य को पुकारता चला जा रहा हैं संसार, परन्तु यह नही जानता, कि ब्रह्मचर्य है क्या? मैं देखा करता हूँ, कि विद्वत मण्डल ब्रह्मचर्य का उपदेश देते हैं, उनके अन्तःकरण को देखा जाता है, तो वह एक मिट्टी का पुतला हैं। आज का मिट्टी का पुतला नही बनना, आज तुम्हें ब्रह्मचर्य से ओजस्वी बनना है। इसमें अमृत भरना हैं, इसमें वह ज्ञान और आत्मबल भरना हैं, जो देखो, हमें सूर्य लोक तथा नाना लोक लोकान्तरों तक पंहुचा सकता हैं। आज हमें ओजस्वी बन करके, अपने जीवन का कल्याण करना है। अपने जीवन का कल्याण करके, जब संसार में जाओगे, तो संसार ऊँचा बन जाएगा।

महात्मा शंकराचार्य

मुझे इस संसार की वार्त्ता कण्ठ होती चली जा रही हैं । यहाँ कैसे कैसे महान आत्माओं ने आकर प्रचार किया है। मैं आधुनिक काल की वार्त्ता प्रकट करना चाहता हूँ, वह यह कि जब यहाँ महात्मा शंकराचार्य आए, तो उन्होंने ब्रह्मचर्य को अपनाया। ब्रह्मचर्य को अपना करके वेद की पताका और सदाचार की पताका को ले कर चले। उन्होंने नाना व्यक्तियों को सदाचारी बना दिया था। आज वह कहां हैं? उनके आदेश को संसार ने ऐसा कर दिया जैसे उनका आदेश कुछ था ही नही। मैं यह नही कहना चाहता कि यहाँ संसार में सदाचारी नही। हैं, परन्तु सूक्ष्म।

महात्मा दयानन्द

मुझे एक वाक्य ओर कण्ठ आ गया। महात्मा दयानन्द का। यहाँ महात्मा दयानन्द ही दयानन्द पुकारा जा रहा है। आज तुम भी तो दयानन्द बन कर देखो,। तुम भी तो किसी पर दया करके देखो,। आज तुम दयानन्द के चित्र को अपने गृह में स्थापन करने वाले हो। परन्तु तुम वह दया की मूर्ति नही बनना चाहते। आज दयानन्द को पुकारने से तुम्हारा कल्याण न होगा, जब तक तुम स्वयं दयानन्द न बनोगे। जब तक तुम स्वयं ब्रह्मचारी नही बनोगे, उस दयानन्द ने अपने को ब्रह्मचर्य में रमण कर दिया था। उसने योग रूपी बेला में रमण किया था। उसने वेद को अपनाया, जिस वेद को अपनाने से, इस संसार का कल्याण होता हैं। अरे, वह जो संसार में अपना कल्याण

करके चले गएं परन्तु तुमने उनके आदेशों को भ्रष्ट कर दिया। आज तुम उनके आदेशों को लेकर चलो। उन्हें ब्रह्मचर्य में कितना आनन्द आया, तुम भी ब्रह्मचारी बन करके देखो, यहाँ तो स्वप्न में भी नही रहा जाता। यह तो संसार हैं। क्या इसी वक्तव्य देने वाले को सदाचारी कहेंगें? अरे, सबसे पूर्व वक्तव्य देने वाला ही सदाचारी नही, तो वह संसार को कैसे सदाचारी बना सकता हैं।

आज मेरे गुरुदेव ने मुझे समय दिया है, आज मैं यज्ञ के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता था, परन्तु क्या करूं, सदाचार से ही अवसर नही मिल रहा हैं। आज तुम्हारा सदाचार कैसे बनेगा?

माता का व्यवहार

सबसे पूर्व मैं अपनी माताओं से प्रार्थना कर रहा हूँ। हे मेरी प्यारी माता! यदि तू संसार को ऊँचा बनाना चाहती है, और संसार को ऊँचा बनाना है, तो मेरी प्यारी माता! तुझे अपने गर्भस्थल की रक्षा करनी होगी। जैसे ब्रह्मचारी अपने अपने ब्रह्मचर्य की रक्षा करता हैं और उससे उदारता में रहता हुआ, अपने स्थान पर स्थिर रहता हैं ऐसे ही हे माताजब गर्भवती हो जाएं !, तब तुझे गर्भ स्थल की रक्षा करनी पड़ेगी। गर्भ स्थित होते ही, तुझे प्रभु का चिन्तन करना हैं अपने आहार व्यवहार को पवित्र बनाना हैं, आज तुझे कोई हिंसक और तीक्ष्ण पदार्थ पान नही करना हैं, माता तुझे क्रोध नही करना हैं, और मग्न रहना है। यदि तू मग्न रहेगी, तो तेरे गर्भस्थल से जो बालक उत्पन्न होगा, वह मग्न होगा। जहाँ भी जाएगा, ब्रह्मचारी रहेगा। माता यदि वह नग्न भी चला जलाएगा, तो वहाँ भी वह ब्रह्मचारी रहेगा।

मुझे ब्रह्मचारियों का एक आदेश कण्ठ आ गया है, सुनों, महर्षि व्यास के पुत्र राजा जनक के द्वारा पंहुचे, तो उस परम हंस को नग्न देव कन्याओं के स्थान दिया । रात्रि के समय उसने देखा, कि यहाँ तो तेरे लिए नष्ट करने वाले वज्र, तेरे समक्ष आते चले जा रहे हैं। जब उसने ये देखा, तो वह उस परमात्मा का चिन्तन करने लगा और देखता रहा कि तू इस मृत्यु के आँगन से किस काल में बचेगा। जब तक प्रातः काल होगा, कब तू इस स्थान से बाहर होगा, कब तू इस मृत्यु से बचेगा।

तो देखो, आज संसार में वह ब्रह्मचारी बनते हैं, जो मृत्यु पर विजय पाने वाले होते हैं । काम, क्रोध, मद, लोभ, और मोह को जो मृत्यु समझते है, वह यहाँ पर ब्रह्मचारी बनते हैं। जो यहाँ मग्न होकर कार्य करता है, वह ब्रह्मचारी बनता हैं, उदार और पवित्र बनता हैं।

हे मेरी प्यारी माता! तू अपने पुत्र को, अपने गर्भस्थल में ऊँचा बना। ब्रह्मचर्य से पौष्टिक बना। आज तू अपने विचारों से उसे पौष्टिक बना। अपनी ज्ञान गंगा से स्नान करा करके उसे पवित्र बना। हे मेरी प्यारी माता! जब तेरा बालक गर्भ स्थल से पृथक हो, पृथ्वी माता की गोद में आ जाए, उस समय तू पृथ्वी की याचना कर, कि हे पृथ्वी माता! अब तक मैं माता रही, अब हे मातातू इस बालक को सदाचारी बना !। जब हे माता! बालक को आचार्य के द्वारा प्रविष्ट कराए, तो आचार्य से कहे हे मेरे आचार्य! हे मेरे गुरुदेव! यह बालक आज तेरा पुत्र है, अब यह बालक मेरा नही रहा हैं, यह तेरा हैं। आज तू इसे चाहे ब्रह्मचारी बना दे, या व्यभिचारी बना दे, इसको सदाचारी या दुराचारी बना दे, यह बालक तेरा हैं। वह गुरु ब्रह्मचारी उस बालक को अपने हृदय में धारण कर लेता हैं, बालक से कहता है, अपनी त्रृटियां तू मुझे दे, परन्तु तू पवित्र बन। वह बालक संसार में क्यों न सदाचारी बनेगा, क्यों न उसकी उदारता पवित्र होगी, उसका ज्ञान भी पवित्र होगा। संसार में क्यों न उसका सूर्य जैसा प्रकाश होगा। हे मेरी माताओं! आज तुम्हें अपने प्यारे पुत्र को संसार में ऊँचा बनाना हैं।

हे मेरे आचार्यों! हे मेरे गुरुजनों! मैं वह बालक चाहता हूँ, जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे शिक्षा दी थी और आज मेरी यह स्थिति हैं। मैने अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत हो करके, उनके चरणों की धूलि को अपनी रसना में आनन्द ले करके, उस स्थिति को पान किया हैं

आज यदि संसार सदाचारी बनना चाहता है, तो सबसे पूर्व मेरी माताओं को सदाचारी बनना है। राष्ट्र के राजाओं को चाहिए कि वह अपने राष्ट्र को सदाचारी बनाने में तत्पर रहें। राष्ट्र का सबसे बड़ा भूषण सदाचार हैं राष्ट्र का भूषण मेरी माताओं का नचाने का

नाम नही। यह राजा का भूषण नही। यहाँ कलाओं का नाम सदाचार नही। राजा का भूषण हिंसा करना नही हैं। राजा को सदाचारी बनकर के ब्राह्मणों से कहने वाला होना चाहिए, कि हे ब्राह्मणों! तुम सदाचारी बन करके, राष्ट्र को सदाचारी और पवित्र बनाओ। यह उस काल में था, जब यहाँ महाराजा हरिश्चन्द्र की पताका लहराती थी। महाराजा हरिश्चन्द्र ने अपने पुरोहितों से कहा कि मेरे राष्ट्र में सदाचार होना चाहिए, मैं दुराचार नही चाहता। मैं यज्ञ करता हूँ। मेरे राष्ट्र में कोई दुराचारी न हो। यहाँ एक नही, नाना राजाओं का आदेश रहा हैंभगवान राम देखो ,, गुरु से शिक्षा पाकर के आर्य बने और आर्य बनकर के सदाचार को अपनाया और कहा करते थे, कि आज मेरे राष्ट्र में एक दूसरे की हिंसा की जाती हो, एक दूसरे जीवों को कष्ट दिया जाता हो, तो मेरा राष्ट्र सदाचारी और राम राज्य नही बनेगा। यहाँ देखो, एक नही, जब राजा रघु ने सर्वस्व यज्ञ किया था, राष्ट्र की सर्वांग सम्पन्नता यज्ञ में लगा दी थी, तो राजा रघु ने यह कहा था कि मेरे राष्ट्र के लिए यज्ञ करना अनिवार्य हैं। आज जब मैं यज्ञ के भूषण को लेकर चलूंगा, तो प्रजा इस भूषण को अपनाएगी और अपना कर के सदाचारी बनेगी, राष्ट्र का भूषण सदाचार है, मानव का भूषण सदाचार है, मेरी माताओं का गर्भस्थल है सदाचार।

आज मानव को विचारना है, कि आज हम कहाँ पंहुच गएं हैं। आज जिस भूमि को भारतवर्ष पुकारा जा रहा हैयह वह भारत भूमि हैं ,, जहाँ वह सदाचारी बालक भरत, सिंह के प्यारे पुत्रों से मग्न हुआ करता था । उनको गोद में धारण किया करता था। आज का मानव उसी भारतवर्ष में रहने वाला ऐसा हैं, कि एक दूसरे का घातक हैं, एक दूसरे मानव को नष्ट करना चाहता है। सिंह को नही अपनाना चाहते, जिसको अपनाने से हम निर्भय हो जाएं, आज वह सिंह क्या है हमारे द्वारा?

वह सिंह हमारा ज्ञान है, जिसको अपनाने से हम निर्भय हो जाते है। आज सिंह हमारे द्वारा आ जाएं, शत्रु आ जाएं, परन्तु हम पर विजय पा सकेंगे। परन्तु उस सिंह को अपनाना हैं।

हमें यह नही देखना है, कि यह भूमि आर्यों की थी, यह भारत भूमि सदाचारियों की थी, परन्तु तुम भी कुछ बनोगे या नही, या उच्चारण करने वाले ही बनोगे। आज तुम उच्चारण करने वाले न बनो। आज करने वाले बनों। आज तुम माता के गर्भ में ही अपने जीवन को ऊँचा बन लों यहाँ नाना प्रकार के गर्भों को पान किया जाता है, नाना जीवों की हिंसा कर, आज सदाचार को पुकारता है, तो सदाचार को अपनाना असंभव है यहाँ कदापि सदाचार नही आएगा संसार में। आज यहां सदाचार को अपनाने वाले व्यक्तियों तुम्हें अपने आहार को इतना विचित्र बनाना है, कि तुम्हारी कामवासनाएं प्रज्वलित न हो जाएं, जैसे अग्नि में घृत देने से अग्नि प्रज्ञवलित होती है, ऐसे ही तुम इन आहारों को कर काम वासनाओं को प्रज्वलित करते हो। आज जो जीव तुम्हें सुख देने वाले थे, उन जीवों को, उनके प्यारे पुत्रों को तुम भक्षण करने लगे। आज यह ऐसा है जैसा अग्नि में घृत, जहाँ तुम्हारी कामवासना ऊँची है, वहाँ तुम सदाचारी बनना चाहते हो, तो कदापि न बनोगे।

आज सदाचार को अपनाना है, तो सबसे पूर्व वेद के आदेश और वेद की पताका के नीचे आ जाना है। आज प्रत्येक मानव कहता है कि हम गृहस्थ में कैसे ब्रह्मचारी बन सकते हैं, आज तुम गृहस्थ जीवन में ब्रह्मचारी न बनोगे, तो किस काल में। गृहस्थ जीवन में तुम्हारा ब्रह्मचारी बन जाना अनिवार्य हैं। आज ऋतु काल में देखो, हे मानवतू यदि ऋतु काल को नही देखता !, तो तेरे से ऊँचे वह पक्षी हैं, जो भोग योनि मे हैंआज तेरी कर्मयोनि से कोई ला ,भ नही संसार में, तेरे मानव जीवन से इस पृथ्वी को लाभ नही । मानो पृथ्वी पर तेरा एक भार है। तू आज पृथ्वी को दूषित करने आया है, यदि तूने ऋतुकाल को नही जाना, गृहस्थ में रह करके, जिसको ऋषि मुनियों ने अपनाया था। ऋषि मुनि तुम्हें आदेश दे कर चले गएं हैं, आज यदि हे मानवतूने अपने ऋतु काल को नही अपनाया !, तो तुझसे अच्छे तो यह कुते हैं, तो अपने ऋतु काल को जान करके, अनुकूल कार्य करते हैं। परमात्मा ने इन्हें ऋतु का ज्ञान दिया हैं, आज तुझे ज्ञान दिया हैं, तू इतना मूर्ख बन गया हैं, कि पृथ्वी पर तेरा एक भार हो गया है।

आज यह देवता देख रहे है, कि पृथ्वी पर तुम्हारा इस प्रकार का भार हैं, आज तुम अपने कर्तव्य का पालन करने वाले बनो। सदाचारी और ब्रह्मचारी बन करके चलो। तो यह था, आज का मेरा आदेश, अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रार्थना करूंगा, मुझे केवल इतना ही समय मिला था, कल समय देंगें, तो यज्ञ के सम्बन्ध में कुछ कहूँगा

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य.... बेटातुम्हें समय देकर कोई करे भी क्या !, अब तुमने जितने वाक् कहें है, सब ऐसे हैं तो कोई बुद्धिमान पान करने लगे, तो तुम्हें मूर्ख ही कहेगा।

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! यह वाक्य तो मैं पूर्व ही कह चुका हूँ, कि जितना भी मैं मूर्ख बनूंगा, उतना ही मेरा कल्याण होगा। यदि संसार भी अपने को मूर्ख जानने लगे, तो इसका भी कल्याण हो जाएं। यह अपने को बहुत बुद्धिमान माने बैठा हैं, क्या करें, जब यह अपने को बुद्धिमान मान बैठा हैं, तो इतना दुराचारी बन गया, तो भगवन ! यदि आप मुझे दुराचारी बनाना चाहते है, तो आप मुझे बुद्धिमान कहने लगें। मैं दुराचारी बनना नही चाहता, मैं तो संसार में मूर्ख ही बनना चाहता हूँ, जितना मैं मूर्ख बनूंगा, उतना मेरा कल्याण होगा। हास्य.... तो प्रभु! अब मुझे आज्ञा दीजिए, धन्यवाद

पूज्यपाद गुरुदेवः आज मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक अमृतमय आदेश दिया है !, इनके आदेशों के उच्चारण करने में कटुता तो थी, परन्तु आदेश विचित्र, हृदय से, व्याकुलता से, वैराग्य से हैं, बहुत ही ऊँचा। कल महानन्द जी को द्वितीय भी समय दिया जाएगा और कल यह यज्ञ के सम्बन्ध में कुछ निर्णय दे देंगे। आज इन्होंने केवल सदाचार के ऊपर वाक्य उच्चारण किए, सबसे पूर्व मेरी प्यारी माताओं को ऊँचा आदेश दिया है। सबसे ऊँचा इनका एक ही वक्तव्य था, कि वक्तव्य देने वाले को सदाचारी बन जाना चाहिए। ब्रह्मचारी बन जाना चाहिए। कल महानन्द जी के दो विषय होंगें यज्ञ का और ब्रह्मचर्य का, मेरे प्यारेमहानन्द जी के वाक्यों में कटुता ! अवश्य होती हैं, परन्तु महानन्द जी से मैं यह अवश्य कहूँगा, कि कल कोई कटु वाक्य नही कहेंगें, कटुता उच्चारण करने में मानव और संसार को कष्ट होता है। यथार्थ भी हो परन्तु मधु हो।

पूज्य महानन्द जीः हास्य भगवन! आप फिर यह कहेंगें कि विनोद की वार्त्ता प्रगट कर रहे हैं, परन्तु भगवन कटुता तो मेरे वाक्यों में अवश्य हो ही जाती हैं। !

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य अच्छा, तो अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया हैं, कल समय मिलेगा, तो शेष वाक्य कल होंगे, मेरे प्यारे महानन्द जी !का कल और भी ऊँचा आदेश होगा, मैं प्रभु की याचना करने आऊंगा, महानन्द जी उसका विस्तार करेंगें। अब समय समाप्त हो गया। अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। दिनांक 08 11 1963।

७ 01 04 1964 पुष्प 04 श्राद्ध वास्तविक का स्वरूप

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ, हम पूर्व की भांति, कुछ वेद मन्त्रों का पाठ कर रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन वेद मन्त्रों का पाठ हमने किया, आज हम पुनः उस गान को गा रहे थे, जिस गान से मार्ग में विचरण करने वाले पक्षीगण और सिंह तक शान्त हो जाते हैं। यह वह अमूल्य वेदगान है, जिस गान को गाता हुआ मनुष्य वास्तव में अमृत बन जाता है, मनुष्य ही नहीं, यह पक्षीगण भी अमृत बन जाते हैं। यह पृथ्वी भी अमृत बन जाती है। इस गान को गाते हुए, हमारे ऋषि मुनि शान्त हो गए हैं, आज हमें इस वेद गान को पुनः से विचारना है, इस वेदवाणी में ओज, तेज, आस्तिकता और सदाचार की तरंगे होती है जब उन तरंगों का भाव रूप से विस्तार होता है, तो एक सीमित वस्तु भी असीमित हो जाती है।

मेरे प्यारेआज का वेदपाठ क्या कह रह !ऋषि मण्डल !ा था? वेदों का गान गाना चाहिए, जैसा समाज हो, जैसा वातावरण हो उसके अनुकूल वेद मन्त्रों का पाठ करना चाहिए, वेदगान से मानव का जीवन पवित्र और अमृत बन जाता है, आज हमें गान अवश्य गाना चाहिए, जिससे मानव ही नहीं मार्ग में विचरण करने वाले हिंसक प्राणी और यह पृथ्वी मण्डल भी स्वर्ग हो जाए। आज के वेदपाठ में उस परमपिता परमात्मा की याचना करते चले जा रहे थे, हे परमात्मान्आपने इस संसार को रचाया है !, इसका कल्याण करो। हम शरण में आए हैं, प्रभुहमारा कल्याण कर !, हम तेरी

महानता चाहते हैं, उस महानता को लेकर जब संसार में विचरण करते हैं तो हे परमात्मन्वास्तव में हमारा कल्याण होता है !, जब यह आत्मा इस शरीर को त्यागता हुआ, अन्तरिक्ष में रमण करता है और उस समय, आपने जो सृष्टि के आरम्भ में नियम रचा, उस समय के अनुकूल विधातायह उस स्थान पर पहुँच जाता है !, जहाँ इसका भोग होता है।

श्राद्ध

हे परमात्मन्आज नाना प्रकार की विवेचनाएं हैं जैसा मैंने कल पितर के सम्बन्ध में ! कहा था, मेरे प्यारेमहानन्द जी ने कुछ ऐसे प्रश्न किए हैं कि हम वानप्रस्थियों की ! सेवा करने को ही श्राद्ध क्यों मानें, हम इसको श्राद्ध कदापि नहीं मानेंगे, हम अपना जीवन ऊँचा बनाने के लिए, उनसे शिक्षा प्राप्त करने के लिए उनके द्वारा पहुँचते हैं, इसको श्राद्ध कैसे मान लेवें।

मुनिवरोंदेखो !, मेरे प्यारेमहानन्द जी का यह वाक्य है तो बड़ा सुन्दर परन्तु इनके ! जितने प्रश्न होते हैं, उनकी कोई महान विशेषता नहीं होती। मुनिवरोंवह क्यों नही !ः होती? वह इसलिए कि कल हम श्राद्ध के ऊपर उच्चारण कर रहे थे, तो महानन्द जी उच्चारण कर रहे थे, कि श्राद्ध तो उसका किया जाता है, जो मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। मेरे भोले ऋषि मण्डल! सुनो, आज जब यह आत्मा इस शरीर को त्याग देता है तो उस समय इस शरीर का श्राद्ध करते हैं या इस आत्मा का श्राद्ध करते हैं। मेरे प्यारेमहानन्द जी कहा करते हैं कि हम तो पितरों का श्राद्ध करते हैं !, मैं तो अपने वैज्ञानिक और दार्शनिक रूपों से इनसे कहा करता हूँ कि अरे, क्या यह आत्मा तुम्हारा पितर है? क्या यह आत्मा तुम्हारा पौत्र है? क्या यह आत्मा तुम्हारी माता है? क्या यह आत्मा तुम्हारा गुरु है?

मुनिवरोंदार्शनिक !ता में इसका कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता, जितना भी दार्शनिक रूपों पर जाते हैं, तो मनः शब्द हमारे स्मरण आ जाता है, हम अपने इस सांसरिक संकल्प मात्र से, हम सीमित माता पिता और पौत्रों का सांसरिक भौतिकता मान को उच्चता देते हैं, जहाँ आत्मा परमात्मा का संघर्ष आता है, यह सब कुछ व्यर्थ हो जाता

है, इस शरीर को त्यागने के पश्चात् इस आत्मा को किसी से कोई सम्बन्ध नहीं होता, इसका सम्बन्ध इसके कर्मों से होता है, न पुत्र से होता है, न पौत्र से होता है, न पत्नी से होता है, न गुरु और राजाजनों से होता है, उस समय इसके द्वारा क्या रहता है? हमारे ऋषियों ने कहा है कि उस समय इसके द्वारा केवल कर्मों की शृङ्खला रह जाती है और कुछ नहीं रहता। तो मुनिवरोंजहाँ आत्मा के द्वारा कर्म की विवेचना रह ! जाती है, तो बेटा !मुझे उत्तर क्यों नहीं मिल रहा, कि इसके पश्चात् किसका श्राद्ध कर रहे हो? आज मैं तुमसे जानना चाहता हूँ, कि हम श्राद्ध किसका करें, जब हमारे शरीर का, इस आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं, बेटातुम कहो !, कि हम शरीर के लिए श्राद्ध करते हैं, तो बेटाअवश्य करना चाहिए !। जब तक शरीर होता है, जैसा मैंने कल के आदेश में कहा था कि हमें वानप्रस्थ आश्रम और सन्यास आश्रम में नाना प्रकार की उच्च से उच्च सुविधाएं देकर, इनकी सेवा करनी चाहिए, जहाँ तक मृत्यु के पश्चात् श्राद्ध का प्रश्न आता हैइसीलिए शरी ,वहाँ यह सब कुछ समाप्त हो जाता है ,र के श्राद्ध का प्रश्न ही नहीं उठता।

संकल्प का महत्त्व

मैंने एक समय संकल्प विकल्प की चर्चाएं कीं, तो उच्चारण किया कि यह मनः शब्द स्मरण आता है। जब हमारे द्वारा मन की व्याख्या आती है, तो दार्शनिक मण्डल कहता है, कि यह मन कहाँ से उत्पन्न होता है? यह मन हमारे आहार और व्यवहारों से उत्पन्न होता है, हमारे आहार व्यवहार कैसे प्राप्त होते हैं, मुनिवरोंयह हमारे ! संकल्प से प्राप्त होते हैं, संकल्प विकल्प हमारे द्वारा दो पदार्थ हैं, इनकी पूर्वकाल में व्याख्या की थी, संकल्प वह पदार्थ है, जिसको धारण करके बेटाइस संसार में क्या ! सूर्य लोकों में, ध्रुव मण्डल में और बृहस्पति लोकों में रमण किया करते हैं, जब मानव की संकल्प शक्ति ऊँची बन जाती है, तो उससे मानव के रोग भी शान्त हो जाता हैं, संकल्प मानव के द्वारा सवोत्तम औषधि है, इस औषधि को हमें अवश्य पान करना चाहिए, इस संकल्प को हमारे यहाँ सोम कहते हैं। जिससे हमें शान्ति प्राप्त होती है, जैसे सोम नाम परमात्मा का है, रस नाम ज्ञान का है। तो जब हम सोमरस

का पान करते हैं, तो हम परमात्मा से मिलान करने वाली विद्या का पान करते हैं और संकल्प मात्र से पान करते हैं, हमारा संकल्प वास्तविक होना चाहिए। जब हम संकल्प के द्वारा ऊँचे चलते हैं, तो उस स्थान में पहुँच जाते हैं, जहाँ परमात्मा अपने प्यारे पुत्रों में ज्ञान और विवेक की स्थापना कर रहा है, जहाँ यह आत्मा अपने प्रभु की गोद में पहुँच जाता है। संकल्प हमें परमात्मा से मिलान कराता है, संकल्प से हम राजा बन जाते हैं।

मुनिवरोंसंकल्प के साथ साथ विवेक होना चाहिए और परिश्रम भी होना चाहिए !, यदि पुरुषार्थ और संकल्प मन, वचन, कर्म से हृदय में होता है, तो वह ऊँचे शिखर पर पहुँचा देता है, इसका नाम संकल्प है।

विकल्प

मुनिवरोंद्वितीय का नाम विकल !्प है, विकल्प हम उसको कहते हैं जिसका न कोई आदि और न कोई अन्त होता है, जैसे हम, हमारी प्यारी माताएं, भद्र मण्डल और ऋषि मण्डल इस संसार में आए हैं जिनको आज हम पितर कहते हैं, जिनको देखो, आज हम अपने माता पिता कहते हैं, नाना प्रकार के सांसारिक सम्बन्ध बना लेते हैं, कि यह मेरी माता है, यह मेरा पिता है, यह मेरी पत्नी है, यह मेरी भौजाई है, यह मेरी कन्या है, यह मेरी पुत्री है, यह नाना परिवार है और यह मेरा राष्ट्र है। मुनिवरोंजब यह शृङ्खलाएं हृदय में आती हैं !, तो इनके द्वारा अभिमान भी होता है, इसका नाम है विकल्प।

मुनिवरोंयह सम्बन्धी परिवार नहीं था और !माता के गर्भ स्थल में आने से पूर्व बेटा ! मृत्यु के पश्चात् भी यह परिवार न रहेगा, तो इन वाक्यों का, जिस शृंखला का, आदि और अन्त नहीं, उसका नाम विकल्प है। संकल्प और विकल्प के उत्पन्न होने से देखो, गृह में रहने वाली पत्नी आ गई। बेटायह सब कुछ क्या है !? संकल्प विकल्प क्या है?

संकल्प नाम परमात्मा है और विकल्प नाम प्रकृति का है। परमात्मा और प्रकृति का मिलान हुआ, तो यह संसार रच गया। जो तुम्हें दृष्टिगोचर आ रहा है। ऋषि ने मुझे

निर्णय कराया, कि इस संसार में आधुनिक काल का प्रत्येक व्यक्ति कहता है, कि यह मेरी भूमि है, यह मेरा राज्य है, यह मेरा सम्बन्धी परिवार है, परन्तु किसने रचाई, किसकी भूमि और कौन कौन इसको अपनाने वाले बन रहे हैं।

तो हे मेरे प्यारेआज हमें उस ऊँचे शिखर के लिए प्रयत्न कर !ऋषि मण्डल !ना है, जिस शिखर पर जाकर मृत्यु भी हमें न छू सके। उच्चारण कर रहा था, कि संकल्प और विकल्प दोनों का जब मिलान होता है, तो हमारे हृदय में एक शक्ति, जिसको हम मन कहते हैं, उत्पन्न हो जाता है।

मुनिवरोंमहानन्द जी ने यह वाक्य कहा कि जब यह वाक्य !एक समय मेरे प्यारे ! अन्तरिक्ष में रमण करता है, तो क्या यह शब्द अनादि है? और जो वाक्य उच्चारण कर रहे हैं, क्या यह अन्तरिक्ष को पवित्र बना सकता है?

मुनिवरोंजब इनके यह ऊँचे प्रश्न हमारे समक्ष आते हैं !, तो हमें बड़ी मग्नता आती है, हृदय प्रसन्न होने लगता है और यह कहा करता हूँ कि यह मेरा प्यारा ऋषि मण्डल क्या उच्चारण कर रहा है, मेरे प्यारेमहानन्द जी क्या उच्चारण कर रहे हैं !, बच्चों वाली वार्त्ताएं, बच्चों वाली नहीं मूर्खों वाले वाक्य, परन्तु इनके वाक्यों में कोई तत्त्व भी होता है, आज जो भी कुछ ऋषि ने कहा, कि यह वेद पाठ जो हमने उच्चारण किया वह अन्तरिक्ष को कैसे पवित्र बना सकता है।

मुनिवरोंमैं प्रमाण देने को उद्यत हूँ !, जहाँ ऋषियों का समाज होता है और हर समय वेदों युक्त और भगवान की चर्चाएं होती हैं, वहाँ एक पापी पुरुष का मन भी लालायित हो जाता है, उस स्थान में पहुँचने के पश्चात् मानव का हृदय कहता है कि यह स्थान बड़ा रमणीय है, यहाँ मेरे सब दुर्भाव समाप्त हो गए हैं और मेरा हृदय पवित्र हो गया है। तो बेटाजहाँ वेदों की चर्चाएं होती हैं !, वहाँ का वायुमण्डल भी वेदयुक्त शब्दार्थों से भरा रहता है, जिसमें सुन्दर भाव हैं, पाप के भाव नहीं, इसी प्रकार जहाँ यज्ञ होता है, वहाँ यज्ञ की सुगन्धि और वेद मन्त्रों की ध्वनि वायुमण्डल में मिलकर आगे को रमण करती हुई देवताओं तक पहुँचती है, वह शब्दार्थ भी उसके साथ साथ

अन्तरिक्ष में पहुँचते हैं, वह शब्दार्थ देखो, हमें कुछ न कुछ ज्ञान और विज्ञान की दृष्टि से उच्च भाव देते हैं।

मुनिवरोंहम उच्चारण करते करते बहुत दूर चले गए हैं !, आज हमारा आदेश चल रहा था, कि संकल्प और विकल्प के सम्बन्ध से यह मन उत्पन्न होता है, जब दोनों हमारे द्वारा विशेष होते हैं उस समय हमारा जीवन पवित्र कहलाता है।

मुनिवरोंहम उच्चारण क्या कर रहे थे !, कि जब यह आत्मा इस शरीर से निकल जाता है, तो क्या हम उस मृतक शरीर का श्राद्ध करें या उस आत्मा का श्राद्ध करें, या हम सन्यासी और वानप्रस्थियों का श्राद्ध करें।

पूज्य महानन्द जीः गुरुजीहमारे विचार में तो यह आता है !, कि मृतकों का श्राद्ध करना चाहिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटातुम्हारे विचारों में जो वाक्य आता है वह भी किसी स्थान ! में सुन्दर माना जाता है। हमारे वेदाचार्यों ने अन्त्येष्टि संस्कार को कहा है, जब अन्त्येष्टि संस्कार हो, तो यज्ञशाला में समिधा और नाना सुगन्धिदायक पदार्थों से वह संस्कार करना चाहिए, बेटाहो सकता है तुम इसको श्राद्ध कहते हो !, देखो, आत्मा की शान्ति के लिए मानव को उसकी सेवा करना सबसे प्रथम कर्त्तव्य है, आज जिस विद्या को उसने पान किया है, उस विद्या को लेना तुम्हारा कर्त्तव्य है क्योंकि बेटा ! यदि तुम उसकी विद्या को ग्रहण कर लोगे, तो हो सकते है उसी स्थान में, उसी ऊँचे परिवार में जन्म लो, जहाँ पुनः उस विद्या में पुजारी बनो।

मुनिवरोंहमारे ऋषियों की परम्परा कितनी विशाल कहलाई गई है !, ऋषिजनों ने जिस विद्या का पान किया, उस विद्या का वानप्रस्थियों द्वारा सब ही ने श्रवण करने का प्रयत्न किया है, सबने उस विद्या का पान किया और निकाला, उन आत्माओं का जन्म अगले जन्मों में उन्हीं संस्कारों वाले व्यक्तियों के द्वारा जन्म होता है जहाँ सूक्ष्म सी विद्या पान करने से वह विद्या पुनः से उनके द्वारा आ जाती है, उस विद्या को श्राद्ध पूर्वक अपने में रमण कर लेना चाहिए, यह सब कुछ हमारे आचार्यों का कथन है।

हे मेरे प्यारेआज हम उच्चारण कर रहे थे !ऋषि मण्डल !, कि हमें श्राद्ध करना चाहिए, बेटाजब यह आत्मा इसी शरीर को त्याग देता है !, उस समय जिसके जैसे कर्म होते है उन्हीं कर्मों की श्रृंखला इसके साथ रहती है, जैसा मैंने इसके पूर्व अभी अभी कहा है, उस समय न इसके द्वारा पुत्र का ही कोई सम्बन्ध रहता है, न पत्नी का, न पुत्री का और न राज्य का रहता है, केवल कर्म साथ रहते हैं, और उन्हीं संस्कारों में उसका जन्म हो जाता है। मेरे प्यारेअब मेरे विचार !ऋषि मण्डल ! में नहीं आता कि तुम मृतकों का श्राद्ध करते हो यह जीवितों का?

पूज्य महानन्द जीः भगवन् मैं तो मृतकों का श्राद्ध किया करता हूँ। !

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, क्यों?

पूज्य महानन्द जीः भगवन्सुनो !, आपने एक समय कहा है, कि मैंने इस संसार को द्वापर से पूर्व देखा और उसके पश्चात् नहीं देखा, तो भगवन्आपका श्राद्ध करता ! चला आ रहा हूँ पुनः से, यदि मैं श्राद्ध न करता तो आप मुझे प्राप्त नहीं होते, तो भगवन् मैं तो मृतकों का श्राद्ध किया करता हूँ। !

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअरे ...., यह तो बड़ा मूर्ख है, देखो, इसकी वार्त्ता, कैसे शब्द बेटातुम हमारा श्राद्ध करते चले जाओ !, तो अच्छी ही वार्त्ता है, इससे जीवन का उत्थान ही होता हे, जो गुरुओं के वचनों का श्राद्ध करता है, बेटावह उसका ! सौभाग्य है, बेटातुम हमारे वचनों का श्राद्ध करते हो या हमारे शरीर का श्राद्ध करते ! हो?

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! मैं आपके वचनों का श्राद्ध करता हूँ, परन्तु शरीर का भी, किसी किसी काल में कर देता हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य मुनिवरोंदेखो !, यह महानन्द जी कैसी विनोद की वार्त्ताएं प्रकट कर रहे हैं, मैं तुमसे एक प्रश्न और जानना चाहता हूँ कि तुम मृतकों का श्राद्ध कैसे करते हो? किस रूप से श्राद्ध करते हो?

पूज्य महानन्द जीः भगवन्मैं यह श्राद्ध इसलिए करता चला आया !, कि मुझे गुरुदेव की प्राप्ति हो, मुझे उस आत्मा का पुनः से सम्बन्ध प्राप्त हो।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटावास्तव में ऐसा श्राद्ध तो मनुष्य को करना ! चाहिए, कि जो आत्मा अपने से बिछुड़ जाता है और जिस आत्मा के कार्यों की ऊँची शृंखलाएं हैं, वह संसार में पुनः से उत्थान करने के लिए आए, यह श्राद्ध तो बहुत अच्छा है। परन्तु हम यह भी जानना चाहते हैं, कि तुम हमारे कर्मों का श्राद्ध करते चले आए हो या किसी और वस्तु का?

पूज्य महानन्द जीः प्रभुयह तो आप ही जानते हैं !, कि कहीं कर्मों का भी श्राद्ध होता है, कर्मों का श्राद्ध नहीं होता, मृतकों का श्राद्ध होता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, मूर्खानन्दमृतकों का श्राद्ध नहीं होता !, जीवित का श्राद्ध होता है।

पूज्य महानन्द जीः प्रभुमैं एक वाक्य और जानना चाहता हूँ !, कि जब जीवित का श्राद्ध होता है, तो जीवन और मृत्यु क्या पदार्थ है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटावास्तव में देखा जाता है !, तो जीवन और मृत्यु कोई पदार्थ नहीं है। जब हम ज्ञान और विज्ञान के ऊँचे शिखर पर पहुँच कर, इन पर अनुसन्धान करते हैं, तो विचार आता है, कि यह जो मृत्यु और जीवन है, यह कोई मूल्यवान वस्तु नहीं है, मैं यह पूर्व कह चुका हूँ कि जीवन मृत्यु कोई पदार्थ नहीं, केवल अज्ञानता का शब्दार्थ है।

पूज्य महानन्द जीः प्रभुजब वह अज्ञानता का शब्दार्थ है !, तो अज्ञानता से ही श्राद्ध होता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटासुनो !, अज्ञानता का इसलिए है, क्योंकि यदि हम आत्मा को जीवन मान लें और शरीर को मृतक मान लें, तो वैज्ञानिक और आध्यात्मिक दृष्टि से ऐसा दृष्टिगोचर नहीं होता, आत्मा को जीवन परमात्मा से मिलता है क्योंकि वह आत्मा का पिता है, पिता और माता होने के नाते ज्ञान रूपी आनन्द इस आत्मा को प्राप्त हो जाता है, उसका ना जीवन है। जीवन नाम है ज्ञान का, जीवन नाम है विवेक का, जीवन नाम है दूसरों से प्रीति करने का और जीवन नाम है परमात्मा की गोद में जाने का।

मुनिवरोंमृत्यु क्या है !? मृत्यु वह है जो दूसरों को कष्ट कर देता है, आज जो यह द्वेष है, इसका नाम मृत्यु है, यह जो काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह हैं, इनमें जा फंस जाता है, उसका नाम मृत्यु है। जो अभिमान में चला जाता है, उसका नाम मृत्यु है। बेटाजिसमें विवेक न हो !, वह सदैव मृत्यु के आसन पर विश्राम कर रहा है। मृत्यु और जीवन दोनों यह पदार्थ हैं। जो दूसरों का भक्षण कर जाते हैं, जैसा ऋषि महानन्द जी ने निर्णाया कराया, वह मृत्यु शैय्या पर विश्राम कर रहे हैं, और जो दूसरों से प्रीति करते हैं, परमात्मा से ज्ञान पाते हैं और संसार में अविवेकी पुरुषों में उस ज्ञान का प्रचार करते हैं, बेटाउनका जीवन धन्य है। आज हमें मृत्यु को विचारना ! चाहिए, मृत्यु हम किसको कहते और जीवन किसको कहते हैं।

मुनिवरोंदेखो !, संसार में जीवन का श्राद्ध होता है, और मृत्यु का श्राद्ध नहीं होता। श्राद्ध नाम है श्रद्धा का, श्रद्धा की जाती है तो विवेकी पुरुष पर की जाती है, जब विवेकी और वैज्ञानिक मनुष्य पर श्रद्धा होती है तो उससे मनुष्य का उत्थान होता है, जब परमात्मा पर निष्ठा और श्रद्धा होती है तो परमात्मा जीवन देता है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन्जैसे आपने अभी ! अभी कहा है, कि परमात्मा पर निष्ठा करने से परमात्मा जीवन देता है, तो यदि हम परमात्मा पर निष्ठा न करें, तो वह हमें जीवन नहीं देगा?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटावह जीवन तो प्राणियों को सदैव देता रहता है !, उसकी जो रश्मियाँ हैं, वह हर समय देता रहता है, परन्तु उस रश्मि को लेकर कोई शान्त कर दे या उस रश्मि को लेकर कोई प्रकाश में चला जाए, तो बेटाउसका जीवन है !, और जो उस रश्मि को लेकर बेटादुराचार करता है !, वह मृत्यु की शैय्या पर है। बेटाइस शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु नहीं !। हमारा वैदिक साहित्य और ऋषियों का आदेश यह पुकार रहा है, कि शरीर को त्यागना मृत्यु नहीं, यह तो केवल जैसे मनुष्य धारण किए वस्त्रों का त्याग देता है, ऐसे ही यह आत्मा शरीर रूपी वस्त्र को धारण करता है, अपने कर्मों के संस्कारों से उसे वस्त्र प्राप्त हो जाता है, जब वह शरीर रहित हो जाता, तब वह परमात्मा की गोद में पहुँच जाता है और उसको वास्तविक

विज्ञान और विवेक रूपी वस्त्र प्राप्त हो जाता है, उसके पश्चात् उसको इस वस्त्र की आवश्यकता नहीं रहती, उसका नाम जीवन है।

मेरे आदि ऋषि मण्डलमैं क्या उच्चारण कर रहा था !, बेटाप्रश्नों के उत्तर !, परमात्मा तो जीवन देता रहता है, परन्तु आज हमें जीवन का श्राद्ध करना चाहिए, बेटा! हमें श्राद्ध करनी है तो जीवन पर करनी है हमे मृत्यु पर श्राद्ध नही करना है आज तुम हमारी मृत्यु का श्राद्ध मना रहे हो, तो बेटामनाते चले जाओ !, हमें इससे क्या प्रयोजन, तुम भी बेटाजो श्राद्ध मानते हो !, वह जीवन पर श्राद्ध मानते हो, हमारे शरीर को लेने का कोई श्राद्ध नहीं, जिन ऋषियों की वाणी अमर है और जिस पर आज तक हम श्राद्ध करते चले आए हैं बेटाउसका नाम श्रद्धा है !। जैस महर्षि पतंजलि, महर्षि कणाद, देवऋषि नारद, महर्षि लोमश आदि हुए उनका नामोच्चारण अब तक हो रहा है, उनकी वाणी पर श्रद्धा, उनके कर्मों पर श्रद्धा, इसका नाम है श्राद्ध।

आज हमें किन पर श्रद्धा करनी चाहिए? जो विवेकी पुरुष हो, जिनके द्वारा अपना जीवन हो, जो जीवन दाता हो, उनका वास्तव में श्राद्ध करना चाहिए। यह आज का हमारा आदेश चल रहा था, आज का हमारा आदेश दार्शनिक रूपों में जा पहुँचा है, उच्चारण कर रहे थे कि हमें परमात्मा की याचना करनी चाहिए और परमात्मा के उस ऊँचे शिखर पर पहुँच जाना है, जिस शिखर पर जा रके वह मनुष्य संसार का स्वामी बन जाता है।

संकल्पवादी

मुनिवरोंदेखो !, संकल्प और विकल्प की चर्चाएं चल रही थीं, आज संसार में संकल्पवादी बनो। तुम संकल्प धारण करो कि मैं कोई वाक्य मिथ्या उच्चारण नहीं करूंगा, मैं किसी प्राणी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं दूंगा, आज तुम अपने हृदय में संकल्पवादी बनो कि मैं परमात्मा का पूजन करूंगा, अप्रिय पदार्थों को नहीं पान करेंगे, देवता बनने का संकल्प और आत्म वैज्ञानिक बनने का संकल्प धारण करो, आज हम यह उच्चारण नहीं कर रहे हैं कि माता पिता की सेवा नहीं करनी चाहिए,

अवश्य करनी चाहिए, उन पर तथा राष्ट्र पर निष्ठा होनी चाहिए, अपना शरीर ब्रह्मचर्य रूपी गहने पर सजा होना चाहिए, जैसे माता का सौन्दर्य स्वर्ण के भूषण से विलक्षण बन जाता है।

कल्पवृक्ष का कथानक

मुनिवरोंदेखो !, एक वाक्य हमारे स्मरण आ गया है, एक अलंकार है जिसको हम पूर्व भी कह चुके हैं, बेटावह अलंकार यह है !, सुनो एक समय देव ऋषि नारद : महाराज मृत मण्डल में भ्रमण कर रहे थे। भ्रमण करते हुए एक दुःखित मनुष्य को देखा। वह दुःखित इसलिए था, कि उसकी पत्नी महाक्लेषिणी थी, वह नित्यप्रति अपने पति को दण्ड दिया करती थी, सेवा के स्थान पर दण्ड दिया करती थी, वह एक समय अपनी पत्नी के भय से एकान्त स्थान में विराजमान हुआ, प्रभु से याचना कर रहा था, हे प्रभु इस समय !मैं महादुःखी हूँ। मुझे यहाँ से ले जाओ। इतने में देव ऋषि नारद आ पधारे। नारद मुनि बोले भाई! चलो, आज तुम्हें स्वर्ग में ले चलें। वह मनुष्य प्रसन्न होकर बोला, चलिए भगवन्। वह वहाँ से चलकर स्वर्ग के द्वार पर जा ! पहुँचे।

नारद जी बोले कि अरे, यह स्वर्ग का द्वार है। उस द्वार के आगे एक कल्पवृक्ष था, नारद मुनि बोले कि तुम इस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो जाओ और मैं विष्णु के द्वारा जाकर आज्ञा ले आऊं कि तुम्हारे लिए स्वर्ग में स्थान है या नहीं, अब नारद तो विष्णु के आश्रम में जा पहुँचे और वह मनुष्य उस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो गया।

मन्द सुगन्ध वायु चल रही थी, उस मनुष्य के हृदय में कल्पना जागी, कि इतनी शीतल मन्द सुगन्ध वायु मन को प्रसन्न करने वाली चल रही है, परन्तु यहाँ एक सुन्दर आसन होना चाहिए था, बेटाउसके लिए वह आसन लग गया !, जब वह आसन पर विराजमान हो गया, तो कल्पना शक्ति जागी कि वहाँ तो विश्राम करने वाला आसन होना था, बेटावह तो कल्पवृक्ष था !, वहाँ तो कल्पना की और वह वस्तु आई, विश्राम करने वाला आसन भी लग गया। अब उसके मन में कल्पना आई कि

अरे, यहाँ तो नाना अप्सराएं भी होनी चाहिए थीं। अब बेटादेखो !, तो नाना अप्सराएं आ गई और सेवा करने लगीं, उस समय मनुष्य के मन में मृतलोकी पत्नी भी स्मरण हो गई और कहने लगा कि यदि वह मृतलोक वाली पत्नी यहाँ होती, तो तेरे ऊपर डंडा भी होता। अब बेटादेखो !, तो वह मृतलोक वाली पत्नी आ पहुँची, अब उस मनुष्य के ऊपर डंडा है, आगे वह जा रहा है और डंडा लिए पत्नी उसके पीछे है।

इतने में देवर्षि नारद जी आ पधारे और देखा कि यह क्या? नारद मुनि ने दीर्घ वाणी से कहा कि अरे, कल्पना को त्याग। उस समय मनुष्य ने कल्पना को त्यागा, तो बेटावहाँ न पत्नी है !, न अप्सराएं हैं और न आसन है, केवल कल्पवृक्ष है। नारद मुनि आश्चर्य से बोले, अरे, महापापीतूने इस कल्पवृक्ष के नीचे आकर भी भोग ! विलास की कल्पना की, यदि तू यहाँ स्वर्ग की कल्पना करता, तो तुझे स्वर्ग प्राप्त हो जाता, अरे, तू यदि यहाँ ऋषि बनने की कल्पना करता, तो ऋषि पद प्राप्त हो जाता, अरे, विष्णु से मिलान करने की कल्पना करता, तो विष्णु से मिलान हो जाता।

मेरे आदि ऋषि मण्डलउच्चारण करने का अभिप्राय क्या है !? अरे, यहाँ संकल्प करना है, तो वह संकल्प करो, जिससे तुम नास्तिक न बन करके अग्रेय बन जाओ, स्वर्ग के गामी बनो, जब प्रभु ने यह संसार रचा, तो आत्मा ने और देवताओं ने मिलकर कहा कि प्रभुआपने यह संस !ार क्या रचा है? उस समय भगवान् ने कहा कि मैंने जो यह संसार रचा है, यह एक प्रकार का कल्पवृक्ष है, यहाँ आत्मा जो भी कल्पना करेगी, वही बनेगी, आज जो भी कल्पना करोगे, वही बनोगे और वही वस्तु प्राप्त हो जाएगी, परन्तु संकल्प यथार्थ होनो चाहिए, संकल्प में विवेक होना चाहिए, जिससे मानव जीवन पवित्र हो जाए।

मुनिवरोंयह है आज का हमारा वैज्ञानिक आदेश !, अब यह आदेश समाप्त होने जा रहा है, आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हमें श्राद्ध करना चाहिए। किनका श्राद्ध करना चाहिए? ऋषियों के वाक्यों पर श्रद्धा होनी चहिए, वानप्रस्थियों और सन्यासियों की सेवा करके, उनसे सतोयुग ले लेना चाहिए। हमें सत्य वचन ले लेना चाहिए, जिससे हमारा जीवन पवित्र हो जाए और अपने भाग्य की सराहना देते

हुए, इस संसार से पार हो जाएं, अब समय मिलेगा, तो शेष वाक्य कल होंगे, अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है, कल हमारे वाक्य इससे आगे और भी पवित्र होंगे, अब वेद का पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन्गुरुजी आज का आपका आदेश बहुत सुन्दर ! और पवित्र, परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म देने लगे।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं बेटा अधिक समय हो चुका है। !

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवन्आपके लिए बहुत अधिक हो गया है !, इसमें से भी कल कुछ सूक्ष्म कर देना। ‘

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य... अरे, मूर्खानन्दयह वाक्य प्रकट करो। अब विनोद का ! समय नहीं।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा प्रभु बजे। 9 । रात्रि(वेद पाठ) !, बीपार्क .सी., सरोजनी नगर, दिनांक 01 04 1964।

८ 17 04 1964 पुष्प 04 चतुर्भुज विष्णु राष्ट्र

वेदगान से यह आत्मा क्यों प्रसन्न होती है?

जीते रहोदेखो ,, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम ! तुम्हारे समक्ष, पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का गान गा रहे थे, आज हमारा वेद पाठ बड़ा सुन्दर और मधुर था, ऐसा प्रतीत होता है जैसे परमपिता परमात्मा हमें आज कोई वस्तु प्रदान कर रहे हों, मेरे प्यारेमहानन्द जी यह कहा करते हैं !, कि वेद के मन्त्रों के गाने में यह आत्मा प्रसन्न क्यों हो जाता है? मुनिवरोंमेरे आदि ऋषियों ने ! उत्तरदायी बनते हुएऐसा कहा है कि वेद वाणी हमारे यहाँ ईश्वरीय वाणी मानी जाती है, आत्मा परमात्मा का सम्बन्ध ऐसा है, जैसे पिता और पुत्र का होता है, जैसे माता और पुत्र का होता है, जब पुत्र अपने माता पिता से प्रसन्न होता है, तो अपने माता पिता का गुणगान, उनकी प्रसन्नता और उनकी महिमा का गुण गाने लगता है, उसका हृदय पवित्र हो जाता है और मग्न होने लगता है, इसी प्रकार हे मेरे प्यारेऋषि ! आज परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जा रहा था और यह आत्मा !मण्डल

अपने परमपिता परमात्मा का गुणगान गाता हुआ प्रसन्न होने जा रहा था, अपने प्रभु की प्रशंसा करता हुआ, अपने पिता की महिमा का गुणगान गाता हुआ और हृदय में तरंगें उत्पन कर, यह आत्मा अपने प्रभु को ऊँचे स्वरों से पुकारता चला जा रहा था।

प्रभु याचना

मुनिवरों आज के वेद पाठ में विष्णु की !बड़ी सुन्दर महिमा आ रही थी, हमारे वेदाचार्यों ने, गुरुजनों ने सृष्टि के प्रारम्भ से विष्णु की बड़ी ऊँची महिमा गाई है, हमारे वेदों में विष्णु की व्याख्या कई प्रकार से की जाती है, हम 'विष्णु' परमपिता परमात्मा को कहा करते हैं, जो संसार का पालन कर रहा है, इन लोकान्तरों को स्थिर कर रहा और इनको अपनी परिधि में रमण करा रहा है, हे विष्णुतू इस ! संसार का कल्याण करने वाला है, आज हम तेरी महिमा का गुणगान गाते चले जाएं, हे प्रभु जब तेरी महिमा का गुणगान गया जाता है !तो मार्ग में विचरने वाले पक्षीगण और मांस भक्षण करने वाले सिंह जैसी योनि भी तेरी महिमा का गुणगान पाकर मुग्ध हो जाते हैं। हे प्रभुचाहे मृत लोक में !यह तेरी अलौकिकता है। प्रभु ! रमण करने वाले प्राणी हो, जल में रमण करने वाले हों, सूर्य लोक में रमण करने वाले हों, चन्द्र लोक में रमण करने वाले हों, ध्रुव और बृहस्पति लोकों में रमण करने वाले हों, परन्तु हे प्रभुउन सबको आपका दिया हुआ जीवन है !, आप उन सबका पालन पोषण कर रहे हैं, हे परमदेवहमें भी जीवन दो !, हम जीवन चाहते हैं, प्रभु ! हम उस सृष्टि मे पहुँच जाएं, उस अमूल्य निधि को जान जाएं, उस राष्ट्र में पहुँच जाएं जहाँ प्रभु !आपकी महिमा का सूर्य अस्त नहीं होता, प्रभुयदि हमारे नेत्रों से !, हमारी अन्तरात्मा से, हमारे अन्तःकरण से आपकी महिमा का अंकुर भी चला गया तो मानो प्रभुहमें मृत्यु न दो !हम मृत्यु को प्राप्त हो गए। हे प्रभु !, हम उन्नति चाहते हैं, संसार में सतोगुणता चाहते हैं, आज उन पदार्थों का पान करना चाहते हैं जिनसे हमारा ज्ञान ऊपर आ जाए और हमें शुद्ध और पवित्र बनाता चला जाए, हे परमदेव ! हमारा कल्याण करने वाले, विष्णुतू आ और हमारा कल्याण कर !, आपको वेदों ने विष्णु कहा है।

हे परमदेवकल्याण कर !ने वाले विष्णु आज तेरी महिमा का !पात्र बनना चाहते हैं, प्रभु! हमें कुपात्र न बना। अपनी इस वेदवाणी से हमें वंचित्त न कर, यदि हम आपकी वेदवाणी से वंचित्त हो गए, तो प्रभु जानो हमारा जीवन मृत्यु को प्राप्त हो गया। !

विष्णु व्याख्या

मुनिवरोंविष्णु नाम परमात्मा का ही नहीं !, जो सदैव अक्षयक्षीर सागर में रमण करने वाला है, जो शुद्ध चैतन्य ज्ञान स्वरूप है, हमारे वेदाचार्यों ने विष्णु नाम इस आत्मा का भी कहा है, विष्णु नाम राजा का भी है और विष्णु नाम सूर्य का भी है।

हे मेरे प्यारेहम इस आत्मा को विष्णु क्यों कहते हैं !ऋषि मण्डल !? यह आत्मा विष्णु किस प्रकार है? मेरे प्यारेमहानन्द जी मुझे एक लोक कथा वर्णन कराया ! करते हैं, कि विष्णु अक्षयक्षीर सागर में शेषनाग की शैय्या पर विश्राम कर रहा है, लक्ष्मी उसके चरणों में ओत प्रोत है, नारद अपनी वीणा को लिए समक्ष है और गन्धर्व गुणगान गा रहा है, विष्णु का नाभि से कमल उत्पन्न हो रहा है, कमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति हो रही है।

मुनिवरोंजब इस लोक कथा पर दार्शनिकता से विचारते हैं !, तो प्रतीत होता है कि विष्णु नाम इस आत्मा का है, जब यह आत्मा ज्ञान के क्षेत्र में जाता है और सम्पूर्ण ज्ञान और विज्ञान इसके द्वारा होता है, तो उस समय इस आत्मा को आनन्द प्राप्त होता है, ज्ञान रूपी आनन्द का नाम अक्षय क्षीर सागर है, जब ज्ञान हो जाता है, तो अमूल्यताएं प्राप्त हो जाती हैं और शेषनाग की शैय्या बन जाती है, यह आत्मा उन पर शासन करने वाला बन जाता है।

शेषनाग का स्वरूप

मुनिवरोंपाँच फनों ! वाला शेषनाग कौन सा है? काम, क्रोध, मद, लाभ और मोह यह पाँच फन हैं, जब जिज्ञासु व ज्ञानी इनको एकाग्र कर लेता है, उस स्थान में यह आत्मा शेषनाग की शैय्या पर स्थिर हो जाता है। यदि मानव में क्रोध आता है तो मृत्यु तुल्य जैसे व्यक्ति को सर्प डस लेता है, यदि काम आता है तो वह भी मृत्यु के तुल्य, अभिमान आता है वह भी मृत्यु के तुल्य, मद आता है, वह भी मृत्यु के तुल्य

इन पाँचों में कोई भी ज्ञानी को आ जाए, वह ही ज्ञान को नष्ट भ्रष्ट कर देता है। तो मुनिवरोंकाम !, क्रोध, मद, लोभ और मोह रूपी यह शेषनाग है।
मुनिवरोंदेखो !, नारद क्या है? गन्धर्व क्या है? यह भी विचारणीय है। नारद नाम मन का है, नारद नाम के ऋषि भी हुए, नारद परमात्मा को भी कहते हैं। मन का नाम नारद कैसे है? जब ज्ञानी काम, क्रोध मद, लोभ, मोह को अपने वश में कर लेता है उस समय यह मन जिसकी चंचल गति रहती है, अपनी चंचलता रूपी वाणी को लेकर आत्मा के समक्ष आ जाता है और कहता है कि प्रभुमैं अपनी चंचलता को ! त्याग रहा हूँ, मुनिवरोंउसका नाम मन है !, गन्धर्व नाम बुद्धि का है, बुद्धि कह रही है कि मैं आपका गुणगान गाने आई हूँ।
मुनिवरोंलक्ष्मी भी मानव के द्वारा होनी चाहिए !, इससे राष्ट्र का कार्य चलता है, परन्तु इस लक्ष्मी का जब सदुपयोग होगा, उस स्थान में यह लक्ष्मी यथार्थ होगी, सदुपयोग वही कर सकता है जिसके द्वारा ज्ञान होता है, उसे बुद्धिमानों का स्वागत किया जाता है, राज्य का स्वागत किया जाता है और अपने जीवन की शृङ्खला बनाई जाती है वह लक्ष्मी ज्ञानी के अधीन हो जाती है और चरणों को चूमने लगती है, मेरे प्यारेभद्र ! उच्चारण करने का अभिप्राय यह है !मण्डल, कि इस आत्मा को विष्णु कहते हैं।
मुनिवरोंजब ज्ञान द्वारा आत्मा इन सबको अधीन कर लेता है तो उस आत्मा से ! तरंगें उत्पन्न होती हैं और उनतरंगों का मिलान परब्रह्म से हो जाता है, नाभि नाम है तरंगों का, कमल नाम है तरंगों का, जब इन कमल रूपी तरंगों का मिलान, उस परमपिता परमात्मा से हो जाता है, तो उस स्थान में जानो कि इस आत्मा का मिलान उस प्रभु से हो जाता है, जिस प्रभु की यह इच्छा करता है।
मुनिवरोंआज का आदेश हमें बहुत ऊँचे शिखर के लिए पुकार रहा था !, हमें मृत्यु से ऊपर ले जाने का, यह ज्ञान का वाक्य चल रहा था, आज प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को, प्रत्येक मेरे भद्र ऋषि मण्डल को ज्ञान होना चाहिए, ज्ञान क्षेत्र में जो रमण करता है, वह संसार से पार हो जाता है।

राजा का नाम विष्णु

मुनिवरोंदेखो !, हमारे यहाँ इस आत्मा को ही विष्णु नहीं कहते, विष्णु नाम राजा का भी है, कौन से राजा का नाम विष्णु है? उस राजा को विष्णु कहते हैं, जिस राजा के यहाँ चार भुज होते हैं एक भुज में पदम्, द्वितीय में गदा, तृतीय में शंख और चतुर्थ में चक्र होता है, आज मुझे त्रेता के समय की एक वार्त्ता स्मरण होती चली जा रही है, जब भगवान राम महर्षि वशिष्ठ मुनि के चरणों में ओत प्रोत होते थे, भगवान राम ने महाराज वशिष्ठ से एक वाक्य कहा था कि महाराजमैं यह जानना चाहता हूँ मेरा ! राष्ट्र रावण के अत्याचारों से भयभीत है, मेरा राष्ट्र राम राज्य कैसे बन सकता है?

उस समय वशिष्ठ मुनि महाराज बोले कि हे रामइस राष्ट्र को राम राज्य बनाने से ! पूर्व तुम्हें विष्णु बन जाना है, जब तक विष्णु नहीं बनोगे, तुम्हारा राष्ट्र राम राज्य किसी प्रकार नहीं हो सकेगा।

राम बोले, प्रभुमुझे व्याख्या कराइए !, कि मैं विष्णु किस प्रकार हो सकता हूँ?

पदम

महर्षि वशिष्ठ बोले, हे रामसुनो !, सबसे प्रथम तुम्हारे भुजों में एक पदम् होना चाहिए।

राम बोले, भगवन्पदम् किसे कहते हैं !?

ऋषि ने मग्न होते हुए उत्तर दिया कि हे रामदेखो !, पदम नाम सदाचार और शिष्टाचार का है, जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार और शिष्टाचार होता है उस राजा का राष्ट्र पवित्र कहलाता है, जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार नहीं होता, हृदयों में एक दूसरे का सम्मान नहीं होता, तो जानो, वह राष्ट्र आज नहीं तो कल, नष्ट हो जाएगा। हे रामयदि तुम अपने राष्ट्र को पवित्र बनाना चाहते हो !, तो अनिवार्य है, कि तुम्हारे एक भुज में पदम् होना चाहिए, राजा के राष्ट्र में यथार्थ विद्या होनी चाहिए, विद्या में सदाचार और शिष्टाचार की तरंगें हों, वह विद्या सर्वोत्तम मानी जाती है, वह विद्या राज्य को सफल बना देती है, हे रामयह पदम् तुम्हें ऊँचे से ऊँचा बना सकता है !,

संसार पर तुम शासन कर सकते हो, यदि सदाचार और शिष्टाचार नहीं, तो तुम्हारा राष्ट्र राम राज्य किसी प्रकार भी नहीं बन सकता।

गदा

द्वितीय तुम्हारे द्वारा गदा होनी चाहिए। भगवान् राम बोले, भगवन् गदा !किसे कहते हैं?

मग्न होते हुए ऋषि ने कहा कि गदा नाम है क्षत्रियों का, राजा के राष्ट्र में बलवान क्षत्रिय होने चाहिएं, उन्हें अपनी आत्मा का ज्ञान होना चाहिए, ब्रह्मचर्य उनके द्वारा पौष्टिक होना चाहिए, वह क्षत्रिय अपराधियों को दण्ड देने वाले होने चाहिए, जिस राजा के राष्ट्र में अपराधियों को दण्ड दिया जाता है, वह राष्ट्र सदैव राम राज्य बनकर रहता है और जिस राजा के राष्ट्र में अपराधियों को दण्ड नहीं मिलता, उस राजा का राष्ट्र आज नहीं तो कल नष्ट हो जाएगा। आज हे रामतुम्हें गदा को स्थिर करना है !, अपराधी को दण्ड देना है, दुराचार को नहीं रहने देना है, उस काल में तुम्हारा राष्ट्र राम राज्य कहलाएगा, हे रामदेखो !, तुम्हारे राष्ट्र की कोई वार्त्ता, किसी द्वितीय राष्ट्र में पहुँच जाती है, तो जानो राष्ट्र के क्षत्रिय ऊँचे नहीं है, जिस राष्ट्र में गदा होती है उस राजा का राष्ट्र पवित्र होता है।

चक्र

तृतीय चक्र होना चाहिए। राम बोले, प्रभुहम चक्र किसको कहते हैं !, चक्र की क्या व्याख्या है?

भगवान राम के इस आदेश को पान करते हुए महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले, हे राम ! सुनो, चक्र नाम संस्कृति का है, जिस राजा के राष्ट्र में संस्कृति होती है उस राजा के राष्ट्र में चक्र होता है, संस्कृति वह अमूल्य वाणी है, जो मानव को सदाचार और शिष्टाचार देने वाली है, संस्कृति कौन सी वाणी को कहते हैं? जो संस्कृति राष्ट्र से लेकर कृषि करने में, व्यापार में, धनुविद्या में और नाना प्रकार के यन्त्रों के आविष्कार में, सदाचार में, ब्रह्मचर्य की सुरक्षा करने में और अपनी आत्मा की उन्नति करने में और परमात्मा तक पहुँचने में, जिस वाणी में ओत प्रोत हो, उस वाणी का नाम हमारे

यहाँ संस्कृति है। हे रामइसको आज तुम्हें विचारना है !, यदि तुम्हें अपने राष्ट्र को राम राज्य बनाना है, तो संसार में चक्र फैलाओ।
मुनिवरोंमैं गौरव के साथ कहा करता हूँ !, कि हे प्रभुतू भगवान राम जैसी आत्मा ! को संसार में उत्पन्न कर, मुझे भगवान राम के दर्शन करने का सौभाग्य मिला, भगवान राम ने राज्य के ऐश्वर्य को त्याग करके पर्वतों की शैय्या बनाई और ऋषि के आदेशों का पालन किया, संसार में अपने सदाचार और शिष्टाचार रूपी संस्कृति के चक्र को संसार में फैलाया, सब राजाओं को विजय किया, कुछ सूक्ष्म सा प्रमाण देता जाऊं अधिक समय नहीं कि अधिक प्रमाण दूं।
मुनिवरों भगवान राम ने जब अपने राष्ट्र की भूमि !को त्यागा और पर्वतों की शैय्या बनाई, तो सबसे पूर्व यह निषाद के राष्ट्र में पहुँचे और उसके राज्य में अपनी संस्कृति का प्रसार किया, आगे चले, तो पिशाच थे, दुराचारी थे, उन्हें अपनी धनुर्विद्या से, नाना प्रकार के आविष्कारों से उन्हें नष्ट करते चले गए, उसके पश्चात् बाली को नष्ट किया, जो चारों वेदों का पण्डित था, परन्तु संस्कृति को नष्ट कर चुका था, सुग्रीव को वहाँ का राजा बनाकर, अपनी संस्कृति का प्रसार किया। आगे बढ़ते चले गए और रावण को जो चारों वेदों का पण्डित था और जिनके गुरु महर्षि तत्त्व मुनि महाराज थे, जिन्होंने वर्ष का ब्रह्मचर्य 48पालन किया और जो महान् प्रकाण्ड बुद्धिमान थे परन्तु अपनी संस्कृति को नष्ट कर चुका था, उसको नष्ट किया, उसके विधाता विभीषण को वहाँ का राज्य दिया और राज्य देकर अपनी संस्कृति का प्रसार किया, रावण के पुत्र नारायणतक जो सर्वांग नाम के राष्ट्र में राज्य करते थे, उसे नष्ट किया और अधुत नाम के राजा को वहाँ का राज्य दे करके, संस्कृति का प्रसार करते हुए, पातालपुरी में पहुँचे, जहाँ रावण का पुत्र अहिरावण राज्य करता था, अहिरावण को नष्ट किया और हनुमान के पुत्र मकरध्वज को वहाँ का राज्य देकर और अपनी संस्कृति का प्रसार करते हुए अयोध्या को लौट आए।
मेरे प्यारेमैं अपने प्रभु से कहा करता हूँ !ऋषि मण्डल !, कि हे परमपिता परमात्मन् ! आज उस वैज्ञानिक की आवश्यकता है, जिन्होंने बड़े बड़े यन्त्रों का आविष्कार किया

और संसार में अपनी संस्कृति को फैलाया। आज हमारे भुज में चक्र होना चाहिए, जिस चक्र से वास्तव में हमारा कल्याण होता है, जिस चक्र में देखो, हमारे राष्ट्र की उन्नति होती है, जिस चक्र से हम राजा बन सकते हैं और चक्रवर्ती राजा बन सकते हैं।

शङ्ख

मुनिवरोंइस सबके पश्चात् राम ने महर्षि से प्रश्न किया !, कि भगवन्मुझे शङ्ख ! का निर्णय ओर करा दीजिए, मैं इस शङ्ख को और जानना चाहता हूँ।

महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि हे रामतुम किने उत्तम हो !, संसार में तुम्हारा कितना यश है, आज तुम्हें धन्य है, जो मेरे आदेशों का पालन करते हुए और अपने चक्र को फैराते हुए शङ्ख का प्रश्न किया है, शङ्ख नाम वेद ध्वनि का, जिस राजा के राष्ट्र में वेद ध्वनि होती है और वह भी जटा पाठ में, माला पाठ में, घन पाठ में, विसर्ग पाठ में, विशारद पाठ में, और भी नाना प्रकार के स्वरों में, जहाँ वेदों का पाठ गाया जाता है, उस राष्ट्र में अन्तरिक्ष भी वेदमन्त्रों से आच्छादित रहता है। जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार की शिक्षाएं, वेद की शिक्षाएं दी जाती हों, वहाँ का वातावरण भी उत्तम होता है, मनुष्यों की विचारधाराएं ऊँची होती हैं, सदाचार और शिष्टाचार रहता है। हे राम ! आज शंख ध्वनि का प्रश्न किया है, शङ्ख ध्वनि नाम वेद ध्वनि का है, ज्ञान का है, हे रामजिस राजा के राष्ट्र में यज्ञ होते हैं और यज्ञों में वेदों का पाठ होता है तो उस ! राष्ट्र में कार्य करने वाले देवता भी प्रसन्न होते हैं और प्रसन्न हो करके उस राजा के राष्ट्र को, प्रजा को और राजा को मनोवांछित फल दिया करते हैं, हे रामतुम्हें अपने ! राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो तुम्हें विष्णु बनना पड़ेगा।

मुनिवरोंजिस राजा के भुज में यह चार चिन्ह होते हैं !, यह चार नियम होते हैं, वह राष्ट्र पवित्र कहलाता है और उस राजा का नाम विष्णु है। तो हे मेरे प्यारेऋषि ! यह राज्य राम राज्य कहलाता है !मण्डल, भगवान राम ने राम राज्य कहलाया अपने राष्ट्र को, राम राज्य करने से पूर्व इन चारों नियमों को अपनाओ। गुरु भी हों तो कैसे हों? शिष्य भी हों तो कैसे हों? गुरु के द्वार जा करके राष्ट्र की उन्नति और अपनी

आत्मा की उन्नति के प्रश्न करने वाले हों और उनके आदेशों का पालन करने वाले हों, चाहे उन्हें अपना ऐश्वर्य भी त्यागना हो, आज वह ही शिष्य अपने गुरु के आदेशों का पालन कर सकता है, जो शिष्य पर्वतों को अपनी शैय्या बना लेता है, गुरु जो आदेश देता है, वह शिष्य को शान्त कर देता है, गुरु शिष्य का सम्बन्ध वहीं तक रहता है, जब तक गुरु के द्वारा रहते हैं, उनके पश्चात् उन अंकुरों को जो गुरु ने शिष्य के अन्तःकरण में बोया है, उपजाया है, वह उपजे हुए वृक्ष समाप्त हो जाते हैं, यदि हम गुरु के आदेशों का पालन नहीं करते, यह सब ऋषि परम्परा है, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का आदेश भगवान राम ने पालन किया, भगवान कृष्ण ने महर्षि संदीपन नाम के ऋषि के आदेश का पालन किया, अर्जुन ने अपने गुरु कृष्ण की विचारधाराओं का पालन करते हुए ऐसा भयंकर संग्राम किया।

मुनिवरोंआज हमें कौन से भयंकर संग्राम का करना है !? वह भयंकर संग्राम जो हमें नष्ट भ्रष्ट कर रहा है। वह कौन सा संग्राम है? मुनिवरोंजैसा मैंने कल कहा था !, कि हमारे द्वारा संकल्प विकल्प दोनों का संघर्ष है, जिस संघर्ष को शृङ्खलाओं में अपने जीवन को समाप्त करते चले जा रहे हैं, हमारा जीवन मृत्यु के तुल्य कहलाता है और अंत में हम मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, आज हमें ऋषि परम्परा को स्थिर करना है। मुनिवरोंआज नहीं !, अधिक समय हो गया है, जब मनु महाराज ने राष्ट्र का निर्माण किया। राष्ट्र का निर्माण करते हुए मनु महाराज ने जिन आदेशों को दिया, उन आदेशों पर चलना है, उन आदेशों के अनुकूल अपनी विचारधारा बनानी है और गुरुओं की परम्परा को स्वीकार करना है। गुरु भी संसार में वह ही होता है जो सदाचारी बन करके शिष्यों को सदाचारी बनने का आदेश देता है, वह गुरु देखो,वशिष्ठ कहलाता ! है और वह शिष्य राम कहलाता है, जो गुरु के नियन्त्रण में और उसके आदेशों का पालन करता है।

मुनिवरोंमैं तो कहा करता हूँ !, कि भगवन्! तू राम जैसी आत्मा को उत्पन्न कर । जब राम जैसी आत्मा उत्पन्न हो जाएगी, तो वशिष्ठ मुनि भी कोई न कोई अवश्य उत्पन्न हो जाएगा। हे प्रभुयदि तू संसार का कल्याण चाहता है !, राष्ट्र का कल्याण

चाहता है, प्रजा में शान्ति स्थापित करना चाहता है, तो प्रभुराम ज !ैसी आत्मा को उत्पन्न कर, जिन्होंने अपने राष्ट्र के ऐश्वर्य का त्याग करके, हे प्रभुआपके बताए हुए ! उन्हीं आत्माओं का जीवन पवित्र होता है !आदेशों में संलग्न रहे। मुनिवरों, धन्य कहलाता है, जो अपने जीवन की संघर्ष में व्यतीत करते हैं। संघर्ष वही होता है जो संघर्ष ज्ञान और विज्ञान से परिपक्व हो। आज हमें कौन से शत्रु को शान्त करना है। हमारे द्वारा सबसे पूर्व जो नाना प्रकार के अवगुण, एक दूसरे की त्रुटियाँ देखने की जो भावनाएं हैं उन भावनाओं को अपनी ज्ञान रूपी तरंगों से नष्ट भ्रष्ट कर देना है, उसके पश्चात् अपनी आत्मा को पवित्र और बलिष्ठ बना करके हमें संसार में भगवान राम वाला चक्र फैराना है।

हे मेरे प्यारेआज हम व्याख्या !ऋषि मण्डल !न देते देते बेटाबहुत दूर चले गए हैं। ! आज हमारा आदेश था विष्णु। विष्णु नाम परमात्मा का, विष्णु नाम इस आत्मा का, विष्णु नाम राजा का और विष्णु नाम सूर्य का। सूर्य का नाम विष्णु क्यों है? मुनिवरों ! जब विष्णु का प्रकाश चलता है, तो तीनों लोकों को तपायमान कर देता है। सूर्य से तरंगें उत्पन्न होती हैं, रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं और वह रश्मियाँ संसार में प्रकाश पहुँचाती हैं। प्रकाश का सम्बन्ध हमारे नेत्रों से है, हमें नेत्रों वाले प्रकाश का सदुपयोग करना है, आज हमें उस विज्ञान को जानना है जिससे हम सूर्य को विष्णु कहते है। जो संसार को प्रकाश देता है जैसे राजा अपनी प्रजा को सदाचार से, शिष्टाचार से, गदा से, चक्र संस्कृति से और शङ्ख से सुशोभित करता है और विष्णु कहलाता है, इसी प्रकार जो संसार को प्रकाश देने वाला नेत्रों का गहना है और संसार में मनुष्य जो दृष्टिगोचर पाता है, वह सूर्य की सत्ता से, वह हमें आनन्दित करता है और प्रेरणा देता है, उसका नाम विष्णु है। विष्णु हमें सदैव प्रकाश देता है।

पूज्य महानन्द जीः जो प्रकाश देता है उसी का नाम विष्णु, तो क्या भगवन्चन्द्रमा ! का नाम भी विष्णु है?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यचन्द्रमा का नाम विष्णु नहीं। चन्द्रमा को !महानन्द जी ..... वृत्ति कहते हैं। चन्द्रमा को कान्तिदायक कहते हैं, विष्णु नहीं। विष्णु उसे कहते हैं,

जिसके प्रकाश में अन्धकार को नष्ट करने की भावना हो, नष्ट करने की जिसमें सत्ता हो और प्रकाश को लाता हो।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन् चन्द्रमा भी तो अन्धकार को नष्ट कर देता है। !

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाचन्द्रमा अवश्य नष्ट कर देता है !, परन्तु चन्द्रमा में वह तरंगें नहीं होती, जो सतोगुणी तरंगें सूर्य में होती है। चन्द्रमा में विशेष तमोगुण है और सूर्य में सतोगुण। इसलिए दोनों में भिन्नता मानी जाती है। चन्द्रमा के ऊपर कल भी कुछ व्याख्या होगी, अब समय इतनी आज्ञा नहीं दे रहा है, जो हम तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देते ही चले जाएं।

तो मुनिवरोंमहानन्द जी कुछ प्रश्न करते चले जा रहे थे !मेरे प्यारे !, इनका उत्तर किसी अन्य काल में दिया जाएगा। आज इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है, आज का हमारा आदेश कह रहा था, विष्णु। आज हमें विष्णु ज्ञान से बनना है, हमारे द्वारा वह ज्ञान होना चाहिए, जिस ज्ञान से हमारी आत्मा में शान्ति प्राप्त हो जाए, हमें आत्मिकता प्राप्त हो जाए, राष्ट्रीयता प्राप्त हो जाए, आज हमें उस ज्ञान और विज्ञान की आवश्यकता है, जिससे नाना प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार कर सकें और जीवन को यथार्थ ऊँचा बना सकें।

दीन राजा का कथानक

मुनिवरोंज्ञान के सम्बन्ध में !, आज एक वार्त्ता स्मरण होती चली जा रही है और वह यह है, कि कहते हैं एक राजा थे। उस राजा के राष्ट्र में कोई भी एक दूसरे का ऋणी न था। राजा का राष्ट्र बड़ा महान्, पवित्र था। राजा अपनी प्रजा में नित्यप्रति भ्रमण किया करते थे और देखा करते थे, कि मेरे राष्ट्र में कोई दुराचारी तो नहीं है। राजा के राष्ट्र में जब यह चक्र चल रहा था, एक समय वह राजा अपने कुछ सेवकों सहित पर्वतों में जा पहुँचे और सायंकाल को गृह वापिस आने लगे, तो उन्होंने देखाकि , वहाँ एक साधु है जिसके पास न तो खान पान की सामग्री है, न कोई पात्र है और न कोई वस्त्र है और न विश्राम करने वाला कोई आसन है। राजा ने अपने मन में सोचा, अरे, तू कितना बड़ा अयोग्य राजा है, जिस राजा के राष्ट्र में ऐसे दीन व्यक्ति

रहते हों। राजा ने अपने सेवकों से कहा कि लो, यह दस सहस्त्र मुद्रा और उस दीन को अर्पण करके आओ। वह सेवक बेचारे मूर्ख थे, उस द्रव्य को लेकर उस साधु के द्वार पर जा पहुंचे साधु से कहा–कि लीजिए भगवन! साधु ने उत्तर दिया कि किसी दीन को दे दो, जब साधु ने यह कहा, तो अज्ञानी सेवकों ने सोचा कि यह 'थोड़े' उच्चारण कर रहा है।

सेवक उस द्रव्य को लेकर राजा के द्वार पर जा पहुँचे और कहा, महाराज! वह थोड़े उच्चारण कर रहा है। तब राजा ने कहा कि लो, और द्रव्य ले जाओ, कहते हैं कि राजा ने लगभग सहस्त्र मुद्रा दीं 25, सेवक द्रव्य लेकर साधु के द्वार जा पहुँचे और साधु से कहा, अब तो लो। साधु ने उत्तर दिया, भाईकिसी दीन को दे दो। उन ! मूर्खों ने सोचा कि यह तो अब भी'थोड़े' ही उच्चारण कर रहा है, वह द्रव्य ले करके राजा के समक्ष जा पहुँचे और कहा कि वह तो अब भी 'थोड़े' उच्चारण कर रहा है।

मुनिवरोंअब राजा ने एक लाख की मुद्रा दी !, सेवक उस एक लाख की मुद्रा को लेकर साधु के द्वार जा पहुँचे और साधु से कहा कि अब, तो लो, साधु ने वही उत्तर दिया, भाईकिसी दीन को दे दो। उन मूर्खों ने सोचा कि यह तो अब भी थोड़े का ! उच्चारण कर रहा है। वह वहाँ से राजा के समक्ष आए और राजा से कहा कि थोड़े हैं।

मुनिवरोंलाख मुद्रा दीं 25 राजा ने !, वह सेवक लाख मुद्रा लेकर साधु के 25 अब तो लो। साधु ने फिर वही उत्तर !समीप पहुँचे और साधु से कहा कि महाराज दिया कि किसी दीन को दे दो। उन मूर्खों ने सोचा, यह अब भी थोड़े ही उच्चारण कर रहा है, वह सेवक वहाँ से राजा के समक्ष पहुँचे और कहा, महाराजअब भी थोड़े ! उच्चारण कर रहा है।

मुनिवरोंराजा ने थोड़े जानकर एक करोड़ मुद्रा दीं !, सेवक एक करोड़ मुद्रा लेकर साधु के द्वार पहुँचे और साधु से कहा कि महाराजअब तो लो !, साधु ने कहा, किसी दीन को दे दो, उन मूर्खों ने सोचा कि यह तो अब भी थोड़े उच्चारण कर रहा है और राजा से जा कहा कि महाराज वह तो अब भी !'थोड़े' उच्चारण कर रहा है।

साधु के वचन को पा करके राजा आश्चर्यचकित हो गए और उन्होंने करोड़ मुद्रा 25 सेवकों को दीं, सेवक साधु के द्वार जा पहुँचे और कहा, अब तो लो, साधु ने फिर भी यह ही कहा, किसी दीन को दे दो। सेवकों ने जाना कि यह तो अब भी थोड़े ही उच्चारण कर रहा है और वे वहाँ से राजा के समक्ष जा पहुँचे और कहा कि थोड़े' हैं। राजा आश्चर्य से बोला कि इतने अद्भुत द्रव्य को कौन त्यागता है, यह कैसा साधु है? मुनिवरोंरा !जा स्वयं एक अरब मुद्रा लेकर साधु के समीप पहुँचे और साधु से कहा कि महाराजअब लीजिए !, इस द्रव्य को।

साधु से कहा, राजन्मैंने कई काल में कहा है !, कि किसी दीन को दे दो।

राजा ने कहा, प्रभुआपसे दीन मेरे राष्ट्र में कोई नहीं है। साधु ने उत्तर दिया कि ! म !राजन्ैं दीन नहीं हूँ, मैं तो राजाओं का भी राजा हूँ।

राजा बोले, प्रभुआपके द्वारे राष्ट्र की सामग्री कहाँ है !? आपके द्वारे सेना कहाँ है?

साधु ने उत्तर दिया कि संसार में मेरा कोई शत्रु नहीं है, जब मेरा कोई शत्रु ही नहीं, तो मुझे सेना की भी आवश्यकता नहीं।

राजा बोला, चलो, शत्रु तो नहीं है, परन्तु राष्ट्र को चलाने के लिए द्रव्य कहाँ है?

साधु ने कहा, राजन्मेरे द्वारा एक रसायन ऐसी है !, जिससे मैं पर्वतों को स्वर्ण बना देता हूँ और इस स्वर्ण से अपने राष्ट्र का कार्य किया करता हूँ।

राजा ने जान लिया, कि अवश्य इसके द्वारे कोई रसायन है। यदि रसायन न होती, तो इतने द्रव्य को कौन त्यागता है। मुनिवरोंसायंकाल हो चुका था। राजा वहाँ से ! अपने गृह जा पहुँचे। स्नान किया, भोजन पाया और विश्राम गृह में विश्राम जा किया। रात्रि हो चुकी थी। राजा के मन में विचारधाराएं आने लगीं, कि तू साधु के द्वार चल। तुझे कोई दृष्टिगोचर भी नहीं कर रहा है। उस रसायन से 10 सहस्त्र मण स्वर्ण 20 बनवा लें, तू स्वर्णपति बन जाएगा। जब राजा के मन में यह कल्पना जागी, तो राजा स्वयं वहाँ से रात्रि में साधु के आश्रम पर जा पहुँचा। साधु ने जब राजा के पदों की खटखटाक सुनी, तो साधु ने कहा, कौन है? राजा ने कहा कि प्रभुआपका सेवक ! राजा हूँ। साधु ने कहा, राजन्किस कारण आए हो !?

मुनिवरोंमैं उस रसायन से जो आपके पास है !राजा ने कहा कि प्रभु !, 10 20 सहस्त्र मरा स्वर्ण बनवाने आया हूँ, स्वर्ण बना दीजिए।

साधु ने कहा, राजन्बोलो !, दीन तुम हो या मैं हूँ, जो तुम मेरे द्वार मांगने आए।

राजा ने कहा, प्रभुदीन तो मैं ही हूँ !, परन्तु अब कृपा कीजिए।

जब राजा ने ऐसा कहा तो साधु बोले, अच्छा, राजन्! तुम नित्यप्रति हमारे द्वार आया करो, हम तुम्हारा स्वर्ण अवश्य बना देंगे।

मुनिवरोंदेखो !, राजा ने साधु के वचनों का पान किया और साधु के द्वारे नित्यप्रति आना जाना प्रारम्भ कर दिया। साधु ने उन्हें आत्मा परमात्मा और प्रकृति का पूर्ण ज्ञान करा दिया। राजा का अन्तःकरण पवित्र हो गया। उन आदेशों को पान करते, लगभग एक वर्ष हो गया। एक समय साधु ने योगबल से राजा के अन्तःकरण को देखा। उसके अन्तःकरण में किसी प्रकार की त्रुटि न रही थी, दीनता अब उसके अन्तःकरण में न थी। साधु ने राजा से कहा कि राजन्आज हम तुम्हारा स्वर्ण बना ! देंगे, बोलो कितना स्वर्ण चाहते हो।

राजा ने कहा कि प्रभुजो स्वर्ण आप मेरा बनाना चाहते थे !, वह स्वर्ण मेरा बन चुका।

तो हे मेरे प्यारेआज हमें विचारना चाहिए !भद्र मण्डल !, कि यह ज्ञान की परिपाटी है। जब मनुष्य को ज्ञान हो जाता है और विवेक हो जाता है, तो उसे संसार की कोई भी इच्छा नहीं रहती, वह पवित्र बन जाता है और संसार से पार हो जाता है।

मुनिवरों! उच्चारण करने का अभिप्राय क्या, बेटावार्त्ता तो यह उच्चारण करने लगे !, परन्तु वाक्य हमारा था विष्णु। हम अपनी आत्मा को विष्णु बनाना चाहते हैं, इन सांसारिक शब्दों से उठना चाहते हैं। अब शेष वार्त्ता कल निर्णय करेंगे, अब हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन् । !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंदेखो !, कल हमारा आदेश इससे भी आगे पवित्र होगा, कल हम तुम्हें चन्द्रमा की कुछ विशेषताएं, जैसा महानन्द जी ने प्रश्न किया है, वर्णन

करेंगे। कल हमारा विषय कुछ ज्ञान और विज्ञान पर चलेगा, अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है, कल समय मिलेगा तो कल हमारा आदेश और भी पवित्र होगा। अब हमारा वेदों का पाठ होगा। बजे आर्य समाज जम्मू के 8.30 । रात्रि(वेद पाठ) सम्मिलित वार्षिक उत्सव पर जम्मू शहर में।

९ 18 04 1964 पुष्प 04 मानवीय कर्म

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभ !ी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का पाठ गा रहे थे, मैंने आज से पूर्व कई स्थलों में कहा है कि इस समय हमारी महर्षि पिप्लाद मुनि संहिता के मन्त्रों का पाठ चल रहा है, महर्षि पिप्लाद ने इस संसार के ज्ञान और विज्ञान में संलग्न होकर अपने जीवन को समाप्त कर दिया, आज महर्षि पिप्लाद को अधिक समय हो गया है, आज मुझे उन वर्षों की गणना नहीं करनी है। आज प्रथम मन्त्रों में उस परमपिता परमात्मा का गुणगान गाते चले जा रहे थे, जिससे ज्ञान और विज्ञान से भरी हुई, वेद की स्मृतियाँ और वेद का अमूल्य ज्ञान, मानव के कल्याण के लिए दिया, मानव चरित्र बनाने के लिए दिया, आज हमें उस परमपिता परमात्मा को अपने हृदय स्थल में स्थान दे देना चाहिए, वे परमपिता परमात्मा सबका रक्षक माना जाता है।

वेदों का स्वरूप

मुनिवरों वेदों के सम्बन्ध में हमारे ऋषि मुनियों में !परम्परा से नाना प्रकार का एक विवाद चला आ रहा है, इसके सम्बन्ध में एक पक्ष है, कि मूल वेद चार हैं और चारों वेदों की कुछ संहिताएं हैं, द्वितीय पक्ष कहता है कि वेद नाम प्रकाश है और वेद ब्रह्मा की वाणी है, सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्मा से इसका अवतरण हुआ।

हे मेरे आदि ऋषि मण्डल यह नाना प्रकार की !विवेचना चला करती हैं, परन्तु जब दोनों मतों को एक सूत्र में बांधा करते हैं, तो हृदय में एक आनन्द छा जाता है, दोनों का पक्ष गम्भीरता से यह है, कि वेद नाम प्रकाश का है, वेद एक है।

मुनिवरोंएक पक्ष यह भी कहता है !, कि चारों महर्षि ब्रह्मा के शिष्य बनें, जिन्होंने इस वेद रूपी प्रकाश को चारों भागों से विभक्त कर दिया, एक भाग, जिसको हम ज्ञान

कांड कहते हैं, द्वितीय भाग को हम उपासना कांड कहते हैं, तृतीय भाग को हम कर्मकाण्ड कहते हैं और चतुर्थ भाग विज्ञान कांड कहलाता है।

मुनिवरों! आगे प्रश्न उत्पन्न होता है, कि जब चारों ऋषियों ने इनके चार कांड कर दिए, तो जो विज्ञान कांड है, उसमें कर्म कांड और ज्ञान कांड क्यों पाया जाता है? जो ज्ञान कांड है, उसमें कर्म कांड, विज्ञान कांड और उपासना कांड भी क्यों पाया जाता है?

मुनिवरों संघर्ष के !पश्चात् ऋषि मुनि इस निर्णय पर पहुँचे, कि वेद हमारे यहाँ एक है, वेद एक अमूल्य वाणी है, परन्तु प्रत्येक वेद मन्त्र में चार व्याहृतियाँ हैं, उसमें ज्ञान भी है, विज्ञान भी है और कर्म भी है।

तो हे मेरे आदि ऋषि मण्डलकौन ! सा निर्णय विचारणीय रहा? आज विचारना यह है, कि हमारे यहाँ मूल वेद चार हैं, और वेद नाम प्रकाश का है, और यह ब्रह्मा से उत्पन्न हुए हैं, चारों ऋषियों ने उस वेद रूपी प्रकाश को लेते हुए, उसको चार व्याहृतियाँ बना दीं, वास्तव में व्याहृतियाँ तो संसार में तीन होती हैं परन्तु वेद में चार प्रकार की व्याहृतियाँ बनाई।

वेद का अमूल्य प्रकाश

नाना प्रश्न हैं, कि वेद जो परमात्मा का शुद्ध पवित्र ज्ञान है और चेतनता से भरा हुआ है, यह ऋषि मुनियों पर कैसे प्रकाशित हुआ? आदि सृष्टि से ब्रह्मा ने इन वेदों को कैसे जाना?

मुनिवरोंसबसे प्रथम मानव जब अपने को जान लेता है !, तो संसार से सबसे सूक्ष्म पाता है। मुझे मेरे प्यारेमहानन्द जी जब आधुनिक काल के राष्ट्र की प्रेरणा देते हैं !, तो विचार आता है, कि यह क्या उच्चारण कर रहे हैं? संसार का कल्याण, राष्ट्र का उत्थान और वर्ण व्यवस्था का उत्थान वही मनुष्य कर सकता है, जो सर्वप्रथम अपने को जान लेता है, जिस मनुष्य ने संसार में आकर अपने को नहीं जाना, केवल वक्तव्य को देना जाना है, वह संसार में कोई मनुष्य नहीं कहलाता, आज मनुष्य वह ही कहलाता है जो वेद की वाणी के अनुकूल अपने जीवन को, वेद के अर्पण कर

देता है, वेद भगवान् स्वयं उसको अपनी गोद में धारण कर लेते हैं, उसके हृदय से सुगंध उत्पन्न होने लगती है और उस सुगन्धि को सब पान करने लगते हैं, चाहे वह राष्ट्रवादी हों, संसारवादी हों, या आध्यात्मिकवादी हों, यहाँ तक कि सिंह तक उनकी सुगन्ध को पान करने लगते हैं और उसके चरणों में ओत प्रोत हो जाते हैं।

बेटाआज हमारा वाक्य चल रहा था। कि वेद नाम हमारे यहाँ प्रकाश का है। प्रश्न ! यह उत्पन्न होता है, कि प्रकाश तो सूर्य से उत्पन्न होता है, तो क्या सूर्य भी वेद है? परन्तु नहीं, सूर्य से प्रकाश उत्पन्न हो रहा है, सांसारिक पदार्थों की उत्पत्ति करने के लिए, अन्न उत्पन्न करने के लिए। परन्तु वेद प्रकाश ऐसा है, जो मानव के अन्धकार को नष्ट करता है और उसके हृदय में अमूल्य प्रकाश देता है। आज अमूल्य प्रकाश को जानना है, जिस प्रकाश से हमें आनन्द मिलता है, जीवन मिलता है और जिस जीवन को पान करते हुए हम परमात्मा की गोद मे रमण किया करते हैं।

हे मेरे प्यारेआज प्रत्येक वाक्य को विचारने के लिए मानव के द्वारा !ऋषि मण्डल ! आशक्ति होनी चाहिए, कि मानव का राष्ट्र क्या है? मानव की प्रजा क्या है? महर्षि गरूड़ मुनि महाराज ने कहा था कि अपने जीवन का राष्ट्र सर्वोत्तम कहलाता है, यदि मानव अपने शरीर रूपी राष्ट्र पर शासन कर लेता है, तो मानो वह संसार पर शासन कर जाता है।

गरूड़ मुनि

मुनिवरोंहमारे यहाँ गरु !ड़ मुनि और कागभुषुण्डी की बड़ी गाथाएं आती हैं, मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय प्रश्न किया कि गरूड़ मुनि तो एक पक्षी कहलाते थे। ! परन्तु नहीं गरुड़ वहहोता है, जो सर्प को निगल जाता है और सर्प को निगल कर अपने उदर की पूर्ति करता है वह ही गरुड़ ऋषि कहलाता है। गरुड़ नाम के ऋषि अपने मन रूपी सर्प को निगल कर, उदर की पूर्ति करते थे, आज हमें उस गरुड़ता को स्थापित करना है, अपने मन पर शासन करना है, जो मन रूपी सर्प को निगल लेता है वह राष्ट्रवादी कहलाता है, वह प्रजा पर शासन करने का अधिकारी होता है।

सोलह हजार गोपिकाएं, वेद की ऋचाएं

मुनिवरोंजब भगवान् कृष्णा की चर्चाएं स्मरण आती हैं !, तो विचार आता है कि भगवान कृष्णा कितने पवित्र कहलाते थे। मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय !प्रश्न किया, कि आधुनिक काल का संसार यह कहता है कि भगवान कृष्णा की सोलह हजार गोपिकाएं थीं, मेरे प्यारेसंसार ने महाराज कृष्णा को जाना नहीं !, मुनिवरो ! मुझे भगवान् कृष्णा के जीवन को देखने का सौभाग्य मिला और हम गौरव के सहित कहा करते हैं कि भगवान कृष्णापर्जन्य नाम के ब्रह्मचारी कहलाते थे और सोलह हजार वेद की ऋचाएं उनके कंठ थीं और हर समय उन ऋचाओं में मुग्ध रहा करते थे, उनकी पत्नी रूक्मिणी उनसे कहा करती थी, कि प्रभुआप तो हर समय इन वेद ! रूपों गोपिकाओं में रमण करते रहते हैं, तो उस समय भगवान कृष्णा कहा करते थे कि हे देवीपरमात्मा ने इ !स वेद रूपी अमूल्य प्रकाश को जानने के लिए मुझे उत्पन्न किया है, आज इस प्रकाश को जानना है, जिसको जानकर मानव मुग्ध हो जाता है और उसके द्वारा वेद की भावनाएं उत्पन्न होकर संसार सागर से पार हो जाता है।

हे मेरे प्यारेवाक्य उच्चारण करत !ऋषि मण्डल !े करते बहुत दूर चले गए हैं, हमारा वाक्य चल रहा था, वेद के सम्बन्ध में, वेद नाम प्रकाश का है, चारों ऋषियों ने इसकी चार व्याहृतियाँ की हैं, जैसा हमारे कुछ आचार्यों ने माना है, परन्तु जब प्रत्येक वेदमन्त्र में चारों प्रकार का प्रकरण आता है, तो इसका अभिप्राय यह है कि चारों ऋषियों से वेदों की उत्पत्ति हुई, चारों ऋषियों ने अपने को जाना। मेरे प्यारेमहानन्द ! जी ने एक समय प्रश्न किया, कि चारों ऋषियों को, चारों वेदों का ज्ञान कैसे प्रकट हुआ और परमात्मा ने चारों ऋषियों पर ही क्यों दिया?

चार ऋषियों पर ही वेदों का आविर्भाव क्यों?

मुनिवरोंइस !का उत्तर यह, जो हमारे गुरुदेव ने इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा, कि जिन ऋषियों पर परमात्मा की अनुपम कृपा होती है, उन ऋषियों को वेदों का ज्ञान प्रकट होता है, जो ऋषि संसार में मुक्ति का प्रयत्न करते हैं, और प्रयत्न करते करते उन्हें वेदों का ज्ञान होता है, और मुक्ति का कुछ सूक्ष्म समय रहते रहते प्रलय हो

जाती है, तो उन आत्माओं को वेदों का ज्ञान स्वतः रहता है, जो ज्ञान अनादि विज्ञान है और शुद्ध चेतन परमात्मा से उत्पन्न होता है। जब सृष्टि प्रारम्भ होती है, तो इन ऋषियों को विशेष सत्ताएं प्राप्त हो करके, वेदों का ज्ञान प्रकट हो जाता है और संसार में यह प्रणाली चलन वाली हो जाती है, उसी प्रणाली से ज्ञानी और विज्ञानी अपने को ऊँचा बनाया करते है, यह इसका समाधान जो वेद ने कहा है। हमारे ऋषियों का मत है, हमारा कोई मत नहीं, महर्षि लोमश, महर्षि गरुड़ मुनि, कागभुषुण्डि जी, महर्षि नारद मुनि जैसे सब ही आचार्यों का यह मत माना जाता है। जिस विद्या में आध्यात्मिक ज्ञान, भौतिक विज्ञान, व्यावहारिक ज्ञान और पारमार्थिक ज्ञान होता है, उससे राष्ट्र का उत्थान होता है । राष्ट्रवादी वह ही मनुष्य कहलाता है, जो मनुष्य इस शरीर पर शासन कर लेता है। जैसा मैंने गरूड़ मुनि का प्रमाण दिया, जब तक हम गरूड़ नहीं बनेंगे, तब तक हमारा राष्ट्र और हमारी मानवता किसी काल में नहीं आ सकती।

राष्ट्रवादी मनुष्य

मुनिवरोंगरुड़ बनने के लिए सबसे प्रथम हमें स्वार्थ भाव को निगल लेना है !, जो सबसे बड़ा हमारा शत्रु है, जिसको हम सर्प कहते हैं, उस स्वार्थ के साथ साथ मन को निगल लेना है, जो महा चंचल है। देखो,केवल वेद ही एक ऐसी विद्या है !, ऐसा प्रकाश है, जो मन में नाना प्रकार के छाये हुए, अन्धकार को नष्ट कर देता है, अज्ञानता को नष्ट कर देता है, और जीवन में प्रकाश हो जाता है। उसी काल में हमारा जीवन शिरोमणि बन सकता है, जब हम संसार में गरुड़ बनकर देखेंगे, उस समय मनुष्य राष्ट्रवादी बनता है।

राष्ट्रवादी बनने के पश्चात्, राष्ट्र में जो दुराचारी होता है, अशिष्टाचारी होता है, उसको दण्ड दिया जाया करता है। जिस राजा के राष्ट्र में दुराचारी को दण्ड मिलता है, उस राजा के राष्ट्र में, किसी प्रकार का पाप नहीं होता। यह दण्ड वही राजा देता है, जो बेटाज्ञान !, विज्ञान से परिपक्व होता है।

परमात्मा सर्वव्यापक

मुनिवरोंकौन मनुष्य संसार में पाप नहीं करता !? वह मनुष्य संसार में पाप नहीं करता, जो परमात्मा को सर्वव्यापक माना करता है और विचारा करता है, कि जहाँ तेरा मन जाता है, वहीं परमात्मा है। जहां तू है, वहीं परमात्मा है, उस समय मनुष्य किसी प्रकार पाप नहीं कर सकता संसार में। अरे, जिस राजा के राष्ट्र में यह शिक्षा होती है, यह संस्कृति होती है, उस राजा के राष्ट्र में यह पाप क्यों होगा, वह राष्ट्र शिरोमणि कहलाएगा।

आज मेरी प्यारी माताएं, मेरा प्यारा भद्र मण्डल और ऋषि मण्डल कहता है, आज मैं मानव से शान्त होकर पाप करने जा रहा हूँ, मानव मानव से पाप कर सकता है, मानव अल्पज्ञ है, अरे, हम तो तब जानें, जब हे मानवहे मेरे !हे मेरी प्यारी माता ! !प्यारे ऋषि मण्डलपरमात्मा से छिप कर पाप किया जाएं !, तो परमात्मा सर्वव्यापक है, जिसके सहस्त्रों नेत्र हैं, और सबको दृष्टिपात कर रहा है, तुम्हारे अन्तःकरण में विराजमान है, तुम्हें प्रेरणा देता है, तुम प्रेरणा को नष्ट करके, पाप करते हो। अरे, तुम्हें यह पाप भोगना अनिवार्य है। हे मेरे प्यारेआज वह ही मनुष्य !ऋषि मण्डल ! संसार में ऊँचा पहुँच सकता है, जो परमात्मा को सर्वव्यापक मान करके परमात्मा को सब जगह देखा करता है।

देवता और दैत्य

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने आज प्रे !रणा दी, कि आज का संसार ही क्या, परम्परा से यहाँ दैत्य और देवताओं का संघर्ष होता चला आया है। मुनिवरोंदैत्य वह मनुष्य ! कहलाता है, जो दूसरे जीवों का भक्षण कर जाते हैं, और देवता वह होते हैं, जो दूसरों की रक्षा करते है। देवता संग्रामवादी बनते हैं, तो उनकी विजय होती है और दैत्य समाप्त हो जाते हैं। हे मेरे प्यारेहमें वास्तविक देवता बनना !ऋषि मण्डल ! चाहिए, प्रत्येक प्राणी की रक्षा करनी चाहिए, प्रत्येक प्राणी की रक्षा हम ज्ञान से कर सकते हैं, जब हमारे द्वारा ज्ञान और विज्ञान होता है, तो हम वेद की परम्परा को जानने वाले बनते हैं, जब हम वेद की परम्परा को और ऋषि परंपरा को लेकर चलते

हैं, तो हमारा जीवन सुगन्धिदायक होता है, और उससे दूसरे का जीवन भी सुगन्धिदायक बन सकता है, आज हमें हर प्रकार से अपने जीवन को ऊँचा बनाना है।

मुनिवरोंसृष्टि के प्रारम्भ में !, परमात्मा ने जिस विद्या का वमन किया और ऋषियों ने उस विद्या को पान किया, आज हमें उस परमपिता परमात्मा की उस विद्या को अपने में धारण कर लेना है, जिस विद्या के ज्ञान विज्ञान से हमारी आत्मा का कल्याण होता है राष्ट्र का निर्माण होता है, और जिस विज्ञान से हम ऋषि परम्परा स्थापित कर सकते हैं, वह विद्या है, वेद।

सूर्य ही विष्णु क्यों, चन्द्रमा क्यों नहीं

मुनिवरोंमहानन्द जी ने एक प्रश्न किया था !कल मेरे प्यारे !, कि जब सूर्य को प्रकाश के नाते विष्णु कहते हैं, तो क्या चन्द्रमा को भी विष्णु कह सकते हैं? मुनिवरोंसूर्य ! संसार से एक महानज्योति देता है और अपनी किरणों से प्रकृति में चैतन्यता देता है, प्रकृति में जो नाना तत्त्व हैं, उनमें एक महानता और ओज देता है, ओज देकर महत् देता है, जिससे संसार का कार्य चलता है, महत् का सम्बन्ध परमात्मा से होता है, आत्मा का सम्बन्ध महत् से होता है, मन का सम्बन्ध आत्मा से होता है, मन और बुद्धि का सम्बन्ध अन्तःकरण से, अन्तःकरण का सम्बन्ध आत्मा से और आत्मा का सम्बन्ध महत् से और महत् का सम्बन्ध उस परमपिता परमात्मा से होता है, तो उस समय वास्तव में हमारे जीवन का उत्थान हो जाता है, आज हमें प्रत्येक विषय को गम्भीरतापूर्वक विचारना है।

आज के संसार ने किस परम्परा को अपनाया है? प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या दूसरों के अवगुणों को देखा करता है, और अपने अवगुणों को शान्त कर देता है। संसार में वह मनुष्य ऊँचा कहलाता है, जो दूसरों का गुणग्राही बनता है और अपने अवगुणों को हर समय विचारा करता है, वह वेद का मानने वाला कहलाता है, वैदिक ब्राह्मण वह नहीं कहलाता, जो दूसरों की त्रुटियाँ देखा करता है, यदि कोई मनुष्य वेद का पाठी है और दुराचार कर रहा है, तो उसके दुराचार को अवश्य उच्चारण करना

चाहिए। आज प्रत्येक विषय को, जो हमें वेद से प्राप्त होता है, उसको अच्छी प्रकार जानना है और उस पर अनुसन्धान करना है।

मुनिवरोंवाक्य चल रहा था सूर्य के सम्बन्ध में !, सूर्य को विष्णु कहते हैं, वेद ने सूर्य को वराह भी कहा है, वेदाचार्यों ने सिंह नाम से पुकारा है, वामन अवतार नाम से भी पुकारा है, हे सूर्य देव आपको विभिन्न रूपों से पुकारा !है, वास्तव में तू अग्नि है।

मुनिवरोंचन्द्रमा में कांति है !, परन्तु उसको विष्णु नहीं कहते हैं, चन्द्रमा तमोगुण प्रधान माना गया है और जिसमें तमोगुणता हो उसको हम विष्णु नहीं कहते हैं, चन्द्रमा में आग्नेयता न होने के कारण, इसको तमोगुण प्रधान माना जाता है, इसको हमारे यहाँ गौतम कहते हैं और भी नाना रूपों से पुकारा जाता है परन्तु आज हमें चन्द्रमा पर विशेष व्याख्या नहीं करनी।

अहिल्या और गौतम की कहानी का रहस्य

गौ नाम पृथ्वी का है और रात्रि के समय इस पर अंकुर में शीतलता देकर, चन्द्रमा इसको उपजाऊ करता है, उस पृथ्वी का स्वामी देखो, गौतम कहलाता है।

मुनिवरोंदेखो !, रात्रि को नाना रूपों से पुकारा है, रात्रि को अहिल्या कहते हैं। अहिल्या नाम माता का भी है, अहिल्या नाम पृथ्वी का भी है, अहिल्या नाम आत्मा का भी है, मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे एक समय एक लोककथा वर्णन की !, एक समय महर्षि गौतम की पत्नी अहिल्या को राजा इन्द्र ने आकर हरण किया। मुनिवरों ! इससे स्पष्ट प्रतीत होता है, कि यहाँ शब्दों का अनर्थ कर दिया है। परन्तु हमें अनर्थ न करते हुए, शुद्ध पवित्र भाव से उन वाक्यों को विचारना चाहिए। महर्षि वाल्मीकि ने भी इसका प्रकरण लेते हुए, कुछ ऐसा कहा है कि गौतम चन्द्रमा को कहते हैं और रात्रि उसकी पत्नी अहिल्या है।

मुनिवरोंजिस प्रकार मानव का भूषण पवित्र ज्ञान है !, इसी प्रकार रात्रि का आभूषण अन्धकार है, जैसे पतिव्रता देव कन्या अपने श्रृङ्गार को अपने पति को अर्पण कर देती है, इसी प्रकार यह रात्रि अपने अन्धकार रूपी श्रृङ्गार की चन्द्रमा को अर्पण कर देती है।

गौतम नाम परमात्मा का भी है, परन्तु यहाँ परमात्मा का प्रकरण नहीं, यहाँ चन्द्रमा का प्रकरण है, चन्द्रमा का प्रकरण लेते हुए महर्षि बाल्मीकि ने कुछ ऐसा कहा है, जब यह रात्रि अपने श्रृङ्गार को चन्द्रमा के अर्पण कर देती है, तो उस समय देवता बड़े दुःखित होते हैं, और कहते हैं कि अब इन्द्र की आवश्यकता है, इन्द्र आते हैं और आकर इस चन्द्रमा रूपी गौतम को बलि बना देते हैं, और रात्रि अहिल्या को अपने में रमण कर लेते हैं।

मुनिवरोंआज हमें विचारना चाहिए !, कि हम इन्द्र किसको कहते हैं, इन्द्र नाम सूर्य का है, जब प्रातःकाल में इन्द्र आता है, तो रात्रि रूपी अहिल्या को नष्ट कर देता है और अपने में रमण करा देता है। संसार में अन्धकार का चिन्ह नहीं रहता और चन्द्रमा दागिल बन जाता है, प्रत्येक वाक्य को वैदिकता, यौगिकता से और विवेक से विचारना चाहिए, जब तक हमारी बुद्धि में विवेक न होगा, तब तक परमात्मा का शुद्ध ज्ञान और ऋषि मुनियों की पवित्रता को किसी प्रकार नहीं जान सकेंगे, आज हमें ऋषि मुनियों की परम्परा को जानना है, तो हमें शुद्ध चैतन्य बुद्धि में विवेक को उत्पन्न करना है।

अहिल्या

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने यह भी कहा था !, कि भगवान राम ने बन जाते हुए, अहिल्या को अपनी ठोकर ठुकराते हुए, अन्तरिक्ष में पहुँचा दिया था। इस पर शास्त्रार्थ करने का समय नहीं, परन्तु उत्तर यह है कि उस समय भगवान राम पृथ्वी के विशेष विज्ञान को जानते थे, हमारे वैदिक साहित्य में अहिल्या पृथ्वी को भी कहते हैं, यहाँ प्रकरण का ले लेना चाहिए, जब भगवान राम ने अपनी संस्कृति का चक्र फैलाने के लिए अपने राष्ट्र को त्याग दिया था, तो उस समय अहिल्या का कल्याण करने के लिए, भगवान राम ने निषाद से कहा था कि हे निषादअपने राष्ट्र को पवित्र बनाने ! के लिए, यह जो अहिल्या पड़ी है, इसके मांस में बीज की स्थापना करके, अपने राष्ट्र का उत्थान करो। जो भूमि वज्र तुल्य हो और विज्ञान से अन्न उत्पन्न हो सकता हो, उस भूमि को अहिल्या कहा जाता है, आज हमें प्रत्येक वाक्य को गम्भीरता से

विचारना है, बुद्धि के नेत्रों को शान्त करके अर्थों का अनर्थ नहीं करना है इस संसार में।

मुनिवरोंअ !हिल्या नाम इस आत्मा का भी है, रात्रि में जब रेणुका और इस आत्मा का मिलन होता है, तो इसका मिलान परमात्मा से हो जाता है, उस समय आत्मा को आनन्द छा जाता है, जैसे एक व्यक्ति प्रातः काल अपने स्थान से पृथक होकर सायंकाल तक कार्य करता है और थकित हो जाता है। यदि उस समय उससे प्रश्न करो, कि जितना कार्य तुमने प्रातःकाल से सायंकाल तक किया है, उतना अब कर सकते हो? उत्तर मिलेगा कि मेरे द्वारा अब वह शक्ति नहीं है, परन्तु जब यह व्यक्ति रात्रि अहिल्या की गोद में चला जाएगा, तो प्रातःकाल में उसको सब ही सत्ता प्रदान हो जाती है, आत्मा परमात्मा का मिलान होकर, उसमें वह चैतन्यता और महानता प्राप्त हो जाती है कि वह मानव वही कार्य करने के लिए फिर उद्यत हो जाता है और यदि प्रश्न करो, कि जितना कार्य तुमने कल किया था, उतना आज कर सकते हो, तो उत्तर मिलेगा, कि अवश्य कर सकता हूँ। तो मेरे प्यारेवह सत्ता कहाँ !ऋषि मण्डल ! से प्राप्त होती है? वह सत्ता परमात्मा से और रेणुका की गोद में जाने से प्राप्त होती है, यदि हम इस विज्ञान को जान लेते हैं, कि यह सब हमें कैसे प्राप्त हो जाता है, तो इसमें और भी महानता प्रकट हो जाती हे, वह मानव संसार में दार्शनिक कहलाता है, मनोवैज्ञानिक बन जाता है, मन पर शासन करने वाला बन जाता है और आत्मा के विज्ञान को जानने वाला बन जाता है।

भौतिक और आध्यात्मिक विज्ञान

मुनिवरोंउच्चारण करते करते बहुत दूर चले गए हैं !, आज का हमारा आदेश था, कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है, वह हमें शुद्ध चैतन्य परमपिता परमात्मा से प्राप्त होता है, परमात्मा कितना अलौकिक है। जब उसने सृष्टि प्रारम्भ की तो उसने अपना महान महत् दिया, उसका सम्बन्ध प्रकृति से हुआ और सृष्टि प्रारम्भ हो गई, उसके पश्चात् इस महत् का सम्बन्ध प्राणों से हुआ, प्राण का सम्बन्ध आत्मा से हुआ, आत्मा का सम्बन्ध हमारे सर्वज्ञ शरीर से, आज हमें उस विज्ञान को भी जानना है।

मुनिवरोंमहा !मेरे प्यारे !नन्द जी न एक समय मुझे निर्णय कराया, कि आधुनिक काल का संसार भौतिक विज्ञानवादी है, परन्तु वह विज्ञान भी होना चाहिए, जिसके द्वारा वह उत्तम तरंगें उत्पन्न हों, जिनका सम्बन्ध परमपिता परमात्मा से है, आज इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा, कि ज्ञान की अधिक वार्त्ता उच्चारण कर सकूं, कल समय मिलेगा, तो आत्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान की चर्चाएं कर सकूंगा।

मुनिवरोंऋषि परम्परा उसी काल में ऊँची बन सकती है !, जब हमारे जीवन में एक एक वेद मन्त्र गहने की तरह सुशोभित हो जाएगा, जिस प्रकार वेद का प्रत्येक मन्त्र, ओ३म् की ध्वनि से बिंधा हुआ है, इसी प्रकार हमारे शरीर में जितना अंग है, उपांग है, यह एक एक वेद मन्त्र से बिंध जाएगा, उस समय मानव में से सुगन्ध उत्पन्न हो सकती।

मुनिवरोंजैसे यज्ञशाला में सब सामग्री यज्ञमान के द्वारा होती है !, घृत भी अधीन होता और अग्नि में उसकी आहुति दे देता है, इसी प्रकार जब प्रत्येक इन्द्रिय और मन आदि सब मनुष्य के शासन में रहता है और यह आत्मा यज्ञमान होकर, इन सबकी सामग्री बना करके, ज्ञान रूपी यज्ञशाला में आहुति देने वाला बनता है, उस आत्मा का प्रभाव संसार में इस प्रकार ओत प्रोत हो जाता है, जैसे वेद का प्रत्येक मन्त्र, ओ३म् की ध्वनि में बिंधा हुआ है, कहने का तात्पर्य यह है, कि अपनी ऋषि परम्परा को लाने के लिए, राष्ट्र का उत्थान करने के लिए, हमें ऋषियों की ऊँची संस्कृति की आवश्यकता है, जिस संस्कृति को जानकर ऋषियों ने अपने जीवन को सर्वोत्तम बनाया और ब्रह्मज्ञानी कहलाए, जब यह संस्कृति संसार में होती है, तो राजा का राष्ट्र पवित्र होता है, राष्ट्र में रहने वाली प्रजा पवित्र होती है, प्रजा को ज्ञान होता है, कि जहाँ तेरा मन जाता है, वहीं परमात्मा विद्यमान है और तू पाप करने कहाँ जाएगा, जिस राजा के राष्ट्र में पाप नहीं होता, वह राजा संसार में चक्रवर्ती राजा कहलाता हे।

कौन राजा ऋणी नहीं होता।

मुनिवरोंजो राजा देवताओं के ऋण से उऋण होता है !, बुद्धिमानों के ऋणों से उऋण होता है, गुरु की परम्परा को जानने वाला और उसके आदेशों पर चलने वाला राजा, संसार में ऋणी नहीं कहलाता।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने आधुनिक संसार का कुछ निर्णय कराया और कहा कि ! आज का मानव दूसरों को निन्दा करने में बड़ा कुशल है, परन्तु जहाँ अपने अवगुण देखने की चर्चा आती है तो वहाँ शान्त हो जाता है। मेरे प्यारेआज !ऋषि मण्डल ! दूसरों की त्रुटि और निन्दा करने से पूर्‌्व, अपनी निन्दा करके देखो, कि तुम्हारे द्वारा कितनी त्रुटियाँ हैं, कितने अवगुण भरे हुए हैं, हम परमात्मा को सर्वव्यापक मानते हैं या नहीं, ऐसा करने से यह संसार स्वर्ग बन जाता है, आज संसार में हमें अपने उदर की पूर्ति करते हुए, वह कर्म करने चाहिएं जो कर्म हमारे साथ जाने वाले हों। मुनिवरोंइस सम्बन्ध में एक वार्त्ता !, एक अलंकार हमारे स्मरण हो आया है, सुनो !

अनाशक्ति का आलंकारिक चित्रण

एक राजा थे। उनका राष्ट्र बड़ा पवित्र था, राष्ट्र में एक दूसरे का कोई ऋणी नहीं था। एक समय राजा पर्वतों से भ्रमण करते हुए, अपने राष्ट्र में आ रहे थे, तो उनके मन में एक कल्पना जागी, कि अरे, तू इतना महान राजा है, इतनी प्रजा का स्वामी है, किन्तु तेरे द्वारा एक छड़ी भी नहीं, वह अपने राष्ट्र में पहुँचा और शिल्पकारों को बुलाकर कहा, कि तुम मेरे लिए छड़ी बनाओ, जो भुजों में सुशोभित हो।

मुनिवरों! सुना जाता है, कि शिल्पकारों ने करोड़ों मणियों से गूंथ करके, उस छड़ी को बनाया और राजा को अर्पित करते हुए कहा कि लीजिए भगवन्राजा को वह ! छड़ी बहुत प्रिय लगी।

एक समय वह पर्वतों पर भ्रमण करने के लिए जा पहुँचे। सायंकाल को नगर आ रहे थे, तो उन्होंने देखा कि श्मशान भूमि में एक वैरागी महात्मा है। राजा उसके समीप पहुँचे और कहा कि हे महात्मातुम यहाँ क्या कर रहे हो !? चलो, मेरे नगर में चलो।

ऋषि ने उत्तर दिया महाराजआपके नगर में जो हैं !, वह ही एक दिन यहाँ आ जाएंगे, मैं वहाँ जाकर क्या करूंगा। राजा ने सोचा कि यह साधु तो बड़ा मूर्ख है, और साधु से कहा, अरे, साधुले इस छड़ी को ले और यह उसको दे देना !, जो तुमसे अधिक मूर्ख हो। साधु ने छड़ी को स्वीकार कर लिया, और राजा अपने राष्ट्र में जा पहुँचे।

राजा अपने राष्ट्र का पालन करते रहे और करते करते वह समय आ गया, जब वह मृत्यु शैय्या पर स्थिर हो गए, केवल मृत्यु में कुछ समय रह रहा था श्मशान भूमि में रहने वाले साधु ने अपने योगबल से देखा, कि आज राजा मृत्यु को प्राप्त होने जा रहा है। साधु उस छड़ी को लेकर राजा के समीप जा पहुँचे। राजा ने साधु को दृष्टिगोचर पाया और कहा, अरे, मूर्ख साधुअभी तक तु !मने यह छड़ी किसी को नहीं दी।

साधु ने कहा कि प्रभुमुझे अपने से मूर्ख कोई मिला ही नहीं !, जिसको मैं यह छड़ी देता, परन्तु राजन्अब आप कहाँ जा रहे हैं !?

राज ने उत्तर दिया कि मैं बहुत बड़ी यात्रा में जा रहा हूँ, यह प्रतीत नहीं कि मैं जाऊंगा कहाँ।

साधु ने कहा कि राजन्जब आप इतनी बड़ी यात्रा में जा रहे हैं !, तो कितनी सेना साथ ले जाएंगे?

राजा ने कहा कि अरे, साधुमैं तो आपको मूर्ख कह चुका हूँ !, अरे, इस अन्तिम यात्रा में यह सेना मेरे साथ नहीं जाएगी।

साधु ने कहा कि राजन्सेना नही ले जाओगे !, तो यह मन्त्री तो अवश्य आपकी आज्ञा का पालन करने के लिए और राष्ट्र की वार्त्ताओं का निर्णय करने के लिए साथ जाएगा।

राजा ने कहा कि अरे, साधुतू तो बड़ा मूर्ख है !, अरे, इस यात्रा में यह मन्त्री भी साथ नहीं जाएगा।

साधु ने कहा यदि राजन्मन्त्री साथ नहीं जाएगा !, तो द्रव्य तो अवश्य जाएगा, क्योंकि आपको खान पान की आवश्यकता है, जिसके लिए धन अनिवार्य है।

राजाः अरे, मुर्ख साधु इस यात्रा में द्रव्य में भी मेरे साथ नहीं जाएगी। !

साधु ने कहा पत्नी नहीं जाएगी, तो पुत्र तो अवश्य जाएगा, मोह करने के लिए।

राजा ने कहा – 'अरे, यह भी मेरे साथ नहीं जाएगा।

साधु ने कहा अरे, राजन्पुत्र नहीं जाएगा !, तो यह बड़े बड़े गृह, जो आपने बनाए हैं, यह तो आपके साथ अवश्य जाएंगे?

राजा ने कहा – अरे, महामूर्ख यह गृह भी मेरे साथ नहीं जाएंगे। !

साधु ने कहा राजन्आप विश्राम करने के लिए !, एक आसन तो अवश्य ले जाएंगे?

राजा ने कहा अरे, यह भी साथ नहीं जाएगा।

साधु ने कहा – राजन् फिर आपके साथ क्या जाएगा। !

राजा ने कहा प्रभु मेरे साथ कुछ नहीं जाएगा। !

मुनिवरोंतब साधु ने छड़ी लेकर राजा पर आक्रमण कर दिया और कहा कि अरे !, ले अपनी छड़ी को, मेरे से मूर्ख तो तू है संसार में ओर कौन होता, अरे, आज तक वह कर्म तो किए नहीं, जो तेरे साथ जाते, जो कभी जीवन भर करते रहे, वह यहाँ के यहाँ रह गए। ले, इस छड़ी को स्वीकार कर।

राजा ने साधु के इन वाक्यों का पान किया और कहा प्रभुमैंने वह कर्म कभी नहीं ! किए, जो आज मेरे साथ जाते, मुझे क्षमा करो, मैंने आपको सहस्त्रों समय मूर्ख कहा है, प्रभुमुझे क्षमा करो !, मैं महापापी हूँ।

मुनिवरोंदेखो !,ऋषि बड़े दयालु होते हैं !, तथास्तु कह करके अपने आश्रम चले गए और राजा मृत्यु को प्राप्त हो गया। उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि मानव को वह कर्म भी करने चाहिएं कि जब वह संसार से जाए, तो वह कर्म भी उसके साथ जाएं। इस भौतिक पिंड में आकर वह कर्म भी करो, जो कर्म इस पिंड को त्यागते समय, तुम्हारे साथ जाएं और आत्माओं में जाकर रमण करने वाले बनो।

वह कौनसा कर्म है?

मुनिवरोंपरमात्मा का चिन्तन करना !, अपने सदाचार को स्थापित और प्रभु को सर्वव्यापक मानकर कोई पाप न करना।

मुनिवरोंअब आज का हमारा आदेश समाप्त हो गया है !, कल समय मिलेगा, तो शेष बातें कल होंगी, कल हम आत्मिक और भौतिक विज्ञान की चर्चा करेंगे, अब कुछ वेदों का पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। आर्य समाज (वेद पाठ) जम्मू के सम्मिलित वार्षिक उत्सव पर।

१० 19 04 1964 पुष्प 04 अध्यात्म युक्त भौतिकता

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पयर्यण समय समाप्त हुआ !, आज हम पुनः की भांति, तुम्हारे समक्ष कुछ वेद पाठ गा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन वेद मन्त्रों का हमने पाठ किया, आज का पाठ हमें कौन से विशाल मार्ग के लिए प्रेरित कर रहा था, आज हमें पुनः से उन वेद मन्त्रों की प्रेरणा और उनके विभिन्न रूपों को अपने जीवन में धारण कर लेना चाहिए।

हमारे यहाँ मूल वेद चार माने जाते हैं, जैसा कल के आदेशों में और पूर्व के वाक्यों में भी कहा है, परन्तु उन चार वेदों को जैसा हमारा ऋषि मुनियों का कथन है, काल आते आते संहिताएं कहलाई 1127, आज हमें इस विवाद पर नहीं जाना कि यह संहितायें कैसे और क्यों बनीं 1127, आज तो केवल यह विचारना है, कि आज का पाठ क्या कह रहा था।

वेद का गौरव

मुनिवरोंआज हम उन्हीं वेद मन्त्रों का पाठ कर रहे थे !, जिनमें ऋषि मुनियों का एक बड़ा ऊँचा गौरव है, संसार का गौरव है, ज्ञानी और वैज्ञानिकों का गौरव है, इन वेद मन्त्रों में सब ही कुछ विराजमान है, इन वेद मन्त्रों को पान करते हुए, हम ऋषि बन जाते हैं, और इनमें जो ज्ञान विज्ञान है, उसको अपने जीवन में धारण करते हुए, अन्तःकरण को इतना पवित्र, शुद्ध चैतन्य बना लेते हैं, कि हम अपना मिलान उस शुद्ध पवित्र चैतन्य परमपिता परमात्मा से कर लेते हैं, यह हमारे यहाँ विशेष विज्ञान माना गया है।

भौतिक और आध्यात्मिक विज्ञान

मुनिवरों हमारे यहाँ दो प्रकार का विज्ञान कहा !जाता है, एक भौतिक विज्ञान और दूसरा आध्यात्मिक विज्ञान जैसा मैंने कल के आदेश में कहा था और आज के वेद पाठ में भी बुद्धि का बड़ा सुन्दर विवेचन और राष्ट्र के लिए भी नाना विवरण आ रहा था।

हमारे यहाँ दो प्रकार के राष्ट्र हैं, एक भौतिक राष्ट्र कहलाता है, दूसरा आध्यात्मिक राष्ट्र। हमें दोनों राष्ट्रों को विचारना है और दोनों को ऊँचे शिखर पर पहुँचा देना है। जहाँ उसको कोई न छू सके।

मुनिवरोंभौतिक विज्ञान वह कहलाता है !, जिसमें नाना प्रकार के प्रकृति से अणुओं को, महाअणुओं को एकत्रित किया जाता है, और उनसे नाना प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार किया जाता है, और जिस प्रकार राजा रावण के पुत्र नारायन्तक ने बड़े बड़े विशाल यन्त्रों का आविष्कार किया, भगवान् राम ने भीऔर द्वापर काल क भीम , के पुत्र घटोत्कच तक ने, अर्जुन ने और महाराज कृष्ण ने बड़े बड़े यन्त्रों का आविष्कार किया। आज हमें उस भौतिक विज्ञान को भी जानना है।

मुनिवरोंइस भौतिक विज्ञान से भी ऊँचा विज्ञान है !, जिस विज्ञान से इस संसार के रचयिता को, जिसने हमारे मनुष्य शरीर को रचा है, पा लिया जाता है। मैंने इससे पूर्व कई स्थलों में कहा है कि प्रभु ने किस ऊँची गति से मनुष्य के शरीर को रचा है, कैसे सुन्दर चक्षु, घ्राण, वाक, रसना और एक एक इन्द्रिय ऐसी विशाल, वह प्रभु कितना बड़ा वैज्ञानिक है जिसने इस संसार को, लोक लोकान्तरों को रचाया । उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि हम आध्यात्मिक विज्ञान को जानते हुए, उस परमपिता परमात्मा के पूर्ण विज्ञान को जानते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं।

मुनिवरोंहम यह नहीं कहते !, कि आध्यात्मिक विज्ञान को ही जानो, भौतिक ज्ञान को भी जानो जिससे राष्ट्र की रक्षा होती है, राष्ट्र का कल्याण होता है, राष्ट्र में नाना सामग्री होती है मनुष्य अपने मस्तिष्क से और अपने मनोविज्ञान से प्रकृति की देन को जाना करता है, अणु, महाअणु, त्रिसरेणु और महात्रिसरेणु को एकत्रित करते हुए,

नाना प्रकार के यन्त्रों को आविष्कार किया जाता है। ऋषियों के आदेशों से हमें प्राप्त होता है, कि रावण के पुत्र नारायन्तक ने अपने सूक्ष्म से जीवन में, इस महान विज्ञान को जाना, जिस पर विराजमान होकर, चन्द्रमा की यात्रा किया करता था।

आध्यात्मिक विज्ञान से लोक लोकान्तरों की यात्रा

मुनिवरोंएक समय राजा रावण के पुत्र नारान्तक !, देव ऋषि नारद के द्वारा जा पहुँचे, उस समय और भी ऋषि जैसे महर्षि विभाण्डक, महर्षि अत्रि, महर्षि पिप्पलाद आदि भी वहाँ थे। नारायन्तक ने कहा कि प्रभु! आप तो नित्यप्रति आत्मा परमात्मा की चर्चा करते हैं, परन्तु मैंने तो विज्ञान को जाना, और उन महान यन्त्रों का आविष्कार किया जिनमें विराजमान होकर चन्द्रमा की यात्रा कर आता हूँ, उस समय देव ऋषि नारद ने कितना सुन्दर उत्तर दिया, कि हे नारान्तकतुमने केवल इसी विज्ञान को जाना है !, परन्तु हमने उस विज्ञान को जाना है, जिससे हम सूर्य लोक और ध्रुव लोकों की यात्रा किया करते हैं।

मुनिवरोंवह कौ !न सा विज्ञान है, जिससे महात्मा ध्रुव, ध्रुव लोक में भ्रमण किया करते थे? वह कौन सा विज्ञान है, जिससे देव ऋषि नारद सूर्य लोक में रमण किया करते थे? आज हमें उस विज्ञान को विचारना है, भौतिक विज्ञान के साथ साथ देव ऋषि नारद के विज्ञान पर जाना है।

मुनिवरोंउच्चा !रण करते करते दूर चले गए, वाक्य चल रहा था, कि आज हमें भौतिक विज्ञान को भी ऊँचा बनाना है, नाना आविष्कारों को करना और अपने मनोविज्ञान से सब ही कुछ जानना है, हमारे मन की कितनी तीव्र गति है, हमारे वैज्ञानिकों ने मन की कल्पना करते हुए, नाना प्रकार के यन्त्रों को जाना है, जिन यन्त्रों से राष्ट्र का कल्याण किया करते हैं।

राष्ट्र उत्थान के लिए वैदिक संस्कृति

मुनिवरोंमहानन्द जी की प्रेरणा से प्रतीत होता चला जा रहा है !मुझे मेरे प्यारे !, कि हमें राष्ट्र के लिए क्या करना है। जितने भौतिक वैज्ञानिक हैं, वेदों के प्रकाण्ड बुद्धिमान है, दार्शनिक हैं, उन सबको राजा के द्वार जाना चाहिए और उस राजा का विरोध

करना चाहिए, जिस राजा के राष्ट्र में अपराधियों को दण्ड नहीं दिया जाता और उच्चारण करना चाहिए, कि हे राजन्तू अपने राष्ट्र में !, उस महान ऊँची संस्कृति को अपना जिस संस्कृति से हमारा कल्याण है जिस संस्कृति के द्वारा मानव में पवित्रता आती है। जिस राजा के यहाँ ऐसे आत्मिक बल वाले ब्राह्मण पुरोहित होते हैं, वह राजा इन वाक्यों को अवश्य स्वीकार करता है।

मुनिवरोंदेखो !, जिस समय तुझे महर्षि वशिष्ठ के राष्ट्र सम्बन्धी वाक्य स्मरण होते हैं, तो प्रतीत होता है कि वह राजा दशरथ को विभिन्न स्थलों में प्रेरणा दिया करते थे, और कहा करते थे, कि हे राजनआज तेरे राष्ट्र में जो संस्कृति है !, वह इसी प्रकार रहनी चाहिए और यह उसी काल में रह सकेगी, जब तुम्हारा एक एक अंग और तुम्हारा हृदय ऊँची वैदिक संस्कृति से ओत प्रोत होगा। तुम्हारा हृदय तुम्हारी संस्कृति और संस्कृति तुम्हारा हृदय होगा ।

मुनिवरोंआज हमें उस ऋषि परम्परा को अपनाना चाहिए !, जिससे वास्तव में राष्ट्र का कल्याण होता है, मानव का उत्थान होता है।

मुनिवरोंमहाराजा रघु ने वानप्र !स्थ ले करके, अपने राष्ट्र का जो अनुभव था, उससे अपने पुत्र अज को शिक्षा दी, अज के दशरथ हुए, दशरथ को उन्होंने शिक्षा दी, आज वह शिक्षा महर्षि वशिष्ठ भी देते चले आए। आज हमें ऋषि परम्परा को ऊँचा बनाना है, राष्ट्र के ब्राह्मणों को, बुद्धिमानों को व दार्शनिकों को चाहिए, कि वह राजा से कहें, जो दुराचार कर रहा है, कि हे राजनयह संस्कृति तुम्हारे लिए लाभदायक नहीं !। तू वैदिक संस्कृति और ऋषि परम्परा को स्थापित कर, जो राष्ट्र के लिए लाभदायक है और प्रजा इसके भाव से अपने को ऊँचा बना सकती है।

वेद के एक एक मन्त्र में वह अमूल्य निधि है, जिसको जान कर मानव का हर प्रकार से कल्याण होता है और वह संस्कृति मानव के हृदय में ओत प्रोत हो जाती है, जैसे माता का प्रेम बालक के हृदय ओत प्रोत होता है, जिस काल में माता अपने प्रिय बालक को, अपनी लोरियों में आकर्षित करती है, इसी प्रकार जब राजा माता के तुल्य और पिता के तुल्य अपने पुत्र रूपी प्रजा से प्रीति करने वाला और संस्कृति देने

वाला हो, तो वह पवित्र कहलाता है। उस राजा की नीति पवित्र कहलाती है, जिसके राष्ट्र में अपराधियों को दण्ड दिया जाता हो, यदि राजा का पुत्र है और दुराचारी है, तो राजा को चाहिए कि प्रजा कि हित के लिए, संस्कृति और ऋषि परम्परा को ऊँची बनाने के लिए, अपने पुत्र को भी नष्ट कर देना चाहिए।

आज हमें सबसे पूर्व बुद्धिमान बनना है, दार्शनिक बनना है, वैज्ञानिक बनना है और राजा से जाकर अनुरोध करना है, कि हे राजन्तू अपने राष्ट्र की प्रजा ! की पवित्र बना, यह उसी काल में पवित्र बन सकती है, जब तेरे राष्ट्र में अपराधियों को दण्ड दिया जाएगा।

मुनिवरोंहम वाक्य उच्चारण करते हुए !, बहुत दूर चले गए, हमारा वाक्य चल रहा था, भौतिक विज्ञान, आज हमें वास्तव में भौतिक विज्ञान को जानना चाहिए, इससे राष्ट्र के द्वारा सामग्री होती है, विद्युत को जलों से आकर्षित किया जाता है, जल और विद्युत का प्रयोग करते हुए, वैज्ञानिक राष्ट्र को आनन्दित कर देते है। आज हमें वास्तव में उस विज्ञान की आवश्यकता है, जिससे राष्ट्र की रक्षा हो। विद्या व संस्कृति वह हो, जिससे प्रजा में सदाचार और शिष्टाचार की तरंगें हों।

मुनिवरोंहमारे ऋषि मुनियों की जो ऊँची परम्परा है !, उनका जो महान व्रत है, वह इस प्रकार है जैसे माता दुग्ध में घृत निकाल लेती है, उन्होंने भौतिक विज्ञान को जानते हुए, उस उत्तम घृत को, जो अग्नि से मिलान कर, अग्नि को प्रज्वलित कर देता है, उसको जानो, वह विज्ञान कौन सा है?

चतुर्विध बुद्धियाँ

आज देखो, हमारे यहाँ चार प्रकार की बुद्धियों का विवरण आता है, बुद्धि, मेघावी बुद्धि, ऋतम्भरा बुद्धि, और प्रज्ञा बुद्धि।

बुद्धि

बुद्धि वह होती है, जो हमें यथार्थ निर्णय देने वाली होती है, जैसे आज हमारे नेत्रों ने या किसी ब्रह्मचारी ने किसी ब्रह्मचारिणी के दर्शनों को पाया या किसी ब्रह्मचारिणी ने किसी ब्रह्मचारी से प्राकृतिक सौन्दर्य को जाना, तो उस समय उसके नेत्रों में एक

महानता प्रकट होती है, नेत्रों में वह सत्ता कहाँ से प्राप्त हो गई, जो हम प्राकृतिक सौन्दर्य को दृष्टिगोचर पाते चले जा रहे हैं? हमारे दार्शनिकों का कथन है, कि हमारे नेत्रों के निचले भाग में एक यन्त्र है, जिसको हम पीला पटल कहते हैं, उस पटल से पाँच तन्मात्राएँ लगी हुई है, तन्मात्राओं के पश्चात् यह मन विराजमान है, इस मन का सम्बन्ध बुद्धि से है, जिससे हम यथार्थ निर्णय देते हैं।

इन्द्रियाँ जो भी कुछ कार्य करती हैं, जैसे नेत्रों ने दृष्टिगोचर पाया, श्रोत्रों ने श्रवण किया, घ्राण ने जो कुछ सुगन्धि पाई, वह सब विषय मन के द्वारा और बुद्धि के द्वारा पहुँचता है, बुद्धि उसका निर्णयात्मक उत्तर देती है और कहती है, कि यह मेरी भौजाई है, यह जो प्राकृतिक सौन्दर्य है, यह मेरे प्रभु का रचाया हुआ है।

जब मानव के हृदय में विचार आ जाता है, कि यह जितना सौन्दर्य मेरे नेत्रों के समक्ष है, यह सब मेरे प्रभु का रचा हुआ है, तो उस समय कोई भी इन्द्रियाँ, किसी प्रकार का पाप नहीं कर सकतीं, हमें प्रभु को सर्वव्यापक मानकर, उसके ऊपर विश्वास करना है, जब हम प्रभु को सर्वव्यापक कहते हैं, परन्तु उस पर विश्वास नहीं होता, तो हम कैसे जान लें, कि आज हम कोई पाप नहीं करते। पाप से बचने के लिए, सबसे पूर्व हमें उस विवेक की आवश्यकता है, कि हमें प्रभु पर ऊँचा विश्वास हो जाए, कि प्रभु है या नहीं, जब यह विश्वास और धारणा हो जाती है, कि प्रभु है और सर्वव्यापक है, तो इन्द्रियाँ किसी प्रकार का कोई पाप नहीं कर सकतीं।

मुनिवरोंविषय चल रहा था !, बुद्धि का। बुद्धि यथार्थ निर्णय देने वाली है, आज हमें बुद्धि से निर्णय लेना है, कि जिस सौन्दर्य को हम देख रहे है वह सौंदर्य क्या है, आज हम उस सौंदर्य को अपने मन पर ले जा रहे हैं, प्रत्येक इन्द्रिय उससे दूषित होती चली जा रही है, और पाप में डुबकी लगा रही है। मुनिवरोंवह हमारे द्वारा ! कौन सी सूक्ष्मता है? वह विवेक की सूक्ष्मता है। तो मेरे आदि ऋषि मण्डल! इसका नाम बुद्धि है, जो यथार्थ निर्णय देती है।

मेघावी बुद्धि

मुनिवरोंमेघावी बुद्धि उसको कहते हैं !, जिसके आने के पश्चात् मानव के जन्म जन्मान्तरों के संस्कार जागृत हो जाते हैं, मेघावी बुद्धि का सम्बन्ध अन्तरिक्ष से है, यह जो वेदवाणी के वाक्य है अन्तरिक्ष में रमण करते रहते हैं, जिस विद्या को हमने किसी काल में पाया, परन्तु मेघावी बुद्धि प्राप्त होने पर, उस विद्या से, उन वेद मन्त्रों से सम्बन्ध हो जाता है और वह स्वतः प्रकट हो जाते हैं, इसका नाम मेघावी बुद्धि है। मेघावी बुद्धि अन्तरिक्ष में संसार के विज्ञान को देखा करती है, कि यह संसार का विज्ञान और कौन कौन सा वाक्य अन्तरिक्ष में रमण कर रहा है।

आज तुम्हें स्मरण होगा, कि हमने आज से बहुत पूर्व काल मे इन संहिताओं का पाठ किया, परन्तु इतने काल में पश्चात् भी, हमारे स्मरण होती चली जा रही हैं और तुम्हारे समक्ष इन वेद ऋचाओं और संहिताओं का प्रसार करते चले जा रहे हैं, इसका नाम मेघावी बुद्धि है। मेघावी बुद्धि उस विवेक का नाम है जब मानव संसार से विवेकी होकर, परमात्मा के रचाए हुए तत्त्वों पर जाता है।

ऋतम्भरा बुद्धि

मुनिवरोंबुद्धि का विवेकी और मेघावी बुद्धि का विवेकी बनकर के परमात्मा के रचाए ! हुए, विज्ञान की जानता हुआ, यह आत्मा ऋतम्भरा बुद्धि के द्वार जाता है। ऋतम्भरा बुद्धि उस को कहते हैं, जब मानव योगी और जिज्ञासु बनने के लिए और परमात्मा की गोद में जाने के लिए लालायित होता है, उस समय मेघावी बुद्धि, ऋतम्भरा बुद्धि बन जाती है, धारणा, ध्यान, समाधि में संलग्न हो जाता है और संसार के इस प्राकृतिक सौन्दर्य को अपने आधीन कर लेता है। यह पाँचों प्राण प्राण, अपान, समान, व्यान, उदान, ऋतम्भरा बुद्धि वाले के अधीन हो जाते हैं, अधीन करके जब योगी इन पाँचों प्राणों की सन्धि कर लेता है, तो यह आत्मा इन प्राणों पर और मनुष्य उस पर सवार हो जाता है, इसी प्रकार यह आत्मा प्राण रूपी अश्व पर सवार हो जाता है जैसे मुनिवरों! अश्व नाम घोड़े का है और मनुष्य उस पर सवार हो जाता है इसी

प्रकार यह आत्मा प्राण रूपी अश्व पर सवार हो जाता है और सबसे पूर्व मूलाधार में रमण करता है।

मूलाधार चक्र

मेरे आदि ऋषियों का जैसे महर्षि गरुड़, महर्षि अत्रि और महर्षि लोमश आदि का कथन है, कि देखो, मूलाधार में लगभग ग्रन्थियाँ लगी हैं 6, इस मूलाधार को हम स्वस्ति चक्र भी कहते हैं, जब यह आत्मा मूलाधार में जाता है, तो उस समय यह सब ग्रन्थियाँ स्पष्ट हो जाती हैं, और इस आत्मा का प्राणों के सहिता आगे का उत्थान होता है।

नाभि चक्र

आगे यह आत्मा उस स्थान पर जाता है, जिसको हम नाभि चक्र कहते हैं इसमें 72 ग्रन्थियाँ स्पष्ट हैं 12 करोड़ नाड़ियों का समूह कहलाता है और लगभग, जब यह आत्मा यहाँ पहुँचता है, तो यह सब ग्रन्थियाँ स्पष्ट हो जाती हैं।

हृदय चक्र

इसके पश्चात् आगे देखो, गंगा, यमुना, सरस्वती आ जाती, आत्मा इसमें स्नान करता हुआ, आगे जाता हुआ, हृदय चक्र में जाता है। जिसको हमारे यहाँ स्वाधिष्ठान चक्र भी कहते हैं, रविनाश चक्र भी कहते हैं, इसमें लगभग ग्रन्थियों का समूह माना 24 गया है, यह सब ग्रन्थियाँ स्पष्ट हो जाती हैं।

कण्ठ चक्र

आगे यह आत्मा उस स्थान में जाता है, जिसको कण्ठ चक्र कहते हैं, उदान चक्र भी कहते हैं, ब्रह्मी नाम का चक्र भी कहते हैं, इसमें लगभग ग्रन्थियाँ लगी हुई हैं 47, यह सब ग्रन्थियाँ स्पष्ट हो जाती हैं।

घ्राण चक्र

आगे चलता हुआ, यह आत्मा घ्राण चक्र में जाता है, जहाँ नाना ग्रन्थियाँ लगी हुई हैं। यह सब ग्रन्थियाँ भी स्पष्ट हों जाती हों।

त्रिवेणी स्थल

आगे चलकर यह आत्मा त्रिवेणी स्थल में जाता है, जहाँ गंगा, यमुना और सरस्वती तीनों का मिलान होता है, घ्राण स्थल से ऊपर मस्तिष्क में देखो, इन तीनों नाड़ियों का समूह होता है, जिनको हमारे ऋषियों मुनियों ने इंगला, पिंगला और सुषुम्ना तीनों नाड़ियों को गंगा, यमुना और सरस्वती भी कहा है, जिस स्थान पर इन तीनों नाड़ियों का सम्बन्ध होता है, उसको हमारे यहाँ त्रिवेणी कहा जाता है, इस त्रिवेणी स्थान में यह आत्मा प्राणों सहित स्नान करता हुआ, आगे को जाता है।

ब्रह्मरन्ध्र

इसके पश्चात् यह आत्मा ब्रह्मरन्ध्र में चली जाती है। ऋषियों का ऐसा कथन है, कि जिस समय आत्मा ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचता है, तो उस समय सूर्य का प्रकाश भी फीका रहता है, उस प्रकाश से आगे रीढ़ के भाग में जाकर कुण्डली जागृत हो जाती है, जागृत होने का नाम ही मुनिवरोंदेखो !, परमात्मा से मिलान है, इस आत्मा का परमात्मा से मिलान हो जाता है।

प्रज्ञा बुद्धि

मुनिवरोंउच्चारण कर रहे थे !, बुद्धि, मेघावी बुद्धि, ऋतम्भरा बुद्धि और प्रज्ञा बुद्धि के सम्बन्ध में, प्रज्ञा बुद्धि उस ऋषि को प्राप्त होती है, जो मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। आज हमें प्रज्ञा बुद्धि के लिए प्रयत्न करना है, उस ऊँचे शिखर वाले विज्ञान में जाकर, हम संसार के ज्ञान, विज्ञान को जान लेते हैं, प्रकृति के एक एक कण को जान लेते हैं, आज हमें उस विज्ञान की याचना करनी है।

प्रभु याचना

हे प्रभुहमें उस विज्ञान के मार्ग पर ले चल !, जिस विज्ञान में हमें वास्तव में बुद्धि प्राप्त होती है जिस विज्ञान में जाकर, हम इस प्रकृति को अपने आधीन बना करके, इस पर शासन करें, हे प्रभुहमें उस ऊँचे विज्ञान पर ले चल !, जहाँ प्रभु हम तेरा गान गाते रहें, हे प्रभुहमें उस सृष्टि में ले चल !, जहाँ प्रभु आपका सूर्य अस्त नहीं होता, हे प्रभुहमें इस संसार की इतनी ऊँची आवश्यकता नहीं है !, जहाँ प्रातः सूर्य

उदय होता है और सायंकाल को अस्त हो जाता है, हे प्रभु! इस सूर्य की आवश्यकता नहीं, प्रभुउस सृष्टि की आवश्यकता है !, जिस सृष्टि में आपका ज्ञान रूपी सूर्य, किसी भी प्रकार शान्त न हो सके।

वाक्य उच्चारण करते करते बेटाहम बहुत दूर चले गए हैं !, हमारा वाक्य कह रहा था, कि हमें भौतिक और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों को जान लेना चाहिए। महानन्द जी तुमने महात्मा ध्रुव का नाम तो अवश्य सुना होगा, वह केवल एक ओ३म् के विज्ञान को जानकर, केवल एक वेदमन्त्र को जानकर वह ध्रुव लोक में रमण किया करते थे। मेरे प्यारेऋ !षि मण्डलआज हमें उस विज्ञान की याचना करनी है !, जिस विज्ञान के लिए वेद प्रेरित कर रहा है। वेद का एक एक मन्त्र हमें वह प्रेरणा दे रहा है, जो हमारे जीवन को पवित्र और सुगन्धिदायक बना देता है, उस सुगन्धि में पहुँचकर, हमारे राष्ट्र का कल्याण, मानव का कल्याण और मानव की आत्मा का उत्थान होकर परमात्मा से मिलान हो जाता है।

आज का हमारा आदेश उच्चारण करता चला जा रहा था, कि हमें दोनों प्रकार के विज्ञान को जान लेना चाहिए और दोनों विज्ञानों के ऊँचे शिखर पर जाकर ही वास्तव में हमारा कल्याण होगा। अब आज का हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है, शेष वार्ता कल होगी।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्कल आपका आदेश क्या होगा !, आज का आदेश तो बड़ा ओजस्वी रहा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यकल का कल देखा जाएगा !बेटा ....., जैसे समय आयएगा, उसके अनुकूल वाक्य उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः मुनिवरोंदेखो !, कल हमारा देव ऋषि नारद और सनत् कुमार का सम्वाद प्रकट किया जाएगा, अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है, कल समय मिला, तो शेष वार्त्ता इससे भी विचित्र होगी। अब कुछ वेद मन्त्रों का पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। आज का हमारा आदेश मानव के कल्याण के

लिए, यौगिक बनने के लिए और भौतिक विज्ञान के लिए और राष्ट्र कल्याण के लिए, सब ही के लिए प्रेरित कर रहा था। अब वेदों का पाठ होगा। जम्मू की (वेद पाठ) आर्य समाजों के सम्मिलित वार्षिक उत्सव पर

११ 21 04 1964 पुष्प 04 आत्मिक, सामाजिक और राष्ट्र उन्नति के आधार

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पयर्यण समय समाप्त हुआ !, आज हम पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का पाठ कर रहे थे, मैंने आज से पूर्व कई स्थलों में कहा है कि इस समय हमारे पिप्पलाद मुनि संहिता के मन्त्रों का पाठ प्रारम्भ हो रहा है और यह भी कहा था कि हमारे भिन्न भिन्न ऋषियों ने अपनी अपनी विचार धाराओं से मूल चार वेदों की संहितायें बनाई। 1127

वेद में समस्त विद्याए

वास्तव में वेद नाम प्रकाश का है, जो मनुष्य के लिए, संसार के लिए, राष्ट्र के लिए, मेरी प्यारी माताओं के लिए और ऋषि मण्डल सबके लिए ही अज्ञानता को नष्ट करने वाला है। आज कौन सी ऐसी विद्या है, जो वेदों में नहीं है। जिस प्रकार परमात्मा ने सृष्टि और इस पृथ्वी को रचा, जिसमें नाना धातुएं हैं, स्वर्ण हैं, नाना सोमलताएं हैं परन्तु सूर्य की किरणें प्रकाश देती हैं और उसी प्रकाश से वह वस्तु वैसी हो प्रतीत देती है, इसी प्रकार वेद में सब विद्याएं हैं। माता अपने पुत्र को कैसे उत्पन्न करती है? ऋतु काल कैसे आता है, कौन सा नक्षत्र होता है? कैसा आहार और व्यवहार होता है? यह सब कुछ विद्याएं हमारे वेद में हैं।

हे प्रभुतूने हमारे कल्याण के लिए यह अनुपम विद्याएं दी हैं !, वेदगान गाते समय मेरा हृदय मग्न होता जा रहा था, आपकी महिमा का गुणगान कहाँ तक गाता चला जाऊं।

मेरे आदि ऋषियों का एक बड़ा प्रसंग चला करता है, मेरे प्यारेमहानन्द जी ने भी ! प्रश्न किया, कि जब माता के गर्भ में हमारी रचना होती है, जो कमल तुल्य बड़ा कोमल है, तो सृष्टि के प्रारम्भ में जब यह माता नहीं थी, तो यह मनुष्य कैसे उत्पन्न

हो गया? इसमें नाना विचारधाराएं हैं, जैसा मैंने पूर्व निर्णय कराया, परन्तु मैं तो एक वाक्य कहा करता हूँ, कि मनुष्य का निर्माण ऋषि मुनियों के द्वारा हुआ।

मुनिवरोंजिस प्रकार भौतिक वैज्ञानिक उन तत्त्वों को जान लेता है !, जिनमें परमाणु, त्रिसरेणु और महात्रिसरेणु होते हैं और उन्हें एकत्रित कर, यन्त्रों का आविष्कार कर लेता है, इसी प्रकार सृष्टि के आरम्भ में ऋषि आत्माएं जो पूर्व रची हुई सृष्टि में थीं और उनके द्वारा वह विद्याए थीं, उन्होंने पूर्व रचित्त सृष्टि के आधार से उन परमाणुओं को एकत्रित किया और मनुष्य जाति उत्पन्न हो गई, यह बड़ा गूढ़ विषय है, आज समय आज्ञा नहीं दे रहा है, किसी काल में इनका निर्णय करेंगे।

मुनिवरोंवाक्य चल रहा था !, कि हमारे वेद में कौन सी विद्या नहीं है, परन्तु आज इस विद्या को मन्थन करने की आवश्यकता है, अपने जीवन में ओत प्रोत करने की आवश्यकता है, यह विद्या सहज प्राप्त नहीं होती। यह वह अनुपम विद्या है, जिसको भगवान राम ने अपने जीवन में धारण किया और पर्वतों की शैय्या बनाकर अपनी संस्कृति का पालन किया।

वेदवाणी हमें विरक्त बनाती है, इससे मनुष्य मात्र से प्रेम हो जाता है, वेदवाणी यह नहीं कहती है, कि आज तुम एक दूसरे के रक्त के पिपासु बन जाओ, वेदवाणी कहती है कि भौतिक और आध्यात्मिक ज्ञान का जानो और इस मन को छुटकारा मत दो, जब यह मन छुटकारा पा जाएगा, उस समय यह तुम्हारी मृत्यु का सामान करने लगेगा, इसलिए तुम्हें विचारना है और वेद के उस अनुसन्धान पर जाना है, जहाँ पहुँचकर हमारे ऋषि संसार में ऋषि मुनि कहलाए।

कैलाशपति शिव

मुनिवरोंआज मुझे राष्ट्र का निर्णय करते हुए महाराजा शिव की चर्चा !एं स्मरण आती हैं, जिनका संस्कार राजा हिमाचल को कन्या पार्वती द्वारा हुआ। महानन्द जीतुमने ! महाराजा शिव को देखा होगा जो कैलाश पर्वत पर तपस्या किया करते थे, कैसे विलक्षण थे वह।

मुनिवरोंकौन से राजा का नाम शिव है और कैलाश पति क्यों कहते हैं !?

अरे, कैलाश कहते हैं, प्रजा को और पति कहते हैं प्रजा के स्वामी को, जिस प्रकार कैलाश पर्वत बहुत ऊँचा होता है, इसी प्रकार जिस राजा के राष्ट्र में इतने ऊँचे विचारों वाली प्रजा होती है, उस प्रजा को कैलाश कहते हैं, और उसके पति को हमारे यहाँ शिव कहते है।

शिव की व्याख्या

शिव नाम परमात्मा का भी है और शिव नाम इस आत्मा का भी है, आज हमें पुनः पुनः विचारना है और महाराजा शिव की शरण में चले जाना है, जो संसार का रचयिता और स्वामी है, जो लिंगमय संसार को धारण कर रहा है, आज हम उस लिंगमय ज्योति वाले शिव की याचना करते चले जाएं, जिसने आज महत् देकर इस संसार को विलक्षण बनाया है।

मुनिवरोंशिव नाम उस द्रव्यपति का भी है !, जो अपने द्रव्य को यथाशक्ति संसार के शुभ कार्यों में लगाता है, राष्ट्र के कार्यों में लगाता है, रक्षा के कार्यों में लगाता है और धर्म कार्यों में लगाता है। उस द्रव्य को भी लिंगमय ज्योति कहा जाता है।

शिवलिंग की कथा का रहस्य

मुझे मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक लोक कथा वर्णन कराई और इन्होंने ऐसा कहा !, कि जिस समय महाराजा शिव नग्न होकर ऋषि पत्नी के द्वारा पहुँचे, तो ऋषियों ने श्राप दिया कि तेरा लिंग पृथ्वी में स्थापित हो जाए, यह पृथ्वी में स्थापित हो गया और अपनी क्रीड़ा करने लगा, तीनों लोकों में त्राहिमाम् त्राहिमाम् मच गया, देवताओं ने याचना की, तो देवताओं ने कहा कि तुम पार्वती की याचना करो, वह अपनी 'भगः लिंगो धारणों अचेत' करके इसको शान्त कर देगी।

मुनिवरोंइस वाक्य पर ज !ब दार्शनिक रूप लिया जाता है, तो मेरा हृदय गद्गद हो जाता है। शिव नाम परमात्मा का है और पार्वती नाम प्रकृति का है, प्राण नाम लिंग का है। जब संसार में यह प्राण बिना प्रकृति के आता है, तो यह त्राहिमाम त्राहिमाम कर देता है, जैसे मनुष्य के शरीर में जब अपान और प्राण दोनों की एक गति हो जाती है, तो मानव मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, त्राहिमाम त्राहिमाम हो जाती है इसी

प्रकार जब प्राण रूपी लिंग इस संसार में बिना प्रकृति के आता है तो त्राहिमाम त्राहिमाम मच जाता है, देवता उस समय याचना किया करते हैं, कि हे माता पार्वती ! तू आ, उस समय यह प्रकृति माता पार्वती आती है, भग नाम ही इस प्रकृति का है, वह लिंग रूपी प्राण को अपने में धारण कर शान्त किया करती है।

मुनिवरोंजैसे आयुर्वेद के महान आचार्य जब प्राण और अपान दो !नों की संधि हो जाती है तो कोई औषधि व सोमलता देकर प्राणों को पृथक करता है, और उसको यथार्थ गति पर लाता है इसी प्रकार प्राण को प्रकृति धारण करती है तो सृष्टि प्रारम्भ हो जाती है, इस प्रकार जो सृष्टि को प्रारम्भ करता है, उसका नाम शिव है। हे परमात्मन् शिवतू म !ाता पार्वती सहित आकर इस संसार का कल्याण कर।

मुनिवरोंत्रेताकाल में माता पार्वती उसका नाम भी था !, जो राजा हिमाचल की कन्या थी, मुझे उसको देखने का सौ भाग्य मिला आज इस सम्बन्ध में अधिक उच्चारण करने का समय आज्ञा नहीं दे रहा है और आज का वाक् भी कुछ ओर है।

मुनिवरोंशिव नाम इस आत्मा का भी है !, जब मनुष्य शिव संकल्प धारण करता है और शिव का पुजारी बनता है, तो उस समय यह आत्मा अपने प्रभु शिव को पाकर, शिव कहलाता है। जिस प्रकार राजा अपनी प्रजा को ऊँचा बनाने से शिव कहलाता है, ऐसे ही यह आत्मा उस प्रभु की गोद में जाने से शिव कहलाता है। मैंने इससे पूर्व कहा है कि एक शिव होता है और द्वितीय महा शिव होता है, यह आत्मा महा शिव नहीं होता, केवल शिव कहलाता है।

तो मुनिवरोंयह है आज शिव की व्याख्याएं !, मुझे शिव को अधिक व्याख्या उच्चारण नहीं करनी है, आज हमें केवल यह विचारना है, कि हमारे वेदों में वह अनुपम विद्या, वह दार्शनिक विचार हैं, जिनको धारण करता करता मानव गद्गद हो जाता है, परन्तु हमारी बुद्धि की सूक्ष्मता है, हम बुद्धि को संकुचित्त बना लेते हैं, बुद्धि से इस वेदवाणी का विस्तार नहीं लेते, वेद में शिव के नाना मन्त्र आते हैं।

आर्य की परिभाषा

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे वर्णन कराया कि आधुनिक काल में धर्म के सम्बन्ध ! में बहुत विवाद हैं, मुझे कुछ ऐसा वर्णन मिला है, श्रेष्ठ पुरुषों को हमारे यहाँ आर्यता प्रदान की जाती है तो श्रेष्ठ पुत्र कहलाता है, सच्चा सनातन कहलाता है। अहा ! दुराचारी को सनातन नहीं कहते दुराचारी को श्रेष्ठ आर्य पुरुष नहीं कहते, परन्तु उस परम्परा वाले को, वैदिक विचार वाले को, वैदिक ज्ञान विज्ञान वाले को हमारे यहाँ आर्य की उपाधि प्रदान की जाती है, आज हमें सच्चा सनातन बनना है। अरे, सच्चे सनातन के धारण करने वाले वेद के महापण्डित! तुझे धन्य है। यदि तू आज दार्शनिक बनता है और तेरे विचार संसार में ओत प्रोत होते हैं, राष्ट्र तक पहुँचते हैं, यदि राजा तक पहुँचते हैं तो वह राजा भी धन्य है।

माता का कर्तव्य

मुनिवरोंवाक्य चल रहा था !, मेरी प्यारी माताओं के सम्बन्ध में। हे मेरी प्यारी माता! तू संसार में एक वीर बालक को उत्पन्न कर, तू संसार में क्रीड़ा करने वाले कीड़े को न उत्पन्न कर, आज तू केवल भगवान् राम जैसा एक वीर उत्पन्न कर।

आज भगवान राम के समय को लगभग 8, 50, वर्ष हो गए हैं 662, परन्तु आज भी हम उनका नाम उच्चारण करते चले जा रहे हैं क्योंकि वह एक माता का पुत्र है।

भगवान राम जैसों को नहीं, मातातू महर्षि अत्रि जैसों को उत्पन्न कर !, महर्षि अत्रि को लगभग करोड़ों वर्ष हो चुके हैं, परन्तु उनका नाम अब तक उच्चारण किया जा रहा है। महर्षि वशिष्ठ जैसों को उत्पन्न कर। यह कैसे उत्पन्न होते हैं, यह वेद में विद्या है, यदि मेरी प्यारी मातातू ऐसे पुत्र को उत्पन्न करने वाली बन जाए !, तो इस संसार का कल्याण हो जाए और यह संसार विलक्षण बन जाए।

इच्छित सन्तान

मुनिवरोंमैंने पूर्व काल में नक्षत्रों का वर् !णन किया, मेरी प्यारी माता जब परमात्मा के नियम के अनुकूल ऋतु काल स्पष्ट हो जाए, उस समय तू यज्ञवती हो, उस समय

जब तेरी सोलहवीं अनरूत् रात्रि आए, तू अपने पति के द्वारा ऋतुगाम बनकर श्रेष्ठ बालक को उत्पन्न कर, परन्तु तेरे द्वारा वेद की अनुपम विद्या होनी चाहिए।

जिस समय सोलहवीं रात्रि हो जेठा नक्षत्र हो, और यदि उस काल में तेरे बालक का गर्भ स्थापना हो गया, तो निश्चित है कि वह जो बालक होगा, वह संसार का वीर बालक कहलाएगा । आज इस विद्या को जान लेने की आवश्यकता है।

यदि ग्यारहवीं रात्रि अथवा बारहवीं रात्रि हो और उस समय पूखा नक्षत्र हो, तो निश्चित है कि उस माता के गर्भस्थल से दैत्य बालक उत्पन्न होगा।

मुनिवरोंआज हमें इन नक्षत्रों का ज्ञान होना चाहिए। मेरी प्यारी माताओं को इस ! विद्या को धारण करने की आवश्यकता है, यह सब विद्या वेदों में प्राप्त होती है, आज मुझे इन नक्षत्रों की गणना कराने की व इनके पूर्ण विज्ञान को वर्णन करने का समय नहीं, यदि समय मिलता रहेगा, तो वर्णन करता रहूँगा।

विवाह का उद्देश्य

मुनिवरोंपति और पत्नी का संसार में संस्कार होने का क्या उद्देश्य है !? वह उद्देश्य यह है, कि अतिथि सेवा करो, द्रव्य और सम्पत्ति का सदुपयोग करो, वेद की विद्या के आधार से पर्जन्य नाम के ब्रह्मचारी बन करके सन्तान उत्पन्न करना, तुम्हारा मुख्य उद्देश्य होता है।

मुनिवरोंमेरे पूज्य गुरुदेव से जब मैंने प्रश्न किया !, तो कहा कि मेरी प्यारी माताओं को नक्षत्रों का ज्ञान होना चाहिए और जब गर्भ स्थापित हो जाए, उस समय माता यजन और वेद पाठ करने वाली बनें। ब्रह्मचर्य धारण करके अपने मन को नियन्त्रण में करे, जिस प्रकार के मन में संकल्प व विचार धाराएं होंगी, उनके अनुकूल ही पुत्र उत्पन्न होगा, नाना तुच्छ भावनाओं को त्याग करके, माता गायत्री की गोद में पहुँच कर, गर्भ स्थल में रहने वाली सन्तान, चाहे कन्या हो या पुत्र हो, वह गायत्री बालक तेरे गर्भ से अवश्य उत्पन्न होगा।

गायत्री

गायत्री नाम है गान गाने का। जो गान प्रभु के निकट ले जाने वाला हो, उसको गायत्री कहते हैं, जैसे मैं अभी अभी पयर्यण समय में जटा पाठ कर रहा था। जटापाठ, घनपाठ, माला पाठ, मधु पाठ, विसर्ग पाठ और नाना प्रकार के पाठ हैं, ज्यों ज्यों मुझे समय मिलता रहेगा, त्यों त्यों मैं सबको उच्चारण करके तुमको वर्णन करूंगा। मुझे समय की बहुत सूक्ष्मता रहती है।

गायत्री उसको कहते हैं, जो संसार का कल्याण करती है, जिसमें संसार समाहित है, उस गायत्री का नाम माता है, जिस गायत्री में तीन प्रकार की व्याहृतियाँ हों, उसका नाम गायत्री है।

मेरी प्यारी माताइसी प्रकार वेदों ने तुझे माता कहा है !, तेरे जीवन में भी तीन व्याहृतियाँ हैं, सबसे ऊँची व्याहृति यह है, कि तू बालक का पालन पोषण करती है, द्वितीय व्याहृति यह है, कि तू अपने बालक को राष्ट्र का और संसार का विचित्र बालक बनाती है और तृतीय व्याहृति यह है कि तेरे में संसार के कल्याण की भावनाएं होती हैं, अपने पुत्र को ही ऊँचा बनाने की नहीं, परन्तु संसार के पुत्रों को ऊँचा बनाने की जब तेरे में भावनाएं होती हैं, तो मातातेरा मानवत्व ऊँचा कहलाता ! है, इसलिए हे मेरी प्यारी माता वेदों ने तुझे गायत्री कहा है। !

माता का आहार

हे मेरी माताजब तेरे गर्भ स्थल में बालक हो और यदि तू उस समय किसी जीव ! का भक्षण करती है, तो तू आज अपने उस गर्भ के बालक की आत्महत्या करने वाली है, यदि आज तुझे वेद को लाना है, तो कोई अशुद्ध आहार न कर, किसी जीव की भक्षण न कर, उन पदार्थों को पान न कर, जो रसना को प्रिय लगे। यह गर्भस्थल में रहने वाले बालक के लिए घातक हैं।

हे मातातुझे आज बहुत कुछ विचारना है !, तुझे अपने बालक को वास्तव में कमल उत्पन्न करना है। जैसा विष्णु की नाभि से ब्रह्मा का जन्म होता है। इसी प्रकार हे मातातेरे गर्भ रूपी कमल से यहाँ ऋषियों का जन्म होता है परन्तु उन माताओं से !

जो इस वैदिक विज्ञान को जानती हैं और मनोमय विज्ञान को जाना करती हैं और इन तीन व्याहृतियों पर विचार किया करती हैं। जब माता श्रेष्ठ होती है, तो पुत्र भी श्रेष्ठ होते हैं, ऋषिता भी आती है, पवित्रता भी आती है और मानवता भी आती है।
मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे आधुनिक संसार का वर्णन कराया और कहा कि आज ! राजा और प्रजा सब ही चिन्तित है, एक दूसरे को नष्ट करने की भावनाएं हैं राष्ट्र में भ्रष्टाचार का कोई अन्त नहीं, परन्तु मुझे इसके ऊपर कोई व्याख्या नहीं करनी, केवल यह कि यदि भ्रष्टाचार को समाप्त करना है, तो मानव को और मेरी प्यारी माताओं को, मेरे प्यारे भद्र मण्डल !को और ऋषि मण्डल को अपने स्वार्थ को त्याग करके निस्वार्थी बन जाना है, धर्म और अपनी मानवता के लिए अपने जीवन को न्यौछावर कर देना है।

यज्ञमय जीवन

आज जीवन की बलि यह नहीं कि अपने प्राणों को शान्त कर दो, आज तुम्हारे द्वारा जितने अवगुण हैं, इन सबको देव यज्ञ करके, उसमें आहुति दे दो, जिस प्रकार योगीराज अपने नाना प्रकार के विचारों की आहुति दे देते हैं, इसी प्रकार आज हमें विचारों की आहुति देनी है, जैसे अग्नि ईंधन को भस्म कर देती है इसी प्रकार आज हमें अपने विचारों को शुद्ध कामनाओं के द्वारा और वेद रूपी ज्ञानाग्नि में अपने अशुद्ध विचारों की शुद्ध विचारों का संकल्प धारण करते हुए उनकी आहुति दे देनी है, जब आहुति चली जाएगी, तो अग्नि प्रचण्ड हो जाएगी, जिसको कोई न छू सकेगा संसार में।
मुझे एक समय महर्षि लोमश ने वर्णन कराया, कि मैंने अपनी माता की बड़ी उच्च सेवाएं कीं और मेरी माता ने मुझे एक आदेश दिया, कि बेटातुम्हारी इतनी दीर्घ ! आयु होनी चाहिए, कि जितने मेरे शरीर पर यह केश हैं, परन्तु जब हम वेदों में और शास्त्रों में जाते हैं, तो ध्यान आता है, कि यहाँ तो इतनी आयु ही नहीं हैं, परन्तु मुनिवरोंमाता ने यह इसलिए कहा था !, कि बेटातेरा नाम इतने वर्षों तक अमर !

रहे, जितने मेरे शरीर पर यह केश हैं, यदि मेरे गर्भाशय को ऊँचा और पवित्र बनाना है, तो हे पुत्र तू यज्ञ पर चल। !

प्रभु से महान आत्माओं के लिए याचना

मेरे प्यारेमहानन्द जी जब आधुनिक काल की चर्चा करते हैं !, तो मैं परमपिता परमात्मा से कहा करता हूँ, कि हे परमात्मन् !यदि अपने वेद संसार के कल्याण के लिए रचा है, तो प्रभुइस आधुनिक काल में एक भगवान कृष्ण जैसा !, भगवान राम जैसा उत्पन्न कर, जिससे तेरे वेद की रक्षा हो, तेरे ज्ञान विज्ञान की रक्षा हो, प्रभु! उन आत्माओं को संसार में प्रेरित कर, जो दैत्यों को नष्ट कर देवताओं की रक्षा करने वाले हों, हे परमात्मन्मेरी उन माताओं को उत्पन्न कर !, जो कारागार में रह कर प्रभु से याचना करने वाली, कौन? मुनिवरो देखो, जिसको हमारे यहाँ माता यशोदा भी कहते हैं और माता देवकी भी, जो महान् कंस के अत्याचारों से कारागार में है और माता यशोदा बालक का पालन कर रही है, आज उन महान आत्माओं की आवश्यकता है, जो दैत्यों को नष्ट करने वाली हों।

प्रभु !हम यह उच्चारण नहीं कर रहे, कि आप मनुष्य बन कर आइये, परन्तु उन आत्माओं को प्रेरित कर, जो परम्परा से यहाँ चली आ रही हैं और संसार का कल्याण कर देती हैं, वह यहाँ तेरी वेदवाणी का प्रसार करके उसी स्थान को रमण कर जाती हैं जहाँ से वह आत्मा आती हैं, प्रभुहमारी याचना को स्वीकार क !रें तो वह आत्मा अवश्य उत्पन्न कर। यदि ऐसा न हुआ, तो तेरे बनाएं हुए विधान की, तेरे शिष्यों के बनाएं हुए विधान की, मनु महाराज के विधान की और आपकी वेदवाणी की रक्षा न हो सकेगी।

मेरे प्यारेआज हम जिज्ञासु बनकर प्रभु से विनोद कर रहे हैं !, प्रभु से संघर्ष कर रहे हैं, तो जो आत्मा संघर्ष करती है वहीं आत्मा भगवान कृष्ण का रूप धारण कर लेती है और संसार का कल्याण कर देती है, इसलिए आज हमें विचारना चाहिए और प्रभु से संग्राम करने वाला बनना चाहिए।

अरे, प्रकृति से संग्राम करने वाले क्यों बनते हो, परमात्मा से संग्राम कर, देखो, जिससे मानव का कल्याण होता है और देव स्थिति उत्पन्न होती है।

बेटावाक्य उच्चारण करते करते बहुत दूर चले गए हैं !, आज का आदेश यह है कि मेरी प्यारी माताओं को, मेरे प्यारेभद्र मण्डल को ऋषि बनाना है !, मेरी प्यारी माताओं को माता कौशल्या और माता देवकी बनना है, अपने विचारों में उन वस्तुओं को लाना है, जिससे हमारी इस आत्मा का कल्याण हो, सामाजिक कल्याण और राष्ट्र कल्याण हो, आज हमें यह भी विचारना है, कि जिस प्रकार ऋषिजन अपनी आत्मा के ज्ञान और विज्ञान के लिए अपने नाना कुविचारों की ज्ञानाग्नि में आहुति देते हैं और उन्हें भस्म कर देते हैं, इसी प्रकार आज हमें भी अपने कुविचारों को भस्म करना है।

महर्षि कागभुषुण्ड

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय कहा कि कागभुषुण् !ड पक्षी थे, मैं इस वाक्य को पूर्व भी कह चुका हूँ कि काग पक्षी भी है परन्तु कागभुषुण्ड नाम के ऋषि भी हुए हैं।

मुनिवरोंजो कागा की भांति वाक्य उच्चारण करने वाला वह कागा कहलाता है !, कागा चंचल वृत्ति से रहता है, इसी प्रकार वाक्य ही उच्चारण करने वाला और चंचल वृत्ति से जो ऋषि रहता है, वह कागा ऋषि कहलाता है। परन्तु जब वह अपने विचारों पर, अपनी वाणी पर नियन्त्रण करके संसार के ज्ञान विज्ञान को जान लेता है, उसको काग भुषुण्ड ऋषि कहते हैं।

तो मेरे आदि ऋषि मण्डलअब समय मुझे अधिक आज्ञा नहीं दे रहा है !, कुछ सूक्ष्म सा आदेश प्रकट करता हुआ अपने वाक्यों को समाप्त करने जा रहा हूँ, मुझे एक वाक्य स्मरण आ चुका है, कि आज का मनुष्य संसार कैसा है।

महात्मा विदुर और धृतराष्ट्र संवाद

मुनिवरोंद्वापरकाल में एक समय महात्मा विदुर महाराज घृतराष्ट्र के द्वार पहुँचे !, महाराजा घृतराष्ट्र ने उनका ऊँचा स्वागत किया और कहा कि हे महात्मा विदुरमुझे ! वर्णन कराइए कि आज का संसार कैसा है?

महात्मा विदुर बोले कि महाराजआज का संसार बड़ा विलक्षण है !, यह एक भयंकर वन में है जहाँ भयंकर अग्नि प्रज्ञवलित है और सिंह व हाथी अपनी ध्वनि कर रहे हैं, मनुष्य इन्हें विचारता है, तो वहाँ से भयभीत होकर तीव्र गति से अपने स्थान को आने लगता है और उस वृक्ष पर आ जाता है, जो जलाशय के तट पर है, यहाँ देखता क्या है कि जलाशय से एक सर्प उसके निकट आता चला जा रहा है, उस सर्प से भयभीत होने लगता है और देखता क्या है कि जिस वृक्ष पर विराजमान है, उस वृक्ष को छह मुखों वाला हाथी निगलता चला जा रहा है और इस हाथी का भी एक सफेद वर्ण वाला और द्वितीय काले वर्ण वाला चूहा उस हाथी को काटते चले जा रहे हैं, आगे ओर गम्भीरता से देखता है तो क्या? कि जिस वृक्ष पर वह विराजमान है, उस पर मधु छत्ता है और मधु गिर रहा है, और मनुष्य उसके आनन्द में मग्न है। महाराजयह है !, आज के संसार का मनुष्य।

महाराज घृतराष्ट्र ने कहा कि इसको मुझे अच्छी प्रकार वर्णन कराइए।

इसका स्पष्टीकरण करते हुए विदुर ने कहा कि जब मनुष्य माता के गर्भस्थल में रहता है तो वह भयंकर वन में है जहाँ प्राण रूपी हाथी अपनी ध्वनियाँ कर रहे हैं और प्राण रूपी अग्नि प्रज्ञवलित हो रही है, उस समय यह मनुष्य प्रभु से याचना करता हुआ, इस संसार सागर रूपी वृक्ष पर आ जाता है, इसके पश्चात् वह देखता है, कि सर्प रूपी मृत्यु उसके निकट चली आ रही है और गम्भीरता से देखता तो क्या? कि छह मुखों वाला हाथी, इस वृक्ष को निगलता चला जा रहा है।

वह छह मुखों वाला हाथी एक वर्ष है, जिसमें छह ऋतुएं, बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद् हेमन्त और शिशिर हैं, जो इस संसार रूपी वृक्ष को निगलता चला जा रहा है।

और गम्भीरता से देखता क्या है कि इस छह मुख वाले हाथी को श्वेत व काले वर्ण वाले दो चूहे काटते जा रहे हैं, यह श्वेत व काले वर्ण चूहे दिन और रात हैं।

इसके पश्चात् और भी गम्भीरता से देखता है, काम, क्रोध मद, लोभ और मोह रूपी मधु छत्ता है, जिस छत्ते के आनन्द में यह मनुष्य मृत्यु को भूल बैठा है।

तो मेरे ऋषि मण्डलआज मानव को ऊँचा बनना है !भद्र मण्डल !मेरे प्यारे !, इस मधु रूपी छत्ते को शान्त करना है, मृत्यु जो शनैः शनैः तुम्हारे निकट आ रही है, इससे बचने के लिए तुम्हें ज्ञान रूपी प्रकाश को पाना है।

बेटाअब यह आदेश समाप्त होने जा रहा है !, अब, वेदों का यह पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी, आज का हमारा आदेश आत्मिक उन्नति, सामाजिक उन्नति और राष्ट्र उन्नति को लेकर था, कल समय मिलेगा, तो शेष वार्त्ता कल होगी।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्कल का विषय क्या रहेगा !?

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जी कल कल का देखा जाएगा, जैसा समय आएगा, वैसा देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः देख लो भगवन्जैसी आपकी इच्छा !, अब ही वर्णन कर देते।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीकल समय मिलेगा !, तो हम पितर लोक की चर्चा करेंगे, पितर किसको कहते हैं और किन किन लोकों में रमण करते हैं। अब वेदों का पाठ होगा। । आर्य समाज कोटली बक्शीनगर(वेद पाठ), जम्मू।

१२ 22 04 1964 पुष्प 04 वर्ण व्यवस्था

जीते रहो, देखो,अभी अभी हमारा पयर्यण समय समाप्त हुआ !मुनिवरों !, आज हम पुनः की भांति तुम्हारे समक्ष उन्हीं कुछ वेद मन्त्रों का पाठ गा रहे थे, जिसमें मानव के लिए और राष्ट्र के कल्याण के लिए कुछ विवेचन किया जा रहा था।

मेरे प्यारेआओ !ऋषि मण्डल !, सबसे पूर्व उस परमपिता परमात्मा का गुण गाते चले जाएं। हे परमात्मन्तू संसार का कल्याण करने वाला है !, तूने इस संसार को रचा है, आज इस संसार में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या, प्रत्येक ऋषि मण्डल सम्पन्नता चाहता है, सुख व आनन्द चाहता है परन्तु वह आनन्द कहाँ मिलता है?

वह आनन्द हमें किसी हाट पर नहीं मिलता, वह हमें वैश्य के गृह में प्राप्त नहीं होता, क्षत्रियता में प्राप्त नहीं होता, अरे, वह सुख का आनन्द तो तुम्हारे त्याग और तपस्या से प्राप्त होता है।

प्रभुयदि आपने इस संसार को रचाया है !, तो यहाँ एक दूसरे को घातक क्यों है? एक दूसरे को नष्ट करने की भावनाएं क्यों हैं?
मुनिवरोंहमारे ऋषियों ने इसका उत्तर दिया !, कि परमात्मा ने सृष्टि को रचा, परन्तु मनुष्य अल्पज्ञ होने के नाते, प्रभु की प्रेरणा को नष्ट कर देता है और प्रकृति के बन्धन में और अपने स्वार्थ में आकर इसमें एक दूसरे को नष्ट करने की भावनाएं आ जाती है।
आज उन भावनाओं को नष्ट करने के लिए हमें त्यागी और तपस्वी बनना है, गुरु शिष्य के सम्बन्ध को विचारना है और उन वाक्यों को विचारना है, जिससे मानव में किसी से द्वेष न हो सके, हमें केवल सूक्ष्म सा विचारने की आवश्यकता है।
क्या हम द्रव्य का त्याग कर दें, भूमि का त्याग कर दें? नाना ऐश्वर्यों का त्याग कर दें? क्या यह भी त्याग है?
मुनिवरोंहम यह नहीं कहते !, कि तुम बिना नियम के गृहस्थ आश्रम को त्याग दो, बिना नियम के नाना द्रव्य और ऐश्वर्य को त्यागते चले जाओ, कदापि नहीं, वेदमन्त्र कहता चला जा रहा है, कि ऋषियों ने जो परम्परा बनाई है, उस परम्परा से तुम अपने जीवन को सुचरित्र बनाओ।

वर्ण व्यवस्था

मुनिवरोंइस संसार में !, मृत मण्डल में, सबसे पूर्व मनु जी महाराज ने राष्ट्र का निर्माण किया, उन्होंने राष्ट्र की उन्नति के नियम बनाएं, इससे पूर्व राष्ट्र का कोई विधान न था।
राष्ट्र को और मानवत्व को ऊँचा बनाने के लिए, उन्होंने एक नियम बनाया, कि मानव को चार भागों विभक्त कर दो, जिससे मानव कल्याण भी हो और सामाजिक उन्नति भी हो। उन्होंने ऋषियों की सहायता ली और वर्ण व्यवस्था और वर्ण आश्रम को स्थापित किया।

ऋषि महानन्द जी से मुझे ऐसा संकेत मिला है, कि जब तक यहाँ ऋषि परम्परा रही, इस मनु जी महाराज वाले राष्ट्र में, सिंह से विनोद करने वाले, भरत जैसे बालक हुए, जिसका जन्म माता शकुन्तला से हुआ।

उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि हमें उस त्याग और तपस्या को अपनाना है जिससे हम निर्भय हो जाएं और सिंह के बालक से विनोद कर सकें। वह भावनाएं और वह पवित्रता उसी काल में आ सकती है, जब हमारे द्वारा वर्ण व्यवस्था ऊँची होगी।

मेरे प्यारे आज हमें ऋषियों !ऋषि मण्डल !हे मेरे प्यारे !भद्र मण्डल !की राष्ट्र परम्परा को विचारना है। राष्ट्र निर्माण करने वाले ऋषिजनों ने राष्ट्र को चार भागों में विभक्त किया राज्यस्ति, सुगष्टना, वाणी अच्चना इन चार भागों में राष्ट्र का विभाजन कर दिया, यह चारों भाग ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, जो वेद पाठी, बुद्धिमान, सदाचारी, शिष्टाचारी और जिसके द्वारा शिक्षा तथा संस्कृति को देकर राष्ट्र के कल्याण और अपने आत्म कल्याण की ऊँची भावनाएं होती हैं, उसका नाम ब्राह्मण है।

क्षत्रिय वह कहलाता है, जो राष्ट्र की रक्षा किया करता है ब्रह्मचर्य से पौष्टिक और सुगन्धिदायक, सीमाओं की रक्षा और राष्ट्र कल्याण करने वाले क्षत्रिय होने चाहिए।

मुनिवरोंवैश्य वह होता है जो व्यापार के द्वारा !, कृषि के द्वारा द्रव्य तथा नाना धातुओं को एकत्रित करता है और उनको राष्ट्र के लिए, क्षत्रियों के लिए, शुद्रों के लिए, सबमें उसको बांट देना, अपना कर्त्तव्य मानता है।

मुनिवरोंदेखो !, मनु जी महाराज ने हमारे इस शरीर के भी चार भाग किए, सबसे प्रथम ब्राह्मण जो कंठ से ऊपर का भाग है। क्षत्रिय जो 'हृदयस्ता' हृदय में अंचता ज्योति है और उदर का वैश्य कहते हैं।

मुनिवरोंजैसे हमारे समक्ष कोई पदार्थ पान करने के लिए आया !, तो यह सबसे प्रथम ब्राह्मण के द्वारा गया, कि हे ब्राह्मण! यह अन्न है, भोजन है तू इसको स्वीकार कर अर्थात् अन्न को विचारने वाला बन। वह उसको स्वीकार करता है और लेकर क्षत्रिय के द्वारा, वैश्य के द्वारा अर्पण कर देता है। वैश्य उस स्थान का नाम है, जहाँ

उदर में जठराग्नि अन्न को पचाती है, उसका रस बनाती है और सामान्य प्राण उसको प्रत्येक नस नाड़ियों में पहुँचा देता है, ब्राह्मण को भी देता है, क्षत्रिय को क्षत्रिय का भाग देता है और शूद्र को शूद्र भाग देता है।

गुरु द्वारा वर्ण विभाजन

मुनिवरों हमारे यहाँ जब बालक !माता पिता के गृह को त्याग करके, गुरु के कुल में जाता है, तो हमारे ऋषियों ने कुछ ऐसा कहा है, कि वह शिष्य यज्ञोपवीत के पश्चात् आचार्यों के गर्भ में तीन दिवस और तीन रात्रि रहता है। अब प्रश्न उत्पन्न होता है, कि वह बालक आचार्य के गर्भ में कैसे रहता है?

मुनिवरोंआचार्य उस बालक को नियन्त्रण में करते हुए तीन दिवस और तीन रात्रि ! अपने आँगन में धारण करते हैं और उस पर निदान किया करते हैं, मन्थन किया करते हैं, कि यह जो बालक तेरे कुल में शिक्षा पाने आया है, यह कौन से कुल का बनना चाहता है, यह कौन से वर्ण का हो सकता है? उसके अन्तःकरण को जान करके, कि यदि वह आयुर्वेद में, वेद पाठ में और महान विचारों में पारंगत तो ब्राह्मण कुल में अर्पण कर देते, यदि वह रक्षा करने में, धनुर्वेद शिक्षा के लिए प्रचण्ड होता है, तो उसको क्षत्रिय कुल में अर्पित किया जाता है, यदि वह व्यापार कार्य में कुशल तो उसको वैश्य कुल में अपर्ण किया जाता है और जो न व्यापार कर सकता है, न रक्षा हो कर सकता है और न वेदपाठी बन सकता है, उसको उन तीन दिवस और तीन रात्रि में आचार्य जान लेते थे कि यह शूद्र बालक है।

मुनिवरोंइसके पश्चात् जीवन का निदान होता है। गुरु शिष्य का कितना ऊँचा सम्बन्ध ! है, जब गुरु के चरणों में ओत प्रोत होकर, शिक्षा को पाया जाता है, उस समय गुरु शिष्य की कितनी ऊँची महिमा है।

मुनिवरोंमुझे वर्णन मिला है !, कि जब महर्षि याज्ञवल्क्य अपने शिष्य मण्डल को शिक्षा देते थे, तो वह वमन किया करते थे और शिष्य उस वमन को पान कर लेते थे। आज हमें विचारना है, कि वमन क्या है?

आज जिस विद्या को हमने करोड़ों वर्ष पूर्व पान किया, उस विद्या का गुरु बनकर, शिष्य मण्डल में प्रसार कर रहे हैं। गुरु ने जो विद्या झूठी कर दी है, अर्थात् जो उसका वमन है, शिष्य मण्डल को उसको ग्रहण किया करते हैं।

गुरु और शिष्य

मुनिवरोंशिष्य हो तो भगवान राम जैसा और गुरु हो तो वशिष्ठ जैसा !, जिनमें संसार के कल्याण की भावनाएं रहती हों।

शिष्य हो तो अर्जुन जैसा और गुरु हो तो कृष्ण जैसा, जिसने अर्जुन के मन की भ्रान्तियों को दूर करने वाला गीत दिया, जिसको गीता कहा जाता है, जिससे आज हमें अपने कर्त्तव्य का उपदेश मिलता है।

मुनिवरोंहमें गुरु की शरण में जाना है और उस विद्या को पान करना है !, जिससे हम राष्ट्र का कल्याण कर सकें। गुरु वह हो, जिससे धनुर्विद्या को जान सकें, आत्म कल्याण के लिए ज्ञान विज्ञान को जान सकें।

जब बालक माता पिता के कुल से गुरु के चरणों में जाता है, तो उसका कर्त्तव्य है कि वह गुरु के चरणों को छूने वाला हो, उसको सुन्दर आशीर्वाद देता है कि पुत्रों ! आयुष्मान भवति आज तुम्हारी दीर्घ आयु हो, तुम हजारों वर्षों तक नेत्रों से और वाणी से कार्य करते चले जाओ।

मुनिवरोंयह सुन्दर आशीर्वाद गुरु ही नहीं देता !, माता, भी देती है। जब बालक गुरुकुल से चलता है और माता के चरणों में पहुँच कर चरणों को स्पर्श करता है, तो माता भी सुन्दर आशीर्वाद देती है, कि पुत्र! तुम आयुष्मान हो, तुम्हारी आयु दीर्घ हो। जब माता यह आशीर्वाद देती है, तो उस बालक के हृदय में एक ओज और तेज उत्पन्न होता है, उसके द्वारा सदाचार और शिष्टाचार की भावनाएं अंकित हो जाती हैं, और वह बालक विचित्र कहलाता हे।

ब्रह्मचर्य आश्रम

मुनिवरोंदेखो !, सबसे प्रथम हमारा ब्रह्मचर्य जीवन है, जिससे हम गुरु के द्वारा जाकर के ब्रह्म में विचरण करते हैं, गुरु के आधीन रहकर शिल्प विद्या, धनुविद्या और सब ही पान किया जाता है।

आज संसार में वही गुरु सफल होता है, जो शिष्य में सदाचार की भावनाएं अंकित करने वाला हो और शिष्य वह सफल होता है, जो गुरु के चरणों को छूने वाला और गुरु के वमन किए हुए आदेशों पर चलने वाला होता है। उस समाज का कल्याण होता है, जिस समाज में यह भावनाएं हर समय रहती हैं।

गृहस्थ आश्रम

ब्रह्मचर्य के पश्चात् गृहस्थ आश्रम आता है, जिसकी मैंने कल चर्चाएं की, आज मुझे अधिक इस सम्बन्ध में उच्चारण नहीं करना है, केवल यह कि गृहस्थी के द्वारा द्रव्य होना अनिवार्य है, परन्तु वह भी पवित्र गृहस्थी के द्वारा सदाचार की भावनाएं हों, जिस विद्या को हमने गुरु के चरणों में ओत प्रोत होकर पान किया है, उसका विस्तार करना, उसका अनुभव करना गृहस्थियों का कर्त्तव्य है।

गृहस्थ आश्रम एक स्वतन्त्र जीवन है, इसमें किसी का कोई प्रतिबन्ध नहीं, किसी की कोई आधीनता नहीं, स्वतन्त्र होकर संसार में कार्य करता है। यह आश्रम ऐसा है, जिसमें पति और पत्नी दोनों मिलकर आनन्द मनाते हैं और गृहस्थ को स्वर्ग बनाते हैं। अतिथियों की सेवा करना, ब्रह्म यज्ञ और ब्रह्म उपासना करना, गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट करने वालों का कर्त्तव्य है। जो विद्या हमने अपनी बुद्धि को संकुचित्त करके गुरु के द्वारा पान किया है, उस विद्या का विस्तार करना है। और उसको प्रयोग में लाना, यह सब कुछ हमारा कर्त्तव्य है।

वानप्रस्थ आश्रम

गृहस्थ आश्रम के पश्चात् वानप्रस्थ आश्रम आता है, वानप्रस्थ आश्रम में पति और पत्नी दोनों वानप्रस्थी होते हैं, वह संसार में विचरण करते हैं और गृहस्थ के अनुभव की गृहस्थियों में चर्चाएं किया करते हैं।

पितर

मुनिवरोंदेखो !, जब मानव गृहस्थ आश्रम को त्याग करके, वानप्रस्थी बन करके, संसार का कल्याण करने वाले बनते हैं, तो वह वानप्रस्थी हमारे यहाँ पितर कहलाते हैं, गृह त्याग करके जो विद्या उन्होंने ब्रह्मचर्य काल में ग्रहण की और गृहस्थ में जिसका अनुभव किया, उसका प्रसार करते है और ब्रह्माचारियों को आदेश देते हैं, कि तुम ऐसे बनो। आज वह शिष्य पुनः से बनते चले आ रहे हैं, इसलिए वह हमारे यहाँ पितर कहलाते हैं।

मुनिवरों जब यहाँ राजा तक ने वानप्रस्थी होकर यदि अपने राष्ट्र के अनुभव से !अपने जैसा एक वीर भी बना दिया, तो मानो उस राजा का राष्ट्र सफल हो गया, वह सफलता को प्राप्त हो गया।

मुझे ऋषि महानन्द जी ने निर्णय कराया, कि आधुनिक काल में तो राज्य के पद को जिसने ग्रहण कर लिया, वह उस पद को त्यागना नहीं चाहता। जब तुम्हारे द्वारा त्याग और तपस्या की भावनाएं ही नहीं, तो तुम राष्ट्र का कल्याण कैसे कर सकते हो।

आज राजा राज्य को त्याग करके देखो, वानप्रस्थी वन करके, देखो, राष्ट्र में सदाचार की कैसी सुगन्धि आती है और इससे समाज का कितना ऊँचा कल्याण होता है।

हे परमात्मन् वह समय किस काल में !आएगा, जब राजा रघु जैसे वानप्रस्थी बन करके, अज को शिक्षा देने वाले बनेंगे, हे प्रभुवह राष्ट्र किस काल में आ !एगा, जब महाराज दिलीप ने अपने राष्ट्र को त्याग करके और वानप्रस्थ को धारण कर अपने पौत्रों को शिक्षा देने वाले बनें, दशरथ जैसों को शिक्षा देने वाले बने। हे परमात्मन् !

वह समय किस काल में आएगा जब तुरन्धुत नाम के राजा वानप्रस्थी बन करके रघु को शिक्षा देने वाले बनेंगे।

रघुकुल प्रणाली

हे परमात्मन्वह समय किस काल में आ !एगा, जब यह प्राणाली ऊँची बनती चली जाएगी। हे प्रभुजैसे दशरथ के पिता अज !, अज के पिता रघु, रघु के पिता दिलीप, दिलीप के पिता भागीरथ और भागीरथ के कद्दीप राजा और कद्दीप के पिता महराज विरूत, विरूत के पिता सुखमंजस और राजा सुखमंजस के पिता महाराज सगर थे। इसी प्रकार यह प्रणाली चली आई।

दशरथ के पुत्र राम हुए, राम के लव कुश हुए, लव कुश के सुधित नाम के राजा हुए, सुधित के मनद्युत नाम के राजा हुए, मनद्युत के कुसधुन नाम के राजा हुए और यहाँ आकर यह प्रणाली समाप्त हो गई। आज इस पर हमें विचार करना चाहिए, यह रघु की प्रणाली क्यों चली आई, यह सब वानप्रस्थी बनते चले आए और इससे इनका राष्ट्र संसार में ओत प्रोत था, सब राजा इनके आधीन रहते थे। आज वानप्रस्थी बनकर देखना चाहिए, कि यह वानप्रस्थ हमें कहाँ ले जाता है।

सन्यासी आश्रम

वानप्रस्थ के पश्चात यह संन्यास आश्रम आता है। संन्यास आश्रम में देखो, अग्ने वस्त्र मिलते हैं। वानप्रस्थ में पीताम्बरी वस्त्र का और संन्यास में अग्ने वस्त्रों का विधान है।

हमारे ऋषियों ने संन्यास में अग्ने वस्त्रों को महत्वदायक कहा है। वह इसलिए कि संन्यास का वह अधिकारी है, जिस को किसी प्रकार का कोई विषय छू सके। अग्ने वस्त्रों का अभिप्राय है कि जैसे प्रज्ञवलित अग्नि को कोई नहीं छू सकता, इसी प्रकार जिस मानव का अग्ने जैसा शरीर है, अग्ने जैसा वस्त्र है, अग्ने जैसा उसका अन्तःकरण है ज्ञान रूपी अग्नि उसके अन्तः करण में प्रज्ञवलित है तो कोई भी विषय उसको नहीं छू सकता इसी प्रकार जिस मानव का अग्ने जैसा शरीर है, अग्ने जैसा वस्त्र है अग्ने जैसा अन्तःकरण है –ज्ञान रूपी अग्नि उसके अन्तःकरण में प्रज्वलित है तो कोई भी

विषय उसको नहीं छू सकता। वह संन्यास को धारण करता है केवल परमात्मा के चिन्तन के लिए और अन्त में मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।

संन्यास का यह अभिप्राय नहीं कि आज हम कुकर्म करते चले जाएं, दूसरों की त्रुटियाँ देखते चले जाएं। संन्यासी का कर्त्तव्य है, परमात्मा में लय हो जाना, अपनी नाना विचारधाराओं को परमात्मा में रमण करा देना, यह सब हमारे शास्त्रों का विधान है।

मुनिवरोंआज मैंने यह वर्ण आश्रम को चर्चा की !, आज यदि हमें अपने राष्ट्र का और संसार का कल्याण करना है, तो मैं बुद्धिमानों से अनुरोध करने जा रहा हूँ, कि हे ब्राह्मणोंतु !हे बुद्धिमानों !म ऋषियों वाले क्षेत्र में आकर संसार का कल्याण करो। यह सब बुद्धिमान ही किया करते हैं। जिस राजा के राष्ट्र में बुद्धिमानों की बुद्धि यथार्थ नहीं रहती, विद्या यथार्थ नहीं रहती, तो उस राजा का राष्ट्र अधूरा कहलाता है।

तो मुनिवरोमहानन्द जी कुछ प्रश्न !यह है आज की हमारी चर्चाएं। आज मेरे प्यारे ! करने जा रहे हैं।

पूज्य महानन्द जीः जी गुरु जीआप कल से पूर्व के वाक्य में !, जब विज्ञान की चर्चाएं कर रहे थे तो आपने नारान्तक और हनुमान के पुत्र मकरध्वज की चर्चाएं की, परन्तु आज जब हम अपने सूक्ष्म शरीर से अन्तरिक्ष में भ्रमण कर रहे थे तो सूक्ष्म रूप से हमने कुछ श्रवण किया कि बाल्मीकि साहित्य में इन दोनों का प्रकरण नहीं है।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जी आज हमारा यह वाक्य नहीं !कि ऋषि बाल्मीकि कहते हैं या नहीं कहते, परन्तु बेटामुझे त्रेता !काल को देखने का सौभागय मिला है, ऐसा हो सकता है कि वह प्रकरण किसी काल में, किसी स्थिति में समाप्त हो गया हो, तार्किक साहित्य में भी उसको समाप्त कर सकते हैं, परन्तु मुझे नारान्तक को देखने का सौभाग्य मिला है, वह माधुन नाम के राष्ट्र में राज करते थे।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जीआधुनिक काल का मुझे कुछ ज्ञान है !, आधुनिक काल में उस राष्ट्र को रूस कहते हैं। नारान्तक उसमें राज करता था, ऐसा आपका निर्णय है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटामैं यह नहीं जानता !, कि आधुनिक काल में उसको क्या कहते हैं, परन्तु मैंने जो पूर्व देखा और सुना वह निर्णय किया।

पातालपुरी में जो राजा रावण के पुत्र अहिरावण राज्य करते थे, मकरध्वज उनके यहाँ द्वारपाल रहते थे, यह हनुमान का पुत्र था, हनुमान अंजनी के पुत्र, पवन के पुत्र थे, उनका संस्कार महाराजा सुग्रीव की कन्या से हुआ था और उससे एक बालक उत्पन्न हुआ था, जिसको हम मकरध्वज कहते हैं, यह हमारे साहित्य में मिलता है।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जीपातालपुरी को आधुनिक काल में अमेरिका कहा जाता ! है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यकहा जाता होगा ....., बेटामैं यह नहीं कहता कि नहीं कहा ! जाता, अवश्य कहा जाता होगा, परन्तु मैंने जो श्रवण किया, वह तुम्हारे समक्ष है।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा कृपा कीजिए। !

पूज्यपाद गुरुदेवः मुनिवरोंहनुमान जी कितने ऊँचे ब्रह्मचारी !, केवल एक पुत्र उत्पन्न करके, जीवन भर ब्रह्मचारी रहे। जब राष्ट्र में ऐसे ब्रह्मचारी सेनापति हो जाते हैं, तो उस राष्ट्र का क्यों न कल्याण होगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवान् राम ने अहिरावण को नष्ट किया और उसके पश्चात् पातालपुरी के मकरध्वज स्वामी बने। आज हमें विचारना है कि हमारा कितना ऊँचा साहित्य है, यथार्थ वाक्य को जानने में बेटा किसी प्रकार की कोई आपत्ति नहीं !होनी चाहिए। रही यह वार्त्ता, कि यह संसार हमें क्या कहता है और क्यों कहता है, तो बेटायह तो मेरे पूज्य गुरुदेव का एक आदेश है !, वह पूर्ण होना है।

बेटातुम यह कहते हो !, कि ऋषि बाल्मीकि ने महाराज मकरध्वज और नारान्तक की कोई चर्चा नहीं की है। परन्तु चर्चा निश्चित है, यह द्वितीय वाक्य है कि स्वार्थ के आधीन होकर कोई प्रकरण किसी ने शान्त कर दिया हो। बेटामुझे प्रभु की अनुपम !

कृपा से नारान्तक और मकरध्वज दोनों के दर्शन करने का सौभागय मिला है इसलिए मैं गौरव सहित इन वाक्यों को प्रकट किया करता हूँ।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन् बाल्मीकि रामायण को मिथ्या मान लेंवे। !

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाबाल्मीकि को मिथ्या नहीं मान लेना चाहिए !, बाल्मीकि वाक्य यथार्थ है, परन्तु जहाँ तक इनके राष्ट्र का प्रकरण है, हो सकता है कोई खण्ड किसी काल में समाप्त हो गया हो, इसका उत्तर हमारे द्वारा यह ही है, आज भगवान राम को लगभग 8, 50, वर्ष हो गए हैं। 662‘

गौ के बछड़े को मारकर स्वागत करने का अभिप्राय

पूज्य महानन्द जीः ‘अच्छा गुरुदेवआज हमने कुछ ऐसा भी सुना है !, कि पूर्व ऋषिजन मांस भक्षण करते थे।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअरे ....., महा मूर्खानन्द !तुम भी करने लगो।

पूज्य महानन्द जीः हास्य ....‘तो भगवन् यह तो हमारे वाक्य का उत्तर नहीं। !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटाक्या सुना तुमने !?’

पूज्य महानन्द जीः भगवन्यह सुना है !, कि एक समय जब महर्षि वशिष्ठ जी ऋषि बाल्मीकि के आश्रम में पधारे, तो उन्होंने गो के बछड़े को मारकर उनका स्वागत किया। प्रभुइसका आपके द्वारा क्या निर्णय है !?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटायह संसार अर्थों का अनर्थ कर देता है !, और रूढ़िवादी बन जाता है। हमारे यहाँ ऋषि परम्परा बहुत ऊँची है, गो के बछड़े को मारकर स्वागत करने का अभिप्राय यह है, जब ऋषि का स्वागत करते हैं, तो मन रूपी बछड़े को मारकर स्वागत किया जाता है। जो मन बड़ा चंचल और अभिमानी है, उसको शान्त करके स्वागत किया करते हैं, इसका अभिप्राय यह नहीं, कि ऋषिजन मांस भक्षण किया करते थे।

गौ नाम इन्द्रियों का है, इन्द्रियों के संघर्ष से उत्पन्न होने वाला मन है, उसको बछड़ा कहते हैं। अभिमान को नष्ट करके, ऋषियों का स्वागत करना ही, इस वाक्य का उत्तर है।

अब बेटाहमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है !, कल यदि समय मिलेगा, तो और सुन्दर चर्चा कर सकूंगा। महानन्द जी! तुमने सुना या नहीं?

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवनसुना। अच्छा !, तो क्या?

पूज्य महानन्द जीः 'भगवन् यह सुना कि गो के बछड़े को मारकर स्वागत। !

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यतो गो के बछड़े को मारकर ऋषि !अच्छा .... ने स्वागत किया, परन्तु मन को बछड़ा कहते हैं बेटा !

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवन् !'

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छातो इसी प्रकार मानते चले जाओ। अर्थों का अनर्थ नहीं कर ! देना चाहिए, जब संसार में अर्थों का अनर्थ हो जाता है, तो उस समय भ्रांतियाँ होती है, भ्रांतियों से अंधकार होता है, तो हम पराधीन रहते हैं, तो अज्ञान होता है। और अज्ञान होता है तो हम पराधीन रहते हैं, इसलिए बेटाहमें अर्थों को विचारना ! चाहिए।

मैं संसार के अपने ब्राह्मणों से अनुरोध करने जा रहा हूँ, कि हे बुद्धिमान ब्राह्मणों ! तुम्हारा कर्त्तव्य है कि तुम सदाचार को लाने के लिए, ऋषि परम्परा के लिए, जो वेद कहता है, शास्त्रकार कहते हैं उसको अपनाना है। मुझे समय मिलेगा तो चर्चा करता चला जाऊंगा। यह ज्ञान एक प्रकार का विशाल वन है, इसमें सब प्रकार की वाणी आती हैं, सब प्रकार का निदान है, समय मिलेगा तो मैं चर्चाएं कल कर सकूंगा, अब यह आदेश समाप्त होता चला जा रहा है, कल समय मिलेगा, तो मैं इसकी चर्चाएं पुनः से कर सकूंगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन्गुरुजी !? आज आपका आदेश सुन्दर और प्रिय लगा। '

पूज्यपाद गुरुदेव हास्यतुम्हें प्रिय लगना चाहिए !महानन्द जी ...., कल महानन्द जी हम पितर की व्याख्या करेंगे, आज पूर्ण रूप से नही की। कल हम यह भी व्याख्या करेंगे कि यह आत्मा शरीर को त्याग करके कौन कौन से लोकों में जाकर

पितर कहलाता है। अब वाक्य समाप्त हो गया है। आर्य समाज कोटली(वेद पाठ), बक्शी नगर, जम्मू

१३ 15 07 1964 पुष्प 06 विचारों पर आक्रमण

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्यया ! समय समाप्त हुआ। आज हम तुम्हारे समक्ष, पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। वेद मन्त्रों में कितनी मधुरता थी, जिससे मानव का हृदय पुलकित होता चला जा रहा था। उस महान देव का गुणगान गाते हुए हृदय में कांति और उज्ज्वलता प्रविष्ट होने लगती है। मुनिवरोंकल हम कुछ योग के सम्बन्ध में वर्णन करते जा रहे थे। आज भी हमारा ! कुछ योग के सम्बन्ध में प्रकरण है। परन्तु आज का विशेष वाक्य यह है, कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या संसार में वैज्ञानिक बनना चाहता है और कैसा वैज्ञानिक? आध्यात्मिक नहीं, भौतिकवाद में रमण करना चाहता है। जैसे मुझ महानन्द जी ने वर्णन कराया, कि आज प्रत्येक मेरी प्यारी माता और भद्र मण्डल यही चाहता है, कि मैं भौतिक विज्ञान की ऊँची से ऊँची उपाधि को प्राप्त करूं। परन्तु हम यह कदापि नहीं कहते, कि मनुष्य को भौतिक वैज्ञानिक नहीं बनना चाहिए और उच्च उपाधि को नहीं प्राप्त करना चाहिए। परन्तु इतना नहीं कि अपने मनुष्यत्व को समाप्त कर बैठो। आज यदि तुम्हारा मानवत्व समाप्त हो गया, तो हमारा यह विज्ञान यहीं रखा रह जाएगा। प्रकृति का विज्ञान है, प्रकृति में रमण कर जाएगा और तुम्हारा जीवन नष्ट होने के तुल्य हो जाएगा।

तो हे मेरे प्यारेमैं आज भौतिक विज्ञान की चर्चा करने नहीं आया। !ऋषि मण्डल ! महानन्द जी भी कुछ उच्चारण करने वाले हैं। मुझे तो केवल इतना !आज मेरे प्यारे ही उच्चारण करना है कि मनुष्य को वैज्ञानिक बनना चाहिए। हमारे यहाँ दो प्रकार की उपाधि मानी गई हैं, एक अक्षरों की और एक वह जहाँ अक्षरों का लेश नहीं। वह कौन सी उपाधि है? मम हृदयश्चति विज्ञानं भवते कामाः। जब मुनिवरोंयह आत्मा ! उस मनोहर प्रभु में संलग्न हो जाता है, और प्रत्येक इन्द्रिय का विषय शान्त हो जाता

है, केवल आत्मा मंगलाचरण में चली जाती है, तो मंगलमय उसका जीवन हो जाता है।

मुनिवरोंजैसा हम कल उच्चारण करते चले जा रहे थे !, आज भी संक्षेप में समाधान करने जा रहा हूँ कि वास्तव में वैज्ञानिक बनना चाहिए, उपाधि प्राप्त करनी चाहिए। परन्तु मेरे प्यारेवह उपाधि भी पान करनी चाहिए !ऋषि मण्डल !, जिन उपाधियों का पान करते हुए हमारे जन्म जन्मान्तरों के किलष्ट कर्म समाप्त हो जाएं, जिस उपाधि से हम नास्तिक न बन करके, सत्यवादी बन करके, अपने जीवन को इस संसार सागर से पार ले जाएं।

यह है मुनिवरोंआज का हमारा मुख्य आदेश। आज हम वर्णन करते चले जा रहे ! थे, जैसा वेद कहता चला जा रहा था। आज पुस्तकों के अक्षरों को जानकर बुद्धिमान बनना चाहते हो। अक्षर भी सुन्दर हैं उन्हें भी जानना चाहिए। वेद को जानना चाहिए। परन्तु उसमें जो विद्या है, उसे अपने में ओत प्रोत करा दो, उसे अपने में समाहित कर लो। जैसे मेघों से वृष्टि होती है, पृथ्वी में समाहित हो जाती है और नाना प्रकार की सोमलताएं और वनस्पतियां देती है। इसी प्रकार मेरी प्यारी माताओं को सबसे प्रथम अपने जीवन में उन अंकुरों को अंकित कर लेना चाहिए, जिससे उसके महान गर्भ में एक ऐसा वैज्ञानिक बालक उत्पन्न हो जाए जिसका नाम अमरावती पुरी में हो जाए। भगवान राम के समय को कितना समय हो गया, बेटावह मेरी भोली माता ! ही तो थी। भगवान कृष्ण की कल प्रशंसा कररहा था । वह भी मेरी भोली माता थी। महर्षि अगस्त, महर्षि याज्ञवल्क्य आदि ऋषियों को जिनका करोड़ो वर्षो से नामोच्चारण चला आ रहा है, उन्हें उत्पन्न करने वाली मेरी प्यारी भोली माताएं ही तो थीं। मेरी भोली माता तुझे उस विज्ञान को पान करना है।

आज मेरे प्यारेमहानन्द जी उच्चारण करेंगे। अब मैं अपने वाक्यों को समाप्त करने ! जा रहा हूँ। हमारा तो केवल इतना वाक्य था, कि हमें उस परमपिता परमात्मा की याचना करनी चाहिए और उस मनोहर विज्ञान को जानना चाहिए, जिससे हमारा हृदय पवित्र हो जाए, हमारी मनोवांछित कामनाएं परमात्मा के निकट पहुँचे। परमात्मा

हमारी उन कामनाओं का पान करते चले जाएंगे और उसी के अनुकूल हमें वही अमृत प्रदान करेंगे, जो हम चाहते हैं। जिसे हम अपने मानवत्व में धारण करना चाहते हैं। मेरे प्यारे !यह वाक्य अब समाप्त हो रहा है। अब मेरे प्यारे !ऋषि मण्डल ! महानन्द जी कुछ वाक्य उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः धन्यवाद !

ओं रथिमा चक्षणां भवते कामश्चताः वर्त्तचंति प्रघा वातसते सुप्रजा मधुश्चते कामाः वाचनः देवम्।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेवआज हम उस परमपिता परमात्मा की !मेरे भद्र मण्डल ! अनुपम कृपा से गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत हो रहे हैं। आज ही नहीं नित्य प्रति गुरुदेव के चरणों में उस विद्या का पान करते हैं, जिसे हम लाखों वर्ष पूर्व पान किया करते थे। सौभाग्य से आज भी प्राप्त होती चली जा रही है। हमारा जीवन कितना सौभाग्यशाली है, जो हम गुरुओं के चरणों में ओत प्रोत होकर के उस अनुपम विद्या को पान करते हैं, जिसे पान करके देवता बन जाते हैं। आज हम भी इस विद्या को इसीलिए पान किया करते हैं, कि हम भी किसी न किसी काल में देवता बन ही सकते हैं। बने तो नहीं, परन्तु हो सकता है इस अनुपम विद्या को पान करते करते, हम एक समय देवपुरी को प्राप्त हो ही जाएं, यह हमें एक विश्वास रहता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे बारम्बार समय प्रदान किया करते हैं, और कहा कहते हैं कि तुम भी अपनी इस अमृतमय वाणी से कुछ उच्चारण करते चले जाओ, परन्तु मैंने एक काल में अपने पूज्य गुरुदेव से कहा था कि मेरी वाणी से कुछ कटु अवश्य उच्चारण हो ही जाता है। उसका कारण यह है कि आधुनिक काल का जो संसार है, वह इस प्रकार का विचित्र है, कि जिसका कोई प्रमाण नहीं दिया जा सकता है। क्योंकि जैसा अभी अभी मेरे गुरुदेव वर्णन करते चले जा रहे थे, कि आज प्रत्येक मानव, प्रत्येक भद्र मण्डल, अपने उस विज्ञान को जानना चाहता है, जो हमें विनाश के मार्ग पर ले जाता है। आज किसी मनुष्य ने यह नहीं जाना, जब से यह कलयुग का प्रभात

आया, कि किसी काल में मुझे वह कार्य भी करना है, उस विज्ञान को जानना है जिससे चरित्र ऊँचा बने।

पुण्य भूमि भारत

आज मैं संसार में क्या देखता हूँ? आज संसार में उस महान विज्ञान की सूक्ष्मता है, जिससे चरित्र ऊँचा बनता है। आज मैं यह नहीं कहता न मेरे पूज्य गुरुदेव ही कहा करते हैं, कि भौतिक विज्ञान नहीं होना चाहिए। परन्तु जहाँ तुम विद्युत का विकास करते हो, अन्तरिक्ष में जाने वाले यन्त्रों का विकास करते हो, अपने मस्तिष्क को प्रकृति के तत्त्वों पर ले जाते हो, वहाँ यदि इस बुद्धि को चरित्र बनाने में लगा दो, संसार में ऊँचा बनाने में लगा दो, तो निश्चित है कि कुछ ही काल में यह संसार स्वर्ग के तुल्य होता चला जाएगा। परन्तु आधुनिक काल के संसार को तो यह भय रहता है, कि अमुक राष्ट्र ने भौतिक विज्ञान को जाना है और इतनी उन्नति की है, उन्होंने बड़े बड़े यन्त्रों का आविष्कार किया है। मैं संसार की चर्चा तो करने जा रहा हूँ। परन्तु मैं आज भारत भूमि की चर्चा विशेष रूप से कर रहा हूँ। यह वह भारत भूमि है, जहाँ ऋषि मुनि उस स्थिति में आते है। जहाँ उनके उदरपूर्ति का भी कोई साधन प्राप्त नहीं होता, परन्तु वह अपना विकास करते हैं। यह वह पवित्र भूमि है, जिस पवित्र भूमि में विराजमान हो करके, अपने जीवन को बनाया जाता है। जिस पवित्र भूमि में संसार को शिक्षा दी जाती है। यह पवित्र भूमि संसार का एक महान प्रतीक है। महान ऊँचा संस्कृति का प्रतीक है। परन्तु आधुनिक काल का संसार दूसरों को जानकर के मग्न हो रहा है, और अपने हृदय को इतना मलीन कर दिया है, कि अपनी मानवता और अपने ऋषि मुनियों की वार्त्ता को शान्त कर दिया। यहाँ क्या क्या नहीं हुआ।

रूढ़िवाद से विचार हानि

आज जिनको यह मान्यता देते हैं, वह इनके वेदों पर आक्रमण करते हैं, और क्या कहते हैं? कहते हैं कि वेद तो केवल ऋषियों का काव्य है, जैसा मेरे गुरुदेव ने कल कहा था। क्यों कहते हैं? इसलिए काव्य कहते हैं, क्योंकि भारतवासियों ने अपने उस

कर्त्तव्य को त्याग दिया है। यहाँ वेदों का गौरव था, वेदों की प्रभावशाली प्रजा थी, ऋषि मुनि थे, मेरी भोली माता थी और उसी वेद के अनुकूल अपने प्यारे पुत्र को अपने गर्भ में इस प्रकार का बना दिया करती थी, जैसे वेद का एक अमूल्य मन्त्र होता हैं, उस वेदमन्त्र में जो पवित्र भाव होते हैं, वह उस बालक के हृदय में माता की भावनाओं के अनुकूल प्रविष्ट हो जाते हैं।

आज मैं यहाँ एक और वाक्य उच्चारण करने आया हूँ, कि यहाँ सबसे प्रथम विचारों पर आक्रमण होता रहता है। आज यदि संसार को ऊँचा बनाना है, तो विचारों के आक्रमण को शान्त करते चले जाओ। क्या आक्रमण होता है? मैं पान करता रहता हूँ, वायुमण्डल में उन वाक्यों का श्रवण करता रहता हूँ, कि सबसे प्रथम संसार में गुरुडम चलता है। उसके पश्चात् विचारों का आक्रमण होता है। इन विचारों के आक्रमणों ने हमारे जीवन का और सर्वत्र संसार का विनाश कर दिया है। इन्हीं विचारों के आक्रमण ने यहाँ राजाओं को शान्त कर दिया है। गुरुदेवयहाँ विचारों का आक्रमण ! होता चला आया है। वेद की विद्या लुप्त होती चली गई है। यहाँ वह वेद का भौतिक विज्ञान जो ऋषि मुनियों ने अपनी वाणी से सींचा था, वह एक प्रकार से अब शान्त हो गया है। क्योंकि यहाँ विचारों पर आक्रमण हुआ, यवनों ने यहाँ आकर मनुष्यों के विचारों पर आक्रमण किया। क्यों हुआ? इसका कारण यह है, कि रूढ़िवाद से हुआ। रूढ़िवाद से विचारों पर आक्रमण हुआ और विचारों पर आक्रमण करके यहाँ जो सम्पन्न विद्या थी, उसे शान्त कर दिया।

मुनिवरोंआधुनिक काल का संसार तो अपने विचारों में इतना परिपक्व है कि जो भी ! यथार्थ वाक्य आता है, वह ढलक जाता है, उनमें वह समाहित नहीं होता। इसका क्या कारण है, इसका कारण है कि मानव के द्वारा इतना स्वार्थ है, इतना रूढ़िवाद है, कि रूढ़िवाद से विचारों पर आक्रमण शान्त नहीं कर सकते। आज एक दूसरे के विचारों पर आक्रमण किया जाता है, जैसे मुहम्मद ने यहाँ आ करके विचारों पर आक्रमण किया, बुद्ध ने विचारों पर आक्रमण किया, महावीर ने विचारों पर आक्रमण किया, जिससे यहाँ मत हो गए। राजाओं ने आकर विचारों पर आक्रमण किए। अकबर ने

यहाँ विचारों पर आक्रमण किया, जिससे वैदिक संस्कृति शान्त होती चली गई। यहाँ क्या नहीं हुआ। यहाँ वह पुस्तकालय जिसमें महाराजा अर्जुन और घटोत्कच्छ की वह पुस्तक, जिसमें सम्पन्न भौतिक ज्ञान और विज्ञान था, वह सब अग्नि के मुख में चला गया। आज उस साहित्य के समाप्त होने से क्या हुआ, कि हमारी इस भारत भूमि को छोड़कर अन्य दूसरे राष्ट्रों ने जिन्होंने विज्ञान में प्रगति की है, उन्होंने कहा है कि वेद ऋषियों का एक काव्य है।

आज तुम्हें सूक्ष्म सी वार्त्ता और प्रकट करा देवें, कि जब यहाँ महाराजा परीक्षित के राज्य में महाराजा जन्मेजय सर्व यज्ञ कराने के पश्चात् जिसको हम पूर्वकाल में जन्मस्ती कहा करते थे, और आधुनिक काल में उसकी जर्मनी कहा जाता है वहाँ जाकर जन्मेजय ने अपना एक सूक्ष्म सा राष्ट्र बनाया और वहाँ वेद अनुपम साहित्य को स्थापित करता चला गया और उस वेद की विद्या से, उस राष्ट्र में विज्ञान ने इतनी प्रगति की है। आज जो विज्ञान हम देखा करते हैं, विज्ञान तो वेदों में ही प्राप्त होता है। हमें संसार में कोई ऐसा पुस्तकालय प्राप्त नहीं होता, जहाँ वेद से पुरानी और ऊँची कोई विद्या प्राप्त हो जाए। इसमें ज्ञान विज्ञान की, सब प्रकार की विद्या सम्पन्न हैं।

एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने संसार के पुस्तकालयों का भ्रमण कराया, और मैंने निर्णय करते हुए गुरुदेव से कहा कि वास्तव में संसार का कोई पुस्तकालय ऐसा नहीं, जो वेद की तुलना कर सके। परन्तु आज वेद के जानने वाले न रहे। आज वेद के जानने वाले हैं, परन्तु सूक्ष्म हैं। जो जानते हैं, उनके विचारों पर संसार में आक्रमण किया जाता है और उनको अपनी जीविका पूर्ति के लिए रूढ़िवाद में आना अनिवार्य हो जाता है। आज इस पवित्र भूमि पर जहाँ भी पूज्यपाद गुरुदेव की और हमारी आकाशवाणी जा रही है यहाँ भी वेद के मन्त्रों पर नाना प्रकार की चर्चाएँ हैं। आर्य और सनातन का भी प्रतिबिम्ब और विचारों पर आक्रमण किया जाता है। यहाँ राम के चरित्र पर व्याख्या करने लगे, तो कहते हैं कि यह क्या है? सब पाखण्ड है। यह विचारों पर आक्रमण नहीं तो और क्या है? आज हम केवल रूढ़िवाद को लेकर

एक वाक्य को उच्चारण करते रहे, तो क्या इसी को हम धर्म कहेंगे? अरे, यहाँ विचारों पर आक्रमण करते चले जाओगे तो संसार का उत्थान किसी काल में न हो सकेगा। मेरे गुरुदेव जी अभी यहाँ वाक्य उच्चारण करके चले जाएंगे, ब्रह्मा भी आ जाएं, तो वह भी वाक्य उच्चारण करके चले जाएंगे परन्तु जब तक तुम्हारे विचारों पर आक्रमण होता रहेगा, तो तुम्हारा जीवन किसी काल में भी ऊँचा नहीं बन सकेगा।

सनातन और आर्यता की भिन्नता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो शान्ति ही शान्ति कहा करते हैं, और कहा करते हैं कि हमें तो अपने विचारों को प्रगट करना है। मैं भी अपने विचारों को प्रकट कर रहा हूँ। आज मैं कोई नवीन वाक्य उच्चारण नहीं कर रहा। आज मैं उन महान आत्माओं की प्रशंसा करने आया हूँ, जिन महान आत्माओं ने इस मनोहर विज्ञान को पुनः से अपनाया है। महात्मा शंकराचार्य ने इस महान वैदिक वेदी को पनपाया और कहा कि हमें परमात्मा का पुजारी बन जाना चाहिए, परन्तु इस स्वार्थी संसार ने उनके विचारों पर आक्रमण किया, उनके व्यक्तित्व पर आक्रमण करके, उसे सदा के लिए पृथ्वी पर विश्राम करा दिया। इस संसार ने क्या नहीं किया।

आज किस वेदी पर हमारे वाक्य जा रहे हैं, वह महान पवित्र वेदी है, जिसे महान ऋषि आत्मा ने सींचा है। उस वेदी को स्थिर रखने के लिए सत्यता को अपनाना होगा। यदि तुम सत्यता को नहीं अपनाते तो ऋषि के विचारों पर आक्रमण करते चले जा रहे हो। मूलशंकर ने, महर्षि दयानन्द ने इस पवित्र वेदी को अपनाया, कि जिससे यह संसार ऊँचा बन जाए, परन्तु आज उनके अनुयायी हैं, उनमें क्या है? एक रूढ़िवाद इस प्रकार का छाया हुआ है, कि उनके समक्ष भगवान राम और भगवान कृष्ण का नाम उच्चारण कर दें, तो हरे, हरे, क्या कर दिया? यहाँ इस प्रकार विचारों को नष्ट नहीं करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति अपने विचारों में स्वतन्त्र है, कर्म करने में स्वतन्त्र है, आज तुम उनके विचारों को न कुचलो। तुम्हें यदि आज विचारों को ही कुचलना है, तो अपने कुविचारों को कुचलो, जिससे तुम्हारा जीवन पवित्र बन जाएगा। ऋषियों की वेदी को विचारने लगोगे।

आज मैं यह अवश्य कहने आया हूँ, कि जहाँ तक सनातन और आर्यता की भिन्न भेदता मानी जाती है, वह सूक्ष्म सी भिन्नता केवल विचारों की है। विचारों पर आक्रमण करने से यह वाक्य हमारे आँगन में नहीं आता। दोनों अपनी रूढ़िवादिता को नहीं त्यागना चाहते। केवल विचारों का रूढ़िवाद है। एक कहता है कि हम आर्यसमाजी और एक गौरव से कहता है कि हम सनातनी हैं। परन्तु वह न तो एक प्रकार से आर्य है, और न सनातन हैं, जो हृदय में गौरव के साथ कहा करते हैं, क्योंकि यदि दोनों में परम्परा की भावनाएं हैं तो वे आर्य भी हैं और सनातन भी हैं। अब केवल मनमानी वार्त्ताएं प्रारम्भ हो जाती हैं, मनमानी यज्ञ की परिपाटी प्रारम्भ हो जाती है, ऋषित्व के सब वाक्य समाप्त हो जाते हैं, तो यहाँ न आर्य ही रहा, न सनातन ही रहा। मैं यह नहीं कहता कि नहीं है, परन्तु हैं। इनमें सत्यवादी और विचारशील हैं, परन्तु उनके विचारों पर आक्रमण किया जाता है।

हम संसार के इतिहास को देखा करते हैं, तो प्रतीत होता है, कि विज्ञान की अनुपम विद्या इस भारत भूमि में पनपी थी, जहाँ भगवान कृष्ण पनपे, जहाँ भगवान राम पनपे, जहाँ ऋषि मुनि पनपे। यह वह पवित्र भूमि है। आज इस पर पनपना है, तो तुम्हें आर्यता और सनातनता दोनों को विचारशील बनना है और कैसे बनना है? सनातन को तो अपनी महान त्रुटियों को त्यागना है। जो वे जड़ पूजा में संलग्न होते जा रहे हैं और जड़ पूजा पर इतना अटूट विश्वास है कि यदि कोई उसके विपरीत कहता है तो वह उसे नष्ट करने के लिए उद्यत हैं, इसे त्यागना चाहिए। आर्यों को अपने हृदय में श्रद्धा की वेदी को जागृत कर देना है। यदि दोनों में श्रद्धा और त्रुटियों का त्यागना हो जाएगा तो वेद की वेदी पवित्र बन सकती है। अरे, श्रद्धालु हो करके जड़पूजक बन गएं तो देखो,यहाँ वेद का पग न रहेगा। यदि इ !स संसार और वेद की वेदी को ऊँचा बनाना है, ऋषित्व को ऊँचा बनाना है तो यह निश्चित है कि तुम्हें श्रद्धा की वेदी को अपनाना पड़ेगा। आज दयानन्द का कोई प्रमाण नहीं कि वह कितने श्रद्धालु थे। उनके जीवन में श्रद्धा की कितनी ज्योति जागृत थी। वे वेद के इतने श्रद्धालु थे, इतने अनुयायी थे कि समस्त जीवन भर ब्रह्मचारी रह करके उस ओ३म्

की पताका को अपनाया जिस ओ३म् की पताका से आज वेद का गौरव हमारे समक्ष है। आज वेद का विज्ञान हमारे समक्ष है। आज हम गौरव के साथ उच्चारण कर सकते हैं। कि वास्तव में हमारे द्वारा एक शाकल्य है तो केवल एक वेद है। कोई न कोई ऋषि आत्मा इस संसार में प्रकट होती है, जिस ऋषि आत्मा के आधार से यह संसार ऊँचा बनता है और वैदिक साहित्य का प्रकाश होता है। जिससे श्रद्धा की देवी जागृत हो जाती है और यह संसार ऊँचा बन जाता है।

हे मेरे भद्र मण्डलआज मैं यह क्या उच्चारण करन !े आया कि विचारों पर आक्रमण ने होने दो। जब विचारों पर आक्रमण होगा, उसी काल में जीवन की वेला समाप्त हो जाएगी। आज हम यवनों की ही कहतेहैं। परन्तु अरे, सबसे प्रथम हमने स्वयं ही अपने विचारों पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। मेरी प्यारी माता के विचारों को नष्ट करने लगे। माताएं महान अपने पतियों के वाक्यों को शान्त करने लगीं। राजा अपनी प्रजा की भावनाओं पर आक्रमण करने वाला बन गया और प्रजा राजा के वाक्यों पर आक्रमण करने लगी, तो क्या हुआ? यवनों ने यहाँ आक्रमण किया। न राजा ही रहे न प्रजा ही रही। दोनों पराधीन बनकर यहाँ वेद पर आक्रमण किया गया। वेद का साहित्य लुप्त होता चला गया।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मेरे विचारों पर आक्रमण किया करते हैं, कि तुम कटु कहा करते हो। परन्तु मैं क्या करूं? मुखारबिन्द से कटु शब्द उच्चारण होते हैं, क्योंकि हमने वेद की पवित्र वेदी को सींचा है और यदि इस वेदी में कोई सूक्ष्मता होती है, नास्तिकवाद होता है, तो विचारों पर अवश्य प्रभाव आता है और उसके विषय में कटु उच्चारण करना स्वाभाविक हो जाता है। जैसे मेरी भोली माता अपने पुत्र को बनाती है। गर्भस्थल में, दुःख सुख में हर प्रकार से पालना करती है। गर्भस्थल से जब पृथक् हो जाता है, तो उस समय भी उसे बनाने की इच्छा रहती है। प्रबल होने के पश्चात् माता का पुत्र यदि नाशवान मार्ग पर चलता है, तो माता के हृदय से जानो, कि उसे कितना दुःख होता है। उस समय में वह अपने पुत्र के विचारों पर आक्रमण करती है, और वह कटुता को लेकर कहा करती है, कि पुत्र यदि तू मेरे गर्भ से जन्म न लेता,

तो मेरा जीवन सुखी रहता। इसी प्रकार मेरे वाक्य भी कटु रहते हैं, क्योंकि हमने उस वेदी को सींचा है, जिस वेदी पर आक्रमण होता चला जा रहा है। श्रद्धा की वेदी को इस प्रकार कुचला जा रहा है, जिसका कोई प्रमाण नहीं। इसलिए यहाँ कटुता होती है। आज ऋषि दयानन्द की आत्मा जहाँ भी है और यदि वह इस संसार को देखती है, तो उसे भी दुःख होता है, कि जिस वेदी को तूने सींचा था आज उस वेदी के अनुयायी क्या करते चले जा रहे हैं। जब सूक्ष्म सूक्ष्म पदों पर तुम्हारा विवाद है, तो तुम्हारी आर्यता क्या है? क्या तुम्हारे विचार ऊँचे बन सकते हैं? क्या संसार में तुम दूसरों को ऊँचा बना सकते हो?

आज यह संसार ऐसा बन चुका है, जहाँ विचारों को नष्ट किया जाता है। कभी यह संसार वह था जब यहाँ विचारों पर आक्रमण नहीं होता था, परन्तु विचारों का सत्कार किया जाता था, उन्हें ग्रहण किया जाता था और उन विचारों को ग्रहण करके यह भारत स्वर्ग कहलाता था। भारत ही नहीं संसार स्वर्ग कहलाता था। आज यहाँ प्रत्येक मानव दूसरे राष्ट्र की प्रशंसा करता है, परन्तु उसके निकट जाकर के देखों उनमें कितनी त्रुटियाँ हैं। आज हमारी इस भारत भूमि में ऐसे ऐसे लाल प्राप्त हो जाएंगे, जिनकी संसार में कोई उपमा नहीं दे सकता। दूसरे राष्ट्रों में जहाँ भी जाओगे, वहाँ लाल नहीं मिलेंगे, वहाँ स्वार्थी प्राणी ही मिलेंगे और वह चाहेंगे कि किसी को पान करके अपने हृदय में रमण कर जाओ। जिसे तुम उन्नति कहते हो वहाँ यह उन्नति है, परन्तु इस भारत भूमि में यदि पर्वतों की कन्दराओं में खोजोंगे, तो तुम्हें वह ऋषि व लाल मिल जाएंगे, जो अंतरात्मा में सर्व संसार का भ्रमण करते हैं, यहाँ ऋषि दयानन्द, स्वामी शंकराचार्य, महात्मा बुद्ध जैसे लाल थे। जिन्होंने संसार को चकित किया। क्या नहीं हुआ, इस भारत भूमि पर। देखों जब ऋषि दयानन्द की ओ३म् की पता का लहराती थी, जब वह वेद की वेदी को सींचने के लिए चले, तो उस समय राजा महाराजाओं ने आश्चर्य किया, कि अरे, यह साधु इसी प्रकार रहा, तो हो सकता है कि हमें अपना स्थान यहाँ से त्यागना ही पड़ेगा। यह वेद की पवित्र और सत्य वेदी

है, जिसे लेकर जो व्यक्ति चलता है, वह इस संसार में ऊँचा बन सकता है। उसका जीवन सर्वोपरि कहलाता है।

मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा करता हूँ, कि हे गुरुदेवआप इस शरीर को क्यों ! नहीं त्याग रहे हो? आपके विचारों को इस प्रकार नष्ट किया जा रहा है। क्यों नहीं इस शरीर को त्याग करके, उस महान पूर्ण शरीर में आ जाते? परन्तु क्या करें, मेरे पूज्य गुरुदेव एक ही वाक्य कहा करते हैं, कि कर्म फलम् भोगश्यताः। जब कर्म फल की चर्चा आती है तो शान्त रह जाते हैं। परन्तु मैं एक वाक्य उच्चारण करने आया हूँ कि हे भद्र मण्डलआज तुम्हें ऊँचा बनना है !, तो अपने विचारों को नष्ट न करो। जो कार्य करो, शुद्ध और पवित्र करो, अन्तर भावनाओं से करो। अरे, परमात्मा तुम्हारे कर्मकाण्ड को नहीं देखता, वह संसार में तुम्हारी अन्तःकरण की भावनाओं को देखता है। आज परमात्मा तुम्हें नहीं देखता कि तुम आर्य हो या सनातन हो, यवन हो या ईसा हो, मुसा हो, देव हो या कौन हो। परन्तु परमात्मा तुम्हारे उन भावों को देखता है जो तुम्हारे अन्तःकरण में होते हैं। किसी ने एक समय ऋषि से प्रश्न किया कि परमात्मा क्या आहार करता है, तो उत्तर दिया कि परमात्मा मानव के अन्तःकरण की भावनाओं को आहार करता है और उसी के अनुकूल फल देता है, जैसे कृषक गो के बछड़े की अच्छी प्रकार उच्च भावनाओं में लालन पालन करता है। तो बछड़ा प्रबल होने के पश्चात् उस कृषक की कृषि को बीज योग्य बनाता है और जब वह वाहन में जाता है, तो कृषक बड़ा प्रसन्न होता है। उस कृषक की भावनाएं उस गो के बछड़े में ओत प्रोत होकर, वह उसी प्रकार का कार्य करता है। इसी प्रकार जो भी हम कार्य करते हैं, वह जो हमारे अन्तःकरण की भावना है, परमात्मा उन्हें अपने में धारण करता है।

आज यहाँ कर्म काण्ड भी होना चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि कर्म काण्ड नहीं होना चाहिए। परन्तु जो भी हो, वह हृदय से हो, पवित्रता से हो, पवित्र विचारों से हो। उस समय तुम्हारा जीवन सर्वोपरी और उत्तम बनता चला जाएगा। आज मैं विचारों की चर्चा करने आया था, कि यहाँ विचारों पर कितने आक्रमण हुए। महाराजा महावीर के

जो अनुयायी थे, उन्होंने यहाँ पुस्तकालय के पुस्तकालय समाप्त कर दिए। मैंने आज से वर्ष पूर्व 3500, वह दृश्य देखा है, जब यहाँ महाराजा पाण्डव के साहित्य को अग्नि के मुखारबिन्द में अर्पित कर दिया था। मैंने उस समय को देखा था, जब यहाँ लाक्षागृह अग्नि में नष्ट हो गया था। यहाँ महाभारत के युद्ध के पश्चात् एक विशाल विद्यालय रहा था। यहाँ वह साहित्य था, जिसमें महाराजा घटोत्कच्छ, महाराजा अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव का जो भी साहित्य था, जो भी विज्ञान था, जिनमें अन्तरिक्ष में जाने के यन्त्रों के आविष्कार का विधान था, नाना धातुओं आदियों को जानने का साहित्य था, वह सब अग्नि के मुख में चला गया। जब भारत भूमि के विनाश का समय आया, तो ऐसा किया गया। यदि इसका अभाग्य न होता, तो इसको आज ऐसा भोगना न पड़ता। इस पर आक्रमण ही क्यों होता?

मेरे प्यारेमहर्षि व्यास ने केवल एक वाक्य कहा था !, कि संसार में रूढ़िवादी मत बनो। यदि तुमने रूढ़िवाद को अपना लिया, तो निश्चित है कि तुम ऋषि के वाक्यों पर आक्रमण करते चले जा रहे हो। रूढ़िवादियों से जाकर नम्रतापूर्वक कहो, कि रूढ़िवादी मत बनो। आज यहाँ वेद का साहित्य तुम्हारे द्वारा होना चाहिए, हो जाएगा। आगे वह समय अवश्य आएगा। मुझे प्रभु पर और अपने पूज्य गुरुदेव पर विश्वास है। मुझे तो ऐसा अनुभव हो रहा है, कि आगे कुछ काल में वह समय आएगा, कि वेद का साहित्य पुनः से पनप जाएगा। अवश्य पनपेगा। इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि ऋषि मुनियों की यह भावनाएं और ऋषि आत्माएं यहाँ आने लगेगी तो वास्तव में यह देव का साहित्य पनप जाएगा। संसार में इसका प्रसार होता चला जाएगा। जैसे आज भौतिक विज्ञान का संसार में प्रसार है, ऐसे ही आध्यात्मिक विज्ञान का भी प्रसार अवश्य होगा। हे प्रभुवह काल शीघ्र दीजिए !, जब माता गार्गी जैसी मेरी प्यारी माता इस संसार में वेद के साहित्य को लेकर के संसार में रमण करती चली जाएगी। पीछे संसार होगा, आगे वेद की पताका और माता गार्गी होगी। प्रभु! वह काल किस काल में आएगा, जिस काल में ओ३म् की पताका होगी और वेद का साहित्य संसार में पुनः की भांति होगा।

आज मुझे अधिक वाक्य उच्चारण नहीं करने। विचार केवल यह, कि इस संसार को और वैदिक साहित्य को ऊँचा बनाना है तो यहाँ विचारों पर आक्रमण न होने दो। रूढ़िवादी मत बनो। श्रद्धा की वेदी को जागृत करो। जो ऋषि दयानन्द की श्रद्धा थी। ऋषि दयानन्द कितने श्रद्धालु थे अपनी जन्मभूमि के लिए, वेद की विद्या के लिए और परमात्मा के कितने श्रद्धालु, कि जिस समय शरीर को त्यागा, उस समय भी देखो, प्रभु से यह कहा कि प्रभु! तेरी इच्छा है। आज जो अपने विचारों को प्रभु की इच्छा पर त्यागने वाले हों उस महान आत्मा की क्या अनुपमता है संसार में। शंकराचार्य जब इस संसार से जाने लगे तो शंकराचार्य ने यह कहा कि प्रभु! तेरी इच्छा। अरे, यह महान आत्माएं कितनी पवित्र हो सकती हैं, जो मृत्यु को भी प्रभु की इच्छा पर त्यागते चले गए। अपने विचारों को प्रभु पर अर्पित करते चले गए। अरे, जिनके विचार इतने विशाल, महान कैलाश पर्वत के तुल्य थे, उनके विचारों को तुम कीचड़ के तुल्य न बनाओ। उनके विचारों को तुम संसार में उस ऊँचे शिखर पर पहुँचा दो, कि उनकी जो भावनाएं थीं, उनका जो गौरव था, आगे आने वाली सन्तान पर रहे। यदि आने वाली सन्तान रूढ़िवादी बन गई, अपने, एक दूसरे के विचारों पर आक्रमण करने वाली बन गई, तो जानो, उन ऋषियों के वाक्यों को कुचला जा रहा है। आज अपने इस पक्षपात को त्याग दो।

बहस वार्त्ता में तो मेरा यह वाक्य कटु ही प्रतीत दे रहा होगा। किन्हें प्रतीत देता है? जो यह कहते हैं कि हम ऋषि दयानन्द के शिष्य हैं, वेद के अनुयायी हैं। अरे, वेद के अनुयायी हो, ऋषि के भी शिष्य हो, परन्तु तुम अपने मन के तो सेवक हो, अपने स्वार्थ के तो सेवक हो। वह जो तुम्हारा मन है, वह जो तुम्हारे हृदय में कुवासनाएं हैं उनके तुम सेवक बने हुए हो। जिस समय तुम उनका सेवक बनना त्याग दोगे, तो निश्चय है कि तुम ऋषि के शिष्य भी बन जाओगे, वेद के अनुयायी भी बन जाओगे।

वेद का अनुयायी और ऋषि का शिष्य बनना कोई सहज नहीं। जब पिप्पलाद मुनि महाराज को ककेतु महाराज गुरु बनाने के लिए और वेद के अनुयायी बनाने के लिए चले, तो अपनी जन्मभूमि को त्याग महर्षि पिप्पलाद के चरणों में ओत प्रोत हुए।

महर्षि पिप्पलाद ने उनको योगबल से देखा। उसमें अभिमान छाया हुआ था। महर्षि पिप्पलाद ने कहा कि हे ऋकेतु ऋषि! आज तुम शिष्य बनाना चाहते हो, परन्तु तुम शिष्य के योग्य नहीं। क्यों महाराज? इसलिए नहीं कि तुम्हारे अन्तःकरण में महान कपट है, स्वार्थ भावनाएं हैं, पदों की बड़ी बड़ी कामनाएं हैं। जब तक यह सब हैं, उस समय तक तुम इस आश्रम में रहने के योग्य नहीं। ऋकेतु ऋषि ने यह वाक्य पान करके मन में विचारा, कि वास्तव में यह मेरे में सूक्ष्मता है। उन्होंने बारह वर्ष तक सत्य का उच्चारण करने का पवित्र अभ्यास किया, निद्रा पर विजय करने का अभ्यास और ऋषि के चरणों में ओत प्रोत हो गए। वेद का स्वाध्याय किया। वह रावण के गुरु भी बने और रावण को ज्ञान विज्ञान का साहित्य दिया। आज शिष्य या सेवक वही बन सकता है जो किसी के विचारों को धारण करता है, सत्यता को धारण करता है और विचारों की कुचलता नहीं परन्तु स्वागत किया जाता है।

यह है आज का मेरा आदेश। मैं अब इसे समाप्त करने जा रहा हूँ। मेरा आदेश केवल इतना था, कि यदि आज का संसार वैज्ञानिक बनना चाहता है, वेद के साहित्य का अनुयायी बनना चाहता है, तो विचारों पर आक्रमण न होने दो। आज सनातन सनातन पुकारता चला जा रहा है। मैं जानता हूँ, मैंने भी अच्छी प्रकार हृदय में देखा है, कि हृदय में नाना प्रकार की ग्लानि हैं। राम राम पुकारता है और हृदय में ऋषि वाक्य को नष्ट करता चला आ रहा है। यह क्या है? यह रूढ़िवाद है। इसी को हमारे यहाँ गुरुडमवाद कहते हैं। इस गुरुडमवाद को शान्त करने के लिए आज तुम्हें आगे चलना है और ऋषियों के वाक्यों का समर्थन करके आज उस साहित्य को पुनः से लाना है जिससे संसार का कल्याण हो जाए। राष्ट्र को कल्याण हो जाए। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह अमूल्य समय दिया, जिसमें कुछ सूक्ष्म सी चर्चा की है, विस्तार से नहीं। मुझे गुरुदेव किसी काल में समय देंगे, तो विस्तार से कुछ वर्णन करूंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः धन्य हो। हास्यविचार तो तुम्हारे बड़े पवित्र !महानन्द जी ....., परन्तु जितनी माधुर्यता होनी चाहिए थी उतनी नहीं।

पूज्य महानन्द जीः हास्यमाधुर्यता कदापि नहीं आ स !भगवन् .....कती, क्योंकि मधुरता का पाठ हमने किसी काल में पढ़ा नहीं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअरे ....., क्यों नहीं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्इसलिए कि आपने हमें कदापि ! जनाया नहीं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्ययह भी आक्रमण हमारे ऊपर रहा। !तो बेटा !अच्छा ..... चलो, कोई वाक्य नहीं।

तो मुनिवरोंमहानन्द जी ने जो भी कहा है !आज मेरे प्यारे !, वह बड़ी ही सर्वोपरि है और उच्च है। इन्होंने यह वाक्य अपनी अन्तर भावनाओं से कहे हैं। आज हम इनको धन्यवाद देते हुए अपने वाक्यों को समाप्त करने जा रहे हैं। आज के आदेशों का अभिप्राय क्या था, कि हमें वैज्ञानिक बनना चाहिए। अपनी अन्तरात्मा के उन भावों को परमात्मा तक पहुँचा देना चाहिए। हमें विचारों पर जैसा महानन्द जी ने कहा आक्रमण नहीं होने देना है। गृहस्थ आश्रम में रहने वाले पति और पत्नी एक दूसरे के विचारों को नष्ट कर देते हैं तो उस समय वह गृहस्थ नरक बन जाता है और जहाँ एक दूसरे के वाक्यों का स्वागत किया जाता है तो वह गृहस्थ स्वर्ग बन जाता है। इसी प्रकार यह संसार स्वर्ग बन जाता है। किस काल में बनता है? जब विचारों पर आक्रमण नहीं किया जाता परन्तु स्वागत किया जाता है। तो यहाँ स्वागत करना जानो। केवल आक्रमण करना ही न जानो। महानन्द जी का यह वाक्य बड़ा सुन्दर और सर्वप्रिय है। अब यह वाक्य समाप्त हो गया। कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चा होगी। अब वेदों का पाठ होगा। वेद पाठ। दक्षिण आर्य समाज मंदिर जंगपुरा एक्स., नई दिल्ली।

१४ 19 07 1964 पुष्प 04 योग मुद्रा

प्रवचन के समय ब्रह्मचारी जी की गर्दन घूमने का कारण

जीते रहो,

देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ, आज हम तुम्हारे समक्ष, पुनः की भांति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गान गा रहे थे, आज यह विद्वत् मण्डल है और सभी कुछ जानता है, कि आज के वदेमन्त्रों में संक्षेप रूप से क्या था।

प्रभु महिमा

यह वेद वह अमूल्य बीज है, वह अमूल्य बिन्दु है, जिसमें इस संसार का ज्ञान और विज्ञान है, जिस बिन्दु को जानकर हम इस संसार के ज्ञान और विज्ञान को जानने वाले बन जाते हैं? इसको जानना हमारेलिए अनिवार्य है।

जिस प्रकार मानव नित्यप्रति प्रातः काल से अपने आसन को त्यागता है और नाना प्रकार की क्रियाओं के पश्चात् शारीरिक रक्षा के लिए उसको भोजन अनिवार्य है, इसी प्रकार आत्मा को सुविधा देने के लिए, आत्मिक बल को प्रबल बनाने के लिए, हमें परमात्मा की याचना करना भी अनिवार्य है।

जैसे हम प्रातः से बहुत से कार्यों में संलग्न होते हैं, ऐसे ही प्रातःकाल में उस आनन्दमय स्वरूप में भी कुछ संलग्न हो जाना चाहिए, जिससे हमें अनुपम ज्योति प्राप्त होती है, जिसके द्वारा हमारा यह स्वर्ग जीवन प्रबल होता है, यह अनुपम देन हमें परमात्मा की अनुपम कृपा से प्राप्त होती है।

ब्रह्मांड की विचित्रता

आज हम वेदों को बिन्दु कहते हैं, परन्तु परमात्मा क्या बिन्दु है, जो हमारे नेत्रों के समक्ष नहीं है? मैंने इसका उत्तरदायी बनते हुए कई काल में कहा है, कि परमात्मा वह बिन्दु है, जो इन सब बिन्दुओं को चला रहा है, सब लोक लोकान्तरों को चला रहा है, वह एक महान चैतन्य ज्ञान स्वरूप है, संसार को एक महान कम्पन दे रहा है, वह कम्पन प्राणों के द्वारा है यह अपनी अलौकिक क्रिया के द्वारा है, प्रत्येक लोक लोकान्तर, पृथ्वी मण्डल में सबमें कम्पन है, मानव के द्वारा भी कम्पन है, उस कम्पन से यह संसार और लोक लोकान्तर चल रहा है।

मुनिवरोंअन्तरिक्ष में कितने मण्डल हैं !, परन्तु एक दूसरे से इनका मिलान नहीं होता, यही कैसी अनुपम देने है। यदि कारण वश इनका मिलान हो जाए तो कया हो? संसार में त्राहिमाम त्राहिमाम हो जाती है। जैसे मुनिवरोंमैंने इससे पूर्व भी कहा है ! कि प्राण, वायु और अपान वायु के मिलान से मानव मृत्यु के निकट पहुँच जाता है इसी प्रकार यदि इन ग्रह मण्डलों का किसी कारणवश एक दूसरे से मिलान हो जाए

तो संसार में त्राहिमाम त्राहिमाम हो जाती है, संसार एक रुद्र रूप धारण कर लेता है और मानव भयभीत हो जाता है।

तो हे मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल ! इस भयंकर स्थिति से दूर जाने के लिए हमें क्या करना है यदि हमें संसार में ऊँचा बनना है और संसार में वास्तविकता लानी है तो हमें एक दूसरे से प्रीति करनी चाहिए, प्रीति से सामाजिक उन्नति होती है, मुनिवरों ! देखो, हमारे शरीर में पाँच प्राण कार्य कर रहे हैं, एक प्राण हैं जो आता है और जाता है, ऊँच तत्त्व वायु से लेता है और महान किलिष्ट वायु को रमण करा देता है। इसी प्रकार अपान है जो कितने अशुद्ध मांस स्थल पर रहता है, यदि घ्राण की दृष्टि से आज प्राण उपादान न करें तो मनुष्य की क्या गति होती है। भिन्न भिन्न कर्त्तव्य हैं इनके। प्राण, अपान उदान, समान और व्यान यह पाँच प्राण हैं।

कर्त्तव्य की दृढ़ता

जब मनुष्य निद्रा की गोद में चला जाता है, उस काल में पाँचों प्राण अपने अपने स्थान पर उद्दिप्त रहते हैं और मानव की रक्षा करते हैं, उस महान जीव आत्मा के आसन की रक्षा करते हैं। जब प्राण रक्षा करते हैं, तो यह जीव आत्मा कहाँ जाता है? जीव आत्मा उस परमपिता परमात्मा से मिलान करता है और यह पाँचों प्राण अपने अपने कर्त्तव्य पर दृढ़ रहते हैं। प्राण आत्मा की व्याहृतियाँ कही जाती हैं। जिस प्रकार यह प्राण रुद्र का रूप धारण करके अपने गृह को सुरक्षित रखने के लिए, अपने अपने स्थान पर विराजमान होकर अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे हैं, इसी प्रकार प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या और ऋषि मण्डल को यदि संसार में ऊँचा बनना है और संसार की विलक्षण बनाना है, तो हमें भी अपने अपने कर्त्तव्य पर दृढ़ हो जाना चाहिए।

राजा का प्राण

राजा का प्राण है प्रजा। यदि प्रजा अपने कर्त्तव्यों के पालन करने में उद्यत रहती है, तो राजा भी उस प्रजा की रक्षा अवश्य कर पाएगा। प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या

और प्रत्येक ऋषि मण्डल अपने अपने कर्त्तव्य लेकर आता है। आज हमें अपने कर्त्तव्यों का पालन करना है। एक दूसरे से प्रीति से रहना है।
कल मैं योग मुद्रा की चर्चा कर रहा था। मेरे प्यारेमहानन्द जी का कथन तो यह है !, कि आज योग मुद्रा का कोई वाक्य उच्चारण न किया जाएं, परन्तु मैं अपने वाक्य का मिथ्या नहीं करना चाहता, भवति कामः वन्नति कसमोसि रिधन्नता मैं अपने उस अमूल्य वचन से मिथ्या नहीं होना चाहता, जो मैंने कल कहा था, योग मुद्रा की सूक्ष्म सी रूपरेखा अवश्य निर्णय करूंगा।
बेटामुझे प्रतीत नहीं !, आज तुम इस प्रकार क्यों उच्चारण कर रहे हो। आज तक किसी काल में तुमने उच्चारण करने में हताश नहीं किया, परन्तु सहायता दी, परन्तु आज सहायता से दूर चले जा रहे हो इसका कारण अब नहीं जान सका हूँ, मुझे निर्णय करो।
पूज्य महानन्द जीः 'प्रति भवतम्'।
पूज्यपाद गुरुदेवः 'अच्छा। '
तो मुनिवरोंप्रति भवतम् अज्ञति कसमो !सि रूद्यान्यति कन्ससा वन्नमा कसमस्ति विद्यामानते वतोरणी न देवम् भवत विचन् संग्रा कामोश्धा। हास्य
बेटायह वाक्य तुम्हारे लिए कदापि भी योग्य नहीं !, जो तुम आज उच्चारण कर रहे हो। शान्तम् भवति कामाः।
तो मेरे प्यारेऋषि म !ण्डलआज मैं कुछ योग मुद्रा उच्चारण करने जा रहा हूँ। मेरे ! महानन्द जी ने बहुत पूर्व काल में प्रश्न किया था !प्यारे, जिसका कल भी उत्तर दिया, आज भी संक्षेप से इसका उत्तर देता चला जाऊं। इन्होंने कहा था कि हमारी यह अमूल्य आकाशवाणी आपके अमूल्य शरीर में जाती है, तो वहाँ कंठ से ऊपर के भाग में कम्पन होती है, इसका क्या कारण है? यह विषय कुछ दूरी है और यह स्थिति कुछ न उच्चारण करने योग्य है, परन्तु चलो संक्षेप से इसका उत्तर दे रहा हूँ।

प्रवचन में गर्दन घूमने का कारण

मुनिवरोंजैसा मैंने अभी ! अभी प्रमाण दिया, कि निद्रा अवस्था में आत्मा परमात्मा से मिलान करता है और यह प्राण उसी प्रकार रक्षा करने वाले रहते हैं, जैसे जब गृह का स्वामी किसी अन्य स्थान में रमण करता है, तो उसके सेवकों को आज्ञा मिली होती है, कि इस गृह की सुरक्षा करना, यदि सेवक योग्य हैं, तो गृह की रक्षा करते हैं। इसी प्रकार राष्ट्र के सेवकों को राष्ट्रनायक की आज्ञा मिली होती है, कि जिस प्रजा का मैं स्वामी हूँ, उस प्रजा को तुम सुविधा दो और उसकी रक्षा करो। इसी प्रकार निद्रा अवस्था में जब आत्मा परमात्मा, सविता देव से मिलान करती है, तो उस समय यह प्राण रक्षा करते हैं।

मुनिवरोंतुम जैसी !इसी प्रकार जब यह आत्मा शरीर से पृथक होता है और बेटा ! आत्माओं से पुनः की भांति इस आत्मा का मिलाप होता है, तो वह जो प्राण रक्षक हैं, उनका सञ्चार पूर्व जन्मों का क्या इसी शरीरम् भवते जो अभ्यास हमने किसी काल में किया, उस अभ्यास का आक्रमण जो अनुपम मुद्रा है, मानो देखो, उन पाँचों प्राणों का आघात, सूक्ष्म प्रादुर्भूत है, उनका सम्बन्ध कंठ से ऊपर के भाग में ब्रह्मरन्ध्र से लेकर घ्राण निचले विभाग कंठम् भवति तक रहता है। इसलिए बेटायह कंठ से ! ऊपर के भाग की कम्पन होती है। अब यह कम्पन क्यों होती है? यह इसलिए होती है, क्योंकि बेटा हमारा यह !अभाग्य समय है परन्तु रहा यह प्रश्न, कि कम्पन न हो जब?

मुनिवरोंदेखो !, इसका उत्तर यह है कि यो योगश्चति विध्यम् भवते कामाः। जब योगीजन इस स्थिति को प्राप्त हो जाता है, जो मैंने अभी अभी वर्णन की अर्थात् जिनका सम्बन्ध आत्माओं से मिलान करने का हो जाता है उनका कोई न कोई हृदय स्थल, जो प्राण रक्षा कर रहे हैं, उनका भी कुछ सूक्ष्म भूत है, उन सूक्ष्म प्राणों की तन्मात्राओं द्वारा गोष्ठी होती है। तन्मात्राओं का सम्बन्ध मस्तिष्क से, ब्रह्मरन्ध्र से रहता है और ब्रह्मरन्ध्र में यह पञ्च महातत्त्व जिनको पञ्च तन्मात्राएं कहते हैं इनका सम्बन्ध ब्रह्मरन्ध्र से, अन्तरिक्ष से मिलान करता हुआ मानो देखो, उस यन्त्र का सम्बन्ध मेघावी

अौर प्रज्ञा बुद्धि दोनों का जब मिलान होता है, तो इस अात्मा का सम्बन्ध उन महान अात्माअों से हो जाता है। यह जो महान प्रणाश्चति अात्मा है, इसका मिलान वहाँ अोर वह जो शरीर का कम्पन है, वह बेटाउस पूर्व अधान अास्थति वह जो उसका ! अनुभव है, उन ॠषियों की जो चर्चाएं अाती हैं, उनके जैसे हमारे विचार हैं अौर इनका तारतम्य उस शरीर से होता है, वह तारतम्य प्राणों के सहित होता है अौर महान प्राणों के सहित हो करके वाक्य अपना कार्य करता है अौर प्राणों का जो अाघात है, वह उनसे देखो, उनका एक वृन्तति यज्ञाः तनः घृते प्राणों से उनका तारतम्य हो करके बेटाब्रह्मरन्ध्र की एक अनुपम गति हो ! जाती है अौर गति होने के कारण वह इस प्रकार की अनुपम किया है।

अाज यदि हमें इस स्थिति को पान करना है, तो बेटाबहुत प्रयत्न करने की ! अावश्यकता है। ब्रह्मरन्ध्र में इस अात्मा को रमण कराने की विरधति कहा है।

मुनिवरोंरही यह चर्चाएं !, कि यह महान श्वास भी अाता है, तो श्वास प्राण के कारण अाता है अौर प्राणों का तारतम्य अात्मा के साथ रहता है जैसा मैंने अभी अभी कहा है।

बेटातुमने सुना होगा !, जब द्वापरकाल में धृतराष्ट्र ने संजय से कहा था कि हे संजय ! अाज मेरे पुत्र अौर पाण्डव पुत्र कुरूक्षेत्र में संग्राम की स्थिति में हैं, मुझे उसका वर्णन कराते चले जाअो, मैं उसको नेत्रों से नहीं देख सकता। मुनिवरोवह क्या था !? पूर्वकाल में उसको स्वाधिविद्यानम् मम वन्नते वर्णोति वज्तां भवति कच्ताः उसको चित्रावली विद्यानम यन्त्र कहते थे। उस यन्त्र का जब तारतमय कुरूक्षेत्र से मिलान करा दिया, तो उस तारतम्य के द्वारा उन चित्रों का अनुकरण किया जा रहा है, उनकी वाणी भी है, तारतम्य के द्वारा वहाँ जो कुछ होता था, संजय महाराजा धृतराष्ट्र को सब वर्णन करा दिया करते थे।

मेरे प्यारेमहानन्द जी का कथन है कि संजय को भगवान कृष्णा ने दिव्य नेत्र दिए !, परन्तु कदापि नहीं, वह दिव्य नेत्र नहीं थे परन्तु प्रकृति से जाना हुअा, एक यन्त्र था, जो भौतिक विज्ञान से जाना जाता है।

पूज्य महानन्द जी –गुरुजी आधुनिक काल में उसको !ओर कुछ कहते हैं। वास्तव में उसका इतना तारतम्य तो नहीं हुआ, जितना आप उच्चारण कर रहे हैं। इन यन्त्रों का कुछ विकास तो किया है और अभी तक चल रहा है, पूर्ण रूप से नहीं।

पूज्यपाद गुरुदेव चलो बेटा आधुनिक काल में उस यन्त्र का कुछ !ओर कहते, परन्तु पूर्वकाल में जो कहते थे, वह मैंने वर्णन किया। मुझे इसका प्रमाण देने की क्या आवश्यकता थी? इसका नाम है भौतिक विज्ञान और यह है आध्यात्मिक विज्ञान, जो वर्णन कर रहे थे आत्मा की जो आंतरिक वृति है उसका जो मनोहर तारतम्य है, वह किसी भी आत्मा से मिलान हो सकता है, मानो उसका तारतम्य यहाँभी है और वहाँ भी है। जहाँ उन विचारों वाला यन्त्र होता है, वहाँ वह यन्त्र उनको धारण कर लेता है।

मुनिवरोंजैसे हमने वायुमण्डल में एक वाणी का प्रसार किया !, कि अरे, अमुक व्यक्ति तो वह उस वाणी से बोल पड़ता है, क्योंकि वह उसका तारतम्य है वह उस वाणी का सूचक है, उसी के द्वारा उसका प्रसारण हो जाता है। जैसे आज मैंने प्यारे महानन्द जी को कहा कि अरे, महानन्दतो देखो !, महानन्द जी वाणी से कुछ कहेंगे। क्यों? मेरी वाणी का, मेरे हृदय का जो तारतम्य है, वह महानन्द जी से है। मेरा जो वाक्य है वह महानन्द जी का सूचक है, परन्तु मैंने उस वाणी को वायुमण्डल में प्रसारित किया और जहाँ उस वाणी वाला विराजमान है, उससे वाणी का तारतम्य मिलता है, और उसी तारतम्य से वह मनुष्य कहता है, हाँ भगवन्जो आ !ज्ञा हो। तो मुनिवरों ! यह क्या है।

इसी प्रकार हमारी आत्मा का जो तारतम्य है वह उन सूक्ष्म शरीर वाली आत्माओं से मिलान होता है और मिलान होकर शरीर को कम्पन जो अब ही वर्णन है, वह अनिवार्य है, क्योंकि उस श्रुत में कोई न कोई अग्रणी होता है, और अग्रणी होने के नाते उन पर प्राणों का संचालन होने लगता है, संचालन होने के नाते वह सब कम्पन स्वाभाविक हो जाती है।

बेटायह एक बड़ा महान और गम्भीर विषय है !, साधारण बुद्धि का विषय नहीं। यह नहीं कि आज कोई मानव किसी वेदी पर विराजमान होने वाला, व्याख्यान देने वाला,

योग मुद्रा का या इस स्थिति का वर्णन करता चला जाए। इसको गम्भीरतापूर्वक जानने की आवश्यकता है। यह वेदी पर उच्चारण करने का विषय नहीं, अनुभव व विचार विनिमय का विषय है। विचार विनिमय भी वह ही कर सकता है, जिसको योग पर अटूट श्रद्धा होती है, जैसे भौतिक विज्ञान वाले को अपने भौतिक विज्ञान पर अटूट श्रद्धा होती है, इसी प्रकार आध्यात्मिक विज्ञान जानने वाले को, इस विज्ञान पर अटूट श्रद्धा होनी चाहिए, तब ही इस विज्ञान को जान सकता है।

आज कोई साधारण मनुष्य यह उच्चारण करने लगे, कि भाई! योग मुद्रा में वर्णन करो, उसका क्या अनुभव है, तो यह वाणी का विषय नहीं, यह तो केवल आनन्द का विषय है। जिस प्रकार निद्रा अवस्था में मानव की आत्मा का जो तारतम्य है, वह उस परमात्मा से लग जाता, केवल जड़ तुल्य रह जाते हैं क्या? यह प्राण असुत रह जाते हैं, जो रक्षक हैं। कोई मानव यह कहे, कि निद्रा का आनन्द कैसा है, तो यह मानव कहेगा कि मुझे निद्रा आई, कोई ज्ञान नहीं रहाँ, यह उच्चारण नहीं कर सकता, कि उसका कैसा आनन्द होता है, केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संक्षेप में प्राप्त होता है, कि जब हम निद्रा अवस्था से निवृत्त होते हैं, तो उस समय एक महान जीवन प्राप्त होता है, जिसको महा आनन्द कहते हैं।

तो मेरे प्यारेयह है आज का हमारा आदेश !ऋषि मण्डल !, मुझे अधिक परिणाम से आदेश नहीं प्रकट करना है, केवल संक्षेप से देना है, क्योंकि आज मैंने वेद पाठ अधिक किया है वेद पाठ में बड़ा आनन्द आ रहा था, हृदय उससे पुलकित हो रहा था, कि आज में वेद पाठ ही करता रहूँ, परन्तु क्या करूं भवति कामाः वेतु हिरण्यगर्भः सम् राजन्नोति कामाः देवं भवति वेतुस्ना।

मेरे प्यारेआज मेरा कोई योग का विषय नहीं था !ऋषि मण्डल !, न वेद में ही योग का विषय था परन्तु संक्षेप में कुछ था, यदि मुझे समय मिलेगा और वेद पाठ में योग का विषय आएगा, तो बेटा मैं इसको !और अच्छी प्रकार वर्णन कर सकूंगा। महर्षि पंतजलि जी ने योग के विषय में बहुत कुछ कहा है और महत्त्वपूर्ण वाक्य यह कहा

है, कि चित्तवृत्ति निरोधः योगः देखो, चित्त की वृत्तियों को एकाग्र करना हो योग कहलाता है।

प्रश्न उत्पन्न होता है, कि योग की दशा में चित्त की वृत्तियों को कैसे एकाग्र किया जाए, चित्त की वृत्तियों को एकाग्र किसी भी प्रयत्न से किया जाएं, परन्तु करना चाहिए। वह ज्ञान से विज्ञान से करो, किसी भी प्रकार करो, चित्त को एकाग्रता करना ही एक अनुपम योग है। इन्द्रियों का सम्बन्ध मन से होता है, मन का चित्त से होता है, तो चित्त एक विशाल स्वरूप धारण कर लेता है। अब इसके आगे चलकर इसकी श्रेणियाँ बनती हैं, माधुक श्रेणी, अनूक श्रेणी, चत्तरणी श्रेणी, मनइन्चति श्रेणी औरनानाएँ श्रेणी जैसे ब्रह्म श्रेणी रोगोणी श्रेणी अधिनायक श्रेणी और देखो, जिसको ब्रह्मरन्ध्र श्रेणी कहते हैं। चित्त के विस्तार से कई प्रकार की श्रेणियाँ होती। बेटाकिसी ! काल में योग का विषय आएगा, तो मैं इसको अच्छी प्रकार वर्णन कर सकूंगा, आज का विषय तो केवल कम्पन के सम्बन्ध में था।

मेरे प्यारेमहानन्द जी मुझसे कहा करते हैं !, कि आज का संसार जब मैं मृत लोक के मनुष्यों की भिन्न भिन्न प्रकार की चर्चाओं को पान करता हूँ, तो देखता हूँ, कि जिनके हृदयों में दुर्व्यसन हैं, वह आपको कोई ढोंगी कहता है, कोई पाखण्डी कहता है। यह तो मैंने महानन्द जी से पूर्व काल से कहा था, कि यह तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का अनुपम आशीर्वाद है और क्यों आशीर्वाद कहा करता हूँ क्योंकि जब सत्यवादी मनुष्यों पर किसी प्रकार का आक्रमण किया जाता है, तो मानो कि सत्यवादी मनुष्य से किसी काम में कोई पाप हो जाएं, तो वह भी नष्ट होता रहता है। मेंने उस जन्म में पाप किया था और यदि आज का संसार पाखण्डी या ढोंगी कह कर नहीं पुकारेगा तो बेटा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का वाक्य मिथ्या !हो जाएगा । इसलिए वाक्य मिथ्या न होने के कारण आशीर्वाद मानता हूँ। परम्परा से, मैं इन विचारों को मानता चला आया हूँ। आज का यह संसार तो उच्चारण करता रहेगा और करता आया है, आक्रमण करता रहेगा परन्तु तुम अपने विचारों को मत त्यागों संसार में।

जो मनुष्य आपत्तियों से अपने महान विचारों को त्याग देता है, उससे अधिक कोई पापी नहीं होता संसार में। उसका कारण यह है, कि देखो, यह प्रकृति का आक्रमण है, मनुष्यों के विचारों का आक्रमण है और यदि इन आक्रमणों से वह मनुष्य अपनी वृत्तियों से हिल गया या उसकी शान्त मुद्रा क्रोध में छा गई तो उसका मानवत्व कोई महत्वदायक नहीं। मेरे पूज्य गुरुदेव ने मुझे जो आज से लाखों वर्ष पूर्व आदेश दिया था, उसको भोग रहा हूँ और भोगता चला जाऊंगा, जब तक इसकी अवधि है। जो किया हुआ कर्म है वह भोगना प्रत्येक मानव को अनिवार्य है और भोगना चाहिए, आनन्द पूर्वक भोगना चाहिए क्योंकि वह कर्म हमने किया है, न करते तो न भोगते।

आज का हमारा यह आदेश अब समाप्त होने जा रहा है। आज का हमारा आदेश बहुत सूक्ष्म था। प्रारम्भ के वाक्य में आदेश चल रहा था, कि हमें अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए, जैसे वायु वेग में रमण कर रही है, वृक्ष में उससे कम्पना भी आती है, परन्तु स्थिर हैं, अपनी छाया को नहीं त्यागता, इसी प्रकार जो ऊँचे पुरुष होते हैं, वह इस संसार में वायु रूपी विचारों से विचलित नहीं होते। विचार रूपी वायु मानव को विचलित करा देती है, , आज उस वायु से विचलित न बनो, यदि तुम विचलित बन गए, तो जीवन समाप्त हो जाएगा, इसलिए एक होना जानो, संसार में मिलकर कार्य करो, एक वृत्ति बनाकर कार्य करो। यदि तुम्हें भौतिकता और आध्यात्मिकता दोनों से ऊँचा बनना है, तो सब प्रकार से प्रगतिशील बनना है प्रगतिशील बनकर अपने जीवन को शिरोमणि बनना है, सर्वोपरि पवित्र बनाना है।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन्गुरु जी आज का आदेश !, तो बड़ा शिरोमणि और प्रिय लगा परन्तु समय सूक्ष्म।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य तुम्हारा !यह तो बेटा.... .....नित्यप्रति उच्चारण करने का एक अभ्यास हो चुका है, जैसे माता का प्रिय बालक अपनी माता को मनाने के लिए, एक वाक्य को बारम्बार कहा करता है यह ही दशा तुम्हारी बन चुकी है बेटा !

पूज्य महानन्द जीः हास्यगुरुश्रों के द्वारा भी बननी चाहिए। गुरुश्रों !भगवन्..... ..... के द्वारा यह वृत्ति नहीं बनेगी, तो श्राज यह जीवन किसी काल में भी ऊँचा न बनेगा भगवन् । !

पूज्यपाद गुरुदेवः श्रच्छा धन्य वेतु !शान्तम। ‘

तो मुनिवरों श्रब यह श्रादेश समाप्त हो गया है। श्राज हम श्रपने कर्त्तव्य !के विषय में उच्चारण कर रहे थे, जिस प्रकार हम किए हुए कर्मों के फल भोगने में श्रपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे हैं, इसी प्रकार प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या श्रौर प्रत्येक ऋषि मण्डल को, राजा महाराजा को श्रपने श्रपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए। जिस काल में ऐसा होता है, वह स्वर्ग कहलाता है, उसको सतोयुग कहते हैं, महानता श्रौर विचित्रता कहते हैं। यह श्राज का हमारा श्रादेश समाप्त हो चुका है, श्रब वेद पाठ होगा इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त। राजा बाग (वेद पाठ), नई दिल्ली

१५   18 10 1964 पुष्प 05 प्रातः श्राराधना

रवितम्मम तेनु हृदयश्वति व !िश्वं मम तेनु कामाः प्रातर्भूषणं ममिते गच्छामि मामा करणामि भूश्वति विश्वं मम तेनु हृदयश्चना वेतु न ममते वार्णोति कस्मासि हृदयं भवनेत्यावनोति मानाः वन्रता वेनु धो संगमा रेति न मातश्चत, येनेति मातर्हृदयसमं मातस्वति गोदश्चता ममिरेति हृदयः। मनः वाचने कामा वर्तोति देवं दध्मे कामाः।

हे मेरे भोले ऋषि मण्डल। यह कैसा पवित्र समय, जिस पवित्र श्रमृत वेला में श्राज हम पुनः से वेद मन्त्रों का श्रौर परमात्मा की उस श्रमूल्य वाणी का प्रसार करने के लिए श्रा पहुंचे हैं, जिस पवित्र वेला में ऋषि मुनियों ने श्रौर ब्रह्मा ने पुलकित हो सन्ध्या के लिए श्राग्रह किया।

श्रपनी श्रात्मा का पवित्र बनाने के लिए, मन की उच्चता के लिए, हम पुनः पुनः मातश्चेति जो दुर्गा हैं ‘दर्गुणि दुर्गस्यते दुर्ग भावनस्य’ जो हमारे दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है, उसको बारम्बार नमस्कार करते हैं।

हे मेरे भोले श्राचार्य जनो श्राज हम इस !सुन्दर वेला में जब श्रन्तरिक्ष में तारा मन्डलों का एक प्रभात हो, चन्द्रमा भी श्रपने स्थान को चला जा रहा हो ऐसे ही श्राज

हम भी उस प्रकाश वाली पंक्ति में आ पहुंचे हैं, जिस पंक्ति में विराजमान होकर तारा मण्डल अपने ग्रह वसु जो संसार को बसाने वाले हैं, उस पवित्र पंक्ति में, आज हमें सौभाग्य मिला है। यह वह सौभाग्य है, जिसमें आदि ब्रह्मा अपनी महान पुत्री सन्ध्या से विनोद करते हैं।

अहा, विनोद कराते हुए अपनी आत्म सत्ता को पवित्र बनाने के लिए, ऊंचे स्थान पर विराजमान होकर जैसे रेणुका अपनी शुद्धि को लेकर इस संसार में विचरण किया करती है, इसी प्रकार आज का अमूल्य वेद पाठ ऐसी भावुकता से भरा हुआ था, जिसमें हमार हृदय उस महानता का गुणगान गा रहा था, जिसके लिए हमरे ऋषि मुनियों ने पुनः पुनः प्रयत्न कराते हुए, इस पवित्र वेला के लिए, आदि ब्रह्मा ने, आदि विष्णु ने, आदि शिव ने अपनी नाना प्रकार की सत्ताओं को प्रगत कराते हुए इस मनोहर पवित्र वेला की रचना की

मुनिवरों यह पवित्र वेला रजोगुण तमोगुण से परे कहलाती है। !क्योंकि रजोगुण मानो देखो, यह प्रभाती ज्योति है, इनका सूक्ष्म रूप है, जैसे हमारे यहाँ ऋषि मुनियों का सूक्ष्म रूप पवित्रतव में रचाया जाता है, उस पवित्रतव को रचाने क लिए, मेरे भोले मण्डल। गर्भणी माता के गर्भ में विराजमान हो करके, हम अपने हृदय में गायत्राणी छन्दों का पाठ करते हुए, गायत्री माता को बारम्बार नमस्कार करते हैं, कि हे गायत्री ! तू संसार में उज्ज्वल पदार्थ है, तेरा अनुकरण करते हुए, ऋषि मुनि अपने पवित्रतव को पान करते हैं, हृदय में एक ज्योति, ज्ञानमय आनन्द और ज्योति जागृत हो जाती है, जिसके लिए हमारे ऋषि मुनियों का प्रातर भूषणम् रहा है।

प्रार्थना

हे भगवन् तेरी करूणामयी वाणी के लिए हम बारम्बार प्रार्थना करते चले आ रहे हैं। ! हे परमात्मन्आपका रचाया हुआ !, यह संसार कैसा महान् व्याकुल है, इसको पवित्र बनाने के लिए आप पुनः से इस संसार में कोई न कोई ऐसा प्रयत्न कीजिए, जिससे आपका रचाया हुआ, संसार पवित्र का पवित्र बना रहे। इसमें किसी प्रकार की त्रुटि न आ सके। मानव एक दूसरे के रक्त का पिपासु न बने, परन्तु एक दूसरे का पथप्रदर्शक

बने। जब मेरी भोली माताएं अपने पवित्र स्थानों में विराजमान होकर एक दूसरे से प्रीति की चर्चा में अपनी गर्भाणि पुत्रश्चते वार्त्तान्यति गायत्राणि गायत्राणी छन्दों से अपने गृहों में, इस पवित्र वेला में, अपने मुखारविन्द से प्रगट करेंगी, तो उस समय वह गृह पवित्र कहलाता है।

हे भगवन्आज हम उस संसार को चाहते हैं !, जिसमें यह इन्द्र अपनी पवित्र सति के सहित संसार में रमण करने वाला हो, जैसे महर्षि वशिष्ठ और अरुणधति दोनों स्तुति करने वाले, इसी प्रकार हम बलि और सचिव, बलि और रेणुका दोनों का संगम चाहते हैं, यह पवित्र वेला जो गायत्री है इसके प्रभात से अपनी आत्मा को पवित्र बनाना चाहते हैं, प्रभुकरुणा कीजिए !, दया कीजिए, हमारे नेत्रों में वह अमूल्य सत्ता दीजिए, हे आनन्द में रमण कराने वाले देव आपको बारम्बार नमस्कार है। !

पूज्य महानन्द जीः भगवन्राजन्नमोऽश्वस्ति निरुद्रो कामाः वेतु नः ब्रह्मचर्य स्वति ! विश्वमभवनेति कामाः।

पूज्यपाद गुरुदेवः आज हम ब्रह्मचर्य को धारण करना चाहते हैं, उस आनन्दमय ज्योति को पान करना चाहते हैं जिस आनन्दमय ज्योति को पान करते हुए माता गार्गी अपने ब्रह्मचर्य को अपने अग्राण से अपने को पवित्र बनती हुई मानो देखो, जिसके हृदय में एक आनन्दमय ज्योति हो । आज हम उस आनन्दमयज्योति को पान करना चाहते है जिस आनन्दमय ज्योति को पान करते हुए माता गार्गी महान अपनी इस वाणी से राजाओं को ठुकराती थीं, जैसे सूर्य की किरणें तमोमय अन्धकार का ठुकरा देती हैं, इसी प्रकार राजाओं में जो नाना प्रकार के दोष होते हैं, उन्हें ठुकराया जाता है।

हे ब्रह्मचर्य के धारण करने वालो। आओ, प्रातः काल में ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्वा गति बना लें। हे ब्रह्मचारिणीआ !, तू इस गृह को पवित्र बनाती है, तू अपने ब्रह्मचर्य को पवित्र बनाती हुई मानो देखो, इस को मस्तिष्क में धारण करती हुई ब्रह्मरन्ध्र और त्रिवेणी स्थानों में रमण करती हुई तू इस ब्रह्मचर्य को पवित्र बना।

हे महान ब्रह्मचारीतू भी इसी प्रकार अपने जीवन को पवित्र बना !, यह वेद का अमूल्य आदेश कहता है। वेद ने कहा है वहन्ति हृदयश्चता वाणोंति कामाः वेतु न

हृदयश्चते कामन्तेनु गच्छामि हृदयस्वता। यह जो हमारा हृदय है, वह इतना पवित्र है और कोमल है कि इस हृदय को हम इस प्रकार पवित्र बना सकते हैं, जिस प्रकार सूर्य की किरणें स्वच्छ होती हैं, चन्द्रमा की कान्ति स्वच्छ होती है।

इसी प्रकार वायुमण्डल में वायु रमण करती है, वह इतनी पवित्र और अमूल्य होती है की उस अमूल्यता में रमण करते हुए पवित्र हो सकता है परन्तु वह उसी काल में हो सकता है जब प्रभुतेरी अनुपम कृपा हमारे ऊपर छायामान हो जाएगी !, जब तक आपकी ज्योति हमारे में छायामान न होगी, तब तक हमारा हृदय किसी काल में पवित्र न बन सकेगा।

माता गायत्री

हे माता गायत्रीहम तेरे द्वारा पर आ पहुंचे हैं !, तू अपने महान पुत्रों की अपने कंठ से अग्रणीय कर, जिससे हे मातातेरी आनन्दमय !, करूणामय गोद में विराजमान होकर उस सुख को अनुभव कर सकें।

हे मातातू ! सुख देने वाली है, पवित्र बनाने वाली है, तुझे वेदों ने गायत्री कहा है, आदि ब्रह्मा ने तुझे पुत्री बनाया है। तू संसार की माता और ब्रह्मा को पुत्री कहलाती है, हम तेरी गोद में आना चाहते हैं, जिसमें धारण होकर हे माताहम हृदय पवित्र ! बना सकें। तू वास्तव मे गायत्‍्री है, तेरी तीन प्रकार की व्याहृतियां हैं, तेरी प्रत्येक वेद भवनीस्यत्रि अत्रिन गच्छाम्यस्ते। परमं भवते निगच्छता।

अहा माता !मुनिवरों !गार्गी अग्रिणा, नहीं, परन्तु अनसूया और अत्रि मुनि दोनों का एक वचनबद्ध है कि दोनों प्रातः काल में विराजमान हो करके, इस गायत्री का अनुकरण किया करते थे, जिस गायत्री से यह संसार रचता है, ऊर्ध्व गति में प्राप्त होता है और जिसमें यह लुप्त हो जाता है। परन्तु प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या किसी विशेष मन्त्र को गायत्री कहा जाता है?

नहींजितने वेदमन्त्र ! है, वेद मंत्रों में पवित्र छंद, ओ३म् को व्याहृतियों से बद्ध जो मंत्र हैं, उन सब ही का नाम गायत्री है, क्योंकि हम गायत्री में रमण करते हैं और जिस गायत्री में यह संसार समाहित हो जाता है। जब हम ब्रह्मा के कमन्डलु के द्वारा जाते

हैं तो वह कितना पवित्र है जिसमें गंगा अवतरण आती है, जिस गंगा में स्नान करके, मानव भावुकता से परिपक्क होता है।

मुझे आचार्यों का एक वचनबद्ध प्राप्त होता है और वह यह होता है कि सृष्टि के आदि में जब यह संसार रचा, तो यह गंगा ब्रह्मा के कमण्डलु में विराजमान थी। जब यहाँ संसार को तरण तारन करने वाले आदि आचार्यों ने शिव की याचना और आराधना की। और आराधना करते हुए शिव की भावुकता ब्रह्म लोक के द्वारा जा पहुंची, जहाँ ब्रह्माके द्वारा यह गंगा कमंडलु वाली गंगा हमें अर्पित कर दीजिए । आज यह संसार इसके स्नान का इच्छुक है, जिस स्नान से हृदय पवित्र हो सकता है, आत्मा पवित्र हो सकता है, मन पवित्र हो सकता है, अपने ब्रह्मचर्यत्व को प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि भाई! यह मेरी सुन्दर पुत्री है मैं इस गंगा को इस प्रकार अर्पित नहीं कर सकता।

मुनिवरोंदेखो !, जब सभी देवताओं ने याचना की तो उस समय ब्रह्मा के कमण्डलु से यह गंगा अर्पित हो गई और संसार सागर में आ गई और इसको पवित्र बनाती रही। अपना कण कण संसार में अर्पित करती रही, मानव के हृदयों को पवित्र बनाती रही तो यह वह अमृत प्रभात है जब परमपिता परमात्मा ने इस अमृत वेला को अर्पित किया।

ब्रह्मा का कमंडलु किसको कहते हैं?

ब्रह्मा परमात्मा को कहते हैं और ब्रह्मा का कमंडलु है ब्रह्मा की रचना। ब्रह्मा के महत् रूपी कमंडलु से यह संसार रचा जाता है जो हमारे दृष्टिगोचर है।

प्रभु आपने यह संसार !कमंडलु से रचा है, इस कमंडलु में कोई वस्तु थी और वह थी वेदवाणी में अमूल्य ज्ञान। इस गायत्री रूपी गंगा में रमण करता हुआ, मनुष्य अपने हृदय को पवित्र बनाता है ओ३म् स्यते ओ३म् व्रणा गच्छामि वेतु नः देवं भवनेति अग्रणाः वातेन हृदयस्यते। हे हृदय को उदार बनाने वाली पवित्र वेलातू आ !, ऋषि मुनियों को पवित्र बनाती है, आज हम तुझको बारम्बार पुकारते चले जा रहे हैं।

हे भगवन्आज हम पुनः से अपने हृदय को पवित्र बनाना चाहते हैं !, ज्ञान में रमण करना चाहते हैं, आज हम उस माँ काली की गोद में आने के लिए आ पहुंचे हैं, जो हमारे कालेपन को समाप्त करती है, और हमें पवित्र बना देती है।

मुनिवरों! देखो, गायत्री माता के गर्भ में गायत्री माता की याचना करने के लिए आ पहुंचे । हे गायत्री मातातू हृदय को पवित्र बना। तुझे वेदों ने गायत्री कहा है !, दुर्गा कहा है क्योंकि तू मानव के दुर्गुणों को शान्त करने वाली है, हम तेरी गोद में आए हैं, हमारे हृदय को पवित्र बना, हमारी इस करूणामय वाणी को पवित्र बना, हमारी जितनी भी कामनाएं हैं वह सब पवित्रतव में हों।

हे अग्रणी, भूषण अग्ने! यह संसार तेरा अनुकरण करता है, आज हम भी तेरा अनुकरण करते हुए उस पवित्र वेला में उस पवित्रतव में, तेरी गोद में आए हैं, आज तुझसे कुछ प्राप्त करना चाहते हैं, आज मानव के हृदयों को पवित्र बना, हमें भी पवित्र बना।

हे माता हे !दुर्गुण दुर्गस्वते !दुर्गुणों को शान्त करने वाली दुर्गा! तू चमण्डला है, दैत्यों को नष्ट करने वाली है, जब तू दैत्यों का हनन करती है और देवतओं की रक्षा करती है तो संसार में दैत्य बनने ही न दे, यह संसार सब देवता ही बना रहे और देवता बन करके तेरे आनन्दमय सागर में रमण करता हुआ, स्नानम् ध्यानम् करता हुआ तेरी गोद का इच्छुक रहे।

हे माता दुर्गेतुझे वेदों न चमन्डला कहा है !, काली कहा है, सरस्वती कहा है, भगवती कहा है, माँ किलेष्णी कहा है, भिन्न भिन्न रूपों से पुकारा है।

जब तू अपना वाहन लेकर दुर्गा का स्वरूप धारण करके संसार में आती है, और सहस्रों नहीं, अष्टम भुज वाली बन करके तू मानव को चेताती है, यह मानव तेरी उस अष्ट भुजाओं वाली गोद में आना चाहता है जिन अष्ट भुजाओं ने संसार को चकित बनाया है, दैत्यों का हनन किया है। दैत्यों का हनन करने वाली मातातू आ और ! हमारे हृदयों को पवित्र बना।

मुनिवरों !वह कौन वैष्णवी देवी कहलाती है?

वैष्णावी नाम भवने लच्ता। वैष्णावी का अभिप्राय पवित्र है, दुर्गा का भाव पवित्र है, काली का भाव पवित्र है, चमरडलता का भाव पवित्र है, यह पवित्रतव में एक प्रकार का गहना है जिसको धारण करते चले जाओ, परन्तु किस रूप से हमें इसको धारण करना है?

मुनिवरोंयहाँ वैष्णो नाम है दिशाओं का। इस संसार में आठ दिशा !एं मानी जाती हैं। पूर्ववत, पश्चिमवत, उत्तरायण, दक्षिणायन और इनकी भावुकता में आग्रणी है, कान्चनी है, ऋणी है और त्रोधित है। यह आठ दिशाएं कहलाती हैं जो मानव को हर समय एक दूसरे के आकर्षण से धारण किए रहती है। जैसे चुंबक इस पाषाण को स्थिर करता ही इसी प्रकार प्रत्येक दिशा प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को, प्रत्येक संसार के प्राणी को अपने में धारण करती रहती हैं। इसी प्रकार इसको वैष्णावी कहते हैं, इनका जो विज्ञान है, उसको विचार लेना चाहिए।

अष्टध्वति किरणों

मुनिवरोंहमारे यहाँ किरण का नाम भी वैष्णाव है !, एक अष्ट भागों वाली किरण होती है, जिसको भुसाकम् कहते हैं। ऊषा किरण, मनधोति और रेणु मानो देखो, अस्तुति किरणों होती है, मानो देखो, यह अष्टध्वति किरणों होती हैं। यह आठ किरण प्रातःकाल में सूर्य से, आठ भाव लेकर चलती हैं। एक किरण संसार में मानव को जीवन देती है, प्रत्येक मानव उससे जीवन पान करता है। एक किरण चलती है, जो खाद्य पदार्थों को पवित्र बनाती है। एक किरण चलती है जो खनिज पदार्थों में जाती है, जैसे स्वर्ण है और नाना प्रकार की धातुएं हैं, उनमें वह किरण जाती है, उन किरणों में वही भाव होता है, जो उनको जाकर ऊँचा बनाती है, उनको आगे बढ़ोतरी करती है, जिसको देखो, हम रोधित किरण कहते हैं। एक किरण चलती है, जिससे अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले नाना परमाणुओं को जीवन मिलाता है, ऊर्ध्व गति को सत्ता प्राप्त होती है। एक किरण वह होती है, जो पवित्र आत्माओं को, ऋषियों को जाकर चेताती है, मानो उसका योगाभ्यास करने वालों से टकराती है, मिलान होता है और मिलान हो करके

उसको आत्मिक ज्योति में एक आनन्द और सहायता प्राप्त होती है, उसको रोधनी किरण कहते हैं। जिसको चमरण्डला नाम की किरण भी कहते हैं।

एक किरण सूर्य से वह चलती है, जो पूर्व से पश्चिम दिशा के लिए सम्बन्ध करती है, अन्धकार को नष्ट करती है, वह पश्चिम दिशा में रमण करती हुई, पर्वतों से मिलान करती है, पर्वत उससे फलते और फूलते हैं।

इसी प्रकार एक किरण वह कहलाती है, जिसको हम वैष्णवी किरण कहते हैं, जिस किरण का सम्बन्ध गर्भवती माता के गर्भस्थल से रहता है, उस किरण क लिए अग्राणि भूतश्चात वातुश्चते वेतु न हृदयस्वति कामाः।

उस किरण का मिलान जब उस पवित्रतव से होता है, तो माता के गर्भ में रहने वाला जो आत्मा होता है, जो बालक होता है, उससे एक सत्ता प्राप्त होती है, उसे जीवन मिलता है। हम वैष्णवी के महान पुजारी बना करते हैं, परन्तु वैष्णव मत का क्या अभिप्राय है? हमें इसके विज्ञान को जान लेना चाहिए, इसमें जो वास्तविकता प्राप्त होती है, उसको प्राप्त कर लेना चाहिए।

इसी प्रकार मुनिवरोंएक किरण वह कहलाती है !, जो नाना वृक्षों और वनस्पतियों से मिलान करती है, जब वह वायु वेग से चलती है, यह वायु वनस्पतियों से किरण को लेकर चलती है और प्रत्येक मानव को छूती है, अग्रणी बनाती है।

एक किरण वह होती है जिसमें विषैले परमाणु होते हैं, जिसको गधेनित किरण कहते हैं। वह किरण सूर्य से चली और चल कर विषैले परमाणुओं से मिलान होता है। जितने विषैल प्राणी होते हैं जैसे सर्प इत्यादि नाना विषैली योनियां होती हैं, उनसे सम्बन्धित होती हैं। यह जितने विषैले परमाणु होते हैं, जितनी भी विषैली वस्तुएं होती हैं, उन सबको अपने हृदय में धारण करती रहती है इनमें से जो पवित्रतवसे मिलान करती हुई वायु रमण करती है यदि वह वायु वह जो किरण मानो देखो, सर्प आदि प्राणियों से मिलान करती हुई और उसमें विषैलापन रह जाए और यदि यह विषैली किरण किसी मानव को छू जाती है तो उसी समय मनुष्य के समक्ष मृत्यु का प्रतीक आ जाता है, आज हमें इसका विचार लेना चाहिए।

मुनिवरों हम आज से नहीं परम्परा !से वैष्णव मत को मानते चले आए हैं परन्तु हम किसी मत को वैसे ही स्वीकार नहीं करते, हम उस स्थान में माना करते हैं, जब वेद से उनका मनन कर लेते हैं, मन्थन कर लेते हैं।

गायत्री माता

हमारे यहाँ प्रत्येक वेदमन्त्र को गायत्री कहा जाता है क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र में ज्ञान और विज्ञान ओत प्रोत है। जिसमें ज्ञान विज्ञान ओत प्रोत होता है वही गायत्री कहलाती है। यह तीन व्याहृतियों से गायत्री कहलाती है। जैसे माता का पवित्र जीवन तीन भागों में होता है एक भाग वह कहलाता है, जिसमें माता अपने पुत्र को अपने गर्भ स्थल में धारण करती है, एक भाग वह होता है, जब अपने बालक को अपनी लोरियों में आनन्द पान कराती है और एक भाग वह है, जब अपने प्रिय पुत्र को अपने हृदय से पृथक कर देती है, युवा हो जाता है, इसी प्रकार वह गायत्री है, जब मानव इसके गर्भ में जाने के लिए लालायित होता है। जहाँ भी मानव देखता है, वहीं माता को देखता है, जहाँ भी दृष्टिपात करता है, वहीं माता का दृश्य उनके समक्ष है, माता उसकी प्रतीक बनी हुई है, जब वह इस भावुकता में आ जाता है, कि जहाँ मैं जाता हूँ, वहीं मेरी माता विराजमान है, तो मैं पाप करने कहाँ जाऊं, पापों को जानने वाली मेरी माता विराजमान है, यदि मेरी माता ने इस पाप को जान लिया, तो न प्रतीत मेरी माता क्या दण्ड दे।

हे मेरे भोलेजब मानव इस आकृति में !, गायत्री छन्दों में रमण करता है, जहाँ जाते हैं, वहीं माता विराजमान है, न प्रतीत हमें क्या दण्ड दें, जैसे बालक माता से भयभीत रहता है, और माता की भावुकता में रमण करता रहता है और माता अपने हृदय से पुत्र को लगा लेती है और यह चाहती है, कि मेरा पुत्र पवित्र बने, इसमें किसी प्रकार की त्रुटि न रहे, यह मेरे गर्भ को ऊँचा बनाने वाला हो, इसी प्रकार गायत्री माता भी चाहती है।

मुनिवरों भक्त की !जब यह दशा हो जाती है, कि यदि मैं कोई पाप करूंगा, तो माता मुझे दृष्टिपात कर लेगी और न प्रतीत क्या दण्ड दे, तो उस समय यह महान पवित्र

गायत्री उस मानव को कंठ में धारण कर लेती है, मानो अपने में ओत प्रोत कर लेती है, जैसे एक प्रिय बालक होता है, जो माता पिता के नाना प्रकार के क्रोध की सीमाओं को नष्ट कर देता है, जैसे मैंने तुम्हें एक अलंकार भी नियुक्त किया था, सुनो :

एक राजा था। राजा के यहाँ एक सूक्ष्म सा बालक था। परन्तु वह राजा किसी साधु संगति में आत्मिक ज्ञान की चर्चा करने जाता था। वहाँ एक गान गाया जाता था, कि अरे, मानव! तू विरोध न कर, परमात्मा का चिन्तन कर, तुम्हारे द्वारा प्रीति होनी चाहिए, यह बालक पूर्व गान का फल था। बालक ने वह ही अपने कंठ में धारण कर लिया।

कुछ समय के पश्चात् राजा और उनकी पत्नी दोनों का विरोध हो गया, और दोनों ने प्रतिज्ञा कर ली कि अब एक दूसर से कोई वाक्य उच्चारण नहीं करेंगे। अधिक समय हो गया, राजा और रानी दोनों की इच्छा हुई, कि हमें दोनों में कैसे प्रेम भाव हो, कैस मिलान हो, परन्तु एक दूसर से वाक्य न मिलान करने की प्रतिज्ञा थी।

एक दिन बालक सत्संग से आया और पिता के स्थान पर कहने लगा, अरे, मानव! तू विरोध न कर, परमात्मा का चिन्तन कर, पिता ने कहा कि अरे, अपनी माता से जाकर उच्चारण करो, माता के स्थान पर गया और उच्चारण किया अरे, मानव! विरोध न कर, परमात्मा का चिन्तन कर, प्रेम प्रीति से रह। जब ऐसा कहा तो माता न कहा कि अरे, पिता के द्वार जाओ। अब पिता के द्वार पहुंचे, तो पिता ने कहा, माता के द्वार जाओ, बालक ने सोचा कि अब यह दोनों हो मुझे उच्चारण नहीं करने देंगे, वह दोनों के मध्य में विराजमान होकर वह वाक्य उच्चारण करने लगा, अब मुनिवरोंएक ! स्थान से माता ने उसे कंठ लगाया और एक स्थान से पिता ने कंठ लगाया।

मुनिवरोंदेखो !, उस बालक के प्रति माता पिता का प्रेम कितना उज्ज्वल था, कितनी ऊँची क्रोध की सीमा का नष्ट किया, उस बालक ने।

मुनिवरोंइसी प्रकार योगी परमात्मा का बालक बनता है !, माता गायत्री का बालक बनता है, गायत्री का अनुकरण करता है, माता ही माता को पुकारता है और उसमें

ओत प्रोत हो जाता है, तो उसे माता ही माता प्रतीत होती है। एक स्थान प्रकृति गायत्री माता और एक स्थान से ब्रह्मा पिता उस महान आत्मा को अपने हृदय में धारण कर लेते हैं। वह ऋषि बन जाता है, योगी बन जाता है। प्रकृति माता कहलाती है परमात्मा पिता कहलाता है, दोनों के मध्य में जो विरोध था, उसको इस महान आत्मा ने दोनों का अपनाते हुए, नष्ट कर दिया। प्रकृति को वैज्ञानिक रूपों से अपनाया और परमात्मा को उपासक रूप में अपना कर, मुनिवरोंसंसार में वह ! उपासक, ज्ञानी और वैज्ञानिक योगी कहलाता है। आओहम उस प्रभु का अनुकरण ! करते चले जाएं, उस माता का अनुकरण करते चले जाएं, जो गायत्री माता अपने हृदय को पवित्र बनाती है, जो गायत्री हमें ऐसा अनुपम ज्ञान देती है।

हम अपनी आत्मा को पवित्र बनाने के लिए इस अमृत वेला में आ पहुंचे, जो ब्रह्मा के कमण्डलु में रमण करने वाली और मानो विष्णु के चरणों में रमण करने वाली यह महान गंगा है, जिसमें स्नान करते हैं, अपने पवित्रतव को पान करते हैं, हृदय से, मन से, आत्मा से उसका चिन्तन करते हैं।

मेरे भोले ऋषि मन्डलआओ !, आओ, चिन्तन करो। उस महान गायत्राणी का गान गाते चले जाएं :

गात्राणि भूषणं पविते निगच्छता प्रातर्भूषणं, ममतिगृधे, आचन्नमति न देवं पविते निरञ्जताः। यवनाति मेनः गात्राणि हृदयस्यति यदिते नो, ग्राधि ममते मातरम्वति गृधाः निरञ्जति वानर्धेनु, मञ्जतः वनदेनु कामाः वेतु न देवाः।

हे मातातू आ !, संसार को पवित्र बनाने वाली है, हे माताजो तेरा अनुकरण करता ! है, आज वह संसार सागर से पार हो जाता है। हे माताजो तेरी इस भावुकता में ! करुणामयी आनन्द को पान करने वाला है, वह इस संसार को कटुता में, जो एक दूसरे का विरोध है, उसे नष्ट करता है।

तरूणाच्चति विश्वं भग्नाति देवं वृजनेति कामाः, वाजन्नमः देवं दध्मा वेतु न प्राणाः गच्छामि हृदयः,

हे माताजब यह हृदय तेरी भावुकता से ऐसा परिपक्व हो जाता है !, जैसे सूर्य की किरणों से यह संसार प्रकाशमान हो जाता है, तो ऐसे ही तेरी ज्ञान रूपी किरणो से हमारा हृदय प्रकाशमान हो जाता है, मल विक्षेप दूर हो जाते हैं। उस समय हम अपने उस प्रातर् भूषणाम् अग्नि की आराधना करते हुए अपनी आत्मा को पवित्र बनाते हैं। अहा तू वास्तव में हमारी आत्मा को पवित्र करने वाली है। !

संगति भूषणां मृत्यन्नताः देवं दध्मः, वर्चे निरच्चता वाप्नोति देवं पा पश्यत,

हे माताजब हम तेरा अनुकरण करते हैं !, तेरे गर्भ में तेरी महानता की आराधना करते हैं, तो उस समय हमारे हृदय में, जो नाना प्रकार के पाप हैं, वह सब भस्म हे जाते हैं जैसे अग्नि ईंधन को नष्ट कर देती है अगृणी भूषर्णा पवनाति देवं मा मा वेतु, कामश्चते वेतु न राजन्नः हृदये कामा वेतु माः।

हे माता !आप ही हमारी लक्ष्मी, श्री, माता, और राजा है, हम आपको ही चुनौती देते रहे, हम संसार में आपके सिवाय किसी को नमस्कार न करें। केवल नमः हो, तो आपके लिए, क्योंकि आप हमारे अधिराज हैं पापनोति पापो को नष्ट करने वाले हैं, हृदय में, वाणी में हर समय हम आपका उच्चारण करते रहें, आपकी आनन्दमयी ज्योति में रमण करते रहें। स्वस्ति ब्रह्मणा गच्छाति हृदये वासंगति न जहा, याचन्नतो भवनाति ब्रह्मणा गप्छते रेवं पमोनाः।

हे माताहम तुझे बारम्बार पुकारते चले जा रहे हैं !, तू हमारे पापों को नष्ट कर और ऐसा पवित्र बना कि हम संसार में जन्म लेते हुए यौगिकता को प्राप्त करते रहें, तेरे गर्भ में आएं और अपने हृदय को ऐसा पवित्र बनाते रहें, जिससे तेरी गोद में, तेरी शरण में आ सकें, हमें अपने से दूर न कर, यदि हम तेरे से दूर हो गए, तो हमारा जीवन व्यर्थ होता चला जाएगा, हमारे जीवन में न प्रीति रहेगी, न आनन्द रहेगा, यदि हमारे हृदय में आपकी ज्योति रहेगी, तो हम संसार को ज्योतिष्मान् कर सकते है, अन्यथा हमारा जीवन अन्धकार में डूबता रहेगा।

मुनिवरोंयह है आज का हमारा पवित्र वेला का वाक्य !, अब यह समाप्त हो रहा है, परमपिता परमात्मा ने यह प्रातः काल का अमूल्य अवसर दिया, जिसमें माता प्रकृति

और पिता परमात्मा दोनों का चिन्तन करने का सौभाग्य मिला। इसके पश्चात् वेद पाठ और धन्यवाद। प्रातः हीरालाल जी के गृह पर मोगा मंडी .बजे स्वतः श्री ला 4 (पंजाब)

१६ 18 10 1964 पुष्प 05 रात्रि विवेक

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, कि आज भी पुनः की भांति जटा पाठ में वेद मन्त्रों का पाठ किया। आज से पूर्व कई काल में कहा हैं कि इस समय हमारा महर्षि पिप्लाद मुनि संहिता के मन्त्रों का पाठ प्रारम्भ हो रहा है जिसमें परमात्मा का ज्ञान विज्ञान और मानव को पवित्र बनाने वाला एक अमूल्य प्रकाश है। इसको प्राप्त करने के लिए, हमारे ऋषि मुनियों ने, वेदाचार्यो ने महान परिश्रम किया। आज हमें पूर्व की भांति, इस अमूल्य वाणी को जानने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि वेद का अमूल्य ज्ञान ही लुप्त हो गया तो जानो कि जो परमात्मा की हमें अमूल्य देन है वह हमसे दूर चली जाएगी। हे मेरे भोले आचार्य जनो! आज इसलिए हमें इस वेद की अमूल्य विद्या को जानने का प्रयत्न करना है। संसार की जितनी विद्याएं हैं वह सब वेद में बीज अंकुर से विराजमान हैं। मुनिवरों! जैसे वट वृक्ष है जिसमें महान शाखाएं भी हैं, नाना प्रकार के पत्र भी हैं परन्तु यह सब बीज में, अंकुर रूप से रहते हैं, वह कितना सूक्ष्म है, इसी प्रकार प्रत्येक वेदमन्त्र में परमात्मा का ज्ञान विज्ञान है। वह एक प्रकार का अंकुर है, जिसको जानने के लिए आत्मा के बल को ऊँचा बनाना अनिवार्य है।

विवेक से पवित्रता

आज हमारी वेदवाणी का उच्चारण करने का क्या अभिप्राय था? आज अपने मानवतव को पवित्र बनाने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए, आज हमें विवेक के उस क्षेत्र में जाना चाहिए, जिस क्षेत्र में पहुंच कर हम राज्य को पवित्र बना सकें, अपने को पवित्र बना सकें और ऋषि परम्परा को ऊँचा बना सकें। अपने जीवन को पवित्र बना करके हमें उस अन्तरिक्ष में रमण करना है, जिस अन्तरिक्ष में हमारे ऋषि, मुनि और आदि आचार्य जन रमण किया करते थे। आज पुनः से उस अमूल्य वेदों पर पहुंचना है।

जिस वेदी पर पहुँच कर हमारे महाराजा यमाचार्य जैसे, महाराजा याज्ञवल्क्य, जैसे जिनका ज्ञान महान अपार माना जाता है महर्षि वशिष्ठ मुनि जैसे विश्वामित्र इत्यादि मुनियों का प्रतीक हमारे द्वारा सराहनीय है, क्योंकि उसमें ज्ञान की एक अमूल्य निधि है, जिससे संसार पवित्र बनता है, मानव पवित्र बनता है। हमें उस वेद परम्परा को अपनाना है जिसको अपना करके मुनिवरोंयहाँ सूक्ष्म से बालक अपने माता पिता ! की आज्ञा का पालन करते हुए वेद के अनुसार अपने ऐश्वर्य को त्यागते हुए और ऋषि परम्परा को पवित्र बना करके संसार से समाप्त हो चुके हैं।

मुनिवरोंयहाँ भक्त का भगवान के प्रति विवेक होना चाहिए !, पति और पत्नि में विवेक होना चाहिए, पिता और पुत्र में विवेक होना चाहिए, माता और पुत्र में विवेक होना चाहिए, राजा और प्रजा दोनों में विवेक होना चाहिए। जब विवेक की अमूल्य वेदी पर विराजमान होते हैं, तो संसार पवित्र होता है, वह काल सतो युग कहलाता है। जब यहाँ प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक मेरा भोला आचार्य, ऋषि मण्डल इस विवेक की अमूल्य वेदी पर अपने विचारों को नियुक्त करता है, पवित्रतव में अपने कर्त्तव्य का पालन करता है, तो हृदय में विवेक की भावनाएं उत्पन्न होती हैं, जिससे यह वायु मण्डल पवित्र होता है। जब वायु मण्डल स्वच्छ भावनाओं से पवित्र होता है, तो मानव के जो विचार हैं, जो भी वाक्य वह प्रकट करना चाहता है, वह सत्यता में और आनन्दमयता से उसके हृदय में ओत प्रोत होते हैं।

प्रलयकाल तक शब्द की विद्यमानता

आज हमारा वैज्ञानिक सिद्धान्त कहता है, वेद कहता है, कि अन्तरिक्ष में जो भी वाक्य रमण करता है, वह उस काल तक नष्ट नहीं होता, जब तक यह प्रकृति अपने स्थल में नहीं चली जाती। जैसे मुनिवरोंमानव के कर्मफल के अनुकूल मन का सम्बन्ध ! रहता है, इसी प्रकार अन्तरिक्ष के साथ इस वाक्य का सम्बन्ध रहता है। यह वाक्य अन्तरिक्ष का एक मन माना जाता है और यह वाक्य रमण करता रहता है। जब यह प्रलय काल हो जाता है, तो यह वाक्य अपने सूक्ष्मत्व में चला जाता है, प्रकृति भी सूक्ष्मत्व में चली जाती है, परमात्मा अपनी महत् सत्ता को अपने में शोषण कर लेता

है, संसार की प्रलय हो जाती है। आज हमें उस प्रलय काल को नहीं विचारना है। हमें संसार में विवेकी बनना है।

कर्त्तव्य भावना से विवेक

मुनिवरों !मैं इस विवेक की ही पुनः पुनः व्याख्या किया करता हूँ परन्तु जब राजा और प्रजा दोनों में विवेक होता है, तो राजा अपने कर्त्तव्य का पालन करता है कि मेरी प्रजा में किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं है। जब राजा को प्रजा के प्रति ऐसा विवेक होता है, तो प्रजा भी विवेकी बनती है। यह विवेक कैसे हो सकता है?मुनिवरों! राजा को शिव बनने की आवश्यकता है और प्रजा का कैलाश बनने की आवश्यकता है। संसार मे विवेक आ जाएगा। शिव किस प्रकार बन सकता है यह राजा और कैलाश किस प्रकार बन सकती है यह प्रजा?

मुनिवरोंजब ऋषियों की परम्परा को अपना !एंगे और वेद को अपनाते चले जाएंगे, जो हमारे द्वारा परमात्मा की देन है, जिससे मानव का हृदय उदार और अपने नाना कर्त्तव्यों का पालन करता हुआ, यह मानव समाज विवेक की अमूल्य वेदी पर रमण कर सकता है। जब प्रजा विवेकी बन जाएगी और राजा से कहेगी, कि तू विवेकी क्यों नहीं बनता, तो राजा कहाँ तक जाएगा। राजा प्रजा दोनों ही तब विवेकी बन सकते हैं। जब दोनों में अपने अपने कर्त्तव्य की भावनाएं हों जब कर्त्तव्य की भावनाएं नष्ट हो जाती हैं, तो क्लिष्टता आ जाती है, चरित्र भ्रष्ट हो जाता है और राजा प्रजा दोनों का पतन हो जाता है। राजा प्रजा को दूसरे राष्ट्र अपने अधीन करके, उनके विचारों को नष्ट किया करते हैं। जहाँ विचार नष्ट हो जाते हैं, वहाँ एक प्रकार की नास्तिकता आ जाती है, मानवत्व समाप्त हो जाता है और एक क्रीड़ातव बन जाता है। मुनिवरों! आज का वेदमन्त्र अपने कर्तव्य के लिए पुकारता चला जा रहा था कि हे मानवत् कर्त्तव्य की पवित्र वेदी पर आ और अपने कर्त्तव्य का पालन करता हुआ !, संसार को पवित्र बनाता चला जा, अग्रणी भूतम पवित्र पवित्राणी कश्मोसी रेवती अग्रिणा रेवती मधानः दधास्यते ऐसा आचार्यों का कथन है, कि मानव को हर प्रकार से विवेक की अमूल्य वेदी पर आ जाना है। जिस समय मुनिवरोंप्रत्येक मानव !,

प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक ऋषि मण्डल, प्रत्येक आचार्य जन, राजा और प्रजा सब अपने अपने कर्त्तव्य का पालन करता है, तो उस समय यह संसार सतोयुग कहलाता है। जब यहाँ कर्त्तव्य की विहीनता हो जाती है, विवेक नहीं रहता, मानव का चरित्र भ्रष्ट हो जाता है, और जहाँ चरित्र भ्रष्ट हुआ, तो राजा प्रजा दोनों का विवेक समाप्त हो जाता है। विवेक अपने कर्त्तव्य के पालन करने से आएगा।

मुनिवरोंजैसे यज्ञशाला में विराजमान हो करके ब्रह्मा यज्ञ को सम्पन्न करता है !, अपने कर्त्तव्य का पालन करता है, तो वह उस समय देवताओं का अधिपति माना जाता है। जब अधिपति माना जाता है, तो पुरोहित को सुख प्राप्त होता है और उसका आत्मा यज्ञमान के लिए प्रेरणा देता है। इसी प्रकार प्रजा राजा को अधिपति या राजा प्रजा का अधिपति बन करके, अपने कर्त्तव्य के लिए शुभ कामनाएं करता है, दूसरों के लिए शुभ कामनाएं करता है, तो उसी का नाम विवेक है, उसी का नाम सतोयुग पुरी कहलाता है।

मेरे भोले आचार्य जनोंआज ! हमें शिव बनना है। हमारे वैदिक साहित्य में शिव के नाना पर्यायवाची शब्दार्थ है। शिव नाम परमात्मा का, शिव नाम राजा का, शिव नाम आत्मा का और शिव नाम सूर्य का, परन्तु मुझे यहाँ पर्यायवाची शब्दों की व्याख्या नहीं करनी, केवल वैदिक साहित्य के अनुकूल उच्चारण करना है। विवेक के आँगन में आ जाओ, जहाँ विवेक की चर्चा चल रही थी।

बेटा परमपिता परमात्मा की कृपा !से भगवान् शिव के दर्शन करने का सौभाग्य मिला, जो रावण के गुरु कहलाते थे राजा हिमाचल की कन्या पार्वती के साथ जिसका संस्कार हुआ था। मुनिवरो। कैसे सुन्दर विवेकी रहते थे, एक ही वस्त्र है, उसी वस्त्र को लेकर पर्वतों में रमण कर रहे हैं, कैसा सुन्दर भाव, कैसा सुन्दर विवेक है। मुनिवरोंपर्वत कौन कहलाता है !? जो बहुत ऊँचा हो। ऊंचे को पर्वत कहते है, मुनिवरों! जिस राजा के राष्ट्र में ऊँचे विचारों वाली प्रजा होती है, उस राजा को शिव कहते हैं और प्रजा को कैलाश कहते हैं, ऊँचे शिखर वाली प्रजा कैलाश है और उसका स्वामी कैलाशपति कहलाता है। आज हमें पुनः से एकांत में विराजमान होकर

के शान्ति से भक्ति से विचारना चाहिए कि हम कैसे पवित्र बन सकते है राजा, प्रजा दोनों का कर्त्तव्य है, कि विवेकी बनें। जब दोनों में विवेक की भावनाएं होती हैं, तो बेटायह संसार पवित्र बनता चला जाता है !, पवित्रवेदी पररमण करता है, आचरण पवित्र रहते है, ब्रह्मचर्य रूपी गहना मानव के द्वारा रहता है आज हम इस गहने को धारण करें।

मेरे प्यारे महानन्द !जी आधुनिक काल की चर्चा करते हुए कहा करते हैं, कि मानव का स्वर्ण भी भूषण है परन्तु मानव का वास्तविक भूषण विवेक है। जब प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक ऋषि मन्डल विवेक रूपी गहने को धारण कर लेता है, तो संसार में पवित्र कहलाता है, अगस्त्य कहलाता है, विष्णु कहलाता है, शिव कहलाता है, इन्द्र कहलाता है।

बेटा !व्याख्यान देते देते कितनी दूर चले गए, उसी वार्ता पर चले आओ बेटा! जहाँ राजा और प्रजा में विवेक होना चाहिए, माता और पुत्र में विवेक होना चाहिए। जो माता अपने पुत्र का पालन करती है, वह माता कहलाती है। पालन करने का अभिप्राय, केवल पुत्र उत्पन्न करना ही नहीं है, पालन करने का अभिप्राय है कि अपने पुत्र में विवेक की वह भावनाएं उत्पन्न कर दे, जो सर्वज्ञ जीवन उसके मन में अंकित रहे। आज मुझे बेटाकुछ वैज्ञानिक और आयुर्वेद की चर्चा !एं स्मरण होती चली आ रही हैं।

गर्भ काल में माता को शिक्षा

मुनिवरोंजिस समय माता के गर्भ स्थापन होता है !, उस समय उसका हृदय उदार और पवित्र होना चाहिए। माता के गर्भ स्थल में एक कमल स्थान होता है। जैसे कमल की पंखडियां होती हैं इसी प्रकार माता के गर्भस्थल में भी पंखड़ियां होती हैं। जब मानो देखो, वह एक बिन्दु चला जाता है, आत्मा प्रविष्ट हो जाता है, तो उस काल में वह कमल की जो पंखड़ियां हैं, बन्द हो जाती हैं और गर्भ परिपक्व होने लगता है। माता का उस समय रस पान करना चाहिए, हर समय मग्न रहना चाहिए।

मुनिवरोंजिस समय गर्भ तीन माह का हो जाएं !, उस समय बालक को विवेकी बनाने के लिए यजन करना है। विवेक सहित ऊँचे पदार्थों को पान करना है। माता पिता दोनों को बुद्धि की चर्चा करनी है। बुद्धि की चर्चा करते हुए, प्राण की चर्चा करनी है और प्राण की चर्चा करते हुए, मन की ऊँची कल्पना करनी है। जब तीन माह हो जाते हैं, उस समय स्थूल रूप से मन और प्राण की गति, उस महा माता के गर्भ स्थल में प्रविष्ट हो जाती है।

मुनिवरोंजब चार माह का गर्भाशय हो जाता है !, उस समय उसके द्वारा अन्तःकरण में कुछ माता पिता के संस्कार विराजमान होते हैं, और पञ्चम माह में उन चीजों में उज्ज्वल सत्ता आती है। माता की दृष्टि सुन्दर होगी, भाव पवित्र होंगे, तो वैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुकूल वही भाव बालक की दृष्टि में पहुंचते हैं।

मुनिवरोंइसी प्रकार जब छठा मास होता है !, उस समय बालक को बुद्धि प्राप्त होती है। जैसी माता की बुद्धि होती है, और पूर्व जन्म के बालक में संस्कार होते हैं, वैसी बुद्धि उसको प्राप्त करती है। यदि माता की विवेकी बुद्धि होगी, तो बालक की बुद्धि भी विवेकी बनेगी।

जिस समय सप्त माह का गर्भाशय होता है उस समय माता का गर्भाशय परिपक्व हो जाता जय उस माह में वैदिक सिद्धांत के अनुकूल माता को पवित्र बनना है अपने विचारों को ऊँचा बनाना है, वही विचार बालक के अन्तःकरण में स्थापित हो जाते है अष्ट माह में मुनिवरों! बालक को विवेक मिलता है, विवेकी बुद्धि मिलती है ऋतंभरा, प्रज्ञा और मेघावी बुद्धि प्राप्त होती है यह बुद्धि प्राप्त होती है माता से और पूर्व जन्म के संस्कार से, मुनिवरों! नौ माह के पश्चात बालक माता के गर्भस्थल से पृथक् हो जाता है। उच्चारण करने का अभिप्राय है कि माता को अपने प्यारे पुत्र को विवेक सहित बनाना है न कि नाना प्रकार के संसार के लोलुपता को ही प्राप्त करना है।

मुनिवरोंसंसार में पति और पत्नी के संस्कार होने का क्या उद्द !ेश्य है? वेद कहता है कि अभिप्राय केवल एक ही है कि पति और पत्नी को विवेकी सन्तान उत्पन्न करना है, गृह का पालन करना है। वेद के अनुकूल गृहस्थ नियमों पर चलना अनिवार्य है,

उससे हमारे द्वारा विवेक, सत्ता, ब्रह्मचर्यता और बलिष्ठता आती है। आज हमें जानना चाहिए, कि मानव के द्वारा रोग तब आता है, जब उसके द्वारा कुछ क्षीणता हो जाती है, जब क्षीणता नहीं होती तो रोग नहीं आता।

मेरे भोले आचार्य जनोमाता और पुत्र दोनों को विवेकी बनाना है। जब माता अपने ! पुत्र को अपनी लोरियों में रमण करती है तोमग्न हो करके आनन्दित हो करके कहती है कि आ मेरे भोले पुत्रतू मेरे ! इस लोरियों के आनन्द का प्राप्त कर। बालक माता की लोरियों में आनन्द प्राप्त करता है, अपने जीवन को बनाता है, युवा हो जाता है। युवा होने के पश्चात्, माता पिता की सेवा करना पुत्र का कर्त्तव्य है। मुनिवरोंवह ! विवेक के द्वारा होनी चाहिए। जब माताऔर पुत्र दोनों विवेकी बनेंगे, तो यह गृहस्थ क्यों न स्वर्ग बनेगा। क्यों न यह संसार स्वर्ग बनेगा जब यहाँ ऋषि परम्परा अपनाई जाएगी।

मुनिवरोंमुझे स्मरण होता चला जा ! रहा है जब महर्षि पारा मुनि की पत्नी रेधनी ने अपने गर्भस्थल से धुरेन्द्र ऋषि को जन्मा। उस माता का कर्त्तव्य क्या था? गायत्री छन्दों का पाठ और नाना देव पूजा वह नित्य किया करती थी, योग चिन्तन करना, योगाभ्यास करना उस माता का कर्त्तव्य था और देखो, महर्षि धुरेन्द्र को जन्म हुआ। मुझे स्मरण है, जब महर्षि धुरेन्द्र विवेक की चर्चाएं किया करते थे।

हे मेरी भोली मातातू कितनी पवित्र है !, परमात्मा ने तुझे अमूल्यताएं दी हैं, आज इन अमूल्यताओं को शान्त न कर। आज संसार में केवल तेरा एक जीवन ऐसा है, जो संसार की पवित्र बनाता है। हे मेरी भोल मातावेद ने तुझे दुर्गा कहा है !, तू हमारे दुर्गुणों को शान्त करती है और जब दुर्गणों को शान्त करती है, तो हमारा हृदय पवित्र होता है, हमें विवेक होता है, राष्ट्र के पुजारी बनते हैं, संसार के पुजारी बनते हैं, वेद के पुजारी बनते हैं, ज्ञान विज्ञान के पुजारी बनते हैं। मातातेरे गर्भ को पवित्र ! और ऊँचा बनाते हैं।कैसा ऊँचा बनाते हैं ?

बेटा मुझे !एक वाक्य स्मरण होता चला गया । मुझे ऋषि मुनियों की चर्चाएं स्मरण आती हैं तो हृदय और भी गद् गद् हो जाता है। बेटा ! सुनो, वह माता कितनी पवित्र

होती है जो अपने गर्भ से महान वीर पुत्र को जन्म देती है, महान आत्माओं को जन्म देती है, उन माताओं को धन्य है। मुनिवरोंयहाँ भगवान राम जैसे जन्म लेते हैं। ! भगवान राम का जीवन कितना उदार था, मैं उसकी कल चर्चा करूंगा, आज समय आज्ञा नहीं दे रहा है परन्तु केवल यह कि उनका हृदय कितना उदार था, हृदय में कितनी विवेकता थी, कितना त्याग और तपस्या थी। आज हमें त्याग और तपस्या की वेदी पर आ जाना है।

मुनिवरोंमहानन्द जी आधुनिक संसार की चर्चा !मेरे प्यारे !एं करते हुए कहा करते हैं कि आज का संसार क्या है परन्तु मैं इनके प्रश्नों का उत्तरदायी बनते हुए कहा करता हूँ भवनेति गच्छति विश्वम् भवनेति प्रदाः करणाति गच्छते क्रीड़ा जब मानव ऊँची क्रीड़ा करता है, तो उस समय संसार पवित्र बनता है और जब यह क्लिष्ट क्रीड़ा करता है तो उस महा अन्धकार में चला जाता है जहाँ प्रकाश का अंकुर भी प्राप्त नहीं होता, संसार में। यहाँ माता और पुत्र में विवेक होना चाहिए, पति और पत्नि में विवेक होना चाहिए। परमात्मा को साक्षी करते हुए, दोनों प्रभु का चिन्तन करें, वेदयज्ञ स्वरूप का चिन्तन हो, ऋषि परम्परा उनके समक्ष हो। उनके द्वारा विवेक आता है, एक दूसरे की अनुमति से वहाँ कार्य किया जाता है यथार्थ कार्य किया जाता हैं, वह गृह स्वर्ग कहलाता है। जिस गृह में पत्नी और पति में, माता पिता और पुत्र में विरोध होता है, वह गृह नहीं कहलाता है, वह नरक पुरी कहलाती है। आज हम परमात्मा को साक्षी बना करके, आस्तिक बन करके गायत्राणी छन्दों का चिन्तन करना है, शास्त्र के अनुकूल और वेद वाणी को विचारना है। यहाँ पति पत्नी में विवेक होना चाहिए, पिता पुत्र में विवेक होना चाहिए।

मनु महाराज ने कहा है कि जब पुत्र सोलह वर्ष की आयु का हो जाएं, उस समय पिता का कर्त्तव्य है कि अपने पुत्र से मित्र की रीति से बर्ताव करे, उसको पुत्र नहीं जानना चाहिए और उस पुत्र से मित्र की रीति से बर्ताव करे, उसको पुत्र नहीं जानना चाहिए और उस पुत्र में इतना विवेक होना चाहिए, उदार भाव होने चाहिए, कि माता पिता को आज्ञा की परिधि में कर्त्तव्य करना चाहिए। जब मानव एक दूसरे में बंधा

हुआ होता, है एक दूसरे से सम्बन्ध रखता है, जैसे पिता पुत्र का, पति पत्नी का, प्रजा राजा का, राजा और ब्राह्मण का और ब्राह्मण और भगवान् का एक दूसरे से इस प्रकार का तारतम्य रहता है तो एक दूसरे के तारतम्य से विचार पवित्र बनते है। जहाँ यह दूसरे का भय होता है, लोक लज्जा होती है यह संसार पवित्र बनता है, विवेक आता है।

विवेक उस काल में नहीं आता, जब मानव अपने विचारों का स्वतन्त्र बन जाता है। विचार विनिमय होना चाहिए, उसको ज्ञान के अधीन होना चाहिए जैसे परमात्मा के आधीन यह प्रकृति रमण कर रही है, प्रकृति के अधीन यह मानव समाज रमण कर रहा है और रमण करता हुआ, विचारों में स्वतन्त्र माना जाता है, परन्तु कर्म करने में परतन्त्र माना गया है। इसी प्रकार से अपने विचारों को ज्ञान रूपी अमूल्य प्रकाश में परतंत्र मानना चाहिए उससे पाप न होगा। जब उससे पाप न होगा, तो पाप से उऋण होता चला जाएगा, जीवन पवित्र बनता चला जाएगा।

हे मेरे भोले आचार्य जनोवाक्य उच्चारण करते करते बहुत दूर चले गये। मनु जी का ! आदेश चल रहा था कि पिता की अपने पुत्र को सोलह वर्ष की आयु के पश्चात् अपने मित्र के तुल्य मान लेना चाहिए। दोनों में विवेक होता चला जाएगा, एक दूसरे से प्रीति होती चली जाएगी।

मुनिवरोंइसके पश्चात् गुरु और शिष्य में प्रीति होनी चाहिए। शिष्य को प्रातः काल में ! गुरु के चरण को स्पर्श करना चाहिए, क्योंकि गुरु से विद्या प्राप्त होती है, गुरु से हमें विवेक मिलता है, गुरु हमारा जन्मदाता है। देखो, प्रथम हमें माता जन्म देती है, द्वितीय जन्म आचार्य देते हैं, आचार्य कुल में जाने से हम द्विज कहलाते हैं, आज हमें उनके चरणों को स्पर्श करना चाहिए, गुरु का अपमान नहीं करना चाहिए। आज मेरे समक्ष वह दृश्य आता है जब महाराजा राम और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों में गुरु शिष्य का भाव था। मुझे स्मरण है जब मैं अपने गुरु देव के चरणों में ओत प्रोत हुआ करता था। मुनिवरोंऋषियों ने जिस विद्या को निगला !, परन्तु वमन करते ही

शिष्य उसे ग्रहण कर लेता है। वमन को शिष्य किस प्रकार निगल लेता है, आज के संसार ने उसको जाना नहीं।

मुझे मेरे भोले महानन्द जी ने एक समय कहा था, कि आज का संसार किस भाव से गुरु की पूजा करता है। गुरु जो कुछ झूठा पदार्थ त्याग देता है उसको वमन नाम करके स्वीकार करता है परन्तु पदार्थ को नहीं, अरे, गुरुओं ने जिस विद्या को पान किया है और शिष्य मण्डल में आकर उसका वमन कर देना । उस विद्या के वमन को पान करना ही शिष्य का कर्त्तव्य है। आज जब उस विद्या को निगला जाएगा, तो संसार में विवेकता आती चली जाएगी। गुरु की ब्रह्म विद्या, राष्ट्रविद्या, सामाजिक विद्या और वैज्ञानिक विद्या को पान करना है। इससे आगे चलकर हमारा भविष्य बनेगा, जीवन पवित्र बनता चला जाएगा, मानवता आती चली जाएगी। संसार स्वर्ग बन जाएगा।

मुनिवरोंआज मुझे वह दृश्य स्मरण है जब यहाँ भगवान राम गुरु के चरणों में ओत ! प्रोत हो करके उनके चरणों को छुआ करते थे, और गुरु आशीर्वाद देता आयुष्मान् भवः हे पुत्र तुम आयुष्मान रहो, तुम्हारी आयु दीर्घ हो। जब यह सुन्दर आशीर्वाद दिया जाता है, तो उस शिष्य की आयु दीर्घ होती है, गुरु शिष्य में विवेक होता है, दोनों में प्रीति होती है। बेटाजब इस प्रकार की प्रीति होती है !, तो क्यों न यह समाज ऊँचा बनेगा, क्यों न यहाँ ब्रह्म विद्या आयेगी। ब्रह्म विद्या तब नहीं आती, जब यहाँ अपने अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं किया जाता।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने आधुनिक काल की चर्चा करते हुए कहा कि आज यहाँ ! गुरुओं का अपमान किया जाता है। जब गुरु अपने शिष्य का अपमान करता है या शिष्य गुरु का अपमान करता है तो यह ही अपमान वाले संस्कार अन्तरिक्ष में विराजमान हो जाते हैं और संसार में अपवित्रता आ जाती है। आज हमें पवित्र बनना है, अपने विचारों को पवित्र बनाना है, विवेक की वेदी पर रमण करना है। भक्त और भगवान में विवेक होता है तो विवेक की पवित्र वेला जाग्रत होती है।

अगस्त्य टटीरी कथानक

मुनिवरोंमहानन्द जी एक लोक कथा वर्णन किया करते हैं !मेरे प्यारे !, जिसे बारम्बार उच्चारण किया करता हूँ यह वाक्य मुझे बड़ा सुन्दर लगा करता है। यह कहा करते हैं कि सतोयुग में एक टटीरी समुद्र तट पर रहा करती थी। एक समय समुद्र के जल ने उस टटीरी के दो पुत्र अंडों को अपने में रमण कर लिया। टटीरी ने सोचा कि इस महान पापी समुद्र ने मेरे दोनों पुत्रों को अपने में रमण कर लिया है अब मुझे इसको शान्त करना चाहिए। बेटावह इसको शान्त करने के लिए !, पृथ्वी के कणों को स्थापित करने लगी। इतने में अगस्त्य मुनि वहाँ आ पहुंचे और टटीरी से पूछा 'कि यह तू क्या कर रही है। ' उसने कहा 'कि इस पापी समुद्र ने मेरे पुत्रोंको अपने में ! रमण कर लिया है मैं इसको शान्त करना चाहती हूँ। ' अगस्त्य मुनि बोले 'अरे, यह तू क्या कर रही है, मैं इस समुद्र को पान किए लेता हूँ। ' कहते हैं अगस्त्य मुनि ने तीन आचमन किए और तीन आचमनों में समुद्र को शोषण कर लिया, अपनी उपस्थ इन्द्रियों के द्वारा समुद्र को खारी बनाकर के त्याग दिया। और उन दोनों पुत्रों की रक्षा हो गई।

मुनिवरोंवाक्य तो बड़ा स !ुन्दर परन्तु तार्किक व दार्शनिक है। महानन्द जी तो इसकी रूप रेखा इस प्रकार स्वीकार कर लेते हैं परन्तु मुझे अगस्त्य मुनि के दर्शन करने का सौभाग्य मिला है। अब मैं इसकी रूप रेखा जो हमारी ही नहीं, महर्षि लोमश और महान आचार्यों और दार्शनिकों का कथन है, कि अरे, टटीरी नाम आत्मा का है और आत्मा के मन और बुद्धि दो पुत्र है और यह संसार रूपी सागर है इसमें मन और बुद्धि दोनों भ्रमित हो जाते हैं। उस समय आत्मा को कुछ विचार आता है और यह अपने ज्ञान रूपी कणों से इस महान समुद्र को शान्त करने लगती है। मुनिवरों! आगे इससे विवेक उत्पन्न होता है। हमारे आचार्यों ने विवेक को अगस्त्य कहा है। जब अगस्त्यरूपी विवेक का जन्म हुआ, तो अगस्त्य बोले कि अरे, यह तुम क्या कर रहे हो । उत्तर मिला कि महाराज! इसने मेरे दोनों पुत्रों को रमण कर लिया है । यह देखो, संसार का शोषण कर जाता है

मुनिवरोंयह संस !ार वह है, जिसमें मन और बुद्धि भ्रमित हो जाती है और भ्रमित हो करके मनुष्य इस संसार रूपी सागर में डुबकियां लगाता रहता है। यह संसार वह है, जहाँ एक दूसरे के विचारों को नष्ट किया जाता है, एक दूसरे को नष्ट करने की भावनाएं हैं और इसी विचार विनिमय में अपने मानवत्व को समाप्त कर देता है। जन्म जन्मान्तरों के महान चक्र में रमण करता रहता है। जीवन भर किसी काल में छुटकारा नहीं मिलता।

मुनिवरोंहमारे आचार्यों ने कल्पना की है कि टटीरी नाम आत्मा का है !, मन और बुद्धि अण्डे दोनों इसके पुत्र हैं, विवेक नाम अगस्त्य का है। तीन प्रकार के आचमन मुनिवरोंदेखो !, वेद की विद्या आती है ज्ञान, कर्म और उपासना। इन तीनों विद्याओं का पान करने वाला, इस संसार सागर से पार हो सकता है और संसार सागर को खारी बनाकर त्याग देता है। जैसे मनुष्य मधु का पान करता है, परन्तु यदि कसैला और महान खारी उसके द्वारा आ जाता है, तो उसको त्याग देता है। इसी प्रकार जब विवेक रूपी अगस्त्य जागृत हो जाता है, तो इस संसार रूपी सागर को खारी बनाकर त्याग देता है। यह भक्त और भगवान दोनों का विवेक है। मुझे महर्षि अगस्त्य के दर्शन करने का सौभाग्य मिला। उनके द्वारा यह तीन आचमन का विवेक था। आज मैं पुनः पुनः परमात्मा से याचना किया करता हूँ, कि हे परमात्मातू उस माता ! को संसार में उत्पन्न कर, जिसके गर्भ से अगस्त्य मुनि जैसे बालक का जन्म हो। जो वेद की त्रिविद्या को जानने वाला और इस संसार सागर से पार होने वाला हो। ऐसी आत्मा को संसार में जन्म दे, जिससे संसार में विवेक की भावनाएं जागृत होती चली जाएं। विवेक ही राष्ट्र को ऊँचा बनाता है। विवेक ही मानवता लाता है, जब विवेक की भावनाएं होती हैं, तो यह संसार पवित्र होता है।

अब मुनिवरोंहमारा यह आ !देश समाप्त होने जा रहा है, आज हमारी भक्त और भगवान की चर्चाएं चल रही थीं। भक्त विवेक के सहित यह जानता है, कि जहाँ उसकी दृष्टि जाती है, जहाँ मन जाता है, जहाँ बुद्धि का प्रतिबिम्ब जाता है, वहीं परमात्मा उसका प्रतीक बना हुआ है, वहीं परमात्मा है। उसके द्वारा अनुपम विवेक

होता है परमात्मा के प्रति। अन्त में एक समय वह आता है, जब भक्त भगवान की गोद में विराजमान हो जाता है, परमात्मा के आनन्द को पान करता है। आज हमें उसी आनन्द को पान करना है। यह आनन्द विवेक के द्वारा प्राप्त होगा। विवेक मानव के द्वारा, उसी काल में आ सकता है' जब मानव परमात्मा का आस्तिक बने। जब मानव में नास्तिकता आएगी, तो विवेक मनुष्य से दूर चला जाएगा। यह है मुनिवरों! आज का अमूल्य आदेश यहाँ भक्त और भगवान कि चर्चा चल रही थी माता और पुत्र का विवेक चल रहा था, राजा और प्रजा का विवेक चल रहा था, गुरु और शिष्य का विवेक चल रहा था, दोनों में विवेकता होनी चाहिए, सब अपने अपने कर्तव्य का पालन करते चले जाएंगे, तो यह संसार स्वर्ग बन जाएगा, उस समय बेटा! यह राम राज्य कहलाएगा। अब आज का हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है, कल समय मिलेगा, तो कल इससे सुन्दर चर्चाएं होंगी।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवान कल आपका क्या आदेश रहेगा?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाकल जैसा समय आ !एगा, समय के अनुकूल वाक्य उच्चारण किया जाएगा। अब वेद पाठ होगा। रात्रि के बजे मोगा मंडी पंजाब। 8

१७ 19 10 1964 पुष्प 05 इन्द्र व्याख्या

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज पुनः की भांति तुम्हारे समक्ष कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। आज हम उस वेद का पाठ कर रहे थे, जिसमें परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान है। एक एक वेदवाणी में परमात्मा की नाना व्याहृतियां कहलाती हैऔर उनमें परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान विभक्त है जैसे आज के हमारे वेदमंत्रों में गो शब्दार्थ और इन्द्र आदि का प्रयोग किया जा रहा था आज हम इन्द्र की याचना करते चले जा रहे थे, जो इन्द्र धीमी धीमी वृष्टि से हमारा कल्याणकारी है, जो इन्द्र हमारी रक्षा करता है, उस इन्द्र की याचना करते चले जा रहे थे। हे इन्द्रतू कितना पवित्र है !, तेरी महिमा इस संसार में अलौकिक है। हे इन्द्रजब तू अपनी पत्नी शची के सहित संसार में रमण करता !, तो यह संसार पवित्र होता चला जाता है, हे देवतू बकासुर से संग्राम करने वाल बन !,

जब तेरा बकासुर से संग्राम होता है तो वह नष्ट हो जाता है और संसार का कल्याण हो जाता है। हे इन्द्रतू इस बकासुर का हनन कर !, जो हमारे जीवन और नाना ऐश्वर्य को समाप्त करता चला जा रहा है। अपने नाना तीखो शस्त्रों से इस बकासुर को नष्ट करो।

हमारे वेदाचार्यों ने भिन्न भिन्न आकृतियों में, भिन्न भिन्न पर्यायवाची शब्दों में इस महान इन्द्र की परिभाषाएं की हैं। इन्द्र हमारे यहाँ सूर्य को कहा जाता है, इन्द्र नाम आत्मा का है, इन्द्र नाम परमात्मा का है, इन्द्र नाम वायु का है और इन्द्र नाम प्राण का है, देखो, इन्द्र नाम ब्रह्मणोति वनस्पति विश्वं भवनेति एच्छता अग्रणी राजा का नाम भी इन्द्र कहलाता है, परन्तु इन पर्यायवाची शब्दों से कौन से विशेष इन्द्र की याचना करते चले जा रहे थे? परमात्मा की। हे परमात्मा इन्द्रआप हमारी भिन्न ! भिन्न रूपों से रक्षा करते हैं, हमारी रक्षा करो। हे इन्द्रआज हमारी आत्मा में शान्ति प्रवि !ष्ट कर, हमारी ही आत्मा में नहीं, इस संसार को शान्ति दे। विधाताजब यह महान संसार ! शान्तिदायक बन जाताहै, उस समय संसार में मानवता ओत प्रोत होती है। प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या आनन्द को चाहता है, सुख को चाहता है, परन्तु यह सुख कहाँ प्राप्त होता है?

मुनिवरोंसुख हमें उसी काल में मिलता है !, जब हम सुख स्वरूप प्रभु को जान लेते हैं, ज्ञानमय आनन्द को जान लेते हैं, जिस ज्ञान विज्ञान की महिमा को गाते हुए, हमारे ऋषि मुनियों ने भिन्न भिन्न रूप में अनेक अलंकारों में उस परमात्मा को अंकित किया। आज हमें परमपिता परमात्मा को अपने हृदय में अंकित कर लेना है, उस परमात्मा इन्द्र को कल्याणकारी जान करके अपने मानवत्व को पवित्र बना लेना है।

मुनिवरोंकल हमारा विवेक पर आदेश चलता चला जा रहा था। आज भी उससे ! सम्बन्धित आदेश है इन्द्र की याचना करते चले जा रहे थे।बकासुर के कुछ शब्द अंकित करते चले जा रहे थे, हमारे यहाँ ऋषि मुनियों का दिया हुआ एक अलंकार आता है कि अलंकारम भवनेति अ इन्द्रश्वते इन्द्र हमारे यहाँ सूर्य को कहा जाता है जो बकासुर से संग्राम करने वाला है। मैं इसकी पूर्व भी व्याख्या कर चुका हूँ, आज

भी सौभाग्य प्राप्त होता चला जा रहा है। देखो, एक समय यह पृथ्वी विष उगलने लगी। उस समय सब देवताओं ने कहा कि भाई! यजन करो। सब देवताओं ने मिलकर प्रीति से यज्ञ किया, परन्तु यज्ञ से भी यह पृथ्वी विष उगलती रही। मुनिवरों! कहते हैं कि उस समय सब देवता मिलकर जहाँ इन्द्र और शिव का आसन था, वहाँ पहुंचे और कहा कि हे शिवतू हमारा कल्याण कर। कहते हैं !, कि उस समय शिव ने विष को लेकर अपने कण्ठ में धारण कर लिया और धीमा धीमा अमृत दे करके, इस संसार को आनन्दित करते हुए संसार को शान्ति का प्रतीक बनाया।

मुनिवरों! यह क्या है? हम इन्द्र कि याचना कर रहे थे परन्तु यहाँ शिव का विवेचन आ गया, हमारे इस वाक्य का अभिप्राय यह है कि शिव नाम सूर्य का कहा गया है, जब सूर्य का ग्रीष्म ऋतु में तेज चलता है तो यह पृथ्वी विष उगलने लगती है, इसमें उष्णता उत्पन्न होने लगती है। वर्षा ऋतु आती है, सूर्य की किरणों का विभाजन होता है और इन्हीं किरणों के प्रभाव से, मेघ मण्डलों से धीमी धीमी वृष्टि होने लगती है। जब वृष्टि होती है, तो शिव रूपी सूर्य, विष को अपने कंठ में, किरणों में धारण कर लेता है और उन किरणों से देखो, किरणश्चति किरणमाद्रति विश्वम् भवनेति कामा उन्हीं किरणों से धीमी धीमी वृष्टि होकर यहाँ नाना प्रकार की सोमलताएं, वनस्पतियां, अन्न आदि उत्पन्न होते हैं, जिससे मानव का जीवन चलता है। जो जीवन भगवान शिव ने सृष्टि के प्रारम्भ में ही हमें प्रदान किया था, , आज पुनः से हम उस जीवन को चाहते है। हे परमात्मन्हमें वह जीवन दो !, वह अलौकिकता दो, जिससे हमारा जीवन सम्पन्नता को प्राप्त चला जाएं, जिससे आनन्दमयी ज्योति से हमारा जीवन, हर समय आनन्द में रमण करता रहे।

मुनिवरोंदेखो !, आज हम भगवान शिव की याचना करते चले जा रहे थे, परन्तु वार्त्ता तो यहाँ इन्द्र की चल रही थी। मुनिवरों! देखो, यहाँ शिव का ही अभिप्राय नहीं परन्तु इसमें इन्द्र का विश्लेषण आ जाता है देखो, सूर्य का नाम इन्द्र भी माना गया है, वायु को भी इन्द्र नाम से अंकित किया है। अब देखो, समुद्रों से जल का उत्थान होता है, जल से मेघ बनते हैं और जब मेघ अपना बकासुर का रूप धारण करते हैं, उस

समय सब ही देवता कहा करते हैं, कि हे भगवन्हमें आननद की वृष्टि करो। यह ! बकासुर हमें नाना प्रकार का कष्ट देता चला जा रहाहै, इस आततायी से हमारे प्राणों की रक्षा कर। उस समय यह इन्द्र नाम की वायु और शची इसकी पत्नी बन करके, अपने प्राण रूपी वज्र को लेकर इस बकासुर रूपी मेघ को नष्ट करने वाली बनती है। इन मेघों को समाप्त करके, धीमी धीमी वृष्टि होना ही संसार के लिए कल्याणकारी है। आज कल्याण में ही अपने आनंद को जानना चाहिए हमारा कल्याण ज्ञान से प्राप्त होता है

परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में कैसे कैसे सुंदर हमारे कल्याण के लिए मेघ मण्डल रचाया, मेघ मण्डल ही नहीं वायु है शची है, शची नाम विद्युत का, जो जल में रमण करती है, वायु में रमण करती है, अग्नि में रमण करती है, पृथ्वी में रमण करती है, इन सबका सम्बन्ध अन्तरिक्ष से है। अन्तरिक्ष का सम्बन्ध इन नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों से रहता है। आज हमें उस आनन्दमय परमात्मा के विज्ञान को जानना है, जिस परमात्मा ने इस सकल संसार को रचाया है। आज नहीं, बहुत समय हो गया है, जब प्रभु ने हमारे कल्याण के लिए इस पवित्र संसार का रचा, जो हमारे दृष्टिगोचर आ रहा है। नाना प्रकार के पदार्थों को रचाया, जिनमें मानव रमण करता है नाना प्रकार के वैज्ञानिक तत्त्वों को जानता है और जान करके अपने राष्ट्र के कल्याण के लिए, अपने मानवत्व के लिए, अपनी रक्षा के लिए सब कुछ आ करके सृष्टि में प्रयत्न करता है।

आओ !मेरे भोले आचार्यजनों! मेरे ऋषि मण्डल! हम उस परमपिता परमात्मा का गुणगान गाते चले जाएं, जिस परमपिता परमात्मा इन्द्र ने हमारे कल्याणार्थ इस संसार को रचाया। कैसा सुन्दर पवित्र संसार जिसमें हमारे लिए नाना खाद्य पदार्थ, 'गौरसी अमृता' वेदाचार्यो ने गो का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है, भगवान कृष्ण से एक समय महारानी रूक्मिणी ने कहा कि प्रभुगो हम किसको कहते हैं !?

भगवान् कृष्ण ने कहा था हे देवीगो नाम हमारी इन्द्रियों का है !, गो नाम जो देखो, दुग्ध देने वाला जो पशु है उसका नाम भी है, गो नाम सूर्य की किरणों का है, चन्द्रमा

की कान्ति का नाम भी ‘गौ’ है और गो नाम पृथ्वी का है। देखो, भगवान कृष्णा ने ‘गौ’ को नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्दों से विभक्त किया है।
आज मुनिवरों! देखो, गो शब्द की व्याख्या करते हुए हमारे आचार्य जनों ने कहा है, भगवान कृष्णा ने इसका उल्लेख देते हुए कहा है कि जब सूर्य से अमूल्य किरणों चलती हैं और संसार में इनका विकास होता है, तो एक एक किरणा से नाना प्रकार की किरणों की भावुकता हो जाती है, जिस समय वह संसार में ओत प्रोत होती हैं। तो प्रत्येक मानव उन किरणों से अपने जीवन को बनाता है, यौगिकता को प्राप्त हो जाता है। आज वह इन्द्र सहस्त्रों ‘भुज वाला’ बनकर हमारा कल्याण कर रहा हे।
मुनिवरोंदेखो !, हमारे वेदाचार्यों ने कहा है कि भग नाम किरणों का है, भग नाम प्रकृति का है, जिस प्रकृति की गोद में हम नाना प्रकार के पदार्थों को जानते हैं और अपने राष्ट्रननायक राजा के लिए और राष्ट्र के लिए नाना सामग्री को उत्पन्न करते हैं, नाना धातुओं को जानते हैं।
मुनिवरोंवह इन्द्र रूपी सूर्य संसार को प्रकाशित कर रहा है !, मानो देखो, प्रातःकाल अपने स्थान को त्यागता है, सायंकाल तक कर्त्तव्य करता रहता है। सायंकाल को थकित हो जाता है और रात्रि छा जाती है। रात्रि काल में रात्रि रूपी अहिल्या की गोद में जब यह मानव पहुंच जाता है और निद्रा को गोद में विराजमान हो जाता है तो यह रात्रि उसको अमूल्य जीवन देती है। मेंने पूर्व काल में वर्णन कराया कि जब निद्रा अवस्था आती है उस समय मन और आत्मा दोनों का सम्बन्ध उस परमपिता परमात्मा से होता है, उस समय आत्मा को जीवन मिलता है, सविता सत्ता प्राप्त होती है। प्रातः काल आता है सहस्त्रों भुज वाला सूर्य उदय हो जाता है, मानव का जब उन किरणों से सम्बन्ध हो जाता है तो उस नवीन जीवन प्राप्त हो जाता है।
मुनिवरोंप्रातःकाल से सायंकाल तक जब मानव अपना कर्त्तव्य करता रहता और !
यदि सायंकालको प्रश्न करो कि जितना कार्य तुमने प्रातः काल से किया है अब भी कर सकते हो, तो उत्तर मिलेगा कि कदापि नहीं, परन्तु जब प्रातःकाल में फिर कहो कि अरे, जितना कार्य तुमने कल किया, उतना कार्य अब कर सकते हो, तो उत्तर

मिलेगा कि अवश्य कर सकता हूँ, इसका क्या अभिप्राय है? कहाँ से उसे शक्ति प्राप्त हो गई? वह जीवन उसको सूर्य रूपी सविता से प्राप्त हो गया, मानो उसको महत से प्राप्त हो गया, इन्द्र ने उसको अपना बल प्राप्त करा दिया, उसी बल से अपने मानवत्व को पवित्र बनाने के लिए संसार में आया। संकेत मात्र हमारा यह आदेश चल रहा है कि हमें इन्द्र की याचना करनी है। इन्द्र नाम सूर्य का है। इन्द्र नाम परमात्मा का है क्योंकि वह निद्रा अवस्था में मानव की सविता सत्ता प्रदान करता है और सूर्य अपनी मनोहर किरणों से संसार को पवित्र बनाता है, प्रकाशमान बनाता है। अन्धकार को नष्ट कर देता है।

मैंने अभी बकासुर का अलंकार तुम्हारे द्वारा अंकित किया कि हमारे यहाँ मेघों को बकासुर कहते हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी कहा करते हैं कि बकासुर !हमारे यहाँ दैत्य को कहा जाता है, जो हमें नाना प्रकार का कष्ट देता है। मेघ भी किन्हीं कारणों से आततायी भी कहलाता है और आनन्दकर्त्ता भी कहलाता है। परन्तु यहाँ आनंद का विवेचन चल रहा है । हमें आनन्द रूपी पवित्र वेला में पवित्रतव में रमण करना है, हमें उस दृष्टि से इसका भाव उच्चारण करना है जिससे मानवत्व के लिए मानव के हृदय में यह विचार अंकित होते चले जाएं, मानव का हृदय पवित्र होता चला जाता है, ज्ञान के क्षेत्र में चला जाता है, जहाँ इन्द्र का वास रहता है।

आत्मा का वायु में रमण

मुनिवरोंदेखो !, इन्द्र नाम वायु का है। हमारे दर्शनों में तीन प्रकार की वायु का विवेचन आया है। एक इन्द्र नाम की वायु कहलाती है द्वितीय यम नाम को वायु और तृतीय बृहस्पति नाम की वायु। यह तीन प्रकार की विशेष वायु कहलाती है। परन्तु इन्हीं तीन प्रकार वायु में से देखो,। इन्द्र नाम की वायु में से तीन शाखाएं उत्पन्न होती हैं। एक को हम सोन्तति वायु कहते हैं, एक को किरणपति वायु कहते हैं और एक को सोमभाम वायु कहते हैं।

मुनिवरो! देखो, सोमभाम वायु और सोन्तति वायु क्या कार्य करती है, आज तुम्हें यह भी निर्णय कराए देते हैं। यह दर्शनों की चर्चा है, जब यह आत्मा इस शरीर को

त्यागता है और अन्तरिक्ष में जाता है तो सबसे पूर्व यह सोन्तति नाम की वायु में रमण करता है उसके पश्चात् यह किरणाति नाम की वायु में रमण करता है उसके पश्चात सोमभाम नाम की वायु में रमण करता है इससे ऊपर का स्थान यम नाम की वायु का आता है, यम नाम की वायु तीन प्रकार की शाखाएं उत्पन्न होती हैं। सुभम नाम की वायु, रेधि नाम की वायु और धिरन्तिति नाम की वायु, जिनमें यह आत्मा रमण करती है और क्यों करती है? देखो, हमारे दर्शनों और वेद में कहा है कि वायु रमण करने का अभिप्राय यह है कि इस आत्मा का पुर्नजन्म होता है। आत्मा का पुर्नजन्म नहीं, परन्तु इस आत्मा को पुनः शरीर धारण करना पड़ता है, एक शरीर को त्याग कर, दूसरा शरीर प्राप्त हो जाता है, परन्तु उस काल में प्राप्त हो जाता है, जब इन छह प्रकार की वायु में रमण कर लेता है। इन वायुओं में इस आत्मा का मन्थन होता, क्योंकि जैसे हमारा यह जन्म है, इसकी जितनी स्मृति परिवार सम्बन्धी आदि होती हैं वह इन वायु में रमण करने से सब समाप्त हो जाती हैं, उसके पश्चात् जैसे इसके कर्म हैं, उसके अनुकूल अन्तःकरण होता है, वह कर्म बीज रूप से अन्तःकरण में विराजमान रहते हैं औॅर उन संस्कारों से अगला जन्म प्राप्त होता है, यह हमारे दार्शनिकों का कथन है, परन्तु मैं आज इस चर्चा को करने नहीं आया कि इस आत्मा को इस शरीर को त्याग कर क्या दशा होती है।

मेरे प्यारे महानन्द जी कहा करते हैं कि शरीर !को त्याग करके यह आत्मा तो यम पुरी को चला जाता है, परन्तु हमारे यहाँ यम नाम वायु का है। इसमें यह आत्मा रमण करती है जिसकी तीन प्रकार की शाखाएं होती हैं परन्तु मैं इन दार्शनिक चर्चाओं में नहीं जाना चाहता, विषय बहुत गम्भीर होता चला जा रहा है, हमें वैदिक चर्चा करनी है, जिससे मानव का जीवन और परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान हमें स्मरण आता चला जा रहा है, आज हमें प्रभु की रचना को जानना है, हे इन्द्रतेरी ! कितनी सुन्दर रचना है।

मेरे भोले आचार्य जनो !मेरे भोले ऋषि मण्डल! आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय था इन्द्र । इन्द्र नाम कि वायु होती है और मुनिवरों! देखो, इन्द्र राजा को भी कहते हैं, कौन से राजा का नाम इन्द्र है?

इन्द्र राजा

इन्द्र उस राज को कहते है जो एक सौ एक अश्वमेध यज्ञ कर लेता है और इन्द्र बनकर हमारा कल्याण करता है। एक सौ एक अश्वमेध यज्ञ वह करता है, जो अपनी संस्कृति से संसार को विजय कर लेता है, आज हमें एक सौ एक अश्वमेध यज्ञ करने वाले इन्द्र को चुनौती देनी है। वह देवताओं का अधिपति माना जाता है, वह शिवपुरी और इन्द्रपुरी का स्वामी कहलाता है। आज इन्द्र के उन भावों को जानना है जिनसे हमारा कल्याण होता है। आज हमारा राजा हो, तो इन्द्र हो, जो देवताओं की, दैत्यों और असुरों को समाप्त कर रक्षा करने वाला हो, अपनी मनोहर संस्कृति और मानवत्व को पवित्र बनाने वाला हो।

आओ मेरे भोले आचार्यजनोआज हमें उस इन्द्र की याचना करनी है !, जो इन्द्र हमारा कल्याण करने वाला है, हमारे मानवत्व को पवित्र बनाता है, जिस इन्द्र ने इस संसार को रचाया है, जो इन्द्र प्रकाश का देने वाला है।

मुनिवरोंदेखो !, भगवान राम कैसे पवित्र थे, जो इन्द्र की याचना करते थे और कहा करते थे कि हे इन्द्रमुझे वैज्ञानिक बना !, संसार में देवताओं की रक्षा करने वाले भाव मेरे द्वारा प्रकट कर, मैं देवव्रत बनना चाहता हूँ, अपने राष्ट्र को मैं इन्द्रपुरी तो नहीं बनाना चाहता, परन्तु रामराज्य बनाना चाहता हूँ परन्तु भगवनउसी काल में बना ! सकता हूँ जब आपके गुणों का ग्राही बन जाऊंगा और मेरी आत्मा बलिष्ठ होती चली जाएगी।

मेरे भोले आचार्य जनो !मुझे भगवान राम का जीवन स्मरण आता है, परम पिता परमात्मा की कृपा से भगवान राम के दर्शन करने का सौभाग्य भी मिला, भगवान राम का जीवन कितना पवित्र था, आज 'भगवान् राम अस्वति' हमें राम का अनुकरण

करना है, राम के उन गुणों का धारण करना है, जिन गुणों से भगवान राम ने अयोध्या नपगरी को पवित्र बनाया और अपनी उज्ज्वल संस्कृति को पवित्र बनाया। भगवान् राम ने महाराजा वशिष्ठ मुनि से एक ही वाक्य कहा था, कि प्रभुमैं अपने ! राष्ट्र को किस प्रकार पवित्र बना सकता हूँ, मुझे एक मूल कारण निर्णय कराइए, उस समय महर्षि ने एक वाक्य कहा था कि जिस राजा के राष्ट्र में राजा की अपनी संस्कृति होती है, उस राजा का राष्ट्र पवित्र कहलाता है, यदि तुम अपने राष्ट्र को पवित्र बनाना चाहते हो, अपने राष्ट्र को राम राज्य बनाना चाहते हो, तो राजा के राष्ट्र में एक संस्कृति होनी चाहिए। जिस राजा की संस्कृति भ्रष्ट हो जाती है, संस्कृति का स्वरूप परिवर्तन हो जाता है मानो राष्ट्र में सात्विकता नहीं रहती, नाना विवाद रहता है तो वह राष्ट्र न होने के तुल्य है। हे रामआज तुझे अपने राष्ट्र को पवित्र बनाना ! है, तो तुम्हारे राष्ट्र में संस्कृति होनी चाहिए। प्रायः मानव कहता है कि संस्कृति क्या पदार्थ है ?संस्कृति किसको कहते है ?

संस्कृति

मुनिवरोंसंस्कृति उ !सको कहते हैं, जिस वाणी में, जिस भाषा में यौगिकता हो, सदाचार को देने वाली हो, ऊँचे विचार देने वाली हो, और जिसमें सब सम्पन्न विद्याएं हों, उसको संस्कृति कहते हैं। संस्कृति किसी व्यक्तिगत भाषा का नाम नहीं, संस्कृति उसको कहते हैं, जिसमें मानव का चरित्र बनता हो, जिसमें मानव के दुर्गुण शान्त होते हों, जिसमें राष्ट्र पवित्र बनता हो, सदाचार की भावनाए आती हों, उसको 'राष्ट्र संस्कृति' कहते हैं, उसमें संसार का ज्ञान विज्ञान भी हो। ऐसी कौन सी संस्कृति है? ऐसी संस्कृति वह ही कहलाती है, जो हमारे ऋषियों की परम्परा है, जिसमें ऋषियों का यौगिकत्व भरा हुआ है, सबसे उत्तम संस्कृति वह है, जो वेद में है। वेद से अनुकरण की हुई, मन्थन की हुई, जो भाषा है उसको भी संस्कृति कहते हैं।

आज जो राजा अपनी राष्ट्र संस्कृति से, संसार को विजय कर लेता है, वह एक सौ अश्वमेध यज्ञ करता है और यज्ञ करने के पश्चात् उसको इन्द्र की उपाधि प्रदान की जाती है। वह राजा इन्द्र कहलाता है मुझे पूर्व काल में ऐसे राजा इन्द्रों के देखने का

सौभाग्य मिला, जिन्होंने एक सौ अश्वमेध यज्ञ किए। महाराज शिव ने अश्वमेध यज्ञ किया, शिवपुरी में शिव राजा कहलाए, इसी प्रकार इन्द्र ने, आज मैं राष्ट्र की विशेष रूप से चर्चा नहीं करना चाहता।

मुनिवरोंइन्द्र का विवेचन चल रहा था !, इन्द्र नाम वायु का है, इन्द्र नाम परमात्मा का है, इन्द्र नाम सूर्य का है इन्द्र नाम राजा का है और इन्द्र नाम हमारे यहाँ इस आत्मा का भी है, क्योंकि यह आत्मा नाना प्रकार का स्वरूप धारण करती है, आत्मा में ज्ञान भी है, विज्ञान भी है, जब यह आत्मा इन्द्र को जान जाता है, तो इन्द्र बन जाता है, आत्मा ही एक समय इन्द्र कहलाता है।

मेरे भोले आचार्य जनोआज का हमारा आदेश इन्द्र को पुकारता चला जा रहा था !, कि हे इन्द्रतू आ औ !र इस संसार का कल्याण कर, नाना प्रकार के कष्टों से हमारी रक्षा कर, हे प्रभुआप इस संसार के रचयिता हैं !, इसको सुख और शान्ति दो, हमें सब कुछ प्राप्त हो।

गौ का अभिप्राय

मुनिवरोंदेखो !, गो शब्दार्थ का प्रयोग आता चला जा रहा था, गो नाम इस पृथ्वी का है, जो दुही जाती है, उसी का नाम गो कहलाता है। गो नाम उस पशु माता का भी है, जो दुही जाती है, दुग्ध पान कराती है, मानव उससे बलिष्ठ होता है, ब्रह्मचर्य सत्ता प्राप्त होती है, दुहने के नाते, उसको गो कहते हैं। मुनिवरों! गो नाम इस पृथ्वी का है जो दुही जाती है कृषि करने वाला वैश्य, जब इस गो रूपी पृथ्वी की चमड़ी उधेड़ता है और इसके मांस में बीज की स्थापना करता है, तो इससे नाना प्रकार का अन्न उत्पन्न होता है, सोमलताएं उत्पन्न होती हैं, नाना वनस्पतियां उत्पन्न होती हैं। यह पृथ्वी दुही जाती है, इसी प्रकार वैज्ञानिक, इस पृथ्वी के विज्ञान को जानता है, इस पृथ्वी में से नाना प्रकार के खनिज पदार्थों की उत्पत्ति होती है, वैज्ञानिक जानता है, कि अमुक स्थान में यह अमूल्य धातु मिल सकती है, स्वर्ण मिल सकता है, वाहन चलाने वाले, नाना प्रकार के यन्त्रों में प्रयोग करने वाली, यह खनिज पदार्थ उत्पन्न होते हैं,

इसलिए इस पृथ्वी को वैज्ञानिक भी और कृषक दुहते हैं, जो दुही जाती है, उसको गो कहा जाता है?

हमारे वेदाचार्यों ने बेटाभिन्न ! भिन्न प्रकार से इस गो शब्द का प्रतिपादन किया है, माता का नाम भी गो कहलाता है, माता का दुहने वाला माँ का पुत्र है, जब वह माता की लोरियों में रमण करता है, दुग्ध पान करता है, जीवन पान करता है, आनन्द पाता है, इसलिए मुनिवरोंउस माता का नाम भी वेदों में गो शब्दार्थों से ! प्रयोग किया गया है।

मुनिवरोंएक स्थान में इस जल का नाम भी गो है !, क्योंकि वैज्ञानिक जन जल का मन्थन करते हैं और मन्थन करके नाना यन्त्रों के द्वारा विद्युत को निकालते हैं और इस विद्युत से नाना प्रकार के यन्त्र बनाते हैं, नाना प्रकार के परमाणुओं को एकत्रित किया जाता है और नाना यन्त्रों का विकास किया जाता है। यह है बेटाआज हमारा ! वैदिक साहित्य, हमारे वाक्यों का अभिप्राय यह है, कि यह सब ज्ञान विज्ञान उस प्रभु का रचाया हुआ है।

मेरे भोले आचार्य जनो !मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल ! मुझे जब यह दर्शनों को चर्चा, वैदिक साहित्य की चर्चाएं स्मरण आती हैं, तो हृदय गद् गद् होने लगता है और कहने लगता हूँ, कि परमात्मन् तूने यह कैसा पवित्र संसार रचाया, जिसमें भगवन! सब ही कुछ उत्पन्न कर दिया, नाना प्रकार के मानव के खाद्य पदार्थ, नाना प्रकार का खनिज पदार्थ, नाना प्रकार की सम्पत्ति, इस पृथ्वी को दी है, प्रभु! आपने महत् दिया है किरणों दी हैं।

बेटासूर्य की सहस्त्र किरणों होती हैं !, यदि हम इन किरणों के भाव को विचारें, कि एक एक किरण इस भूमण्डल में क्या क्या कार्य करती है, एक एक किरण में क्या क्या तत्त्व और परमाणु विराजमान है, परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान हमें चकित कर देता है, यह सूर्य, इन्द्र सहस्त्रों भगों वाला कहलाता है।

मुनिवरों यदि हम आत्मिक !विज्ञान से इस संसार को कल्पना करते हैं, तो संसार कुछ नहीं, किंचित्त मात्र है, आत्मिक विज्ञान के लिए, यह संसार एक कल्पवृक्ष है।

बेटामैं एक वाक्य को नित्य प्रति उच्चारण किया करता हूँ !, मुझे बड़ा प्रिय लगता है, मेरे प्यारेमहानन्द जी !, ऋषि मडल भी, इस वाक्य के लिए लालायित रहते हैं, इस वाक्य के लिए मैं एक अलंकार दिया करता हूँ कि यह संसार कल्पना करने वाला है, यहाँ मानव जो चाहता है, वह बन जाता है।

कल्पवृक्ष का अलंकार

कहते हैं कि एक समय में ऋषि नारद जी इस संसार का भ्रमण करने के लिए आ पहुंचे। उन्होंने देखा, कि एक मनुष्य दुःखी है, उसकी पत्नी उसको नित्य प्रति दण्ड देती, प्रातःकाल उसकी पत्नी ने उसको दण्ड दिया। वह बड़ा दुखित और प्रभु से याचना कर रहा था, कि प्रभु! मुझे यहाँ से ले चल, मैं अब जीवन नहीं चाहता। नारद मुनि ने सोचा कि यह मनुष्य तो बड़ा दुखित है और बोले कि भाई! आज तुम मेरे द्वारा चलो, मैं तुम्हें स्वर्ग में पहुंचा दूं, वह मनुष्य बड़ा प्रसन्न हुआ और प्रसन्न होकर बोला कि चलिए प्रभुवहाँ से दोनों चलते हुए स्वर्ग के द्वार पा जा पहुंचे !, स्वर्ग के द्वार पर एक कल्पवृक्ष था, नारद मुनि बोले कि यह कल्पवृक्ष है, तुम यहाँ विराजमान हो जाओ, मैं अभी विष्णु क द्वार जा रहा हूँ, जहाँ विष्णु से तुम्हारे लिए याचना करूंगा, कि यह मनुष्य स्वर्ग में आ जाएं। नारद मुनि तो स्वर्ग में जा पहुंचे और वह मनुष्य उस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो गया, वहाँ मन्द सुगन्ध वाली चल रही थी, मनुष्य का हृदय कोमल हो गया, ऐश्वर्य में आया और मन में कल्पना जागी, कि अरे, तेरे विराजमान होने के लिए तो एक आसन होना चाहिए था, बेटावह तो ! कल्पवृक्ष, कल्पना की और आसन लग गया, अब आसन पर विराजमान हो गया, तो मन में कल्पना जागी, कि अरे, अब तो तेरे लिए विश्राम करने वाला आसन भी होना चाहिए था, कल्पना की, तो वह विश्राम करने वाला आसन भी लग गया, अब और अधिक ऐश्वर्य में आया और कल्पना की, कि अरे, यहाँ तो सेवा करने के लिए नाना अप्सराएं भी होनी चाहिए थी, अब नाना अप्सराएं भी सेवा के लिए आ गई। जब वहाँ सेवा होने लगी, तो मनुष्य के मन में कल्पना जागी, कि यदि अब मेरी पत्नी होती, तो मेरे ऊपर डंडा होता, अब देखो, उसकी पत्नी भी डंडा लिए आ पहुंची, अब मनुष्य

आगे है, और पत्नी उसके पीछे डंडा लिए है, मनुष्य तीव्र गति से जा रहा है और पत्नी डंडा लेकर उसके पीछे। इतने में स्वर्ग से नारद जी आ पहुंचे और आश्चर्य से दृष्टिपात किया, कि अरे, यह क्यानारद मुनि ने दीर्घ वाणी से कहा !, कि अरे, कल्पना को त्याग। अब मुनिवरोंदेखो !, मनुष्य ने कल्पना को त्यागा, तो न तो पत्नी है, न अप्सराएं हैं, न आसन है, स्वयं ही मनुष्य है। नारद मुनि बोले कि हे महा मूर्ख ! तूने कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान होकर, भोग विलासों की कल्पना की, अरे, यहाँ तू स्वर्ग की कल्पना करता, तो देवता बन जाता, विष्णु बनने की कल्पना करता, तो विष्णु बन जाता।

मेरे भोले आचार्य जनोउच्चारण करने का अभिप्राय यह है !, कि संसार एक प्रकार का कल्पवृक्ष है, यहाँ जो भी कल्पनाएं की जाती है, वह ही मनुष्य की पूर्ण होती हैं, देवता बनने की कल्पना कर लो, , वैज्ञानिक बनने की कल्पना कर लो, भोग विलासों वाली कल्पना कर लो, विष्णु बनने की कल्पना कर लो, वह ही बन जाओगे बेटाअब आज का हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है !, आज हम इन्द्र की याचना करते चले जा रहे थे, आज हमें इन्द्र बनना है, वैज्ञानिक बनना है, बुद्धिमान बनना है, अब यह आदेश समाप्त हो गया है।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवनगुरु जी !! आपका आज का आदेश बहुत प्रिय हुआ, कल आपका क्या आदेश रहेगा?

पूज्यपाद गुरुदेवः कल महानन्द जी जैसा समय होगा, उसके अनुकूल देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवन् कल हमारी एक इच्छा है। !

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या?

पूज्य महानन्द जीः हम यह चाहते है, कि कल कुछ आत्मा की और कुछ दर्शनों की चर्चा हो जाएं।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटादर्शनों की चर्चा तो नित्य ! प्रति होती है, आज भी दर्शनों की चर्चा थी।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्कल हम आपसे कुछ प्रश्न करना चाहते हैं। हमें बहुत ! सी भ्रांतियां हैं और वह यह कि वेद जो परमात्मा की वाणी है, यह परमात्मा ने कितने उत्पन्न किए और कैसे उत्पन्न किए।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य यह तो दर्शनों की चर्चा क्या यह तो अनुभव है !बेटा....., योग का विषय है और इसकी व्याख्या में कर भी चुका हूँ।

पूज्य महानन्द जीः भगवन् !जिस रूप से हम चाहते हैं उस रूप से अब तक नहीं की।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटाकल का कल देखा जाएगा !, जैसा समय आएगा, उसके अनुकूल उच्चारण किया जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः कल भगवन् !हम यह भी जानना चाहते है कि वेद में कितनी व्याहृतियां है, ? राम, कृष्ण के सम्बन्ध में भी कुछ प्रश्न करने हैं। आप सबका कल उत्तर देने की कृपा करें।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटाकल का कल देखा जाएगा !, जैसा समय आएगा, उसके अनुकूल उच्चारण किया जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंमहानन्द जी का जो वाक्य है !, बड़ा उदार और गम्भीर है। कल इनके प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयत्न करेंगे, आज तो हम केवल इन्द्र की व्याख्या लेकर चले, इन्द्र का कुछ रूप प्रतिपादन किया, विस्तार नहीं, केवल अंकुर रूप से। समय मिलता चला जाएगा, तो आगे इसकी विस्तार से व्याख्या करते चले जाएंगे, आज का हमारा आदेश समाप्त हो गया है। आज हमारे आदेशों का अभिप्राय ज्ञान और विज्ञान था कल हमारा आदेश यौगिकता से भरा हुआ, और कुछ साधारण वाक्यों से भरा हुआ होगा अब वेद पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त। मोगा मन्डी (पंजाब)

१८ 20 10 1964 पुष्प 05 गौतम अहिल्या व्याख्या

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ !, आज पुनः की भांति हम तुम्हारे समक्ष कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे, मैंने आज से पूर्व कई स्थलों में कहा था, कि इस समय हमारा महर्षि पिप्पलाद मुनि संहिता के मन्त्रों का पाठ प्रारम्भ हो रहा है, इसमें कल के कुछ मन्त्र शेष हैं इसके पश्चात् यह संहिता समाप्त हो जाएगी, यह वेद संहिता हमें ऊँचे शिखर के लिए, प्रभु के गुणगान के लिए पुकारती चली जा रही थी। यह वह अमुकी वेद ज्ञान है जिसको पान करके ऋषि मुनि अपने मानवत्व को, ऋषित्व को ऊँचा बनाते थे उसके ज्ञान विज्ञान को जानने का प्रयत्न किया। आज पुनः से हमें प्रयत्न करना है

प्रार्थना

आज हम प्रारम्भ के मन्त्रों में यम की याचना कर रहे थे, हे यम्हमारी रक्षा कर !, वेदों ने तुझे यमराज कहा है, हे परमात्मन् यमराजजब तेरे स्थल में यह आत्मा ! जाता है, उस समय इसके जो कुछ भी कर्म होते है वह इसके अन्तःकरण में अंकित होते हैं, वह तेरे द्वारा जाकर प्रगट होते हैं और उसके द्वारा आपका न्याय चलता है, वेदों ने आपको न्यायाधीश कहा है, हे यमराजयह संसार ! तेरा राज्य है, यह संसार क्या है इस लोक लोकान्तरों में तेरा राज्य छाया हुआ है, तेरे राष्ट्र में जो भी आता है, वह न्याय कराने के लिए आता है, विधाताप्रत्येक !अब न्याय करो। हे प्रभु ! मानव, प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि मन्डल, सब न्याय चाहता है। हे यमराजहमारे लिए !, वह नियम बना, जिससे भगवन्हम कोई पाप न कर सके !, हम आपके न्यायालय में आवे ही नहीं। हम वह कर्म करते चले जाएं, जिससे हमारा जीवन व्याहृतियों वाला बनता चला जाएं। हे कृपा सिन्धुहमारे ऊपर कृपा कीजिए !, जिससे हम पवित्र बनते चले जाएं।

विधाताहम नित्य प्रति वेद के अमूल्य ज्ञान का प्रसार किया करते हैं !, इसको पान करने का सौभाग्य भी मिला। पिप्लाद ऋषि का जीवन संसार में अग्रणी माना जाता है, उनके जीवन में अग्ने था। अग्ने किसे कहते हैं? तेज को, ज्ञान विज्ञान को अग्ने कहते

हैं। जिस मानव के हृदय में ज्ञान और विज्ञान होता है, मानवतव होता है, उसका जीवन अग्ने कहलाता है। जैसे अग्नि ईंधन को प्रज्वलित करती है और उसे भस्म कर देती है, इसी प्रकार यह जो वेदज्ञ ज्ञान है, यह मानव क हृदय में जो आत्मा विराजमान है, उसके ज्ञान विज्ञान को प्रगट कर देता है, जब ज्ञान विज्ञान और वेदों की व्याहृतियों का सबका मिलान हुआ, तो ज्ञान रूपी अग्नि नाना अन्धकार रूपी ईंधन को भस्म कर देती है, यह कैसा अमूल्य ज्ञान है, जो परमपिता परमात्मा ने मानव के कल्याणार्थ सृष्टि के प्रारम्भ में प्रदान किया।

मुनिवरोंसंसार की जितनी विद्या !एं हैं उन सबका सम्बन्ध वेद से है और वेद का सम्बन्ध ओ३म् से है, एक दूसरे से सम्बन्धित होते हुए विकास होता है जैसे प्रकृति और महत् दो पृथक् वस्तु हैं, परन्तु जब दोनों का मिश्रण हुआ, तो तृतीय वस्तु बन गई, जिसको हम सृष्टि कहते हैं। संकल्प और विकल्प दोनों के मिश्रण से तृतीय वस्तु को मन कहते हैं। इसी प्रकार मुनिवरों! हमारे यहाँ कहा जाता है कि वेद ज्ञान सबसे प्रथम आज नहीं, इसको अरबों वर्ष से अधिक हो चुका है, जब से वेदों का ज्ञान ऋषियों की परम्परा से यहाँ प्रकाशित हुआ और आज हमें भी पुनः से प्रभु की अनुपम कृपा से इसे उच्चारण करने का सौभाग्य प्राप्त होता है, परन्तु मुझे इन वाक्यों में नहीं जाना, हमारा तो वाक्य ही कुछ और चल रहा था, हमने यह सूक्ष्म सा वेद का प्रकाश दिया। आज के वेद पाठ ने मेरे प्यारे महानन्द !जी के जो प्रश्न उत्तर थे, वह तो समाप्त कर दिए, अब इस मूर्खानन्द की वार्त्ता देखो, उच्चारण कर रहे हैं, कि अब कुछ अहिल्या का विवेचन दे दीजिए, परन्तु मैं उच्चारण कर रहा हूँ, कि बेटा ! मैंने किसी काल में अहिल्या और इन्द्र की व्याख्या की है।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरु देव आप आज व्याख्या !दे देंगे, तो क्या इसमें कोई दोष है?

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, दोष तो नहीं, परन्तु बारम्बार व्याख्या उच्चारण नहीं करनी चाहिए। भगवन्वह व्याख्या प्रिय लगती है !, कल आपका इन्द्र का विवेचन भी चला था।

अच्छा मेरे !हास्य तो मुनिवरों !प्यारेमहानन्द जी क्या कथन है !, कि अहिल्या रूपम् भवति वेदज्ञता आज वेद में जो अहिल्या का विवेचन आता चला जा रहा था, उसका कुछ रूप वर्णन करा दीजिए।

वर्तमान में प्रचलित अहिल्या वृत

बेटा1 हम अहिल्या उस माता को कहा करते है, जो हमे आनंद देने वाली है, मेरे प्यारेमहानन्द जी मुझे एक लोक कथा वर्णन किया करते हैं !, कि जब सृष्टि का प्रारम्भ हुआ, तो उसके पश्चात् ब्रह्मा के कमण्डलु से एक कन्या का जन्म हुआ, वह कन्या जब युवा हुई, तो इन्द्र ने कहा कि इस कन्या को मुझे दे दो, ब्रह्मा ने कहा, कि भाई! यह कन्या तुम्हें ही प्राप्त हो जाएगी। परन्तु इन्द्र तो देवताओं की सहायता के लिए चले गए और यह कन्या युवा हो गई। ब्रह्मा ने वह कन्या गौतम को अर्पित कर दी और कहा कि अरे, गौतमयह अहिल्या है !, इसको तुम इन्द्र को अर्पित कर देना, जब वह तुम्हारे द्वारा आ पहुंचे। गौतम ने कन्या को स्वीकार कर लिया और उसको अपनी पत्नी चुन लिया और इन्द्र को अर्पित नहीं की। अब इन्द्र ब्रह्मा के द्वार पहुंचे और कहा कि वह मेरी देन कहाँ है? उन्होंने कहा कि भाई! मैंने तो गौतम को देदी है, क्या गौतम ने तुम्हें अभी तक अर्पित नहीं की है? उन्होंने कहा कि कदापि नहीं भगवन्उस समय ब्रह्मा ने इन्द्र से कहा !, तो भाई! गौतम के द्वार जाओ और अपनी अहिल्या को अपना लो।

इन्द्र वहाँ से चले और क्या किया?महानन्द जी इसमें कल्पित मूर्खों वाला, यह वाक्य कहा करते है, कि इन्द्र ने चन्द्रमा को अपने साथ ले लिया और इन्द्र ने प्रवहो अस्ति अवरेहणा कच्छता विश्वम् अशुधेम् भवते मुनिवरों! कहते हैं कि चन्द्रमा अब द्वारपाल बना और इन्द्र मुर्गा बना। गौतम गंगा स्नान जाते थे, मुर्गे ने वाणी से कुछ कहा और गौतम गंगा स्नान चल दिए, जब गौतम गंगा स्नान को जा पहुंचे, उस समय इन्द्र ने अहिल्या से छल किया। अब जब गौतम गंगा के द्वार पहुंचे, तो गंगा ने कहा कि अरे, कौन रात्रि के समय में? उस समय गौतम ने कहा माता! मुझे नहीं जानती, मैं चतुर्थ समय गंगा स्नानम् ध्यानम करने आता हूँ। गंगा ने कहा कदापि नहीं। तुम्हारे

गृह में छलम् भवते अस्ते, तुम्हारे गृह में छल हो रहा है। मेरे यह ऋषि कहा करते हैं, कि गौतम ने भीगे वस्त्रों को चन्द्रमा को अर्पण किया, जिससे चन्द्रमा गदला बन गया और वहाँ पहुंच कर इन्द्र को श्राप दिया कि तुम सहस्त्रों भगों वाले बन जाओ। वह सहस्त्रों भगों वाला बन गया, और अहिल्या को भी शाप दिया, वह वज्र बन गई। उस समय अहिल्या ने कहा भगवन्आपने वज्र बना दिया !, परन्तु मेरा कल्याण किस प्रकार होगा? तो यह कहा करते है कि त्रेताकाल में राम आवेंगे और तुम्हार उद्धार होगा। त्रेताकाल में राम आए और उन्होंने पदों की ठोकर लगाई और वज्र अहिल्या अन्तरिक्ष में चली गई।

मुनिवरोंवाक्य तो बहुत सुन्दर है और यथार्थ है !। परन्तु इसकी मूर्खों की रूपरेखा, ज्यों की त्यों स्वीकार कर ली। यह वाक्य तार्किक और विचार सहित है। सुनोआज ! भी हमारे वेद पाठ में अहिल्या शब्दों का प्रयोग किया जा रहा था, अहिल्या हमारे यहाँ पृथ्वी को कहते हैं, अहिल्या रात्रि को भी कहते हैं, अहिल्या माता को भी कहते हैं, नाना प्रकार के अहिल्या के शब्दार्थ माने गएं हैं, अब इनको व्याख्या सुनो :

अहिल्या वृत्त का वास्तविक अभिप्राय

मुनिवरोंप्रकरण के आधार पर यहाँ अहिल्या नाम रात्रि का है !, गौतम नाम चन्द्रमा का है और इन्द्र नाम सूर्य का है, सूर्य ने विधाता से कहा था कि इस अन्धकार को मुझे अर्पित करो, क्योंकि आपने मुझे वह सविता सत्ता दी है, कि मैं अन्धकार रूपी रात्रि को नष्ट करूं, इसको भोग करने का मेरा कर्त्तव्य है, परन्तु यह चन्द्रमा को अर्पित कर दी।

मुनिवरोंजब रात्रि छ !ा जाती है, चन्द्रमा आते हैं 'गौतम गौति अस्ति शुक्रति' गौतम जो नाना कान्तियों का स्वामी है, उसका नाम गौतम है और इसे अहिल्या रात्रि का पति कहते है क्योंकि यह रात्रि को भोग करता है और कैसे करता है? जैसे पतिव्रता देव कन्या अपने श्रृङ्गार को अपने पति को अर्पित कर देती है, इसी प्रकार यह रात्रि अन्धकार रूपी श्रृङ्गार को चन्द्रमा को अर्पित कर देती है, चन्द्रमा इसका भोग भोगता रहता है और संसार को सुख देता हे, आनन्द देता है।

मुनिवरोंअब प्रातःकाल होता है !, देवता याचना करते हैं कि विधाताहमारा कल्याण ! करो। उस समय यह सूर्य रूपी इन्द्र आते हैं और अपनी किरणों से इस अहिल्या का अपने में रमण कर लेते हैं। अब यह अहिल्या रूपी रात्रि पृथक् हो जाती है और इस सूर्य का प्रतिबिम्ब चन्द्रमा पर जाता है और यह चन्द्रमा गदला बन जाता है और वह अन्धकार सूर्य रूपी इन्द्र में रमण कर गया। इसलिए यह अहिल्या रूपी जो रात्रि है, यह उस महान इन्द्र के लिए ब्रह्मा ने देन दो।

मुनिवरोंगौतम के भी हमारे यहाँ नाना शब्दार्थ हैं। गौतम नाम इस आत्मा का भी है ! क्योंकि यह गो नामक इन्द्रियों का स्वामी है, परमात्मा का नाम भी गौतम है क्योंकि 'गौ' नाम प्रकृति का है और 'ता' परमात्मा का, इन दोनों का स्वामी होने के नाते परमात्मा को गौतम कहते हैं

पूज्य महानन्द जी तो क्या भगवन्राम ने !यह वाक्य समाप्त हो गया कि भगवन् ! अहिल्या का कल्याण किया?

हास्य..... बेटामुझे राम के समय को दृष्टिपात करने का सौभाग्य है !, आज के संसार ने इस वाक्य को जाना नहीं, राम इतने वैज्ञानिक थे, कि वह पृथ्वी के विज्ञान को जानते थे, मैं तुमसे एक धार्मिक चर्चा करने आया हूँ कि जब हम राम को मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहते हैं और उन्होंने मर्यादा चलाई और संस्कृति का उत्थान किया तो क्या क्षत्रिय को किसी ऋषि पत्नी को ठुकराने का अधिकार था या नहीं, यह जानना चाहता हूँ? क्षत्रिय उसको कहते हैं? जो किसी की पत्नी को स्वप्न में भी अपनी चित्रावली में धारण न कर सके, पदों की ठोकर तो बहुत दूर है। हमें जान लेना चाहिए, मुझे राम को देखने का सौभाग्यमिला और मैं प्रभु से कहा करता हूँ कि यदि प्रभुसंसार का कल्याण करना है !, तो राम जैसे वीरों से हो ही सकता है, जिसका जीवन संसार में अग्रणी था, पवित्र था, सस्कृतिज्ञ था, धर्म की मर्यादा को ऊँचा बनाने के लिए भगवान राम जैसे पुनः से आते चले जाएं।

मुनिवरोंप्रकरण को विचार लेना चाहिए !, यहा अहिल्या नाम पृथ्वी का है, जो पृथ्वी उपजाऊ हो परन्तु अन्न न उत्पन्न किया जा रहा हो और वज्र तुल्य पड़ी हो उस भूमि

को अहिल्या कहा जाता है। बेटा भगवान राम जब वन जा रहे थे !और अपनी अयोध्या के राष्ट्र को पार किया, तो उन्होंने देखा, कि अयोध्या की भूमि वज्र तुल्य पड़ी हुई है, इसमें अन्न नहीं उत्पन्न किया जा रहा है, राम ने वैज्ञानिक दृष्टि से देखा कि यह भूमि तो बड़ी ही सुन्दर और उपजाऊ है। उनके अयोध्या के निकट ही निषाद का राष्ट्र था, निषाद से मिलान हुआ, तो निषाद ने कहा कि महाराजमेरे लिए कोई ! सेवा, उन्होंने कहा कि भाई! सेवा तो यह है कि यह जो अयोध्या की भूमि है इसके लिए अपने कृषकों से, वैश्यों स कहो, कि यह भूमि बड़ी सुन्दर है, इसकी चमड़ी को उधेड़ कर इसके मांस में बीज स्थापन कर, अन्न उत्पन्न किया जाएं। ऐसा ही किया। तो मुनिवरोंभगवान राम के चरण कमलों से उस अहिल्या रूपी पृथ्वी का उद् !वार हो गया।

मुनिवरोंदेखो !, वाक्य चल रहा था, गौतम और अहिल्या की व्याख्या, अहिल्या हमारे यहाँ इस रात्रि को कहते हैं, यह हमें आनन्द देती है, जब हम निद्रा अवस्था में, अहिल्या को गोद में पहुंचते हैं, तो यह हमारा मिलान प्रभु से कराती है, हम आनन्द प्राप्त करते हैं और जीवन सत्ता ग्रहण करते हैं। हे मेरे भोले आचार्य जनोह !में प्रत्येक वाक्य को विचार लेना चाहिए, हमारा ज्ञान और विज्ञान से भरा हुआ, जो वेद ज्ञान है, उसके ऊपर अनुसन्धान करना है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन् एक वाक्य !और जानना चाहता हूँ और वह यह कि राम के विधाता लक्ष्मण ने रावण की बहिन की नाक काट ली थी, इसका आप कहाँ तक समर्थन करेंगे, यदि उसकी नाक कटी तो क्षत्रिय धर्म यहाँ समाप्त हो गया।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यमहानन्द जी जितने वाक्य सब मूर्खों वाले ....., बेटातुम ! जानते नहीं इन वाक्यों को, सुनोरावण की बहिन ! का नाम था सोमतिती, वह इस दण्डक वन में भ्रमण करने के लिए आ पहुंची और उसने यह जाना कि मैं राम को अपना पति चुन लूं, राम ने कहा कि मेरा तो संस्कार हो चुका है तुम लक्ष्मण को अपना पति चुन लो। देखो, यह भी वाक्य उनका वास्तव में समय के अनुकूल था। अब लक्ष्मण ने उससे कहा कि तुम्हारे माता पिता, भाई विधाता हों, तो उनसे कहो

कि तुम्हारा संस्कार कर दें, हम तो सूक्ष्म क्षत्रिय बालक हैं तुम हमारे द्वार क्यों आती हो, हम तुम्हारा संस्कार नहीं कर पाएंगे और क्रोध में आकर यह भी कहा कि क्या तुम्हारे माता पिता नष्ट हो गए, जब ऐसा कहा तो उसका अपमान हो गया, सोमतिति को अपने विधाता और राष्ट्र का बड़ा गौरव था, अपमान होने के नाते उसने स्वयं अपनी नाक काट ली और क्यों काटी? उसने षड्यंत्र रचा और इसलिए रचा, जिससे मेरा कुटुम्ब, परिवार मेरे इस अपमान को जान जाएं और दोनों को नष्ट भ्रष्ट कर दे। बेटा! उसने यह ऊँचा उन दोनों के नष्ट करने के लिए रचा, परन्तु आगे वह षड्यंत्र ऐसा रचा कि बेटा रावण का परिवार ही समाप्त हो गया। !

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवानऐसा हो सकता है !, कि कोई अपनी नाक कान स्वयं काट ले?

पूज्यपाद गुरुदेवः अवश्य हो सकता है, बेटाइसमें क !्या बात है। तुमने मनु महाराज के अनुकूलऔर वेदों में भी कुछ मंत्र आते है इनके अनुकूल यह जाना होगा कि यह जो देव कन्या है, इसको जब किसी वस्तु की हठ हो जाती है, और वह कार्य इसके लिए असम्भव हो जाता है, तो वह स्वतः ऐसे कार्य कर लेती है, ऐसी अनेक चर्चाओं को देखने का सौभाग्य मिला, आधुनिक काल में भी तुम्हें बहुत सी ऐसी चर्चाएं प्राप्त होती होंगी।

पूज्य महानन्द जीः हां भगवन्देखो !, तो जाती हैं, परन्तु रावण की बहिन का तो आप से यह नवीन वाक्य ही सुना।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्ययह नवीन वाक्य नहीं ....., महर्षि बाल्मीकि का कथन है, अब कोई महर्षि के कथन को यह कहे कि यह मिथ्या है और उनक अर्थों का अनर्थ कर दे, तो द्वितीय वाकय है, परन्तु महर्षि बाल्मीकि के जितने अर्थ हैं, वह बड़े सुन्दर और प्रिय हैं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्रहने दीजिए !, ऋषि बाल्मीकि ने और भी बहुत से अशुद्ध शब्द प्रयोग किए हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, क्या?

पूज्य महानन्द जीः भगवन्मैं आज अपने सूक्ष्म शरीर से लाक्षा गृह पर भ्रमण कर ! रहा था, तो मैंने आज भी इस वाक्य को सुना, कि महर्षि गो का मांस भक्षण करते थे।

पूज्यपाद गुरुदेवः 'अरे, यह कैसे? यह तो तुमने पूर्व भी प्रश्न किया था, आज भी तुमने यह वाक्य ले लिया। '

पूज्य महानन्द जीः 'हां भगवन्मैं यह वाक्य और विस्तार से जानना चाहता हूँ कि ! जब वशिष्ठ जो महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में पहुंचे, तो उन्होंने गो के मांस का भक्षण किया।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यतुम एक वाक्य को बारम्बार प्रगट करते चले जा !बेटा ...... रहे हो, हमने पूर्व भी वर्णन किया था, कि बेटायह वाक्य यथार्थ है !, कि महर्षि बाल्मीकि ने ऋषि का स्वागत गो के बछड़े को मार कर किया, परन्तु संसार ने इस वाक्य का जाना नहीं, इस वाक्य को जैसा देखा, वैसा प्रयोग कर दिया, इसके दार्शनिक रूप को जान लेना चाहिए। तो मुनिवारों! हमारे यहाँ यह ऋषिता है कि गो के बछड़े को मारकर ऋषियों का स्वागत किया जाएं। मुनिवरोंगो नाम आत्मा का है ! और उसका जो पुत्रवत् बछड़ा है, वह है मन, मन रूपी बछड़े को मारकर ऋषि का स्वागत किया जाता है। बेटाएक दूसरे का !, जब इस प्रकार स्वागत किया जाता है, तो वहाँ प्रीति होती है, आनन्द होता है और ज्ञान विज्ञान की चर्चाएं होती हैं।

मुनिवरोंमहर्षि बाल्मीकि ने महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज से प्रश्न उत्तर चले कि यह ! मन बछड़ा किस प्रकार हो सकता है, तो उनको आलोचना चली कि जैसे गो का बछड़ा चंचल होता है, इसी प्रकार यह मन चंचल होता है, इसलिए उसकी गो के बछड़े से उपमा दी जाती है, जैसे गो आनन्द के देने वाली है इसमें दुग्ध भी होता है, घृत भी होता है, आनन्द भरा होता है। उसी प्रकार यह जो आत्मा है, इसमें ज्ञान और प्रयत्न है, इसके साथ नाना परिवार हैं, इसलिए इस आत्मा को गो कहते हैं। , दोनों का विचार विनिमय चला। और यह विचार होने लगा कि गौसे हम क्या क्या वस्तुतः जान सकते है ।

मुनिवरों! उस समय महर्षि बाल्मीकि ने कहा कि गो चन्द्रमा को भी कहते हैं। चन्द्रमा की कान्ति भी बड़ी विचित्र है, इसकी कान्ति में लगभग व्याहृतियां होती हैं 101, वह जहाँ जहाँ जाती हैं, जिस जिस तत्त्व पर, जिस जिस धातु पर जाती हैं उन्हीं धातुओं को वह कान्ति दायक बनाती हैं। जैसे सूर्य की किरणों स्वर्ण पर जाती हैं तो वहाँ स्वर्ण बनाती हैं और विष पर जाती हैं तो विष, इसी प्रकार चन्द्रमा की कान्ति चलती है।

बेटामुझे आज सौभाग्य मिल रहा है !, यह पूर्णिमा का दिवस है, आज चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओं से परिपक्व है। इसकी एक तुरिद नाम की कान्ति होती है, यह जहाँ पृथ्वी में स्वर्ण होता है, जहाँ जाती हैम और उसको शीतल बनाती है। सूर्य की कान्ति का जो तेज है उस, में शीतलता देती है, जिससे उस धातु की और प्रगति होती है।

इसी प्रकार एक सुधित नाम की कान्ति होती है यह वहाँ जाती है, जहाँ वज्रों में से, पत्थरों से, स्वर्ण से भी अधिक अमूल्य वस्तु निकाली जाती है, यह समुद्रों में भी रमण करती है, जहाँ सूर्य का तेज भी जाता है, विद्युत भी वहाँ रहती है, जल भी वहाँ रहता है, वहाँ सबका मिश्रण हो करके, समुद्र से राष्ट्र को अमूल्य भूषण धातु उत्पन्न होती हैं।

एक कुदित नाम की कान्ति होती है जो वहाँ पहुंचती है जहाँ पृथ्वी से नाना प्रकार के खनिज पदार्थों की उत्पत्ति होती है जैसे वाहन चलाने वाली धातु और जिनसे नाना यन्त्रों का आविष्कार कर लेते हैं।

इसी प्रकार एक कुडित नाम की कान्ति होती है जो अन्तरिक्ष में रमण करती है, वह विद्युत में रमण करती है, जब उसका अन्तरिक्ष में मिश्रण होता है, जो भौतिक वैज्ञानिक उसके यन्त्र बना करके अन्तरिक्ष में जो परमाणु रमण कर रहे हैं, उन परमाणुओं को निकालते हैं, उससे बेटामहा अणु ! त्रिसरेणु उत्पन्न होते हैं और नाना प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार किया जाता है।

बेटाएक वस्तु की व्याख्या करने में बहुत समय लग जाएगा !, परन्तु वाक्य यह चलता चला जा रहा था, कि चन्द्रमा का नाम गौतम है, शीतलता देता है, अमृत देता

है, माता के गर्भ स्थल में जब हम प्रविष्ट होते हैं, तो उस समय माता के निचले विभाग में एक त्रिधित नाम की नाड़ी होती है, उसके द्वारा चन्द्रमा की कान्ति नाड़ियों में रमण करती हुई, प्राणमय कोष में जाती है और माता के द्वारा जो प्राणसत्ता बालक को मिलती है, उसमे मिश्रित हो करके उस बालक को अमृत प्रदान करती है। तो बेटा !एक नही नाना प्रकार का विज्ञान है, अब हम वेदों की कहाँ तक गाथाएँ उच्चारण करते रहे, उस प्रभु की महिमा कहाँ तक उच्चारण करते रहे हमारी वाणी भी उसका गान गाने में मौन हो जाती है, क्या करें, ऋषि बाल्मीकि और महर्षि वशिष्ठ मुनि दोनों का इस प्रकार का अनुसन्धान चलता था जिनको आज का संसार और यह मेरे प्यारेमहानन्द जी मूर्खानन्द यह उच्चारण करते हैं !, कि यह मांस भक्षण करते थे। बेटामांस का भक्षण तो वह किया करते हैं !, जिनको बुद्धि पामर होती है। यहाँ मांस का भक्षण करने वाले पामर कहलाते हैंऔर क्यों कहलाते है क्योंकि उनकी बुद्धि ऋषिता को न प्राप्त होकर रजोगुणी बुद्धि होती है।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जी आधुनिक काल में तो देखा जाता !है कि जो मांस का अधिक भक्षण करता है उसकी बुद्धि तीव्र होती है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यतुम भी पान करने ल !तो बेटा .....गो, तुम्हारी बुद्धि भी वैज्ञानिक बन जाएगी और तुम बहुत ऊँचे बन जाओगे। बेटाइसका अभिप्राय यह ! नहीं। जो तमोगुणी आहार करते हैं, मांस का भक्षण करते हैं वे भौतिक वैज्ञानिक बन जाते हैं परन्तु भौतिक वैज्ञानिक के साथ साथ वह अपने आत्मिक तत्त्व के वैज्ञानिक नहीं होते। यथार्थ वैज्ञानिक वह कहलाता है, जिसके द्वारा भौतिक विज्ञान भी होता है और आत्मिक विज्ञान भी होता है। उसको कहते हैं यौगिकता। यौगिकता प्राप्त होती है शुद्ध आहार और व्यवहार से।

अब तुम तो भौतिक विज्ञान की चर्चा करते हो कि भौतिकवाद तो केवल प्रत्यक्षवाद को स्वीकार करता है और मैं भी परम्परा से प्रत्यक्षवाद को स्वीकार करता आया हूँ परन्तु मैंने पूर्व काल में भी यह वाक्य कहा था कि संसार में बहुत सी वस्तुएं ऐसी हैं, जो प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर नहीं आतीं, परन्तु वे हैं। जैसे बेटा! मानव के द्वारा मन को ले

लीजिए, वह दृष्टिगोचर नहीं आता। क्षुधा है, परन्तु दृष्टिगोचार नहीं आती। इसी प्रकार वायु है, परन्तु दृष्टिगोचर नहीं आती, परन्तु यह है कि उनका अनुभव हमें होता है। इसी प्रकार जब हम ऊँचे शिखर पर जाएंगे, परमात्मा कि ऊँची यौगिकता पर जाएंगे तो परमात्मा भी तुम्हारे प्रत्यक्ष आता चला जाएगा, आत्मा में परमात्मा का साक्षात् हो जाएगा और तुम प्रत्यक्षवादी बन करके, परमात्मा को साथी बना करके, संसार में पूर्ण विज्ञान को प्राप्त कर सकते हो।

बेटाघटोत्कच बड़े वैज्ञानिक थे। अर्जुन के पुत्र वभ्रुवाहन इतने बड़े वैज्ञानिक कि ! उन्होंने एक ऐसे यन्त्र का विकास किया, जो संसार का क्या अक्षोहिणी सेना को 18 समाप्त कर, वह यन्त्र उनके द्वार आ जाएं। वभ्रुवाहन ने भगवान कृष्ण से प्रश्न किया कि भगवन्मुझे परमात्मा में विश्वास नहीं होता और वह इसलिए नहीं होता क्योंकि ! मैंने विज्ञान को जाना है और अब मैं इस प्रयत्न में लगा हुआ हूँ जिससे यन्त्रों द्वारा मैं अन्तरिक्ष के ग्रहों को जान सकूं। उस समय भगवान् कृष्ण ने एक वाक्य कहा था कि भाई! इनको भी जानो और आत्मा को भी जानो। हे बभ्रुवाहनसंसार में एक को ! जानने से संसार जाना जाता है और एक को न जानने से किञ्चित जाना जाता है, सूक्ष्म जाना जाता है। जैसे भौतिक वैज्ञानिक है कि हमने एक यन्त्र बनाया है, अणु महाअणु बनाएं और यह यन्त्र बनाएं जिनसे लोकों में रमण कर सकते हैं, परन्तु वह है भौतिक विज्ञान। परन्तु जब हम उस आत्मिक और पारमात्मिक विज्ञान को जानते हैं, उस परा विज्ञान का जानते हैं परा विज्ञान को कैसे जानते हैं कि वह जो मन चंचल है, इसको हम शान्त करते हैं, बुद्धि से कार्य करते हैं, बुद्धि से आगे, मेघावी बुद्धि से जो अन्तरिक्ष में रमण करने वाले वाक्य हैं, नाना प्रकार के भाव हैं, जाना जाता है, मेघावी बुद्धि से, आगे ऋतम्भरा बुद्धि जो अन्तरिक्ष से ऊपर चली जाती है, आगे प्रज्ञा बुद्धि जहाँ देखो, हम परमात्मा से मिलान करते हैं जिस परमात्मा ने इस संसार में भौतिकवाद को रचाया है, इस प्रकृति को चेतना दी है, जिसको अपने अधीन करके हम शासक कहलाते हैं, परमात्मा रक्षक होता है और प्रकृति के अणु अणु को जान लेते हैं, क्या क्या धातु इस प्रकृति में और क्या क्या धातु इस चन्द्रमा

और सूर्य में है, इन सबको जानकर हम पूर्ण वैज्ञानिक बन जाते हैं दोनों प्रकार के विज्ञान को जानना है, यह महर्षि वशिष्ठ और महर्षि बाल्मीकि का दोनों का इस प्रकार का विचार विनिमय चला करता था, इन्हीं विचारों पर अनुसन्धान चलता था और अनुसन्धान चलता चलता परमात्मा तक पहुंच जाता था, इसकी प्रकार हम अपने इस भौतिकवाद और आत्मिकवाद को परमार्थ बनाते हुए परमात्मा के विश्वासी बनते हुए संसार के सब पदार्थों को जान सकते हैं।

मुनिवरोंउच्चारण करते करते दूर चले ग !ए। वाक्य चल रहा था अहिल्या का, अहिल्या पर्यायवाची शब्दों की व्याख्या कर रहे थे, महर्षि वशिष्ठ और बाल्मीकि का सम्वाद भी प्रगट कर रहे थे। बेटातुम जो वाक्य उच्चारण करते हो !, कि बछड़ों को मार कर स्वागत किया जाता था तो बेटामैं कहा करता हूँ कि अवश्य करना चाहिए !, परन्तु उसके ऊपर अनुसन्धान करना चाहिए। यह हमारा ही कथन नहीं, अन्य आचार्यों का भी कथन है, जब ऋषियों की चर्चाएं स्मरण आती हैं तो हृदय गद् गद् हो जाता है कि ज्ञान भी वन है बेटापरमात्मा का रचाया हुआ !, यह वेदज्ञ ज्ञान और विज्ञान है, इसको जानने के लिए हमें प्रयत्नशील होना है, सब ही कुछ जानकर अपने मानवत्व को राष्ट्रत्व को पवित्र बनाता है।

मुनिवरोंदेखो !, महान आत्माओं ने, मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने जो कुछ मर्यादा दी हैं, हमें उस पर विचारना चाहिए, उनके वाक्यों को शान्त नहीं करना है, उन्हें स्वीकार करना है, आज नाम उच्चारण करने से हमारा कार्य नहीं चलेगा, कार्य उस काल में चलेगा, जब उनके गुणों को धारण किया जाएगा, गुणग्राही बनेंगे। हम एक दूसरे का अपमान करते हैं, अपमान नहीं, हम उन ऋषियों के गुणग्राही बनें, ऋषितव को जानें, उनके वाक्यों को अर्थ रूपों में जानें, इससे मानव समाज का कल्याण होता है, हमारी संस्कृति का उत्थान होता है, राष्ट्र का उत्थान होता है, ज्ञान विज्ञान दोनों की प्रगति होती है।

मुनिवरोंतू हमारा कल्याण कर !उच्चारण करने का अभिप्राय क्या कि हे परमात्मन् !, हमें ज्ञान और विज्ञान के शिखर पर ले जा।

वाक्य चल रहा था, कि अग्रणी भूषणाम प्रति अश्वता यह अग्रणी हमार भूषण है, अहिल्या माता, तू हमारा उत्थान कर, तू हमारे जीवन को ऊँचा बना, तू माता अहिल्या है, तू पवित्र है, तू वास्तव में हमें वह देने दे, जो मृत्यु के पश्चात् भी हमारे द्वारा रहे। मुनिवरोंहमें आत्मा के लिए भोजन करने का प्रयत्न करना चाहिए। आत्मा ! का भोजन क्या है? आत्मा का भोजन है, ज्ञान विज्ञान और जितने शुभ कर्म हैं। आत्मा जब इस शरीर का त्याग कर जाएं, तो कोई न कोई वस्तु साथ ले जाएं, उसी का नाम आत्मिक भोजन है।

अब बेटाहमारा यह आदेश समाप्त हो गया है !, आज का हमारा वाकय अहिल्या चल रहा था, आज मुझे यह सूक्ष्म सा ही आदेश देना था, अब शेष वार्त्ता कल होगी। अब वेद पाठ होगा, उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। रात्रि बजे मोगा मण्डी 9

१९ 21 10 1964 पुष्प 05 वेद और वेदों का स्वरूप

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ, आज हम तुम्हारे समक्ष, पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे, जिन वेद मन्त्रों में मानवत्व था, संसार का ज्ञान विज्ञान था, ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे परमपिता परमात्मा आज हमें कोई अमूल्य वस्तु प्रदान कर रहा हो, आत्मा में सविता सत्ता प्रदान की जा रही हो, बेटायह वह अमूल्य वेद गान था !, जिसको मार्ग में विचरने वाले मृगराज भी पान किया करते थे। मुझे स्मरण है, जब मैं अपने पूज्य गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत होता था, तो उनके चरणों मे मृगराज विराजमान रहते थे।

मैंने अपने गुरुदेव से कहा कि यह हिंसक प्राणी जो मानव का भक्षण कर जाते हैं, यह आपके चरणों को छू छू कर क्यों अपने स्थान को चले जाते हैं? उस समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा था, कि अरे, यह वेदवाणी जिसकी परमात्मा का ज्ञान कहते हैं, यह आत्मा का ज्ञान है इसमें उदारता और पवित्रता विराजमान है। वह हिंसक प्राणियों को भी अहिंसावादी बना देती है, आत्मा हिंसक प्राणियों में भी है और मनुष्य में भी है और जब आत्मा, आत्मा का तारतम्य मिल जाता है, तो उस समय हिंसक

भी अहिंसा परमो धर्म का पालन करने वाला बन जाता है। जैसे गुरु और शिष्य, शिष्य गुरु के विचारों को पान करने वाला होता है और गुरु अपने शिष्य को अपने कंठ में धारण कर लेता है, और उन दोनों का तारतम्य मिल जाता है और उन दोनों का तारतम्य मिलकर दोनों का ज्ञान एक तुल्य हो जाता है, इसी प्रकार हिसंक प्राणी की महान आत्मा इस योनि में आकर भी वेदवाणी की इच्छुक रहती है, इसलिए यह हिंसक प्राणी ऋषि मुनियों के चरणों को छू छू कर अपने अपने स्थान को चले जाते हैं।

महर्षि पिप्पलाद

मेरे भोले आचार्य जनोवेद गान गाते समय ऐसा प्रतीत हो रहा था !, जैसे अमूल्य प्रकाश प्राप्त किया जा रहा है, यह पिप्पलाद मुनि संहिता के मन्त्र थे, परन्तु यह माना नही जाता की यह शाखाएँ भी है, पिप्पलाद मुनि कौन थे? यह करकेटु मुनि के पुत्र और वायु मुनि के पौत्र थे, इनकी माता का नाम उषा था। मेरे प्यारेमहानन्द जी ! कहा करते हैं कि महर्षि पिप्पलाद तो सूर्य की उषा नाम की किरण से उत्पन्न हो गएं सूर्य की !परन्तु बेटाकिरण का नाम भी उषा है और एक भोली माता का नाम भी उषा है जैसे हम कल अहिल्या शब्द का उच्चारण कर रहे थे, कि अहिल्या गौतम ऋषि की पत्नी भी थी, रात्री भी थी, अहिल्या पृथ्वी भी थी, परन्तु प्रकरण को ले लेना चाहिए, उषा महर्षि पिप्लाद की माता थी, और करकेटु मुनि उनके पति और वायु मुनि करकेटु मुनि के पिता कहलाते थे। मुझे अधिक विवाद में नही जाना, आदेश केवल यह है की आज यह पिप्पलाद मुनि संहिता का पाठ समाप्त हो गया है, आज हम उस महर्षि के गुणगान गाते ही चले जाएं, जिनका जीवन संसार में अग्रणी माना जाता है, आज हमें उनके जीवन से शिक्षा प्राप्त कर लेनी चाहिए, जिनका जीवन अग्रे हो, उनके वचनों को पान करते हुए अपने जीवन को अग्रे बना लेना चाहिए।

मुनिवरोंमेरे भोले ऋषि कहा करते हैं !, कि पिप्पलाद मुनि संहिता कहाँ से आ गई। मैंने कई समय उच्चारण किया, कि हमारे यहाँ संहिता 1127एं मानी जाती हैं, जो वेद की शाखाएं हैं परन्तु मूल चार वेद हैं, इन चार वेदों में भी विवाद है वह यह है

कि इसमें तीन पक्ष हैं, प्रथम पक्ष कहता है, कि वेद ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुए और वेद नाम की एक ही वस्तु है और वेद नाम प्रकाश का है द्वितीय पक्ष कहता है, कि वेद चार हैं और चारों ऋषियों पर प्रगट हुए, परमात्मा की उपासना की और उससे सहायता पाई, अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा इन चार ऋषियों पर यह चारों वेद प्रगट हुए। तृतीय पक्ष कहता है कि नहीं, वे तो ऋषियों का काव्य है।

महानन्द जी ने कुछ ऐसा संकेत दिया है, कि आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है, यहाँ नहीं, परन्तु संसार के अन्य राज्यों के है, वे कहा करते हैं कि भाई! वेद तो ऋषियों का काव्य है, यह न परमात्मा से उत्पन्न हुआ और न परमात्मा का वाक्य है, पुरातन काल में ऋषि मुनि एकाग्र हो जाते थे, और अपने अपने द्वारा काव्य को लेकर विराजमान हो जाते थे, उससे ऋषिता को प्राप्त होते थे।

मुझे इस तृतीय पक्ष पर बड़ा खेद है, कि उन्होंने किस आधार से वेद को ऋषियों का काव्य कहा क्योंकि ऋषियों का काव्य वह कहलाता है, जो एक ही आधार पर होता है, जैसे महर्षि बाल्मीकि ने रामायण का निर्माण किया, वह उनका काव्य है, क्योंकि वह एक इतिहास है और उसी इतिहास के आधार से काव्य माना जाता है, परन्तु वेद कोई इतिहास नहीं और जब इतिहास नहीं, तो उसको काव्य उच्चारण करना व्यर्थ है। इसमें वे यह प्रश्न करते हैं, कि वह परमात्मा को मानते थे, और वेद में परमात्मा की प्रशंसा है, इसलिए वह इतिहास हो गया, परन्तु यह निराधार वाक्य है, क्योंकि परमात्मा साकार नहीं, निराकार है और वेद में निराकार के गुणों का प्रतिपादन है, जिसका रूप रंग नही, उसकी उसमें प्रशंसा है, तो उसको इतिहास किस प्रकार उच्चारण कर सकोगे। इतिहास उसको कहते हैं, जिसमें कोई क्रीड़ा हो, जैसे कोई राजा बना हो और राजा बन करके अवदान किया हो, नाना भोगों को भोगा हो, उसको इतिहास कहते हैं और इतिहास का काव्य बनता है।

मुनिवरोंउन व्यक्तियों का यह वाक्य ऐसा है !, जैसे अन्धकार में सूक्ष्म सा प्रकाश, यदि वह सूर्य के प्रकाश में पहुंचे, तो उन्हें ज्ञान हो जाएं, कि वास्तव में इस सूक्ष्म प्रकाश से भी ऊँचा प्रकाश है, उनका वेद का काव्य उच्चारण करना व्यर्थ है, क्योंकि

एक वेदमन्त्र में विश्व का विज्ञान है, जैसे मैंने कल कहा था, कि वेदों में गो शब्दार्थ आता है। बेटा! गो के कितने पर्यायवाची शब्द गो हमारे यहाँ पृथ्वी को कहते हैं, क्योंकि कृषक उसमें कृषि करता है, और नाना खाद्य पदार्थ को उत्पन्न करता है, वैज्ञानिक जब जब गो मेध यज्ञ करते हैं, तो इस पृथ्वी में से नाना प्रकार के खनिज पदार्थों को जानते हैं। इससे इसमें पृथ्वी का विज्ञान आ गया।

अब सूर्य की किरणों को भी गो कहते हैं, आत्मिक वैज्ञानिक और भौतिक वैज्ञानिक जानते हैं यह जो किरणें चलती हैं, यह क्या क्या कार्य करती हैं, कैसे अन्धकार को नष्ट करती हैं, कैसे प्रकाश को लाती हैं, कहाँ से यह प्रकाश आता है, इन सब पर वैज्ञानिक अनुसन्धान करता है, तो बेटा गो शब्द में सूर्य का विज्ञान भी आ गया। !

इसी प्रकार गो नाम आत्मा की इन्द्रियों का है, इन ज्ञान और कर्म इन्द्रियों के सूक्ष्मत्व को जानते रहो जैसे हमारे नेत्रों के पिछले भाग में पीला पटल है, उसके पश्चात् प्रकृति के पञ्च महाभूत हैं और उसके पश्चात् मनिराम बैठा है और मन के पश्चात् आत्मा विराजमान है, आत्मा के पश्चात् अन्तःकरण नाम का स्थान है, जिसमें लिपटा यह आत्मा है, तो मुनिवरों गो शब्द में यह आत्मा का विज्ञान आ गया। !

अब इस विज्ञान को जानकर मनुष्य शरीर का विज्ञान जाना जाता है, इस मनुष्य शरीर के विज्ञान को मन्थन करने से, यह आयुर्वेद सिद्धान्त और माता का विज्ञान आ गया, मनुष्य के शरीर में नाड़ियां हैं। इन 202 हजार 10 लाख 72 करोड़ 72 प्रत्येक नाड़ियों के विज्ञान पर मन्थन होना है, और कैसे हमारी माता के शरीर में पालना होती है, यह माता का विज्ञान आ गया।

तो एक ही गो शब्दार्थ में संसार का विज्ञान आ गया, दुग्ध देने वाले पशु को भी गो कहते हैं। पशु का भी विज्ञान आ गया, मानव ने इस रहस्य को, इस ज्ञान को तो जाना नहीं, परन्तु कहा कि भाई! यह तो ऋषियों का काव्य है।

अरे, मेरे भोले विधाता जनोतुम तनिक तो बुद्धि से कार्य करो और इस वैदिक ! साहित्य को जानो, तो इसमें अग्ने शब्द आता है, अग्ने शब्द से विद्युत को जल में से मन्थन करते है, नाना प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार करते हैं, श्रृंगित, रिधिर, भूर्शतत,

रेधवी आदि इन पञ्च धातुओं को जानने वाला वैज्ञानिक जानता है कि सब कुछ हमें सूर्य की किरणों से प्राप्त होता है, कुछ पृथ्वी से, इन धातुओं को जानने के पश्चात् उन यन्त्रों को बनाते हैं, जिनसे विद्युत के द्वारा अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले सूक्ष्म परमाणुओं को एकत्रित किया जाता है, उन परमाणुओं से एक यन्त्र और बनता है जिसको सुधिर नाम का यन्त्र कहते हैं, उस यन्त्र से महा परमाणु, एकत्रित होते है एक परमाणु होते है और आगे महा परमाणु, त्रिसरेणु और महा त्रिसरेणु एकत्रित होते हैं, नाना प्रकार के यन्त्र बन जाते है। बेटामुझे यह वाक्य इसलिए उच्चारण करने का ! सौभाग्य मिला, क्योंकि अग्ने से संसार के नाना विज्ञान को जाना जाता है और वह वैज्ञानिकों के जानने से पूर्व ही वेदों में विराजमान है, जिसको वह ऋषियों का काव्य कहते हैं, जिस विद्या को उन्होंने जाना, वह विद्या उसमें विराजमान है, उन्होंने क्या विशेष वस्तु जानी, इसलिए इन वेदों का काव्य उच्चारण करना व्यर्थ है।

पूज्यपाद गुरुदेवः गुरु देवमैं एक वाक्य जानना चाहता हूँ और वह यह कि ! परमात्मा ने एक गो शब्दार्थ ही ले लिया होता, इतनी बड़ी पोथी की क्या आवश्यकता थी?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यजितनी वार्त्ता सब मूर्खो वाली !महानन्द जी ....., बेटाइसका ! अभिप्राय यह नहीं कि गो शब्दार्थ की हम इस प्रकार की व्याख्या कर दें, तो वेदमन्त्र नहीं होने चाहिए थे, वेदमन्त्र परमात्मा का विज्ञान है, जिस विज्ञान को जानने के लिए नाना मन्त्रों को जाना जाता है, गो शब्द तो इस लिए है कि इसमें से इतनी व्याहृतियां और इतने वाक्य निकल सकते हैं, वेद तो एक श्रृंखला है जो परमात्मा के ज्ञान विज्ञान से भरी हुई है, एक एक वेदमन्त्र में इसी प्रकार का विज्ञान है, सूर्य की किरणों का वर्णन है, नाना प्रकार के यन्त्रों का वर्णन है, पृथ्वी के विज्ञान का वर्णन है, वायु का, लोक लोकान्तरों के विज्ञान का, ज्ञान का वर्णन है, गो शब्द का यह अभिप्राय नहीं कि हम इस प्रकार व्याख्या कर दें तो वेदमन्त्र नहीं रहने चाहिएं।

तो मुनिवरोंउच्चारण कर रहे थे कि वेद ऋषियों का काव्य नहीं कहा जाएगा !, कहा क्यों नहीं जाएगा ? क्योंकि इसमें सम्पन्न विद्या है? अग्ने विद्या है, विद्युत विद्या है, इसमें सम्पूर्ण ज्ञान विज्ञान है।

मुनिवरोंअब दो पक्ष रह गएं !, एक पक्ष कहता है कि यह जो वेद है, ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुआ, और एक पुस्तक का नाम वेद है, वेद पुस्तक नही, वेद कहते है प्रकाश को, और वह प्रकाश वेदों में है और वह प्रकाश ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुआ और एक पक्ष कहता है, कि चार ऋषियों से अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा। इन चार ऋषियों से, इन वेदों का अवतरण हुआ, यह दोनों ही पक्ष यथार्थ हैं, वास्तव में वेद नाम प्रकाश का है, जिसमें प्रकाश है, वह ही वेद है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवनसूर्य में प्रकाश है !, तो वह भी वेद है?

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं बेटासूर्य वेद नह !ीं, सूर्य एक लोक है, सूर्य का विज्ञान वेदों में है, इसकी सब किरणों का वर्णन वेदों में है। बेटा !प्रकाश उसे कहते है जैसे सूर्य प्रातःकाल में उदय होता है और अन्धकार रूपी रात्रि को नष्ट कर देता है, इसी प्रकार वेद वह प्रकाश है, जो मानव के अन्तःकरण के अन्धकार को नष्ट करने वाला है। सूर्य अग्ने लोक कहलाता है, बृहस्पति वायु लोक कहलाता है, ध्रुव लोक वायु और जल मिश्रण का लोक कहलाता है, पृथ्वी मण्डल महान रज प्रधान है, पार्थिव प्रधान माना जाता है, चन्द्रमा शीतलता प्रधान माना जाता है, आरुणि मण्डल में भी वायु प्रधान हैं, सप्त ऋषि मण्डल में अग्ने और शीतलता दोनों मिलकर प्रधान हैं, मुझे आज लोकों का वर्णन नहीं कराना, केवल वाक्य यह है, कि सूर्य एक लोक है।

आज का वाक्य तो यहाँ से प्रारम्भ होता चला जा रहा था कि वेद में कौन सा प्रकाश है वेद वह अमूल्य प्रकाश है, जिसमें मानव का अन्धकार समाप्त हो जाएं, हृदय पवित्र हो जाएं और परमात्मा के ज्ञान में रमण करता हुआ, परमात्मा को गोद में विराजमान हो जाएं जो ज्ञान स्वरूप है, इसलिए वेद को हमारे यहाँ प्रकाश कहा गया है। रही यह वार्त्ता, कि यह ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुआ या नहीं। ब्रह्मा नाम परमात्मा का है और यह ब्रह्मा की वाणी कहलाती है, परन्तु यह वाणी कैसे आई? जब ब्रह्मा निराकार

है, वाणी साकार कहलाती है, इसके लिए आचार्यों ने ऐसा कहा है, कि यह जो वायु, अग्नि, आदित्य और अंगिरा ऋषि हुए उन्हें ज्ञान था, परमात्मा की सहायता पाई और यह जो परमात्मा का ज्ञान था, वह इन ऋषियों द्वारा प्रकट हो गया, इसलिए यह ब्रह्मा से आया, ऋषि मुनियों के द्वारा आकर के यह पोथी रूप में बन गया, यह चार वेद कहलाते हैं।

बेटाहमारे आचार्यों का यह पक्ष भी यथार्थ है !, कि वेद एक है, परन्तु वेद के चार काण्ड माने गए हैं एक ज्ञान काण्ड, द्वितीय उपासना काण्ड, तृतीय कर्म काण्ड और चतुर्थ विज्ञान काण्ड। इन चारों काण्डों को भी जान लेना चाहिए। यह चारों काण्ड चारों ऋषियों द्वारा प्रगट हुए।

हमारे आचार्यों का और हमारे पूज्यपाद गुरुदेव का कुछ ऐसा, कथन है कि यह अमूल्य वेदवाणी ऋषि मुनियों के द्वारा आई और परमात्मा ने दी, परन्तु कैसे इन ऋषियों को दी, मेरे महानन्द जी को क्यों नहीं अर्पित कर दी? और किसी को क्यों न अर्पित कर दी?

इसक उत्तर यह है, कि यह जो अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा ऋषि थे, वह इससे पूर्व सृष्टि में भी थे, इन ऋषियों के अन्तःकरण में वेदों का ज्ञान था, सृष्टि के आदि में परमात्मा की सहायता पाकर के, वह ज्ञान प्रगट हो गया। इससे संसार में इसका विकास होता है मुनिवरों! इन चारों वेदों की आगे चल करके ऋषि मुनियों ने 1127 शाखाएं बना दीं। जिस ऋषि ने जिन वेद मत्रों पर अनुसन्धान किया, उसी की शाखा बन गई। इसी प्रकार से विचार विनिमय चलता रहा। आगे चल करके, संसार में इस वेदवाणी को कुछ रूप रेखा विभक्त हुई। इसमें से और नाना प्रकार की साधारण विद्याएं उत्पन्न हो गई, जैसे मेरे प्यारे! महानन्द जी ने कहा कि आप देवनागरी ही क्यों उच्चारण करते हैं, मैंने इनके वाक्यों का समर्थन करते हुए कहा कि जितनी भी संसार की भाषाएं हैं, वे सब वेद मन्त्रों से सम्बन्धित हैं, अब उन भाषाओं का परिवर्तन होता रहता है, एक दूसरे की भाषा का मिश्रण हो करके, उनका वास्तविक रूप समाप्त हो जाता है, परिवर्तनशील हो जाती है। परन्तु वेदवाणी परिवर्तन नहीं होती,

इसका मुख्य कारण यह, है कि प्रत्येक वेदमन्त्र ओ३म् रूपी धागे से पिरोया हुआ है, जैसे मानव परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में उत्पन्न किया, दो हस्त हैं, श्रोत्र हैं, घ्राण है, मुख है, त्वचा और उपस्थ इन्द्रियां हैं, पांच ज्ञान इन्द्रियां, और पांच कर्म इन्द्रियां, मन, बुद्धि अहंकार मानो पञ्च महाभूत और इसी प्रकार मध्य में बैठा हुआ आत्मा है, जब तक यह आत्मा पिरोया हुआ रहता है, तब तक मनुष्य कहलाता है और जब यह आत्मा शरीर से निकल जाता है, उस समय यह मृतक कहलाता है, उस समय उसको कौन जीवित कहता है? जो भी कहता है, कि इसका जीवन समाप्त हो गया। इसका अभिप्राय यह है, कि जो भाषाएं ओ३म् रूपी व्याहृति से पृथक हो जाती है, और उनका परिवर्तन होता रहता है, अधिक होती रहती है सूक्ष्म बीज रूप में आ जाती है परन्तु यह जो वेदवाणी है, इसका ओ३म् से सम्बन्ध है।

मुनिवरोंदेखो !, एक माला होती है, उसके मन के धागे से पिरोएं हुए होते हैं, वह माला कहलाती है और यदि मन के माला से पृथक हो जाएं, तो क्या हो ?उनका धागे से सम्बन्ध न रहा और देखो, वह बिखर गए, इसी प्रकार संसार में जे बिखरी हुई भाषाएं होती है, उन भाषाओं का सम्बन्ध ओ३म् से न रहकर बिखर जाती हैं, किसी काल में इनका प्रचार अधिक होता है, और किसी काल में यह बीज रूप रह जाती है परन्तु रहती हैं किसी न किसी रूप में ओ३म् से सम्बन्ध न रह करके बिखरी रहती है, नवीनता आती रहती है, न्यूनता आती है परन्तु वेद एक ऐसी वाणी है जिसमें न न्यूनता आती है और न अधिकता होती है, यह ज्यों की त्यों रहती है, क्योंकि यह ओ३म् रूपी धागे से पिरोई हुई है। इसी प्रकार मनुष्य का शरीर परमात्मा के दिए हुए महत् से पिरोया हुआ रहता है जब यह महत् रूपी प्राण उसके द्वारा है तब तक उसमें मानवत्व है।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव !मैं यह और जानना चाहता हूँ, कि जब यह वेदवाणी न न्यून होती है और न अधिक होती है, तो जब संसार की प्रलय होती है, तो यह वेद वाणी कहाँ चली जाती है?

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जी सुनो उसका उत्तर !बेटा !मैं पूर्व भी दे चुका हूँ, परन्तु तुम्हें बच्चों वाला अभ्यास हो चुका है, जैसे बच्चा एक वाक्य को नित्य प्रति उच्चारण किया करता है, वैसे ही तुम्हें अभ्यास हो चुका है, जितने तुम अग्रणी में आते हो, निकट आते हो, उतने मूर्ख बनते चले जाते हो।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्मैं मूर् !ख बड़ा सुन्दर हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, क्यों?

पूज्य महानन्द जीः भगवन्आज का संसार मूर्ख नहीं रहा !, इसलिए यह बुद्धिमान नहीं रहा, संसार में आप जैसे गुरु और मूर्ख बनने वाले हम जैसे शिष्य हों, तो यह संसार बुद्धिमत्ता का पुतला बन जाएं। हास्यआधुनिक संस .....ार को मैं सूक्ष्म रूप से दृष्टिपात किया करता हूँ, आज गुरु शिष्य के द्वार से चला कि शिष्य ने गुरु का अपमान करना प्रारम्भ कर दिया, वह शिष्य महान बनने लगा और जब महान बनने लगा, तो गुरु का अपमान होने लगा। भगवान्गुरुओं का अपमान हुआ !, तो वह जो गुरु की वमन की हुई विद्या थी, वह इस मस्तिष्क से दूर चली गई। तो भगवन्मुझे ! तो आप जितना मूर्ख कहते हैं, उतना ही आनन्द आता है, गुरुओं के द्वारा जितना मुर्ख बना जाएं, उतना मूर्ख बने, गुरु के द्वारा महान बनने के लिए मूर्ख बनना महानता कहलाती है। भगवन् जब शिष्य मूर्ख बन करके !गुरुओं के चरणों में जाता है, गुरु से प्रश्न करता है, मन्थन करता है, तो उसकी बुद्धि विकासदायक होती है, परन्तु यदि शिष्य गुरु से पूर्व ही महान बन जाएं, तो गुरु से कोई क्या ले ले।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअरे ....., सुनो, इस मूर्ख की वार्त्ता, जितने वाक्य सब बच्चों वाले और मुर्खों वाले।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन्कृपा कीजिए कल भी मूर्ख उच्चारण करने का ! समय आएगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य यह विनोद। !अच्छा बेटा ....

पूज्य महानन्द जीः धन्यवाद !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंअभी अभी विनोद की चर्चा चलती ! जा रही थी। महानन्द जी ने प्रश्न किया कि प्रलय काल में यह वेदवाणी कहाँ चली जाती है? मुनिवरोंप्रलय काल में यह वेदवाणी परमात्मा के द्वारा चली जाती है !, वेदवाणी परमात्मा का विज्ञान है, जिन तत्त्वों को जानते हैं वह तत्त्व प्रकृति स्वरूप बन गएं और जो आत्माएं मोक्ष के निकट होती है उनमें वेदों का ज्ञान ओत प्रोत रहता है, कुछ परमात्मा में रमण कर जाता है, इसके इसी प्रकार विभाग हो जाते हैं, विभाग हो करके बेटायह वाणी रहती है !, परन्तु बिखरी हुई रहती है।

अब यह रहती कहाँ है? परमात्मा के द्वारा। जैसे मनुष्य यहाँ कर्म करता है, और इस मनुष्य के द्वारा एक अन्तःकरण का स्थान है, वह कर्म सूक्ष्म भाव से उस अन्तःकरण में अंकित हो जाता हैं, जब यह आत्मा इस शरीर को त्यागता है और त्याग करके माता के गर्भ में जाता है, तो उन्हीं अन्तःकरण में अंकित कर्मों के आधार से यह जन्म लेता है, इसी प्रकार बेटा! यह वेदवाणी है, परमात्मा का ज्ञान है और परमात्मा के महत् से अंकित हो जाता है और जब संसार पुनः रचता है, तो यह उसी महत् के साथ साथ ऋषि मुनियों के द्वारा परमात्मा की सहायता से पुनः प्रगट हो जाता है।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरों !यह है आज का हमारा एक दार्शनिक विषय वाक्य उच्चारण करते करते बहुत दूरी चले गए, हम उन वाक्यों पर चले गए, जो बहुत ही अनुसन्धान के थे, उनका पुनः भी किसी काल में वर्णन करेंगे। वाक्य चल रहा था, कि वेद को भिन्न भिन्न रूपों से कहा, किसी ने काव्यं कहा है, कोई इसको वेद नाम से पुकारता है, कोई चतुर्थ से, परन्तु आज हमने इन तीनों पर निर्णय किया, अपना किंचित्त बुद्धि से निर्णय किया जैसी हमारी बुद्धि थी, अधिक विस्तार से नहीं।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि वेदवाणी जब उच्चारण की जाती है, तो वह क्रमबद्ध होती है। यह क्रमबद्ध कैसे होती है? क्रमबद्ध क्या यह प्राकृतिक रहती है यह क्रमबद्ध करने का कोई साधन होता है?

मुनिवरों !हमारे आचार्यों ने एस कहा है, मेरे महानन्द जी कहा करते हैं कि जब यह महर्षि पाणिनी थे महाराजा शिव ने डमरू बजाया, और गान गाया। उस डमरू में से चौदह सूत्रों का निकास हुआ, उसको व्याकरण कहते हैं, और व्याकरण में प्रत्येक वेदमन्त्र बंध जाता है, परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ की यह यथार्थ है की शिव ने डमरू बजाया पार्वती ने नृत्य किया शिव ने गान गया और महर्षि पाणिनी ने इन सूत्रों को ले लिया परन्तु महर्षि पाणिनी तो अब हुए हैं, और इस सृष्टि को लगभग 1, 97, 29, 59, 0, वर्ष प्रारम्भ हुए हो रहा है 64, तो क्या पाणिनी ऋषि महाराज से पूर्व यह वेदमन्त्र क्रमबद्ध नहीं थे, उस समय कोई व्याकरण नहीं था, यह एक जटिल प्रश्न है।

इसका उत्तरदायी बनते हुए, हमारे ऋषियों ने और हमारे आचार्यों ने कहा है, कि यह तो यथार्थ है कि शिव ने डमरू बजाया और पार्वती ने नृत्य किया, परन्तु इसको जानने की आवश्यकता है। शिव नाम परमात्मा का है और पार्वती नाम इस प्रकृति का है, सृष्टि के प्रारम्भ में जब संसार का प्रादुर्भाव हुआ उस समय परमपिता परमात्मा शिव ने इस महत रूपी डमरू को बजाया और डमरू बजाने से यह माता पार्वती रूपी प्रकृति नृत्य करने लगी, यह नाना रूपों में रच गई, इस वाक्य से इस प्रकार मान लेना चाहिए । मैं यह नही कहता की महर्षि पाणिनी मुनि महाराज ने भी संसार का अधिक कल्याण किया, उनहोंने 14सूत्रों को प्रकृति के महा तत्त्वों से या डमरू से किसी प्रकार स्वीकार कर लिया। परन्तु इसको यह भी मान लेना चाहिए की हम महतरूपी डमरू मानते है, प्रकृति रूपी पार्वती और शिव परमात्मा को माना करते है उन्होंने डमरू बजाया, तो ये संसार रच गया, जो आज हमें दृष्टिगोचर हो रहा है मुनिवरों! आगे चलो, हमारा वाक्य यह है की हमारे यहाँ सृष्टि के आदि में व्याकरण को हमारे आदि ब्रह्मा ने जाना और कैसे जाना? योग से जाना, महर्षि पाणिनी ने भी इन 1 सूत्रों को अपने योग से 4ही जाना और डमरू अग्रणी अनाद से जाने।

ब्रह्मा ने सृष्टि के आदि में पुनः की भांति योगाभ्यास किया, प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान इन पांचों प्राणों को जाना, इनको एकाग्र किया और ब्रह्मरन्ध्र में ले जाया गया, जहाँ एक चक्र होता है, उस चक्र का विस्तार रूप हुआ।

मुनिवरों! देखो, प्रत्येक मानव के मस्तिष्क एक अनहद नाम का नाद बजता है उस अनाद से नाना प्रकार के स्वर चलते हैं उन स्वरों का जाना, उन स्वरों को जानकर बेटाइन अक्षरों को जाना और इन अक्षरों से यह प्रत्येक वेदमन्त्र क्रमबद्ध होते चले ! गए, यह वेदमन्त्र ऋचाएं कहलाती हैं और उन्हीं शब्दार्थों से संसार की भाषाओं का विकास हुआ, वही शब्दार्थ परम्परा से चले आ रहे हैं, उन्हीं शब्दों को मनुष्य अपनी कल्पना से कुछ परिवर्तन करता रहता रहता है और नाना प्रकार की भाषाओं का विकास हो जाता है, तो बेटायह व्याकरण सृष्टि के आदि से चला आ रहा है !, महर्षि पाणिनि ने इसको कुछ सरल रूप में लिया है, उनमें अक्षरों की बिहरनी करते हुए उन्होंने भिन्न भिन्न रूपों से इसका प्रतिपादन किया है।

वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि बेटाहमारे मस्तिष्क में एक अनाद ! नाम काएक बाजा होता है, एक नाद होता है, सिंह नाद होता है, ऋधि नाद होता है, डमरू जैसा नाद होता है, वहाँ नृत्य भी होता है, इस गान को जान कर हम वास्तव में वैज्ञानिक बनते हैं और उनसे नाना प्रकार की व्याहृतियों को जानने वाले और अपने मानवत्व का विकास करने वाले बनते हैं।

बेटायह था !, आज का हमारा गम्भीर आदेश, परन्तु इस गम्भीर आदेश को लेते हुए, वेद के सम्बन्ध में नाना भ्रांतियों का वर्णन करते चले गएं और इनकी नाना प्रकार की रूपरेखा वर्णन कराते चले गए, अब यह आदेश समाप्त होने वाला है, आज मुझे अधिक चर्चा नहीं करनी, परन्तु यह उच्चारण करना है, कि जब मानव को ज्ञान हो जाता है, तो मानव की उच्च दशा हो जाती है इसका नाम ब्रह्मज्ञान है। ब्रह्मज्ञान से मानव सर्वगुण सम्पन्न कहलाता है। जब मानव ज्ञान विज्ञान में पहुंच जाता है, तो उस मानव की दशा वैराग्य में परणित हो जाती है, वह ब्रह्म तत्त्ववेत्ता बन जाता है और एक समय परमात्मा को गोद में चला जाता है। अब हमारा आदेश समाप्त हो चुका है।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन्आज का आदेश !, हमें बहुत प्रिय लगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा !

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन्कल आपका क्या विषय रहेगा !?

पूज्यपाद गुरुदेवः कल महानन्द जी !जो तुम कहो बेटा !

पूज्य महानन्द जीः भगवन्यह ब्रह्मज्ञ !ान तो आपका नित्य प्रति होता रहता है, कल तो आप कोई गाथा प्रारम्भ करे

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जी! क्या?

पूज्य महानन्द जीः कल एस है कि भगवान राम और महर्षि वाल्मीकि के विषय में वर्णन करो, क्योंकि हम यह सुनते चले आए हैं कि वाल्मीकि ने एक सहस्त्र वर्ष पूर्व ही रामायण का निर्माण कर लिया यह कैसे? एक वाक्य ओर जानना चाहता हूँ, कि वाल्मीकि ने भी ओर नाना आचार्य ये कहते है कि रावण की नाभि में अमृत था, वह अमृत क्या था?

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, कल तो आने दो, जब कल आएगा तो देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवनवह कल तो आ !एगा ही, उत्तर देने की कृपा करें।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य कल का कल देखा जाएगा !अच्छा बेटा ....।

पूज्य महानन्द जीः धन्यवाद।

पूज्यपाद गुरुदेवः मुनिवरोंआज हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है !, समय मिलेगा, तो अब शेष चर्चाएं कल होंगी। अब वेद पाठ होगा। उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। रात्रि का सनातन धर्म प्राइमरी स्कूल मोगा में दिया हुआ प्रवचन

२० 22 10 1964 पुष्प 05 त्रेताकाल के कुछ ऐतिहासिक तथ्य

जीते रहो,

देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ, हम पुनः की भांति वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे, पिप्पलाद मुनि संहिता कल समाप्त हो चुकी थी, आज नवीन संहिता का पाठ प्रारम्भ करते चले जा रहे थे जिसमें बहुत कुछ विज्ञान है और यह पिप्पलाद मुनि संहिता से सम्बन्धित है, इस संहिता का नाम श्रंगकेतु

संहिता है। श्रंग केतु नाम के ऋषि हुए, उनके नाम से यह संहिता है। ऋषि का जीवन बड़ा अग्रगण्य और पवित्र था। श्रंगकेतु मुनि महाराज सतोयुग काल के अटुल मुनि के पुत्र थे। ऋषि के जीवन में अग्ने था, आज हमें भी अपने जीवन को अग्ने बना लेना चाहिए। जब नाना प्रकार का अज्ञान जो हमारे द्वारा है वह ज्ञान रूपी अग्नि में भस्म हो जाता है, तो बेटा मानव का जीवन अग्ने कहलाता है। !

आओ मेरे ऋषि मण्डल, आओ, हम प्रभु की याचना करते चले जाएं। जिस प्रभु ने हमें यह वेदयज्ञ प्रदान किया, जिस प्रभु ने इस मनोहर संसार को रचा और एक एक वस्तु हमारे लिए अमूल्य रचाई है। हे प्रभुतेरी उ !दारता का कोई प्रमाण नहीं, एक एक रचना में कैसी उदारता और कैसे सुन्दर भाव से इस मानवत्व के लिए इस संसार को रचा है।

विधाता! आपने एक एक वस्तु कैसी सुंदर रची है, आज मेरी भोली माता अपने पति से कहा करती है कि हे पतिदेवमेरी कन्या युवा ही गई है। आज में जानना चाह !ता हूँ कि क्या प्रमाण है कि कन्या युवा हो गई है। मुनिवरोंवह एक चिन्ह !, जो भगवान की देन है और वह क्या है? उस युवा कन्या की लोरियां उमड़ आती हैं, लोरियां उमड़ते ही युवा का सन्देश आ पहुंचा उसके द्वारा। ।

मुनिवरों! उस समय कैसी सुंदर प्रभु की रचना, प्रभु ने कैसी सुंदर यह माता की लोरियां बनाई है, कैसे सुंदरत्व से रचाई हैं, प्रभु ने यह क्यों रचाई ?, इसका कारण यह है किहमारे मानव के जन्म लेने से पूर्व ही माता की लोरियों में रस परिपक्क हो जाता है, रस परिपक्क हो जाता है, खान पान का प्रबन्ध पूर्व ही जाता है।

हे मेरे भोले शिवतूने जब इस संसार को रचाया !, तो कैसी उदारता से इसमें कितना सुन्दर ज्ञान विज्ञान है। हे देवतेरी रचना कितनी अनुपम और मनोहर है !, तेरी रचना का गुणगान गाते हुए हमारा हृदय पुलकित होता चला जा रहा है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ! कहा करते है आधुनिक काल का संसार बड़ा कष्ट में है हे प्रभु यदि आपने हमारे जीवन को रचाया, माता के जीवन को रचाया, तो हे प्रभु! अब हमारी रक्षा कर, हम आपके द्वारा रक्षा चाहते है

मेरे प्यारे! महानन्द जी आधुनिक काल की चर्चा करते हुए कहा करते हैं, कि आधुनिक काल में आततायियों का आक्रमण होता चला जा रहा है। नास्तिकवाद का आक्रमण होता चला जा रहा है। हे प्रभुऐसी महान कृपा कर !, जिससे संसार से नास्तिकवाद समाप्त हो जावे। हे प्रभु वह समय आ जाएं जब महाराजा !दिलीप, महाराजा रघु, महाराजा अज, महाराजा दशरथ और महाराज राम वाला राज्य आ जावे। हे प्रभु वह अनुपम !कृपा और देने चाहते हैं। हे रक्षा करने वाले प्रभुहमारी ! जब आप !हे प्रभु !रक्षा करहमारी रक्षा माता के गर्भ स्थल में किया करते हैं, तो प्रभु अब भी आप हमारी रक्षा अवश्य करेंगे। !

प्रभुरक्षा किस काल में किया करता है !? जब मानव उस प्रभु के अनुकूल कर्म करता है। जैसे मुनिवरों! माता पिता का पुत्र या पुत्री है, यदि वह माता के अनुकूल कार्य करता है, तो माता पिता प्रसन्न होते हैं और माता प्रसन्न हो करके, उसे लोरियों में आनन्द प्राप्त कराती है, पुत्र को नाना प्रकार के भूषण देती है, दोनों प्रसन्न रहते हैं, इसी प्रकार मुनिवारों! इस आत्मा का परमात्मा वास्तविक पिता है, जब हम परमात्मा की आज्ञा का पालन करेंगे, तो परमात्मा हमें सुन्दर सुन्दर भूषण अवश्य देंगे और कौन सा भूषण? चरित्र का भूषण। वीरता का भूषण। ब्रह्मचर्य का अमूल्य भूषण कहलाता है वह भूषण प्रभु हमें अवश्य प्रदान करेंगे। परन्तु हम उसके अनुकूल कार्य करते हुए चले जाएं।

मुनिवरोंआज हम प्रभु से याचना कर ! रहे थे कि हे प्रभुहमारा कल्याण कर !, हमारे ऊपर, अनुपम कृपा कर, हमारी रक्षा कर, जैसे माता के गर्भ में हमारी रक्षा होती है इसी प्रकार इस पृथ्वी माता के गर्भ में हमारी रक्षा होनी चाहिए।

यम

मुनिवरोंवह प्रभु यम कहलाता है !, यमराज उसी को कहते हैं, यमऽस्ति जो मानव के कर्मों का न्याय करता है। परमात्मा को उस स्थिति में यमराज कहते हैं।

महर्षि बाल्मीकि

मुनिवरोंसुनो वह कल वाली चर्चा आ पहुंची !, जैसा मुझे महानन्द जी ने वर्णन किया था महर्षि वाल्मीकि के जीवन की चर्चा। महर्षि बाल्मीकि त्रेता काल में हुए, उनका जीवन भी अग्रगण्य था। युवा अवस्था में उनका जीवनअग्रे था ।

मुनिवरों! बाल्य अवस्था से युवा अवस्था तक इन्होंने नाना प्रकार के प्राणियों को महा कष्ट भी दिया, नाना प्राणियों को नष्ट कर उनका द्रव्य ले लेना और उसे अपने विधाता सम्बन्धियों को अर्पित कर देना और स्वयं आनन्द से रहना महान उस रत्तनागर का कार्य था। बाल्यावस्था में उसका नाम रत्तनागिर या रत्तनागर कह दो । एक समय देव ऋषि नारद उनके आसन पर आए, और भी कुछ ऋषि थे। नारद मुनि को उसने कहा कि अरे, कौन संन्यासी जाता है?

मुनिवरोंवह शान्त हो गएं और बोले क्यों भाई !? महाराजजो कुछ आपके द्वारा है !, वह मुझे अर्पित कर दीजिए।

नारद मुनि ने कहा कि भाई क्या क्यों लेते हो?

महाराज! मेरे पिता हैं, माता हैं और सम्बन्धित परिवार है उनके उदर की पूर्ति के लिए।

नारद मुनि ने कहा तो भाई तुम मनुष्यों को कष्ट क्यों देते हो, अपने अंगों से कुछ पुरुषार्थ करो । उनहोंने कहा नहीं महाराज ! यह भी तो पुरुषार्थ है, मैं इसी पुरुषार्थ को किया करता हूँ दूसरों को नष्ट करता हूँ, द्रव्य लेता हूँ, आनन्द पान करता हूँ।

ऋषि ने कहा तो अच्छा, तुम एक कार्य करो, कि अपने सम्बन्धियों से प्राप्त करके आओ, कि यदि कोई मुझे नष्ट करने लगे, तो तुम मेरी सहायता करोगे या नहीं।

मुनिवरों वह वहाँ से बहतें !हुए अपनी माता के द्वार पहुंचे और बोले मातायदि मुझे ! कोई नष्ट करने लगे तो तुम मेरी सहायता करोगी? माता ने कहा कदापि नहीं जो पाप कर्म करता है उसका कोई साथी नहीं होता संसार में। यही वाक्य पिता ने कहा, वही वाक्य विधाता सम्बन्धियों ने कहा। यह वाक्य जान वह वहाँ से बहता हुआ ऋषि के द्वार आ पहुंचा।

ऋषि ने कहा कि अरे, क्या रहा?

प्रभुउन्होंने कहा है !, कि तुम्हारा कोई साथी नहीं। देव ऋषि नारद मुनि बोले कि जब माता पिता तुम्हारे साथी नही हैं तो तुम इतना पाप ही क्यों करते हो, यह पाप न करो।

उस बालक को बेटावैराग्य की भावना !एं आने लगी और उसने कहा तो प्रभुमैं क्या ! करूं? उन्होंने कहा कि तुम राम का पूजन करो, भगवान का चिन्तन करो, तुम्हारा उत्थान होता चला जाएगा।

मुनिवरोंउस महान बालक ने परमात्मा का चिन्तन करना प्रारम्भ कर दिया और यहाँ ! तक सुना जाता है कि राम रमेति शब्दार्थों मे ं उनके हृदय में वह अमूल्य प्रकाश हो गया, वह अग्नि जागृत हो गई, उसे ज्ञान होने लगा, कि संसार का ज्ञान क्या है, विज्ञान क्या है, आत्मिक विज्ञान क्या है, यह सब ज्ञान उसके द्वारा ओत प्रोत होने लगा।

तो मुनिवरोंदेखो !, अब बालक ऋषि बनने लगा और आचार्यों ने उसका नाम ऋषि बाल्मीकि चुना जो बाल्य अवस्था में कुकर्म करने वाला हो और आगे ऋषि बन जाएं, उसी का नाम बाल्मीकि कहलाता है। देखो, वह कितने महान प्रकाण्ड, बुद्धिमान, ब्रह्माज्ञानी, तत्त्ववेत्ता कहलाने लगे, ऋषियों में उनकी चुनौति होने लगी।

महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में माता सीता

यह त्रेता काल का भी समय था, जब भगवान राम रावण को नष्ट करके, अपनी संस्कृति का चक्र इस संसार में ओत प्रोत करके अपनी अयोध्या में आ पहुंचे, माता सीता गर्भीणी थी और राम ने मर्यादा कहो या बेटाकुछ भी उच्चारण कर सकते हो !, राम ने माता सीता को वन दे दिया। जब वन दे दिया, तो वह बहती हुई ऋषि बाल्मीकि के आश्रम में जा पहुंची। ऋषि बाल्मीकि के आश्रम में आ करके गर्भ से, एक बालक का जन्म हुआ, बालक जन्म के पश्चात् बड़े आनन्द से ऋषि आश्रम में रहा करता था।

मुनिवरों! ऋषि वाल्मीकि ने दशरथ से लेकर राम के जीवन चरित का निर्माण किया जीवन चरित का क्या, सब ही कुछ कर्म जो उन्होंने किया, उस सब का पोथी रूप में निर्माण किया, ऐसा सुना गया है ऐसा कुछ पान किया गया है ।

ऋषि प्रेम से उस बालक को लव नाम से उच्चारण करने लगे, परन्तु कुछ समय के पश्चात् ऐसा कारण हुआ, कि महर्षि सुरन्धित की एक कन्या थी, जिसका नाम सुमित्रा था। वह ऋषि कन्या थी परन्तु किसी कारण वसवह गर्भवती रह गई, शब्रोनो से कुछ समय के पश्चात उसके बालक हुआ, और उस बालक को कुशा पर स्थिर कर बाल्मीकि आश्रम के निकट छोड़ अपने ऋषि स्थान पर चली गई।

मुनिवरों! देखो, जब सीता पवित्र जल पान करने के लिए गई, तो उसे यह बालक प्राप्त हो गया। माता सीता ने उस बालक को अपने कंठ लगाया और एक लोरी उस बालक को और एक लोरी अपने पुत्र को देनी लगी।

मुनिवरोंयह दो पुत्र सीता के कहलाते है लव जो उनके गर्भ से उत्पन्न हुआ और ! कुश जो कुशा से मिला।मुनिवरों! देखो, वह सुमित्रा का पुत्र था और सुमित्रा ऋषि कन्या थी परन्तु यह पुत्र कैसे हुआ, देखो, एक ब्रहित नाम के ब्रह्मचारी सुरन्धित ऋषि के आश्रम में, आए और सुमित्रा से दृष्टिपात हुआ वह अग्रहि हो गई, पिता से कहा भी भगवन्मम हृदश्चते वह कन्या गायत्री का पाठ भी करत !ी थी, मनुष्य में दोष आ सकते हैं, इस कन्या में भी किसी कारण वश दोष आ गया, वह कोई आश्चर्यजनक वाक्य नही,

बेटादोनों बालक माता सीता के कहलाए !, यह दोनों बालक बाल्मीकि की सेवा करते थे और महर्षि बाल्मीकि इन्हें अस्त्र शास्त्रों की, शिक्षा देते थे। कुछ समय के पश्चात् राम को विदित हुआ, नाना संग्राम भी उन प्यारे पुत्रों के द्वारा हुए, बेटामुझे संक्षेप ! चर्चा करनी है, विस्तार से नहीं, मुझे केवल चर्चा करनी है, प्रणाली की, हमारे यहाँ एक रघुकुल प्रणाली मानी गई है, यहाँ सबसे पूर्व राजा सगर हुए, राजा सगर के सुखमञ्जस हुए, सुखमञ्जस के ब्रहूत हुए, ब्रहूत के कददीप नाम के राजा हुए, कददीप के भागीरथ हुए, भागीरथ के दिलीप हुए, दिलीप के रघु हुए, रघु के अजय हुए,

अजय के दशरथ हुए, दशरथ के राम हुए राम के लव परन्तु लव कुश दोनों ही राम के माने जाते हैं।

राम के पश्चात् यह लव कुश दोनों राजा बने, इनके सुधित नाम का एक पुत्र हुआ, जो इनके पश्चात् राजा बना, सुधित नाम के राजा के कृष्णि नाम के राजा हुए और कृष्णि के शुभूष नाम के राजा हुए, शुभूष नाम के राजा के बेटाकिकरकेतु नाम का ! राजा हुआ और उसके पश्चात् यह प्रणाली समाप्त हो गई।

राजा रावण

बेटामुझे यह प्रणाली तो नहीं उच्चारण करनी थी !, परन्तु कुछ प्रकरण आया, तो तुम्हारे समक्ष निर्णय किया। बेटातुम्हारा वह प्रश्न रहता चला जा रहा है !, कि रावण की नाभि में अमृत का कुण्ड था।

मुनिवरोंसुनो !, तुम्हें यह भी ज्ञान हो गया होगा, मैंने कई काल में वर्णन भी कराया है, कि पुलस्त्य नाम के ऋषि थे, जो राजा महिदन्त के पुरोहित थे। पुलस्त्य ऋषि के पुत्र थे, मनिचन्द्र ब्राह्मण और मनिचन्द्र के यह वरुण नाम का पुत्र हुआ। इस मनिचन्द्र के और भी दो पुत्र थे, एक का नाम गुरुद था और एक का नाम खरदूषण था उनके कुछ लक्षणों के अनुकूल व्याकरण से उनके नाम चुने। जब यह विद्यालयों में शिक्षा पाते थे, तो तीनों प्यारे पुत्र परमात्मा के आस्तिक थे और परमात्मा का चिन्तन किया करते थे। वरुण महाराजा शिव की याचना किया करते थे। यह सुशील था, वेदपाठी था, महान विद्वान था, वैज्ञानिक भी था, भगवान शिव की याचना करते करते, अपनी आत्मा का उत्थान किया, हृदय इसका निर्मल हो गया, आयुर्वेद के सिद्धान्त से इस वरुण ने जितना भी आयुर्वेद नाड़ी विज्ञान था, वह जाना।

मुनिवरोंमनुष्य के शरीर में ! जो यह नाभि चक्र है, इसमें लगभग करोड़ नाड़ियों 2 का समूह है जिसको हम नाभिचक्र कहते हैं। एक सुषुम्ना नाम की नाड़ी होती है, जो मस्तिष्क से चलती है और उसका सम्बन्ध नाभि चक्र के अग्र भाग में होता है, जो मनुष्य अच्छे विचारों वाला होता है, परमात्मा का चिन्तन करने वाला होता है और इस नाड़ी विज्ञान को जानने वाला होता है, वह अपनी क्रियाओं से मानो नाड़ी विज्ञान

से, नाना औषधियों से, उस नाड़ी के विज्ञान को जानता है, जिसको सुधित नाम की नाड़ी कहते हैं, उसको बोधित नाम की नाड़ी भी कहते हैं, जो ब्रह्मरन्ध्र से चलती है और जिसका सम्बन्ध नाभि से रहता है। जब चन्द्रमा सम्पन्न कलाओं से पूर्णिमा के दिवस परिपक्व होता है, तो वह जो सुधित नाम की नाड़ी है जिसका मस्तिष्क से सम्बन्ध होता हुआ और नाभि चक्र से होता हुआ, यह नाड़ी का सम्बन्ध चन्द्रमा से होता है, चन्द्रमा से जो कान्ति मिलती है, जो विशेषज्ञ प्राप्त होता है, उसे वह नाड़ी पान करती है, जो नाड़ी विज्ञान को जाने वाले होते हैं, वह जानते हैं, कि योग के द्वारा परमात्मा का चिन्तन करते हुए, चन्द्रमा से अमृत मिलता है, वह अमृत पकता है और नाभि से जो नाड़ियों के मध्य में स्थान होता है, उस स्थान में यह अमृत एकत्रित होता है।

अब इसमें क्या विशेषता है? इससे हमें क्या प्राप्त होता है?

मुनिवरों उससे मानव का जीवन बलिष्ठ होता है। !निर्भ्रांत होता है और मृत्यु से भी कुछ विजयी बन जाता है, उसे यह ज्ञान हो जाता है, कि तेरी मृत्यु अधिक समय में आवेगी, उसकी आयु अधिक हो जाती है क्योंकि वह आनन्द रूपी अमृत नाभि स्थल में होता है।

पूज्य महानन्द जी गुरु जी! ऐसा कहते हैं, कि रावण के दस शीष थे, राम जब उन्हें नष्ट करते, तो दस शीष द्वितीय उमड़ आते थे।

पूज्यपाद गुरुदेव बेटायह तो केवल उपहास है !, इसका अभिप्राय यह है, कि रावण को हमारे यहाँ दशानन कहते हैं, और क्यों कहते हैं? क्योंकि यह जो दस दिशाएं हैं पूर्व, पश्चिम, उत्तरायण, दक्षिणायन और इनकी चारों अस्थेति और पृथ्वी और अन्तरिक्ष यह दस दिशाएं कहलाती हैं इनके पूर्ण विज्ञान को जानते थे, वह ब्राह्मण था और महान, प्रकाण्ड बुद्धिमान था।

तो बेटानाड़ी विज्ञान के अनुकूल उन्होंने उस अमृत को जाना !, उस अमृत से उसके हृदय में निर्मलता, निर्भयता, विचित्रता थी और सब विज्ञान को जानता था, परन्तु विज्ञान को जानने के पश्चात् अपने पिता के सम्पर्क में आया।

पिता ने कहा भाई! अब तुम संस्कार करा लो, परन्तु उन्होंने कहा कि महाराजमेरी ! संस्कार कराने की इच्छा नहीं। राजा महिदन्त चक्रवर्ती राजा थे, पातालपुरी भी उन्हीं पर थी, रोहिणी नाम का राष्ट्र भी उन्हीं पर था, गान्धार इत्यादि जो राज्य थे, वह राजा महिदन्त के आधीन थे, इनका जो राजकोष था, वह लंका में था, इन्होंने स्वर्ण की लंका भी बनाई और महाराजा, शिव उनके सहायक रहते थे। उसके पश्चात् कुछ ऐसा कारण बना, कि राजा कुबेर ने आ करके, राजा महिदन्त से लंका को अपना लिया और पातालपुरी को कुधित रूष्टित नाम के राजा ने अपना लिया और भातिक नाम के राजा ने सोमधित राज्य को अपना लिया।

राजा महिदन्त के एक कन्या थी, पुत्र कोई न था। वह कन्या तत्त्व मुनि पुरोहित के द्वारा वेद यज्ञ ज्ञान प्राप्त करती थी, बड़ी विदुषी थी। राजा महिदन्त पुरोहित के द्वार गएं और कहा महाराज मेरी कन्या को !आपने शिक्षा दी है, परन्तु मैं यह ओर जानना चाहता हूँ, कि मेरी कन्या कौन से गुणों वाली है, किस कुल में इसका संस्कार होना चाहिए। उन्होंने कहा कि यह ब्राह्मणों के गुण वाली है, ब्राह्मण कुल में इसका संस्कार कर दो।

मुनिवरोंअब राजा महिदन्त को यह हुआ !, कि ब्राह्मण का कुल जानना चाहिए, अब उन्होंने वही कुल देखा, वही बालक, जिसको वरुण कहते थे, उस बालक न कन्या के गुणों को पान किया, तो मग्न हो गएं और संस्कार करा लिया। जब संस्कार कराने गएं, तो राजा महिदन्त ने सबका स्वागत किया, परन्तु नाना सम्बन्धियों में से एक ने कहा, कि भाई! कुछ अर्पित नहीं किया। उस समय राजा महिदन्त ने कहा कि भाई! मैं क्या करूं, मेरे द्वारा कुछ था नहीं, सूक्ष्म सा राज्य रह गया है, मेरा विशेष राज्य जो लंका में था, वह सब कुबेर ने विजय कर लिया है। उस समय उस वरुण बालक ने प्रतिज्ञा की, लंका को विजय करने के पश्चात् में अपनी पत्नी के द्वार पहुंचूंगा।

यह प्रतिज्ञा करने के पश्चात्, मुनिवरोंउस महान बालक ने !, ब्राह्मण तो था, नाना राज्यों में भ्रमण किया और सब राजाओं से ब्राह्मण की दक्षिणा में सहायता पान करता था, , किसी से दस सहस्त्र सेना ले ली। इसी प्रकार सेना एकत्रित की और

लंका पर विजय पाने के लिए, राजा कुबेर पर आक्रमण कर दिया और लंका को विजय कर लिया। विजय करने के पश्चात् वह राजा महिदन्त के द्वार आए और कहा कि महाराज यह है आपका !राज्य स्वीकार कीजिए। देखो,राजा महिदन्त बोले कि ! भाई! यह राज्य मेरा नहीं मैंने अपनी कन्या के संस्कार में यह राज्य तुम्हें अर्पित कर दिया, उस समय मैं कुछ न दे सका था।

तो मुनिवरोंसब राजाओं का एक समाज नियुक्त हुआ और उन्ह !ोंने कहा कि भाई! यह नवीन राजा लंका का स्वामी बना है, दूसरे नाम की चुनौती दो, ब्रह्मण है, ऊँचा है, पुलस्त्य ऋषि महाराज का पौत्र है, तो सब राजाओं ने व्याकरण की दृष्टि से उसका नाम रावण नियुक्त किया। रावण शब्दार्थ ऊँचे और दानी का है, वीर का है, उसने कुबेर को नष्ट किया और लंका का स्वामी बना। यह प्रभु का महान पुजारी था, राजा होने के पश्चात राजसी गुण आने लगे। अन्त में बेटाइसमें तमोगुण आ गया ! और वही जो तुम जानते हो, जो सुना है वही कारण हुआ और अन्त में नष्ट हो गए।

तो मुनिवरों यह !मैंने संक्षेप में तुम्हारे द्वारा रावण का इतिहास वर्णन किया। रावण का इतिहास बड़ा सुन्दर है। क्योंकि वह वीर बालक था उसके द्वारा वीरता थी, उसने संसार में राज्य को अपनाया, पातालपुरी को लिया, गान्धार को लिया, सुधित नाम के राज्य को लिया, रुधिर नाम के राज्य को लिया, नाना सब ही राज्यों को अपना कर आर्यावर्त पर आक्रमण किया। यहाँ भी आकर केवल एक अयोध्या राज्य को छोड़ा था, राजा रावण इतना विस्तार कर चुका था।

राजा रावण के पुत्र थे नारायन्तक, अहिरावण, मेघनाथ, अक्षय कुमार इत्यादि, अहिरावण पातालपुरी का राजा था और नारायन्तक, सुधित का राजा था और अक्षय कुमार के द्वारा रोहिणी नाम का राज्य था, मेघनाथ गान्धार का राजा था और उसका सम्बन्धित था कौन? खरदूषण। जो महान इस आर्यावर्त की सीमा को दमन करता चला आ रहा था। मारीच इत्यादि और भी सम्बन्धित आततायी थे परन्तु अब यह इतिहास है।

पूज्य महानन्द जीः गुरु देवकुछ वर्णन कर दूं !, कि आधुनिक काल मैं इन राज्यों को क्या कहते हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा जैसी तुम्हारी इच्छा हो। !

पूज्य महानन्द जीः भगवनयह जो आपने पातालपुरी कहा है !, जहाँ अहिरावण राज्य करता था उसको आधुनिक काल में अमेरिका कहते हैं और सुधित नाम का राज्य जहाँ नारायन्तक, राज्य करता था उसको आधुनिक काल में रूस कहते हैं और जो रोहिणी नाम का राज्य था, जहाँ अक्षय कुमार राज्य करता था, उसको चीन कहते हैं और गान्धार इत्यादि जिनको आधुनिक काल में काबुल, बिलोच जैसा कुछ कहते हैं परन्तु इसमें मुझे भी कुछ भ्रान्ति होती चली जा रही है।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा !धन्य हो !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटाआधुनिक काल का प्रतीत नहीं क्या कहते हैं !, तुम्हें ज्ञान होगा, परन्तु मैंने कुछ इतिहास का चर्चा वर्णन की, इन राज्यों में सबमें एक संस्कृति थी, परन्तु कारण बना, इसमें आततायी हो गए, अपने स्वार्थ में आ करके संस्कृति से असंस्कृति वाले बन गए। रावण के लिखे विज्ञान से,

परन्तु इस पूर्व के इतिहास से ज्ञान होता है, कि भगवान राम कितने पराक्रमी थे, देखो, इस महान आर्यावर्त को, अपने अयोध्या राष्ट्र को भी और इसके पश्चात आगे चलते गए और सर्वत्र संसार में संस्कृति का प्रसार करके अहिरावण को नष्ट कर, हनुमान के पुत्र मकरध्वज को वहाँ का राज्य दिया।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव ऐसा कहते हैं कि मकरध्वज का जन्म मछली से हुआ। !

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य तुम यह जानते हुए मूर्खों वाली !बेटा ....चर्चा क्यों किया करते हो, यह अब तक विचार में नहीं आया, कई समय तुम्हें वर्णन कराया है, तुम इसको जानो। महानन्द जी, बेटा !त्रेता काल को हमें दृष्टिपात करने का सौभाग्य मिला। तुम्हें यह जान लेना चाहिए कि सुग्रीव की कन्या रोहिणी थी और उसका संस्कार हनुमान से हुआ था और केवल एक प्रथम बालक उत्पन्न हुआ, उसके पश्चात् उस कन्या की मृत्यु हो गई और मृत्यु के पश्चात् हनुमान ब्रह्मचारी रहा और यह

बालक यहाँ से किसी कारण वश जब खरदूषण आदि आततायियों का यहाँ आक्रमण हो रहा था, तो उनके आँगन में आ गया और वहाँ से यह बालक पातालपुरी चला गया और अहिरावण का द्वारपाल रहता था।

भगवान राम ने जब अहिरावण को विजय किया, तो इस बालक से परिचय हुआ और ज्ञात हुआ कि यह तो हनुमान का पुत्र है। अहिरावण को नष्ट करने के पश्चात, इसे पातालपुरी का राजा बनाया गया। कौन? हनुमान का पुत्र मकरध्वज ।

बेटा तुम्हें एक !ज्ञान और कराए देते हैं, कि जहाँ जो प्रभु ने रचाया है, वह वहीं जन्म लेता है, वैसी ही उसकी प्रकृति होती है। बेटामछली के गर्भ से मछली ही जन्म ! लेगी, उसका रूप किसी और रूप में हो जाएं यह द्वितीय बात है, परन्तु माता के गर्भ से बालकजन्म लेता है । बेटा! मच्छली के गर्भ से बालक कदापि भी जन्म न लेगा, क्यों नहीं जन्मता?क्योंकि उसकी प्रकृति में वह स्थान नहीं। देखो, मैंने कई काल में वर्णन किया, कि माता के गर्भ स्थल में कमल होता है, कमल में बिन्दु जाता है वहाँ तब गर्भ स्थापित होता है और यह बालक बनता है और जन्मता को प्राप्त होता है। जन्म पा करके यह मनुष्यता को प्राप्त होता है। तुम्हारे यह मूर्खों वाले शब्द हैं, जो न मानने वाले हैं, बेटा! यह मूर्खों का समाज नहीं, बुद्धिमानों का समाज है। हमारा जो इतिहास है, उसकी परम्परा को जान लेना चाहिए।

तो हे मेरे भोले आचार्यजनो! आज हम कोई दार्शनिक वाक्य प्रकट नहीं कर सके, वाक्य यह चल रहा था, कि मेरे प्यारेमहानन्द जी ने कहा था कि रावण को नाभि ! में अमृत काकुण्ड था परन्तु नाभि में अमृत स्थान होता है, अमृत प्राप्त होता है, मनुष्य ब्रह्मचर्य से सजा हुआ होता है।

मुनिवरोंराजा महिदन !्त की कन्या, जिसका संस्कार रावण के द्वारा हुआ, उसका नाम था मन्दोदरी।

पूज्य महानन्द जीः गुरु देवमुझे बारम्बार का वह प्रश्न फिर स्मरण हो आया !, कि कहते हैं यह तो ऋषि कन्या थी। ?

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, कैसे?

पूज्य महानन्द जीः भगवनमैंने आपको इससे पूर्व भी ! वर्णन कराया था कि कहते हैं कि चार ऋषि तपस्या करते थे और रावण ने ऋषियों पर कर लगा दिया, और उनसे कर लेने लगा। कहते हैं ऋषियों के द्वारा कर था नहीं, ऋषियों ने अपना माँस दे दिया और राजा रावण ने ले जाकर इस माँस को राजा जनक के यहाँ अस्तुत कर दिया। अब देखो, वहाँ जब राजा जनक ने हल चलाया, तो सीता का जन्म हुआ और यहाँ उन ऋषियों ने क्या किया कि एक समय उन्होंने खीर का सुन्दर भोजन बनाया और भोजन बनाकर स्नान करने चले गएं और खीर के पात्र में सर्प जा पहुंचा। उन ऋषियों के आश्रम में एक मेंढ़की रहा करती थी।

पूज्यपद गुरुदेव हास्य...अच्छा, अरे, मेंढ़की क्या होती है?

पूज्य महानन्द जी – भगवन! मेंढ़की अब रूह शुशची ।

पूज्यपद गुरुदेव अच्छा।

पूज्य महानन्द जीः तो उस मेंढ़की ने सोचा कि चारों ऋषि आएंगे और समाप्त हो जाएंगे इसलिए जब ऋषिजन स्नान ध्यान करने के पश्चात् भोजन पाने के लिए खीर के समीप पहुँचे, तो वह मेंढ़की उस खीर में पहुँच गई। ऋषियों ने कहा कि भाई! भोजन अपवित्र हो गया, उन्होंने भोजन को पात्र से पृथक किया, तो उसमें सर्प था। ऋषियों को ज्ञान हुआ कि मेंढ़की ने हमारे प्राणों की रक्षा की है। तो गुरुदेव! ऐसा सुना है कि उस मेंढ़की की कन्या उत्पन्न हो गई और उस कन्या का नाम मन्दोदरी था, उसके पश्चात् वह रावण को अर्पित कर दी थी, ऐसा सुना है।

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जी बेटातुम ऐसी चर्चाएं क्यों किया करते हो !, यह न मानने वाला वाक्य है, यह कैसे हो सकता है, कि बिना माता के गर्भ स्थल के कन्या का जन्म हो जाएं। यह तो मान सकते हैं कि मेढ़की में वह भाव आ गएं हों और उनके प्राणों की रक्षा भी हुई हो परन्तु यह कैसे स्वीकार करें, कि बना माता के गर्भस्थल के उस कन्या का जन्म हुआ। यह परमात्मा का नियम नहीं कहता, वैदिक सिद्धान्त नहीं कहता।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जीऐसा कहते हैं कि ऋषियों की इच्छा है !, जब ऋषि परमात्मा को प्राप्त हो जाते हैं, तो वह जो चाहें सो करें।

पूज्यपाद गुरुदेवः हांयह वाक्य तुम्हारा यथार्थ है !, परन्तु मैं तुमसे एक वाक्य जानना चाहता हूँ कि जो ऋषि हो जाते हैं, वह परमात्मा के नियम से चलते हैं या नियम के विरूद्ध !

पूज्य महानन्द जीः भगवनवह नियम के अनुकूल चलतें हैं !?

पूज्यपाद गुरुदेवः 'अच्छा, वे नियम के विपरीत तो नहीं चलते?

पूज्य महानन्द जीः नहीं भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः जब नियम के विपरीत नहीं चलते, तो यह ऋषि नियम के विपरीत कैसे चले कि बिना गर्भस्थल के कन्या का जन्म हुआ? यह कैसे माना जाएं? इसलिए यह वाक्य न मानने वाला वाक्य है। ऋषिजन अपने जीवन का मन्थन करते हैं और मन्थन करते करते परमात्मा को प्राप्त हो जाते हैं परन्तु परमात्मा के नियम के विरुद्ध कोई भी कार्य नहीं करते। यह नियम कहलाता है और ऋषिता कहलाती है।

पूज्य महानन्द जीः चलों भगवन्इस वाक्य से हमारी सन्तुष्टि हो गई !, परन्तु अब सीता का जन्म इसी प्रकार का है घड़े से जन्म हुआ।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यहाँ यह वाक्य भी मैंने निर्णय कराया था ...., परन्तु पुनः इसका प्रश्न करते रहो। महानन्द जी इसका उत्तर पुनः काल में दिया था और यह सुनो !

सीता राजा जनक की कन्या थी। एक समय राजा जनक के राष्ट्र में अकाल पड़ गया, नाना ऋषियों को निमन्त्रण दिया गया, याज्ञवल्क्य, माता गार्गी, महर्षि लोमश आदि ओर भी अन्य ऋषि उनके आश्रम में आए । राजा जनक ने उनसे कहा कि मेरी प्रजा अन्न के अभाव से दुखित है कुछ ऐसा यत्न करो, कि जिससे अकाल समाप्त हो जाएं। उन्होंने देखा गणित के अनुकूल देखा और कहा कि भगवन्आप दो गो के ! बछड़े लीजिए, स्वर्ण का हल बनवाइए और अपनी वाटिका में जाकर हल चलाइये ऐसा उनका विश्वास था। राजा जनक ने ऐसा ही किया। कारण होना था, राजा जनक

ने ज्यों ही हल चलाया, वृष्टि हुई और उधर राजा जनक के घर कन्या का जन्म हुआ।

राजा जनक को जब गृह से कन्या उत्पन्न होने का समाचार मिला, तो बड़े प्रसन्न हुए कि मेरा बड़ा सौभाग्य है, आज ऐसे आनन्द समय, मेरी पुत्री का जन्म हुआ। उन्होंने ऋषि मुनियों से कहा कि महाराजाअब तो आप सब एकत्रित हो !, मेरी कन्या का नामकरण संस्कार कीजिए। ऋषि मुनियों ने कहा कि भाई! इसका नामकरण संस्कार क्या, इसका नाम सीता नियुक्त कर दो। व्याकरण की रीति से उन्होंने कहा कि सी नाम वृष्टि का और ता नाम हल की फाली का, हल चलाने से वृष्टि हुई है और वृष्टि होने से जन्म हुआ है दोनों के मिलान से जन्म हुआ है, इसलिए कन्या का नाम सीता नियुक्त कर दो, मुनिवरों उस समय उसका नाम सीता नियुक्त कर दिया गया। ! उच्चारण करने का भाव है कि हमें प्रत्येक वाक्य को विचार लेना चाहिए, केवल मूर्खता से नहीं, वास्तविक रूप से विचारते चले जाएं। अब बेटातुम कहोगे कि यह वाक्य ! आप ही स्वीकार करते हैं, परन्तु मैं नहीं करता, ऋषि बाल्मीकि स्वीकार करते हैं और यह भी स्वीकार न करो, तो बेटा हमें त्रेता काल देखने का सौभाग्य मिला !है। बेटा ! अब तुम्हारी यह सब भ्रान्तियाँ निवृत्त होती चली गई हैं।

आज का हमारा वेद पाठ क्या कह रहा था? आज हम इतिहास में जा पहुँचे, दर्शनों की चर्चा समाप्त कर दी, यह मुर्खानन्द इतिहास को चर्चा चाहता था, परन्तु चलो, कोई बात नहीं। आज श्रंगकेतु संहिता का पाठ चल रहा था, यह संहिता बड़ी सुंदर है, इसमें बड़ी उदारता आती है, पवित्रता आती है । इसमें जब वेदों का पाठ आएगा नदी विज्ञान संबन्धित आएगा तो किसी कल में प्रगट करेंगे आज नाड़ी विज्ञान का विषय नही था यह तो महानन्द जी के प्रश्नों के अनुकूल कुछ उत्तर दिया । उच्चारण कर रहे थे महर्षि वाल्मीकि की चर्चा ।

तो मुनिवरोंमानव को यह विचार लेना चाहिए कि जो मनुष्य दुराचारी होता है !, वह संसार में ऋषि भी बन जाता है जैसे ऋषि बाल्मीकि। इसी प्रकार हमें आज विचार लेना चाहिए, कि हम किसी न किसी काल में शुभ कर्म करें और वह कर्म करते चले

जाएं, जिससे यह प्रकृति हमारी साथी बन जाएं और हमारे विचारों के अनुकूल हमें फल देने वाली हो। हमारे प्रारम्भ के वाक्यों में कर्म का विषय चल रहा था हमें परमात्मा के अनुकूल अपना जीवन बना लेना चाहिए, परमात्मा को आज्ञा में विचरण करना चाहिए और जब परमात्मा की आज्ञा में विचरण करेंगे तो हमें इच्छा के अनुकूल फल प्राप्त होगा। अब वेद पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी, कल नियम मिलेगा तो इससे आगे वार्त्ता होगी। सनातन धर्म 1964 अक्तूबर 22, प्राईमरी स्कूल मोगा मण्डी, (पंजाब (

२१ 19 10 1965 पुष्प 06 धर्म को राष्ट्र से भी अधिक व्यापक बनाओ

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज पुनः से जिन वेद मन्त्रों का हमने पाठ किया। इस हमारी अमूल्य वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा का वह विज्ञान है, जिसको पान करने के पश्चात् मानव का हृदय अमृत हो जाता है, उसमें नवीन क्रान्ति जागृत हो जाती है। आज हम उस अमूल्य वेदवाणी पर विचार विनिमय करते चले जाएं। जहाँ हमें मानव जीवन दिया है, वहाँ हमारे लिए परमात्मा ने सर्वत्र सामग्री उपलब्ध की है, जिसे प्राप्त करने के पश्चात् हमारा जीवन एक आनन्द में विचरण किया करता है।

बेटाकल मैंने कुछ संक्षेप से आन्तरिक भावनाओं के सम्बन्ध में प्रकाश दिया। यह ! संसार, यह राष्ट्र, यह मानव किस प्रकार ऊँचा बन सकता है। वेद में सम्पन्न विद्याएं हैं। इन सम्पन्न विद्याओं का एक ही लक्ष्य है, कि मानव को अपना जीवन ऊँचा बनाना चाहिए। व्याहृतियों को बनाओ, सूर्य की विद्या को जानो, चन्द्रमा की विद्या को जानो, प्रकृति की विद्या को जानो, तारामण्डल की विद्या को जानो, अन्तरिक्ष की विद्या को जानो, आत्मिक विद्या को जानो, मन की विद्या को जानो। बेटाअन !्त में सबका लक्ष्य यह, कि मानवता को जानो। कितना सुन्दर शब्द परन्तु यह मानवत्व है क्या?

कर्तव्य से विस्तार

मुनिवरोंदेखो !, जैसे माता अपने गृह में नाना सामग्री को उपलब्ध करती है। कहीं पति से कहा करती है, कहीं परिवार से उच्चारण करती है, कहीं अपने पिता से कहा करती है। उदर की पूर्ति की वस्तु लाती है, अपने पुत्र का लालन पालन करती है। क्यों करती है? केवल कारण यह कि अपने गर्भस्थल से हुए प्यारे पुत्र के लिए करती है। राष्ट्र में भी यही है। राजा नाना प्रकार की सामग्री एकत्रित करता है, राष्ट्र के भाग बनाता है, कहीं क्षत्रियों को उत्पन्न करता है, कहीं आनन्ददायक गान हो रहे हैं, मनोरंजन के उत्तम उत्तम साधन उपलब्ध हो रहे हैं, सभी कुछ राजा के राष्ट्र में है। क्यों है? केवल अभिप्राय यह है कि वह मानव के लिए। अब अंत क्या हुआ इन वाक्यों का की यह सब कुछ मानव के लिए। देखो, जितनी वृक्ष योनियाँ हैं, वह वायु देती हैं, सुगन्धिदायक पुष्प वाटिका में, सुगन्धिदायक वायु देते हैं। यह वायु कहीं अग्नि में वितरण होती है, कहीं जल में, कहीं मुनिवरोंदेखो !,विषैली वायु भी चलती है !, परन्तु उसके लिए विषैले प्राणी भी हैं। जैसे सर्प इत्यादि योनियाँ हैं, जो सब दुर्गन्ध को शोषण करते रहते हैं और मानव के लिए सुगन्ध उत्पन्न करते हैं। लक्ष्य क्या हुआ, इन सब वाक्यों का? कि मानवत्व ही केवल ऐसा है, कि जिसका बेटाकोई प्रमाण ! नहीं।

आज हमारे आँगन में यह कोई वाक्य आता नहीं, कि मानव का जीवन कितना विस्तारवादी है। जो भी कुछ परमात्मा ने उत्पन्न किया है, वह मानव के लिए है। गो दुग्ध देती है, कितना सुन्दर है। क्यों दिया करती है? वह तो अपने कर्त्तव्य का पालन किया करती है। दुग्ध को मानव पान किया करता है और पान करके आनन्दित होता है। माता अपने पुत्र को अपनी लोरियों में आनन्द का पान कराती है। क्या माता को यह ज्ञान है, कि तू अपने बालक को अपनी लोरियों में क्यों पान करा रही है? उसे ज्ञान है, कि यह मेरा पुत्र है, आगे चलकर के मानव बनेगा। माता का जो भविष्य है, वह उज्ज्वल होने जा रहा है। क्योंकि वह अपने प्यारे पुत्र को मग्न होकर लॉरियों का पान करा रही है, राजा अपने राष्ट्र का पालन करता है। शिक्षालय में गुरुजन अपने

ब्रह्मचारियों को और ब्रह्मचारिणियों को सुन्दर शिक्षा प्राप्त कराते हैं, परन्तु यदि अब गुरु से प्रश्न किया जाए, कि तुम इतना परिश्रम करते हो, इस प्यारे पुत्र और पुत्रियों को, क्यों शिक्षा प्रदान कर रहे हो, तो उत्तर मिलेगा कि इन प्यारे पुत्रों का मैं भविष्य बना रहा हूँ। मुनिवरोंभविष्य बनाने की उसे उत्क !ट इच्छा होती है। वे उसके पुत्र नहीं, परन्तु विद्यालय में अपने कर्त्तव्य का पालन करने के लिए उद्यत हैं और उन्हें ऊँची से ऊँची शिक्षा प्राप्त करा रहा है। कहीं सदाचार की शिक्षा दे रहा है, तो कहीं खान पान की शिक्षा दे रहा है। कहीं राष्ट्र की शिक्षा दे रहा है, तो कहीं पृथ्वी के गर्भ की शिक्षा दे रहा है। कोई तारामण्डल की शिक्षा प्राप्त कर रहा है। वह आचार्य कितना कर्त्तव्य परायण है, अपने प्यारे पुत्रों के भविष्य को उज्ज्वल चाहता है।

राष्ट्र

मुनिवरोंइसी प्रकार ! वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि परमात्मा ने हमें यह जो वैदिक विद्या दी है, यह मानव के भविष्य बनाने के लिए उपलब्ध की है। इस वेद रूपी प्रकाश से भविष्य बनता चला जाए। ज्ञान से ही मानव का भविष्य बनता है। ज्ञान से ही मानव के भविष्य में क्रान्ति आती है, आगे उसका जीवन बनता है। उन्हीं वाक्यों को जो गुरुओं से मन्थन किए हैं उन्हीं वाक्यों को विचारों में मन्थन करता है और उसी से आगे विचित्र बनता है। यदि आज हम एक ही शब्द पृथ्वी को लेकर चले, कि यह संसार में कितनी विशाल है। पृथ्वी से अन्न उत्पन्न होता है। नाना प्रकार की सोमलताएं और खनिज पदार्थ उत्पन्न होते हैं। उनका मानव एक दूसरे से मिलान करता है। अन्त में उसका परिणाम यह है, कि जो भी उससे सामग्री उत्पन्न होती है, वह सब राष्ट्र के लिए, मानव के लिए ही होती है। राष्ट्र उसे कहते हैं, जहाँ प्राणीमात्र की रक्षा की जाती है। जहाँ गौओं की रक्षा की जाती हो, जहाँ दुग्ध देने वाले पशुओं की रक्षा की जाती हो, जहाँ विषैले वायु को पोषण करने वाले प्राणियों की रक्षा की जाती हो। बेटादेखो !,यह सब राष्ट्र में ! एक दूसरे की रक्षा करना बहुत अनिवार्य है क्योंकि यह प्राणी को लाभ देते हैं। एक दूसरे प्राणी से इनका घनिष्ट सम्बन्ध है। जैसे माता और पुत्र का होता है, जैसे पृथ्वी और मेघों का होता है मेघ और वायु का होता

हैं जैसे तेज और वायु का होता है, जैसे तेज और समुद्रों का होता है, जैसे समुद्र और मेघों का होता है और जैसे मेघ और पृथ्वी और सोमलताओं से सम्बन्धित सुन्दर सुन्दर वृष्टि हुआ करती है। हमें इसके एक एक वाक्य पर चुनौती देनी है। जब हम वेद के एक एक वाक्य पर विचार विनिमय करते हैं, तो उस समय हमें यह प्रतीत होता है, कि हम उस परमपिता परमात्मा की छत्रछाया में विराजमान हैं, जहाँ हमें एक अनुपम ज्ञान और विज्ञान प्राप्त हो रहा है। ज्ञान विज्ञान से भरी यह पवित्र पवित्र वेद ध्वनि है, जिसे पान करते हुए अपने जीवन को पवित्रता में ला सकते हैं।

मुनिवरोंदेखो !, आज मैं अधिक आदेश देने नहीं जा रहा हूँ क्योंकि आज मेरे प्यारे ! महानन्द जी ने कुछ आदेश देना है। वास्तव में वेद पाठ तो कुछ यह निर्णय दे रहा था, कि कल ही इन्हें समय प्रदान किया जाए, परन्तु क्या करें, महानन्द जी का भय है कि यह किसी काल में रुष्ट न हो जाएं। कुछ सूक्ष्म से वाक्य और प्रकट करता चला जाऊँ। मेरे आदि आचार्यजनोंआज मैं प्रकट कर रहा था !, कि यह परमात्मा से निर्मित सम्पन्न सृष्टि प्राणीमात्र के लिए है। प्राणीमात्र के लिए वायु वेग में विचरण करती है और अग्नि अपने कणोंके लिए भ्रमण करती है जल अपने कणों को लिए वायु से सम्बन्धित भ्रमण करता है। वायु में विष भी होता है, उसमें भिन्न भिन्न प्रकार के कण भी होते हैं, विज्ञानवेत्ता वायु का अनुसन्धान करता है और उन कणों को एकत्रित करने का प्रयत्न करता है। जब तक वह वायु पर, अग्नि पर अनुसन्धान नहीं कर पाएगा, दोनों का मिलान नहीं कर पाएगा, तब तक उन अणु और महाअणुओं को एकत्रित नहीं कर सकता। नाना प्रकार की धातुओं को विज्ञानवेत्ता को जानना है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता को अन्तरिक्ष में उन अनुष्ठानों को चुनौती देनी है, जो हृदय को पवित्र बनाता है। जब उन पर अनुसन्धान करने लगता है, तो वही विचार मानव के हृदय में उपलब्ध होने लगते हैं। तो मेरे आदि आचार्यजनों! आदेश यह कहता चला जा रहा है, कि हमें उन चुनौतियों को जानना है जिन्हें जानकर हमारे जीवन में मानवता की तरंगें आती चली जाती हैं और हमारा जीवन विचित्र बन जाता है। आज

का यह आदेश समाप्त होने जा रहा है। अब मेरे प्यारेमहानन्द जी कुछ विचार प्रकट ! करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओं सर्वाणि भूषणः प्रमाणी अस्त्वते। वार्तुणं वेद ममिता बानोती नमस्त्वता देव नमः। नमस्कार भवेती। !

मेरे आदरणीय गुरुजनआज मैं कुछ नम्र निवेदन करने आ पहुँचा !मेरे भद्र समाज ! हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का तो इतना सुन्दर विषय था। मेरी इच्छा नहीं थी, कि आज गुरुदेव का विषय यहीं मध्य में त्याग दिया जाए। कल का आदेश भी गुरुजी को उच्चारण करना था। यह तो मैं पूर्व से उच्चारण करता चला आया हूँ, कि मुझे तो कोई आध्यात्मिक विषय उच्चारण करना नहीं। मुझे तो केवल यह उच्चारण करना है, कि आज का संसार जैसे गंगा में पुष्प। गंगा में जो भी पुष्प अर्पण करेंगे, वह वेग में बहता ही चला जाएगा। आज के संसार की भी वही गति है। उस पावन गंगा के जल के सदृश्य मानव बहता चला जा रहा है। अन्त में वह समुद्र में जा पहुँचता है। आज का मानव भी इसी प्रकार अपने कर्त्तव्य को त्याग करके, अपनी मानवता को त्यागने के लिए उद्यत होता चला जा रहा है। मैं यह तो उच्चारण नहीं कर रहा, कि यह सब संसार कर्त्तव्यहीन है। वह व्यक्ति जो स्वार्थ में, भयंकर अग्नि में अपने को ऊँचा जानकर उस अग्नि के मुख में जाने के लिए इस प्रकार उद्यत हो रहे हैं, जिस प्रकार यह गंगा समुद्र में जा पहुँचती है। यह मानव किस काल तक रहता है? क्या कोई मेरी पवित्र माता या मेरा भद्र पुरुष यह जानता नहीं, कि यह तेरा जीवन क्षणभंगुर है। जैसे आज तेरे पिता या बाबा सभी समाप्त होते चले गएं हैं। यह प्रतीत नहीं, कि हमारी प्रणाली किस काल से चली आ रही है। कोई व्यक्ति निर्णय नहीं कर सकता, कि आज से लगभग एक सहस्त्र पीढ़ी में कौन से स्तर पर कौन था। आज से कुछ समय के पश्चात् तुम्हारा नामोच्चारण भी न रहेगा। इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि संसार ऐसा क्षेत्र है, जिसमें मानव कर्त्तव्य करने के लिए आता है और मृत्यु को प्राप्त होता रहता है। यह गर्भ में भी रहता है, युवा अवस्था भी आती है, वृद्ध अवस्था भी आती है परन्तु सभी कुछ आते हुए यह कोई भी उच्चारण नहीं कर

सकता कि सहस्त्रों वर्षो पूर्व हमारे जो महापिता थे वह कौन थे? परन्तु देखो,भ !गवान राम को आज नौ लाख से भी अधिक वर्ष हो चुके हैं परन्तु आज तक उनका नामोच्चारण है। क्या कारण है? क्योंकि वह अपनी उस महानता पर, उस कर्त्तव्य पारायणता पर पहुँचे थे, जिसको हम उच्चारण करते चले आ रहे हैं। उनकी प्रणाली हम नहीं जानते। उनके जो पौत्र हैं, वह कहाँ हैं, यह नहीं जानते। परन्तु यह अवश्य जानते हैं, कि राम महान थे, सदाचारी थे, उनके गुणगान गाते चले जाओ। यह तुम्हें निश्चित है, कि महान कर्त्तव्य का संसार में गुणगान गाया जाता है। इसलिए आज के संसार को महान गुणगान गाने के लिए उस कर्त्तव्य पारायणता पर आ जाना है।

आहार से चरित्र

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव नित्यप्रति चरित्र का कुछ आदेश देते चले जाते हैं। यह चरित्र चर्चाएं तुम्हारे हृदय में प्रविष्ट होनी चाहिए। चरित्र के लिए सबसे पूर्व तुम्हारा खान पान अच्छा होना चाहिए। आज मुझे आधुनिक काल में बारम्बार प्राप्त होता रहता है, कि बहुत से व्यक्ति कहा करते हैं, कि अरे, यह जितने भी धार्मिक व्यक्ति होते हैं, इनका तो मस्तिष्क बहुत ही नष्ट हो चुका है। यह मांस आदि की चर्चा तो करते नहीं, अन्न की चर्चा करते हैं। मांस आदि की चर्चा करें, तो हमारे मस्तिष्क में भी कुछ बात आए। राष्ट्र में अन्न उत्पन्न होता नहीं, अन्न कहाँ से लाएं। हम तो इस मांस आदि का भक्षण करके अपने उदर की पूर्ति कर लेते हैं। आज मानवता पर देखो, कितना आघात होता चला जा रहा है। उसको इस प्रकार नष्ट किया जा रहा है जैसे सायंकाल का सूर्य अस्त हो जाता है।

आज का मानव तो यह कह रहा है कि मांस की कोई चर्चा होनी चाहिए। मैं माँस की क्या चर्चा करता चला जाऊ? अरे, यह तो प्रकृति का नियम है, जिस वस्तु को तुम पान करने लगते हो, वही वस्तु तुम्हारे लिए आने लगती है। तुम अन्न को पान करने लगो, तो परमात्मा तुम्हें अन्न अवश्य देगा। यह हो नहीं सकता, कि परमात्मा तुम्हें अन्न न दे। परन्तु तुम माँस का आहार करते हो, तो परमात्मा तुम्हें माँस ही देने लगेगा। आगे प्रश्न यह हो सकता है, कि जब माँस भी परमात्मा देता है, तो हम पान

क्यों न करें। अरे, तुम जो इस समय विराजमान हुए बैठे हो, वह तो तुम उस परमात्मा के कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो। तुम्हारे मन में कल्पना आती है और जैसे विचार बनते हैं, उन्हीं के अनुकूल, परमात्मा नहीं, प्रकृति से ही वह वस्तु आनी प्रारम्भ हो जाती है। उस वस्तु को तुम पान करते हो। उसी से तुम्हारे विचार बनते हैं, जैसा कल पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि जब दूसरों के माँस और रक्त को पान करने वाले विचार होंगे, तो क्या तुम्हारा मस्तिष्क ऊँचा बन सकेगा? क्या तुम परमात्मा और धर्म के विषय के विचार सकोगे? कदापि भी नहीं। तुम्हारी आन्तरिक भावना दूसरों को नष्ट करने में, दूसरों का आहार करने में हर समय संलग्न रहेगी।

आज तो हमें यह विचारना है कि संसार में सदाचारिता और एकता किस प्रकार आ सकती है। यह नहीं विचारना, कि हमें माँस इत्यादि का भक्षण करके, अपने उदर की पूर्ति करनी है। अपने उदर की पूर्ति करनी हो या न हो, परन्तु संसार में मानवता लाना अनिवार्य है। आज राजा के राष्ट्र पर कितनी महान् आपत्ति हैं। आज का मानव कहता है, हम तो कहते नहीं, कि राष्ट्र पर आपत्ति है। हमारे क्षत्रिय सीमा पर युद्ध संग्राम करते हुए अपने को नष्ट करते चले जा रहे हैं, केवल धर्म की रक्षा के लिए, मानवता की रक्षा के लिए। आपत्ति तो वह होती है, जिससे आज धर्म की हानि, मानवता की हानि होती चली जाएं। जहाँ मानसिक विचारों में एक संघर्ष रहता है, दूसरों के विचारों में विडम्बना रहती है, कम्पन्नता रहती है, वह सब महान हानि कहलाती है।

आज राष्ट्र की सीमा पर क्षत्रिय अपनी कर्त्तव्य परायणता का प्रदर्शन कर रहे हैं। संग्राम कर रहे हैं। अरे, तुम्हें भी तो अपने विचारों में एक महानता लानी है या नहीं? महानता नहीं लाओगे, तो क्या होगा? तुम्हें भविष्य के लिए विचारना होगा। मेरे पूज्य गुरुदेव ने कहा कि वास्तव में भविष्य तो मानव के कर्त्तव्य से बनता है। भविष्य के लिए तुम्हें क्या जानकारी करनी है। केवल यह जानकारी करनी है, कि संग्राम में भारत की विजय किस प्रकार होगी? मैंने और मेरे गुरुदेव ने एक नहीं अनेक आदेश

प्रकट किए कि इस भारत भूमि पर एक नहीं अनेक आकर चले गए। यहाँ कौन नहीं आया?

यहाँ देखो, सबसे पूर्व जो मुहम्मद के मानने वाले थे, स्वार्थी व्यक्ति, विडम्बना वाले व्यक्ति, आडम्बरी और पाखण्डी व्यक्ति, मुहम्मद गौरी को यहाँ लाए। मुहम्मद की बनाई हुए जो पुस्तक हैं उसमें केवल एक ही नाद है, कि आज जो मुझे स्वीकार न करे उसे नष्ट करो। क्या तुमने किसी काल में विचारा है? कदापि नहीं विचारते। मुहम्मद ने उन्हें केवल एक ही पाठ दिया। वास्तव में उन्होंने सुधारक, कर्त्तव्य बहुत कुछ किए, परन्तु एक वाक्य कहा कि जो उसे न माने उसे काफिर और घृणा की दृष्टि से पान करो। इसका विशेष कारण क्या है? विचारों में; धर्म में अधूरापन। जहाँ धर्म में अधूरापन रहता है, वहाँ विचार नहीं मिलते। जहाँ विचार नहीं मिलते, वहाँ का स्वार्थ भी समाप्त नहीं होता जहाँ स्वार्थ समाप्त नहीं होता, वहाँ मानवता किस प्रकार बन सकती है। इसलिए आज मैं यह उच्चारण करने जा रहा हूँ कि मुहम्मद ने उन्हें एक ही पाठ पढ़ाया कि आज तुम राष्ट्रीय बनो, तुम राष्ट्र की रक्षा करो। धर्म को उन्होंने व्यापक नहीं माना, राष्ट्र को व्यापक माना। राष्ट्र को मानकर आज सीमा पर संग्राम हो रहा है उनके स्वरों में वही मुहम्मद का नाद। स्वार्थी व्यक्तियों ने नहीं जाना, कि हमारा कर्त्तव्य क्या है, हमें क्या करना है? कहाँ तो एक नष्ट हो रहा है, कहाँ एक भोगविलासों में लगा हुआ है। एक माता के श्रृङ्गार को लूटा जा रहा है और एक माता भोग विलासों में मग्न है। अरे, क्या मेरी माता ने किसी काल में यह विचारा है, कि आगे आने वाली सन्तान और यह भारत वर्ष किस प्रकार ऊँचा बन सकता है?

भारत भूमि

आज मैं यह उच्चारण करने नहीं आया। मैं तो एक व्यापक शब्द उच्चारण करने आया हूँ। यह वह भारत भूमि है जहाँ महाराज भरत सिंह के प्यारे पुत्रों को देखकर मग्न हुआ करते थे। सिंहनी को भी वह दूर किया करते थे। आज इस भारतभूमि पर, जो महाराजा भरत की एक पवित्र भूमि थी, क्या हो रहा है? महात्मा दयानन्द जैसे, महात्मा शंकर जैसे, महात्मा बुद्ध जैसे, महावीर जैसे एक नहीं अनन्त आचार्यजन आए

और आकर चले गए। यह वह भारत भूमि हैं, जिसमें महान् आत्माओं का जन्म हुआ है। मुहमद को मैं महात्मा की चुनौती किसी काल में दिया ही नहीं करता, क्योंकि वास्तव में वह महात्मा थे ही नहीं

आज के राष्ट्र ने एक नाद बजाया। मैं यह नहीं जान पाया हूँ कि राष्ट्र में एकता क्यों नहीं आती? इसका कारण है कि यहाँ राजा के राष्ट्र में एक संस्कृति नहीं है। जब तक एक संस्कृति नहीं आएगी। मानव के विचार किसी काल में एकता पर नहीं आ सकते। मुहम्मद से मैं अच्छी तरह परिचित्त हूँ। जिसके गृह में तेरह पत्नियाँ थीं, क्या नहीं किया उसने। जहाँ वह एकता का नाद बजाते थे वहाँ वह अपने स्वार्थ की पूर्ति करते रहते थे। यदि वह भारत भूमि पर आता जहाँ भगवान राम, भगवान कृष्ण, महर्षि कपिल, महर्षि पतञ्जलि, वेद व्यास इत्यादि अनन्त महान आत्माओं का जन्म हुआ, तो मुहम्मद की दाल यहाँ किसी काल में भी नहीं गल सकती थी। वह मूर्खो में जा उत्पन्न हुए। मूर्खो में जाकर कोई भी एक ऊँचा सा बन जाओ, उनके लिए वही विशेषज्ञ बन जाता है। जहाँ धर्म की प्रणाली और दार्शनिकता न हो, वहाँ कोई भी कुछ उच्चारण करता रहे, परन्तु वहाँ क्या बनता है। यहाँ तो महात्मा दयानन्द जैसे, महात्मा शंकर जैसे, महात्मा बुद्ध जैसे, जिनका एक दार्शनिक नाद बजता था और जिनके चरित्रबल का कोई प्रमाण न था, उत्पन्न हुए। अन्त में क्या हुआ मुहम्मद के अनुयायियों ने राष्ट्रों के राष्ट्रों को अपने पराधीन बना लिया।

आज मैं महात्मा दयानन्द के ऊपर कुछ प्रकाश देना चाहता था। कई समय दे भी चुका हूँ। मेरे पूज्य गुरुदेव तो यह उच्चारण करेंगे, कि तुम तो बारम्बार कटुता उच्चारण करते रहते हो, परन्तु मैं क्या करूं मेरा स्वभाव बन चुका है। यथार्थ कहने में मुझे किसी का भय नहीं। यथार्थ उच्चारण करना ही मानव का शब्द कटुता में परणित हो जाता है। जब यहाँ महात्मा दयानन्द आए तो क्या था? द्वितीय राष्ट्र के राजाओं ने यहाँ क्या नहीं किया। मेरी माताओं के श्रृङ्गार को अपने में ग्रहण किया जाता था। उनके श्रृङ्गार को बचाने का जो प्रयत्न करता था, उसी पर प्रहार किया जाता था। यवनों को, मुहम्मद का एक सबसे ऊँचा आदेश यही था, कि जो काफिर हैं उनको

किसी न किसी प्रकार नष्ट करो। अपवित्र व्यक्तियों को नष्ट करने का मुहम्मद ने एक शास्त्र दिया। उन्हीं के मानने वालों ने यहाँ क्या नहीं किया? मेरी प्यारी भोली कन्याओं से, ब्रह्मचारिणियों से क्या नही किया? ऐसे व्यक्तियों को क्यों नहीं राष्ट्र से नष्ट किया जाता। यह स्वार्थ मानव को किस काल तक रह सकता है? आज स्वार्थ से राष्ट्र चलता रहेगा, तो धर्म की विजय नहीं होगी। यही तो सत्य और यथार्थता की विजय हुआ करती है। अन्त में भविष्य जानना है, भविष्य तुम्हारा उसी काल में आएगा, जब यहाँ मानवता होगी एकतान उसी काल में आ सकेगी, जब यहाँ देखो, तुम्हारी संस्कृति एक होगी, भाषा एक होगी। एक ही संस्कृति को छत्र छाया में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या पनपने वाले होंगे। जब तक यह न होगा, तब तक राष्ट्र का स्वार्थ काल नष्ट न हो सकेगा।

महात्मा दयानन्द का नाद

आज मैं केवल एक आदेश देने चला आया और वह आदेश था महात्मा दयानन्द का एक नाद। महात्मा दयानन्द को एक व्याकुलता थी। वह देखो, परमात्मा की छत्र छाया में, इस भूमि पर आए और वेद के नाद को लेकर चले। आगे आगे नाद है, पश्चात् में संसार है। वह उसी नाद को बजाते चले गए। जिस समय मृत्यु को प्राप्त होने लगे, अपने पुजारियों से महात्मा दयानन्द ने एक ही वाक्य कहा था, कि परमात्मा की इतनी अनुपम कृपा थी जो इतने समय तक जीवित रह सका। अब मैं मृत्यु को प्राप्त हो रहा हूँ, मेरी यही एक इच्छा थी कि शिक्षालयों में क्या, ब्रह्मचारियों के द्वारा क्या, ब्रह्मचारिणियों के द्वारा क्या राष्ट्र से क्या उपनिषदों, अरण्यकों और ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रसार होना चाहिए। प्रत्येक गृह में मनु जी का सिद्धान्त होना चाहिए। क्या करूं, मैं शिक्षालयों में इतना प्रसार न कर सका। महात्मा दयानन्द जो वाक्य त्याग चुके थे, वही अधूरा रह गया। आज अपने को आचार्य उच्चारण करते हैं, परन्तु राजा के राष्ट्र में मुझे कोई ऐसा शिक्षालय प्रतीत नहीं होता, जहाँ उपनिषद् आरण्यक और ब्राह्मण ग्रन्थों का पाठ होता हो। आज यह क्या है? क्या यह महात्मा दयानन्द का नाद था? उनकी एक ही इच्छा थी संसार में, और कोई इच्छा न थी।

आज जो उनके पुजारी बने हुए हैं उनका क्या है? वह तो अपने स्वार्थ में इतने नेत्रहीन बन चुके हैं। एक दूसरे के प्रति इतनी घृणा आ चुकी है, कि यह घृणा क्या करेगी। महात्मा दयानन्द ने जो कार्य किया, उसको भी ऐसे नष्ट करते चले जा रहे हैं, जैसे सायंकाल का सूर्य अस्त हो जाता है। अन्धकार छा जाता है। विचारों में अन्धकार आ रहा है। अरे, ऋषि मुनियों के शास्त्र में देखो, दर्शनों में उनकी लेखनी है। उन्हें रटन्त विद्या में रटते रहो, और प्रजा में उच्चारण करते रहो, उससे क्या होता है। जब तक प्रभाव में उनके अनुकूल स्वयं न चलोगे तब तक उसके उच्चारण करने से कोई लाभ न होगा।

मुनिवरोंदेखो !, चाहे ब्रह्मा बन करके आ जाओ, परमात्मा स्वयं आ जाए, क्या बनेगा? जब तक मनुष्य स्वयं कुछ नहीं है, जब तक वह स्वयं मानव नहीं है, तब तक कुछ नहीं है। आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मानवत्व के ऊपर संसार के ज्ञान और विज्ञान को परणित किया। संसार का जितना भी विज्ञान है, जितना भी वाक्य है, सभी मानवत्व के लिए है। मैं एक आदेश ओर देना चाहता था, कि यहाँ केवल दयानन्द ही नहीं, यहाँ महात्मा शंकराचार्य जो सूक्ष्म समय में मृत्यु को प्राप्त हो गए, उन्होंने मानव को जागृत करने के लिए क्या नहीं किया। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके अनुयायी इतने स्वार्थी बन गए, कि धर्म के एक अग्रणीय बन गए। उन्होंने मानव के मस्तिष्क पर प्रतिबिम्ब लगा दिया। ज्ञान नहीं रहा, अनर्थ होने लगा, गौओं का भक्षण होने लगा। यहाँ माँस का भक्षण किया जाता है। यहाँ क्या नहीं होता? आज संसार किस प्रकार उन्नतिशील बन सकेगा। आज मैं केवल इस राष्ट्र के विष्य में ही नहीं, परन्तु आज यह संसार किस प्रकार उन्नतिशील बन सकेगा जब धर्म का क्षेत्र मानव के समीप न आएगा। मानव के जो विचार उत्पन्न होते हैं, वह धर्म से होते हैं, संस्कृति से होते हैं। जहाँ संस्कृति होती है वहीं राष्ट्र, वहीं मानवता, वहीं चरित्रबल, वहीं विज्ञान, वहीं ज्ञान हैं। यह सब कुछ उसके अन्तर्गत आ जाता है।

आज जब इस राष्ट्र पर नहीं, द्वितीय राष्ट्रों पर विचार किया जाता है, तो वह क्या? वहाँ एक संस्कृति है, जिसे वह लेकर चलते हैं। आज भारतभूमि में जहाँ भरत की

पताका थी, महाराजा दुष्यन्त का राष्ट्र था, महारानी शकुन्तला जिन्होंने ऋषियों के कुल में जाकर शिक्षा प्राप्त की हो, उनका जो नाद था, वह केवल एक ही था, कि राजा के राष्ट्र में ऊँची संस्कृति होनी चाहिए और उसी संस्कृति से मानव के विचार बनते हैं। जहाँ शिक्षालयों में ऊँची संस्कृति होती हैं, वहाँ विद्यार्थियों के, ब्रह्मचारियों के विचार ऊँचे होते हैं। जहाँ गुरुजन योग्य होते हैं, वहाँ ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी पवित्र होते हैं। कैसे पवित्र? धर्म की चर्चाएं, उनके समक्ष और उनके मस्तिष्क पर तेज और ओज होता है। वह गृह में आकार केवल सदाचार की चर्चा प्रकट करते हैं।

जहाँ कुछ शिक्षालयों में शिक्षा यही दी जाती हो, कि माँस का भक्षण करो तो ओर भी सुन्दर है, रक्त अधिक उत्पन्न होता है। तो जहाँ ऐसी शिक्षा दी जाती हो, तो अरे, क्या उन ब्रह्मचारियों का, ब्रह्मचारिणियों का चरित्र ऊँचा बनाना चाहते हो? तो यह असम्भव है। महात्मा नानक ने क्या ही सुन्दर एक वाक्य कहा है, कि जो रक्त का मानव के वस्त्र पर एक चिह्न लग जाता है, वह जल से क्या नाना प्रयन्त करो, वह जाता नहीं। आज मानव के अन्तःकरण में, मानव के हृदय में जब किसी का रक्त जाता है, तो क्या उसका चिह्न मानव के हृदय में नहीं होता, क्या वह किसी काल में नष्ट हो सकता है? महात्मा नानक के अनुयायी क्या करते हैं, यह तो मैं पूर्व उच्चारण कर चुका हूँ। यदि गुरुदेव कल समय देंगे, तो उच्चारण कर सकूंगा। उनके अनुयायी क्या करते हैं, यह तो संसार जनता है। महात्मा नानक ने मानव बल को ऊँचा बनाया। अपने प्यारे शिष्यों को एक नाद दिया, कि धर्म की रक्षा करो। तुम्हारे केश जाए न जाएं, परन्तु धर्म की रक्षा करो। आज तुम्हें भी रक्षा करने की शिक्षा दे रहा हूँ, महात्मा नानक के अनुयायियों ने धर्म की रक्षा की। यवनों द्वारा जब वीर बन्दा वैरागी के शरीर को नोचा जा रहा था, तो मग्न हो रहा था और क्यों मग्न था? क्योंकि वह महात्मा नानक के आदेशों को पूर्ण कर रहा था, कि मैं धर्म पर अपने मानव जीवन को नष्ट कर रहा हूँ, जिससे मुझे तो कोई शोक नहीं है। अरे, यह थी, उन महात्माओं की एक महान चिह्नता। हम उन्हीं के पदचिह्नों पर चले, जिससे हमारे मानवत्व में उच्चता आती चली जाए और हमारा जीवन विशाल बनता चला जाए।

आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया। केवल गुरुदेव को यह उच्चारण करने आया हूँ, कि यहाँ कैसे कैसे महान व्यक्ति हुए। देखो, महात्मा गोविन्द हुए, जिसका आदर्श कितना ऊँचा, दोनों पुत्रों को धर्म की रक्षा के लिए, यवनों द्वारा दीवार में चिनवा दिया। आज के इस राष्ट्र का बनेगा क्या, जो तुम स्वार्थ में इतना बहते चले जा रहे हो। एक समय वह आएगा जब यह स्वार्थ तुम्हारे लिए विष का कार्य करता चला जाएगा, क्या है स्वार्थ? दूसरों को नष्ट करने की भावना तुम्हारे अन्दर आ चुकी है। इसे अपने हृदय से दूर कर दो। आज जब धर्म के क्षेत्र में जाता हूँ। तो वहाँ भी मैं स्वार्थ की भावनाओं में, एक दूसरे को नष्ट करने की भावनाओं की अग्नि में प्रदीप्त दृष्टिपात करता हूँ। जब मैं शंकर के पुजारियों में जाता हूँ, वहाँ मुझे यहीं, प्रतीत देता है। जब मैं दयानन्द के पुजारियों में जाता हूँ वहाँ मुझे प्रतीत होता है। नानक के पुजारियों में जाता हूँ तो वहाँ भी मुझे यही प्रतीत होता है। वीर बन्दा बैरागी के पुजारियों में जाता हूँ वहाँ भी यही प्रतीत होता है। विवेकानन्द के पुजारियों में जाता हूँ, वहाँ भी यही प्रतीत देता है। यह अग्नि कैसी प्रदीप्त हो गई है? कैसे यह अग्नि शान्त होगी? अग्नि को शान्त करने का कोई साधन है, तो वह मानव के द्वारा मनोबल है, विचार बल है, एकान्त में विराजमान होकर विचार विनिमय करो। धर्म को व्यापक बनाओ।

धर्म

गुरुदेवमिथ्या को कोई भी संसार में सत्य उच्चारण नहीं करता। सब उसको मिथ्या ! उच्चारण करते हैं। चाहे वह मुहम्मद के पुजारी हों, महावीर के पुजारी हों, बुद्ध के पुजारी हों, ईसा के पुजारी हों, या शंकर और दयानन्द के पुजारी हों। मिथ्या को सदैव मिथ्या ही कहा जाता है और सत्य को सत्य ही उच्चारण करते हैं। इसी का नाम धर्म है। कितना व्यापक शब्द जो गुरुदेव ने कल भी उच्चारण किया था। मैं तो गुरुदेव से प्रार्थना ही करता रहता हूँ। गुरुजी तो एक एक वाक्य को इतनी दर्शनिकता में ले जाते हैं, कि जिसका कोई प्रमाण नहीं, परन्तु मैं आज गुरुजी की प्रशंसा तो करने नहीं आया। आज का आदेश तो मेरा केवल यही है, कि आज के मानव को

अपने खान पान पर और अपनी संस्कृति पर विचार विनिमय करना चाहिए। बुद्धिमान ब्राह्मणों का कर्त्तव्य है, कि वह राजा से जाकर उच्चारण करें, कि अपने राष्ट्र में एक संस्कृति को उत्पन्न करे। यहाँ संस्कृति किसे कहते हैं? तो गुरुदेव ने कई काल में वर्णन किया है। संस्कृति उसी को कहते हैं, जहाँ सदाचार और मानवता एक ही आँगन में निर्णय की जाती हो। मनोबल, उसी से ऊँचा बनता है। मनोबल एक दूसरे से घृणा करने से नहीं बनता। आज घृणात्मक दृष्टि से न पान करो। मैंने मुहम्मद की चर्चा प्रकट की है, घृणात्मक दृष्टि से नहीं। मेरी उससे कोई शत्रुता नहीं, परन्तु जो उनमें वास्तविकता थी, वहीं प्रकट कर रहा हूँ। उनसे मेरा किसी काल में संग्राम नहीं हुआ। यथार्थता उच्चारण कर रहा था। उन्होंने अपने राष्ट्र में बहुत कुछ कार्य किया। अरब में जहाँ वह उत्पन्न हुए थे, वहाँ उन व्यक्तियों से जो दूसरों के द्रव्य का हनन करते थे कहा कि तुम यह कार्य न करो। उसमें बहुत सी अच्छाइयाँ थीं, परन्तु अच्छाइयों के साथ उनका यह बड़ा दुर्भाग्य था, कि अन्त में एक शब्द उच्चारण कर गए, कि जो मुझे और मेरी पुस्तक को न स्वीकार करे, उसको किसी प्रकार इसका पुजारी बनाओ। अब क्या करे, जितनी बुद्धि थी, उतना ही उच्चारण कर गए, उनके अनुयायियों ने उसी को लेकर उसका क्या नहीं किया? ऐसे उद्देश्यों को लेकर मुहम्मद गौरी जहाँ मुहम्मद उत्पन्न हुआ था, वहाँ से भारतभूमि को चला और यहाँ क्या नहीं किया? सोमनाथ के मन्दिर को नष्ट करके, वहाँ से दस हजार कन्याओं को ले जाकर, अरब में उन्हें दो दो मुद्रा में बेचा गया। क्या यही मुहम्मद के पुजारियों का कर्त्तव्य है? यदि मुहम्मद महान होता, ऊँचा होता तो उनके पुजारी इस प्रकार का कार्य न करते। महात्मा ईसा का इस प्रकार का कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होता। वास्तव में यह दार्शनिकता में इतने पहुँचे हुए नहीं थे, परन्तु उनके द्वारा एक विशेषता थी, कि वह सदाचारी और ब्रह्मचारी था। उन्होंने सदैव एक आदेश दिया, कि विचारों से और नम्रता से किसी को धार्मिक बना सकते हो। उनके पुजारियों ने आज तक कोई ऐसा कर्त्तव्य नहीं किया, कि संग्राम करके दूसरों की कन्याओं को, इस प्रकार ले जाकर नष्ट कराया हो। राजनीति की दूसरी बात है, परन्तु उनके पुजारियों ने इस प्रकार नहीं

किया। मैं मुहम्मद के पुजारियों का विरोधी नहीं, परन्तु मैं तो उनके वास्तविक वाक्य उच्चारण कर रहा था। मुझे उनसे कोई विरोध नहीं। वह भी मनुष्य हैं। एकता के क्षेत्र में आ जाए और मानवता के क्षेत्र में आकर के सब ही प्राणीमात्र एक होते हैं। मुहम्मद हम जैसी आत्मा होगी। उनमें जितनी उच्चता थी, वह मैंने प्रकट कर दी और जितनी सूक्ष्मता थी वह प्रकट कर दी। यह हो सकता है, मेरे से कोई वाक्य अशुद्ध उच्चारण हो जाए। सभी से क्षमा का पात्र हूँ। क्योंकि अपने पूज्य गुरुदेव के समक्ष उच्चारण कर रहा हूँ। गुरु के द्वारा शिष्य जो वाक्य उच्चारण किया करता है, उसमें बहुत सी त्रुटियाँ होती हैं।

आज जो मैंने इतने वाक्य उच्चारण किए, इनका लक्ष्य था, कि आज के संसार को, इस मानव मात्र को आर्य बनना है। भारतभूमि को रामराज्य बनाना है। इसको कृष्ण राज्य बनाना है। वहाँ एक संस्कृति होनी चाहिए, अपने स्वार्थ के वशीभूत यहाँ विचारों को नष्ट न करो। हमारी संस्कृति परम्परा से है, जो ऋषि मुनियों की प्रणाली है। वहीं ऋषि दयानन्द की प्रणाली है, उसी को अपनाया जाएगा। उसको अपनाए बिना भारतभूमि किसी भी काल में ऊँची नहीं बन सकेगी। आज मैं यह जानता हूँ कि इस भारतभूमि पर जहाँ रेवती ऋषि महाराज रावी के तट पर परमात्मा का चिन्तन किया करते थे, वहाँ क्या हो रहा हैं, आज वहाँ रक्त की धारा बहती चली जा रही है। इसका कारण केवल स्वार्थ है। रक्त की धारा तब ही बहती है, जब मनुष्य में स्वार्थ आता है। उस राजा के राष्ट्र में रक्त की धारा बहती है, , जिसके राष्ट्र में आन्तरिक और बाहरी दोनों विचार अशुद्ध हो जाते हैं। जिस राजा के राष्ट्र में एक विचार, एक संस्कृति और उस संस्कृति के अनुकूल एक धर्म होता है, तो उस राजा के राष्ट्र की सीमा पर रक्त की धारा नहीं बहती।

यहाँ और भी प्रश्न आते हैं, मैं ही उन तर्कों को किया करता हूँ, कि महाभारत के काल में एकता थी तो क्यों संग्राम हो गया? परन्तु वह भी स्वार्थ था। वहाँ भी संस्कृति से दूर चले गए थे। संस्कृति का अभिप्राय यह नहीं कि एक भाषा आ गई, तो हम संस्कृतज्ञ बन गए। संस्कृति का अभिप्राय यह, है कि उनके ऊपर हम स्वयं

चालक बनें और उनके अनुकूल हम अपने जीवन को चलाने का प्रयत्न करें, जिससे आगे चल करके जीवन साहसी, विचारवादी और उच्चता को प्राप्त होता चला जाए।

हे पूज्य गुरुदेवमैं आज यह क्या प्रकट करने चला हूँ। आज मैं केवल संक्षेप से ! अपनी चर्चा प्रकट करने जा रहा हूँ, कि हमें विशालता पर पहुँचना है, उच्चता को प्राप्त करना है, और मैं निश्चित आदेश दिया करता हूँ। मेरे गुरुदेव भी कहा करते हैं कि विजय वहाँ होती है जहाँ विजय के लक्षण होते है, जहाँ मानव के विचारों में शुद्ध क्रान्ति, महान क्रान्ति, कर्त्तव्य परायणता और एकता होती है वहाँ विजय अवश्य हुआ करती है। कोई भी आकर अनीति से विजय करना चाहता है, वह नहीं हो सकती। परमात्मा सबका रक्षक है। परमात्मा ही मनुष्य की रक्षा करता है। मुझे गुरुदेव समय देंगे, तो मैं ओर भी आधुनकि काल की चर्चा प्रकट करूंगा। आज तो इतना ही सूक्ष्मता आदेश दिया। आज का आदेश तो केवल यह था, कि मानव अपनी स्वार्थ की अग्नि को त्याग करके, सत्यता की अग्नि पर आ जाए। पवित्र वेदी पर आ जाओ, जहाँ सुगन्धि उत्पन्न हो। जहाँ दुर्गन्धि उत्पन्न होती हो, उसे पान न करो, उस वेदी पर न जाओ, उसको छुओ भी नहीं। जब उसको छुओगे नहीं, तो सुगन्धि आएगी, तो वायुमण्डल शुद्ध होगा, पवित्र रहेगा, सुगन्धिदायक रहेगा। सुगन्धिदायक रहेगा, तो अन्तरिक्ष से उत्तम उत्तम सुगन्धिदायक वृष्टि उत्पन्न होगी और तुम्हारे लिए अन्न उत्पन्न होगा। अन्न उत्पन्न होगा, तो तुम उसे पान करोगे, तुम्हारा जीवन आगे सञ्चार होगा। तो यह मैं आज आदेश अब शान्त करने जा रहा हूँ। यदि कल गुरुदेव कुछ समय देंगे, तो कल मैं और आदेश प्रकट कर सकता हूँ। ....शेष अनुपलब्ध। वेद पाठ। डीपार्क .जी., सरोजिनी नगर, नई दिल्ली।

२२ 28 07 1966 पुष्प 06 महानन्द जी के हृदय की वेदना

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् मृथा नरश्चितग प्रभावित नरश्यते।

वासो नराति नचित्तम् माना धरवन्नतम् माना देवम् नमः।

मेरे भद्र पुरूषोंआज मेरे पूज्य गुरुदेव ने पुनः !मेरे पूज्य ऋषिजन !से समय प्रदान किया। मेरे हृदय में यह आ ही नहीं रहा था, कि गुरुदेव आज हमें समय प्रदान कर

सकेंगे या नहीं, क्योंकि इनका विषय ही ऐसा होता है। आज न प्रतीत इनका हृदय कैसा है? आज इनके वाक्य में ऋत बहुत सूक्ष्म था, इसका अभिप्राय यह है कि धर्मणाम् अक्षति लोकः जहाँ गुरुओं के हृदयों में विचित्रवाद के सर्वांग अंकुर होते हैं उन्हीं अंकुरों के साथ साथ मानव के जीवन की धारा बनती है।

मेरे भद्र पुरूषों आज पुनः से मेरे पूज्यपाद !गुरुदेव ने यह पवित्र समय दिया, जिससे मैं अपने हृदय की वेदना अपने गुरु के समक्ष नियुक्त कर सकूं। आज हमारे यहाँ वायुमण्डल में जो परमाणु रमण कर रहे हैं वह दूषित हो चुके हैं। वह चिन्ता के परमाणु हैं, मानव की वेदना के परमाणु हैं और इस प्रकार के कठोर हैं कि उसको पान करने वाला परमाणु से भी किलष्ट बन जाता है।

पूजा

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कुछ अवतारवाद के सम्बन्ध में अपने विचार ले करके चले। वास्तव में हमारे जो मौलिक विचार हैं, उन विचारों से ऐसा प्रतीत होता है जैसे अवतारवाद भी कुछ वस्तुतः है। गुरुदेव ने भगवान राम, भगवान कृष्ण का अभी अभी वर्णन कराया। परन्तु इन्हीं की चर्चा नहीं और भी अनेक महात्माओं की चर्चाएं आती हैं। आज में उन चर्चाओं को लेता चला जाऊं। जहाँ हमें यह प्रतीत होता है, कि प्रभु की कितनी दया होती है, उन आत्माओं में कितनी वेदना होती है और वेदना आ करके न प्रतीत कहाँ रमण करती है। आज हम उस वाक्य को उच्चारण करने जा रहे हैं, जिससे हमारे जीवन की पवित्र भूमिका बने। परन्तु पवित्र भूमिका के लिए हमें पवित्र आत्माओं का रमण और उनके चरित्र को अपने में लाना, उनका पूजन करना हमारा मुख्य कर्त्तव्य होता है। प्रायः जब यज्ञ करते हैं, तो नास्तिक उच्चारण करता है कि यज्ञ क्यों कर रहे हो? उसका सहज उत्तर यही होता है कि हम अग्नि की पूजा कर रहे हैं, यज्ञ कर्म कर रहे हैं, उत्तम सामग्री द्वारा। यह क्या है? यह देवपूजा कहलाती है। हमारे यहाँ पूजा का अभिप्राय क्या है? पूजा का अभिप्राय है कि जो गुण जिसमें होते हैं, उन गुणों का विस्तार में, प्रत्यक्ष में लाने का नाम ही उनकी पूजा कही जाती है। जैसे हम यज्ञ करते हैं, उनके प्रकाश को हम रमण करते हैं,

प्रकाशमय होते हैं। उस प्रकाश को ले करके उसका सदुपयोग करना ही देखो, यह उसकी एक पूजा कहलाती है।

महर्षि दयानंद

आओ मेरे भद्र पुरुषोमैं तुम्हें उन धाराओं का निरीक्षण कराता चला जाऊँ !, जिन धाराओं में मानव जीवन के अंकुर होते हैं। ब्राह्मणो कामाः लोकश्चति शुभ प्रजा मानाः कामश्चते वेतु न रति ही। मेरे आचार्यजनोआज हम उस पूजा के !मेरे पूज्य गुरुदेव ! रहस्य को जानें। मेरे पूज्य गुरुदेव को तो ज्ञात नहीं, परन्तु महर्षि शमीक मुनि जी की पवित्र आत्मा ने आकर संसार में पुनः जन्म लिया। संसार के कल्याणार्थ महर्षि शोषण ऋषि की पवित्र आत्मा ने भी संसार के कल्याणार्थ जन्म लिया यह जो महान आत्माएं होती हैं यह संसार का कल्याण करने के लिए आती हैं। शमीक मुनि महाराज जब संसार में पुनः से आए तो उनका नाम ही मूल रूपी में वर्णन कराया। मूल ने सबसे पूर्व मूल वेद को लिया। जो शंकराचार्य हुए वह शोषण मुनि महाराज की पवित्र आत्मा थी और जो यह आचार्य अपरेति ऋषि अब्रण आगनेति दयानन्द अब्रविवेह दयानन्दः। हे मेरे पूज्यपादउस महान ! विभूति आत्मा की, जिसे माता प्यार और स्नेह में आ करके अटूटी नामों से उच्चारण किया करती थी, वही शमीक मुनि की पवित्र आत्मा ने पुनः से संसार में जन्म लेकर लोक कल्याणार्थ अपने जीवन को न्यौछावर किया। जो दयानन्द कहलाया।

आज मैं यह कहा करता हूँ कि आज जो दयानन्द की पवित्र वेदी है, उस वेदी पर दयानन्द का पुनः से कार्य करने के लिए कोई दयानन्द पैदा हुआ या नहीं? मुझे एक बड़ी ही व्याकुलता रहती है और प्रभु से कहा करता हूँ, कि प्रभुजहाँ !हे देव ! से ऐसी विभूति जाती हैं, वहाँ उसके दायित्व वाला भी कोई न कोई होना चाहिए, न कि द्रव्यपति बन करके आलोचनाओं में रमण करते हुए अपने जीवन को न्यौछावर करने वाले बनें। क्या इसी को आज हम मूल की वार्त्ता कहेंगे, इसी को शमीक ऋषि के आदेश और उनकी आत्मा की जो वेदना है, क्या वह यही पुकारती है, कि आज हम दूसरों के प्रति कटुता को लेकर चलें? यह नहीं कहती। यह नहीं उच्चारण करती और

कहा करती है कि मानव के क्षेत्र पर आ जाओ। मानववाद को लाने में संलग्न हो जाओ, राष्ट्र के प्रति कितनी वेदना थीं, जिस समय पाश्चात्य अग्रेणियों से, जहाँ वह वार्त्ता प्रकट करते, वह यही कहा करते कि मुझे जो दूसरे देश का शासक है वह सुन्दर प्रतीत नहीं होता। जो इतना निर्भय हो और ऐसा नाद करने वाला हो क्या उस आत्मा को हमारे हृदय से दूर किया जा सकेगा? कदापि नहीं। दूसरी वेदना भी थी कि राष्ट्र में चरित्रवाद को लाना है। इसके लिए ब्रह्मचारियों के, भिन्न भिन्न विद्यालय होने चाहिए। जिसमें दोनों पवित्रतव में ओत प्रोत हो जाएं। उनकी जो शिक्षा की पद्धति हो अरण्यक हो, उपनिषद हो, जिसमें उनका मानववाद और चरित्रवाद ऊँचा बनता चला जाए। जिससे ऋषि मुनियों का चरित्र उनके समीप हो। उन्हीं को लेकर मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई समय से राष्ट्र के प्रति उच्चारण करते चले आए हैं परन्तु मैं तो आज दयानन्द के मानने वालों से ही प्रार्थना कर सकता हूँ कि उनकी वेदना केवल यही थी, कि अपने ऋषि मुनियों की पद्धति शिक्षालयों में जानी चाहिए, जिससे हमारा राष्ट्र पूर्वकाल जैसा पतंजलि का संसार बन जाए। आज यह संसार स्वार्थियों और दुराचारियों का नहीं रहना चाहिए।

जब राष्ट्र में स्वार्थवादियों का साम्राज्य हो जाता है, तो वह विनाश के मार्ग को और भ्रष्टाचार की धारा से परणित हो जाता है। जहाँ मेरी कन्याओं का आदर नहीं होता। आदर के स्थान पर कुदृष्टिपान किया जाता है, उनके जो दूषित विचार होते हैं, वह गृह को भी दूषित करते है और वह आकर अपने राष्ट्र को भी दूषित किया करते हैं। राष्ट्र में भ्रष्टाचार अंकित हो जाते हैं। मैं तो आज केवल दयानन्द के मानने वालों से प्रार्थना ही कर सकता हूँ, कि तुम अपने विद्यालयों में ऋषि मुनियों की पद्धति को लाओ। सांख्यवाद, वेदान्तवाद, पतंजलिवाद आदि को क्यों नहीं लाते, जिससे तुम्हें प्रतीत हो, कि तुम्हारे दर्शनों में क्या यही है?

आज हमें जो विज्ञान प्रतीत हो रहा है, उसके लिए हमारा यह विश्वास है कि सब कुछ विज्ञान पाश्चात्य से प्राप्त हो रहा है, परन्तु वह विज्ञान तो हमारे दर्शन शास्त्रों में है। आज जब हम पतंजलि जी के कहे हुए सिद्धान्तों को लेते हैं, तो देखो, उन्होंने

इतने मौलिक विचारों को प्रकट कर दिया है, कि उनसे बाहर न कोई सिद्धान्त है और न मौलिकता ही उससे आगे रह जाती है। परन्तु आज उसको लाने के लिए मानव को बुद्धि की आवश्यकता है।

महात्मा नानक

देखो,मैं बहुत पूर्व से उच्चारण करता चला आया हूँ !, कि यहाँ महात्मा दयानन्द से पूर्व महात्मा नानक का जन्म हुआ, जिसने अपना जीवन राष्ट्र के लिए न्यौछावर किया। यवनों से संग्राम करने के लिए उन्होंने एक धारा निर्धारित की। परन्तु मैं दयानन्द के पुजारियों से कहा करता हूँ, कि तुम इतने नम्र बन जाओ, इतनी वैदिकता पर आ जाओ, कि जिससे तुम महात्मा नानक का जो आदेश था, उसकी पूर्ति भी तुम्हीं कर सकते हो, क्योंकि जो नानक के पुजारी हैं, वह तो हिंसा में लग गए हैं, उनको तो केवल त्वचा का आनन्द चाहिए। माँस भक्षण पूर्ति में ही उनका जीवन संलग्न रहता है। आज वह तो स्वार्थी बन करके, राष्ट्र का विनाश करने वाले बन बैठे हैं। जो विनाश में जाते हैं, उनकी पूजा में क्यों संलग्न होते हो। महात्मा नानक की वही वेदना थी, जो महर्षि पातंजलि की थी, जो महात्मा प्राह्मणे की थी, जो अगस्त मुनि जैसों की थी। उस वेदना को क्यों नहीं लाया जाता? इसलिए नहीं लाया जाता, क्योंकि संसार में स्वार्थ आ चुका है। स्वार्थ के कारण आर्यों की पद्धति नष्ट होने जा रही है। आज कौन दयानन्द बनकर आएगा और अपने शिक्षालयों में पुनः से नाद बजाएगा, कि आज मैं वैदिकता को लेकर आया हूँ।

आज शंकराचार्य के पुजारियों से कहा करता हूँ, कि आओ, आज कौन शंकर बन करके आता है, वेदान्त को लेकर कौन आता है? जहाँ सबमें ब्रह्म प्रतीत होता हो, तो वहाँ न किसी से घृणा प्रतीत होती है, न किसी से कुहान्त होती है। वहाँ तो केवल मानवता के अंकुर होते हैं, वहाँ एक विचित्रवाद होता है। उस विचित्रवाद को अपनाना चाहिए, जिससे हम संसार में वैज्ञानिक बन सकें। परन्तु देखो, विज्ञान कहाँ से आता है? हमारे यहाँ कपिल मुनि महाराज ने जितनी धातुओं को निर्धारित किया है, उतनी धातुओं को आज तक कोई चुन ही नहीं सका है। वेदान्तवाद के सम्बन्ध में हमारे यहाँ

महर्षि जैमिनी ने जहाँ तक दर्शनों में अपने उल्लेखनीय विचारों को प्रकट कराया है, उससे अधिक किरणातियों की सम्वेदनाओं को कोई प्रकट कर ही नहीं सका है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते हैं कि महानन्द तो ऐसी ही वार्त्ता प्रकट करते रहते हैं। इनका हृदय उच्चारण कर रहा होगा, कि अरे, यह महानन्द तो कैसी कटुता को लेकर के चल रहा है। परन्तु मैं इन वाक्यों पर नहीं जाता। गुरुदेव मुझे किसी किसी काल में समय दिया करते हैं। इस सूक्ष्म समय में अपने जो मौलिक विचार हैं, जो मैं दृष्टिपात करना चाहता हूँ, उन्हीं को संक्षेप में प्रकट कर देता हूँ। मैं तो यह कहा करता हूँ कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का यह जो मृतलोकी प्रभात शरीर है इसमें पता नहीं कितनी आपत्तियाँ आएंगी। मैं पूज्य गुरुदेव के अवतारवाद सम्बन्धी आदेशों पर जाना चाहता था, मुझे तो वह भी अवतारवाद प्रतीत होता है, जो आकर चले जाते हैं और उनके तुल्य, उनकी समाज में, उनकी भूमि में, उनके वृक्ष पर कोई द्वितीय व्यक्ति ऐसा विराजमान नहीं होता। अवतार यह नहीं होता, कि आज हम परमात्मा को मनुष्य रूप में धारण कर लें। अवतार उसे कहा करते हैं, तो परमात्मा के निकट जाने वाली आत्मा हो, लोक कल्याण के लिए जन्म लेती हो, उनको हमारे यहाँ अवतरण कहते हैं। उसे हमें पुनः से स्वीकार कर लेना चाहिए।

रक्त क्रान्ति की भविष्यवाणी

आओ मेरे भद्र पुरुषोआज हम कहाँ चले !मेरे पूज्यपाद गुरुदेव !हे मेरे ऋषि मण्डल ! जा रहे हैं, कहाँ तो चक्रवर्ती राज्य था, कहाँ सूक्ष्मता राज्य बना करके, उसकी प्रतिष्ठा को भी आज नष्ट किया जा रहा है। यह क्या है? यह स्वार्थ नहीं तो क्या है? आज यह बुद्धिहीनता का ही एक कारण है। इस पर आज प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को पुनः से विचार विनिमय करना होगा, कि हम अपनी प्रतिष्ठा को कैसे लाएं। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है, जब मैं संसार के, राष्ट्र के, भारतभूमि के आँगन में आ जाता हूँ, कि कुछ ही समय के पश्चात् वह क्रान्ति आने वाली है, जिसमें एक मानव दूसरे मानव को नष्ट करने के लिए नियुक्त हो जाएगा। वह क्रान्ति कुछ ही दिनों में आने वाली है, इसलिए मानव को विचार विनिमय करना होगा और यदि हम

महान् क्रान्ति को लाएं, तो यह क्रान्ति जो मानव को नष्ट करने वाली हो, वह हमारे समीप न आएगी। परन्तु देखो, यह तो आएगी। क्यों आएगी? क्योंकि स्वार्थ तो अभी और ऊँचा बनेगा। जिस समय स्वार्थ पराकाष्ठा को पहुँच जाएगा। वैश्यजन, द्रव्यपति पराकाष्ठा पर संग्रह करते चले जाएंगे, निर्धन व्यक्तियों में निर्धनता आती चली जाएगी, उस समय उनके हृदय की जो वेदना है, वह रक्त को ला करके उनके विनाश का कारण बनती चली जाएगी। केवल यही कारण होता है, जिस भी काल में क्रान्ति होती है, उस काल में ऐसा होता है।

देखो, रावण के यहाँ क्रान्ति आई। क्यों आई? रावण के यहाँ भी यही था। द्रव्यपतियों का संग्रह करने का आवरण बन गया था और निर्धनों का निर्धनता में साम्राज्य छा गया था। यही कारण बना कि क्रान्ति आई। जो संग्रह करने वाले होते हैं, वह रावण होते हैं और रावण का विनाश करने वाला कोई न कोई राम भी अवश्य उत्पन्न होगा। इसलिए विचारों को महान बनाने के लिए, अपना जीवन महान बनाने के लिए, महान क्रान्ति के लिए परमात्मा के समीप जाने का प्रयत्न करो।

अहा देखो,मैंने तुम्हें अभी ! अभी प्रकट कराया, कि कुछ ही समय रह रहा है इस क्रान्ति को लाने के लिए। मैंने एक समय अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न किया कि वह क्रान्ति कितने समय में आएगी? तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कोई उत्तर नहीं दिया। न मैं ही उसका समय निश्चित कर सकता हूँ, क्योंकि देखो, क्रान्ति आएगी और अवश्य आएगी, संसार के कारण बनते चले जा रहे हैं। क्रान्ति उसी काल में आती है, जब माता को माता की दृष्टि से पान नहीं किया जाता है, भौजाई को, भगिनी को, बहिन की दृष्टि से दृष्टिपात नहीं किया जाता है, इसी प्रकार विधाता को विधाता की दृष्टि से, पति को पति की दृष्टि से, पिता को पिता की दृष्टि से दृष्टिपात नहीं किया जाता, परन्तु उनको अपमानित करने के लिए तत्पर रहते हैं। गुरुओं को गुरुओं की दृष्टि से नहीं। देखो,गुरु अपने शिष्य के प्रति हितैषी नहीं। उस समय क्या होता है !? आपस में विडम्बनावाद होता है और विडम्बनावाद हो करके इन्हीं से क्रान्ति प्रारम्भ हो जाती है और वह क्रान्ति आती है कि क्षण में राष्ट्र के राष्ट्र कहीं के कहीं चले जाते हैं,

ऐसे यन्त्रों का प्रहार होता है जहां भूमि के कण कण हो जाते है और वहाँ जल की धारा ओत प्रोत हो जाती है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है, कि संसार में वह क्रान्ति जाएगी, जिस क्रान्ति के लिए मानव यह उच्चारण करेगा, कि यह कैसी क्रान्ति है। ऐसी क्रान्ति आएगी कि रक्त की धाराएं बहने वाली और जल की धाराएं पृथ्वी से बहने वाली होंगी। मानो ऐसी क्रान्ति कुछ ही काल में आने वाली है। कारण से कार्य बना करता है।

दृढ़ संकल्प की महत्ता

आज मैं इन वाक्यों को लेकर नहीं चला, कि भय देता चला जाऊं। मेरे हृदय में भय की कोई ऐसी वार्त्ता नहीं। मेरे पूज्य गुरुदेव कहेंगे कि यह कैसी कटु आलोचना है, परन्तु वह कटुता नहीं। मैं यथार्थ वार्त्ता प्रकट कर रहा हूँ। देखो,जब प्रलयकाल ! आता है, तो उसमें वह प्राणी कुछ समय तक जीवित रहते हैं, जो दृढ़संकल्पवादी होते हैं, इसी प्रकार इस क्रान्ति से आज वही मानव ऊँचे बन सकते हैं, जो मानवीयता और दृढ़संकल्प से महान बन चुके हैं।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते हैं कि यह मूर्खानन्द है। परन्तु मूर्खानन्द तो मैं हूँ, परन्तु क्या करूं यथार्थ वाक्य उच्चारण करने से मेरे हृदय में कोई संकोच नहीं होता। आज मेरे हृदय में एक वेदना है और वह वेदना यह है, कि आज जो इस कलियुग में महात्मा दयानन्द, महात्मा शंकराचार्य हुए, उनकी वेदना पूर्ण नहीं हो रही है, यह कितनी सूक्ष्मता है। उन्होंने एक ही आदेश दिया आर्यों को, कि स्वयं आर्य बनो, कन्याओं को भिन्न भिन्न स्थान में शिक्षा दिलाओ, ब्रह्मचारियों को भिन्न भिन्न स्थान में आरण्यक, शतपथ, उपनिषद् और दर्शन शास्त्रों की शिक्षा को लाओ। जब उनकी शिक्षा होगी, शिक्षालयों में तो ब्रह्मचारी ऊँचे होंगे और राष्ट्र स्वयं ऊँचा बनता चला जाएगा। परन्तु इस कार्य को पूर्ण कौन करेगा? इसको वहीं पूर्ण करेगा, जो अपने जीवन को तपस्वी बनाएगा, दयानन्द की भांति तपस्वी बनाएगा। अहाकैसा तपस्वी !? देखो, दयानन्द वहाँ जाते थे जहाँ वज्रों की वर्षा होती है। आज दयानन्द के पुजारी वहाँ जाते है जहां पुष्पों की वर्षा होती है आज यही उनकी त्याग और तपस्या का परिणाम

है, कि उनके जो वज्र थे, वह पुष्प बने और इनके जो पुष्प हैं वह वज्र का कार्य बनते चले जा रहे हैं।

मैं आज अपने उन विचारों को प्रकट कर रहा हूँ जिससे आज हमें यह प्रतीत हो जाए, कि हमारे यहाँ वैदिकता क्या है? वैदिकता वही है, जो हमें महात्मा शंकराचार्य और महात्मा दयानन्द ने निर्णय कराया। महात्मा शंकराचार्य वहाँ जाते थे, जहाँ बौद्धों और जैनियों के आक्रमण होते थे। जहाँ मृत्युदण्ड तक देने की योजना बनाई जाती थी, और आज उनके मानने वाले जो गुरु बने हुए हैं, वह वहाँ जाते हैं जहाँ पुष्प हाते हैं। वह कहाँ जाते हैं? जहाँ उनके द्वारा ऊँचे ऊँचे छत्र हों। धिक्कार है उनके जीवन को, जहाँ शंकर और मूलशंकर दोनों की वार्त्ताओं को पूर्ण नहीं किया जाता। यह क्या है। उनकी आत्मा की त्याग और तपस्या की सूक्ष्मता है।

पूज्यपाद गुरुदेवआज आपने मेरे वाक्य सुने होंगे। मेरे हृदय की जो वेदना है !, वह एक ही है कि ऋषियों के कर्तव्यों को लेकर चलो। उससे तुम्हारे जीवन की धारा ऊँची बनेगी, अन्यथा किसी काल में न बन सकेगी। त्याग और तपस्या के सम्बन्ध में गुरुदेव नित्यप्रति उच्चारण किया करते है, कि त्यागी और तपस्वी ही संसार में जीवित रह सकेगा। कैसे मानव त्यागी और तपस्वी होता है। यथार्थ उच्चारण करने से और जो यथार्थ उच्चारण करता है, उस पर आपत्तियाँ आती हैं। कैसी आपत्तियां आती हैं गुरुदेवजहाँ दयानन्द जाते थे वहाँ पर पुष्पों क !ी वर्षा तो क्या, वहाँ वज्रों की वर्षा होती थी, और वज्रों की वर्षा को कहा करते कि एक समय यह मेरे पुष्प बनेंगे। ऐसे ही महात्मा शंकराचार्य कहा करते थे, जब उनको नष्ट करने के लिए बौद्धों और जैनियों का आक्रमण होता था, कि यह मेरे पुष्प का कार्य करेंगे। जहाँ इतने त्यागी, तपस्वी और हृदय में इतनी सांत्वना हो वही उनकी वार्त्ताओं को पूर्ण कर सकेगा, अन्यथा न हो सकेंगी। जो मान अपमान में संलग्न रहते हैं, वह आज दयानन्द और शंकर के वाक्यों को पूर्ण न कर सकेंगे। वही कर सकेंगे, जिनके द्वारा त्याग, तपस्या और जो द्रव्य की लोलुपता को त्यागने वाले हों।

आज देखो,महात्मा दयानन्द !, महात्मा शंकर किस प्रकार के थे? एक समय महात्मा शंकर से बौद्ध मत वालों ने कहा, हे महात्मा शंकराचार्यआप हमारा खण्डन न ! कीजिए, हमारा जो द्रव्य है, उसे अपनाइए। उस समय शंकराचार्य ने कहा, मैं इस द्रव्य को क्यों अपनाऊं। मुझे परमात्मा ने इतना ऊँचा द्रव्य दिया है, जो मुझसे जाना नहीं जा रहा, इस द्रव्य को मैं क्या करूंगा। आज जो कार्य प्रभु ने मुझे दिया है, उस कार्य को करूंगा। कितनी दृढ़ता थी उनके द्वारा। इतने द्रव्यों को अपने पगों में ठुकराने वाले, परन्तु आज शंकराचार्य के पुजारी क्या करते हैं, उसको मैं अच्छी प्रकार निर्णय नहीं करूंगा। वही किया करते हैं, जो साधारण व्यक्ति किया करते हैं। इसी प्रकार महात्मा दयानन्द की चर्चाएं आती हैं। उन्हें भिन्न भिन्न प्रकार के द्रव्य की लोलुपता दी गई परन्तु वह कहा करते, न करोति मुझे नहीं चाहिए। आज मुझे इनकी इच्छा नहीं। मुझे इच्छा है, अपने राष्ट्र की, अपने समाज की। मेरी पवित्र माताएं सब अपने कर्त्तव्य का पालन करें। वेद के अनुयायी बनें, वेद के प्रकाश को जानें, वेद के मर्म ज्ञानी बनें। यह देखो, उनका एक आदेश था, इसी आदेश पर चलें। वज्रों के आक्रमण होते हैं, परन्तु आज कौन है, उन वार्त्ताओं को पूर्ण करने वाला? जो नाद से कहा करता है कि शिक्षालयों में आरण्य, शतपथ, वेदान्त, सांख्य दर्शन इत्यादियों की शिक्षा होनी चाहिए। कहाँ है उनकी वार्त्ता? संसार ने उनकी वार्त्ता को उलट दिया। आज मैं कहा करता हूँ, हे परमात्मन्संसार को !हे देव !, भारतभूमि को पुनः से ऊँचा बनाना है, तो भगवन् दयानन्द जैसे !पाँच उत्पन्न कर, जिन पांचों से संसार ऊँचा बन जाए। प्रभुमेरी यह वेदना है !, आप स्वीकार कीजिए। यह संसार तो भगवन्इसी प्रकार चलता रहेगा। आज के मानव केवल एक रसना पर आ ! गए हैं। मांस भक्षण पर आ गए हैं। मांस को भक्षण करते जाओ। आज जो जल का शोधन करती है, जो पशु हमें दुग्ध देते हैं, उनके प्रति इन्हें विवेक नहीं।

मांस का भक्षण दोष

आज यह मानव नहीं, अमानव के क्षेत्र में चला जा रहा है। उस वेदी पर चला गया है, जिस वेदी पर अमानव का चुनाव होता है। मृगों के, पशुओं के आहार को अपना

लिया है और क्यों अपना लिया है? कहते हैं राष्ट्र में अन्न उत्पन्न नहीं होता। अरे, अन्न क्यों उत्पन्न होगा, जब तुम इन आहारों को भक्षण कर जाते हो। पृथ्वी तुम्हें अन्न नहीं देगी। क्यों नहीं देगी? इसलिए नहीं देगी, क्योंकि तुम अपने आहार व्यवहार को दूसरों के आँगन में ले गए हो। यदि तुम्हारा स्वयं का, अन्न का भक्षण होता, तो यह हो नहीं सकता था, कि पृथ्वी माता तुम्हें अन्न न देती, अवश्य देती और मेघों से वृष्टि होती, परन्तु क्या करें, तुम इन्हें हनन करते हो। जिसको तुम हनन करते हो, उनका आत्मा क्या कहता है? आज एक प्राणी है, जो किसी के मांस को भक्षण करता है, आज उसी प्राणी की एक अंगुली को नष्ट कर दिया जाए, तो उसका हृदय क्या कहता है? कहता है कि मेरा तो हृदय व्याकुल हो गया। अरे, जैसे तुम्हारा हृदय व्याकुल नहीं होता? अवश्य होता है। उनकी वेदना सब वायुमण्डल में मिश्रित हो जाती है और मिश्रित होने के पश्चात् वही तुम्हारे तेजों में, अनावृष्टि के रूप में और अतिवृष्टि के रूप में तुम्हारे समक्ष आ जाती है। जो तुम्हारा आहार है, उसे प्रकृति स्वयं नष्ट करती रहती है। इसलिए हे मानवयदि राष्ट् !र को अपने आहार और व्यवहार को सम्पन्न बनाना है, तो आज मृगराज न बनो। तुम्हें परमात्मा ने तो मनुष्य बनाया है, मनुष्य ही बनो, मृगराज न बनो। तुम दूसरों का आहार क्यों प्रारम्भ करते हो।

आज एक फल है, जो मानव के पान करने का है। मृगराज को देने लगो तो यह कदापि भी पान नही करेगा। परन्तु मानव ऐसा है, कि मृगराज के आहार को दे दो, तो उसे चटकर जाएगा। क्यों कर जाता है? इसका केवल अभिप्राय यह है, कि मानवता नहीं रही और मानवता न रहने का परिणाम यह है, कि कुछ समय के पश्चात् निर्धन क्रान्ति आएगी। यह मांस का भक्षण किस काल तक रहेगा? नहीं हो सकेगा। यह तो प्रकृति का नियम है कि देखो, बीस साल के पश्चात् कुछ क्रान्ति आती है, पचास वर्ष के पश्चात् कुछ क्रान्ति आती है। जब इस परिस्थिति को सौ वर्ष व्यतीत हो जाते हैं उस समय एक ऐसी क्रान्ति आती है जिससे मानव मानव को नष्ट करने के लिए उद्यत हो जाता है।

यह संसार तो परिवर्तनशील है। आज का दिवस है, कल का दिवस आएगा, वह परिवर्तनशील आएगा। मानव का जीवन नित्य प्रतिदिन दूरी चला जाता है। इसलिए इनके ऊपर अनुसन्धान, विचार विनिमय करना है, जिससे हम वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, प्राण के वैज्ञानिक, मन के वैज्ञानिक, भू के वैज्ञानिक, अन्तरिक्ष के वैज्ञानिक बनें। ऐसी तीव्र बुद्धि और मानवता अपने हृदय में लाओ। अब मैं आज का यह आदेश समाप्त करने जा रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य के साथइन्हीं वाक्यों के लिए कई समय से !बेटा ...... पुकारते चले आ रहे थे, जो तुमने अभी अभी उच्चारण किए, जो तुमने वक्तव्य दिया। वक्तव्य उच्चारण कर रहा हूँ वास्तव में तो ऐसा कहना चाहिए, कि सुन्दर उच्चारण नहीं था। क्योंकि जितनी वार्त्ताएं, वह सब ऐसे ही थीं, जैसे कोई राजा राष्ट्र को देता है। राजाओं वाले विचार तुम क्यों देते हो। अपने साधुत्व वाले दो। सादे विचार, ऊँची धारणा, ऐसे विचार क्यों नहीं देते? चलो, कोई वाक्य नहीं, जो इन्होंने उच्चारण कर दिया। बेटाआज तुम यह वार्त्ता क्यों प्रकट करते हो !, कि क्रान्ति आएगी। यह तो प्रभु की इच्छा है और प्रभु की सृष्टि में ऐसे कार्य होते रहते हैं इनमें तुम्हें क्या प्रयोजन?

पूज्य महानन्द जीः भगवनआप जो नित्यप्रति आदेश देते हैं !, इनसे क्या प्रयोजन है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाइनसे नहीं !, परन्तु एक गम्भीरता और मौलिकता तो आती है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन्जैसे आपके विचारों में मौलिकता आती है !, वैसे ही हमारे में होती है। प्रत्येक मानव अपने विचार प्रकट करने में स्वतन्त्र होता है। जैसे आप अपने मौलिक विचार देते हैं ऐसे ही हमारी इच्छा होती है किसी काल में।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य के साथमहामूर्खो वाले शब्द ...., चलो।

तो मुनिवरों महानन्द जी कुछ अपना प्रकाश दे रहे !आज मेरे प्यारे !थे। चलो कोई बात नहीं, इनके हृदय की जैसी वेदना थी, वैसे ही विचार प्रकट किए। बहुत सी वार्त्ता तो बड़ी ही सुन्दर, परन्तु बहुत सी वार्त्ता सुन्दर और कटु। यह इनका स्वभाव बन

चुका है। जब इनका स्वभाव और संस्कार ऐसे बन गए, तो इन संस्कारों को कहाँ नष्ट किया जाए।

आज का आदेश जो हम प्रकट कर रहे थे, वह षोडश कलाओं के सम्बन्ध में था, कि हम इन षोडश कलाओं को जानने वाले बनें। यह षोडश कलाएं क्या होती हैं? पांच ज्ञान इन्द्रिय, पांच कर्म इन्द्रिय, पांच प्राण और एक मन होता है। वास्तव में कला तो बहुत होती हैं, बुद्धि होती है, पञ्च तन्मात्राओं को भी कहा जाता है परन्तु यहाँ केवल षोडश कलाओं को जानने वाले ही, अब तक हुए हैं। कल समय मिलेगा, तो मैं षोडश कलाओं के सम्बन्ध में शेष चर्चाएं प्रकट कर सकूंगा, क्योंकि आज तो महानन्द जी ने कुछ वार्त्ता प्रकट नहीं करने दी। चलो कोई वाक्य नहीं। !इनकी भी इच्छा पूर्ण हुई। आज का अब यह आदेश समाप्त हो चला। अब वेदों का पाठ होगा, उसके पश्चात् यह वार्त्ता समाप्त होती चली जाएगी। आर्य भवन, जोरबाग नई दिल्ली।

२३ 12 11 1966 पुष्प 06 महर्षि दयानन्द और शंकराचार्य के प्रति श्रद्धांजली

जीते रहो, देखो, मुनिवरों आज हम !तुम्हारे समक्ष, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। आज के प्रारम्भ के मन्त्रों से हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुण गाते चले जा रहे थे। जब उस परमपिता परमात्मा के गुणों का हम वर्णन किया करते हैं, तो हमें ऐसा अनुभव होने लगता है। हम उसकी छत्रछाया में, उसके आँगन में इस समय विराजमान हैं और उसकी महिमा का गुण गाते हमारा हृदय प्रसन्नत हो जाता है। आओ मेरे भद्र पुरुषोंहम उस परमपिता परमात्मा की ! महिमा का गुणगान गाते ही चले जाएं, जिस परमपिता परमात्मा न हमें एक सुन्दर मार्ग दिया। जिस सुपथ को ग्रहण करने के पश्चात् हमारे हृदय में मानवीयता के पवित्र अंकुर विराजमान हो जाते हैं। आओहम उस पथ को ग्रहण करते चले जाएं !, जो वेद से, ऋषि मुनियों ने उस परमपिता परमात्मा की महिमा को जानते हुए मार्ग प्रदर्शन किया है। हम उस सुन्दर मार्ग को अपनाते हुए, अपने जीवन को विशाल हृदय, निडर और निर्भीक हो करके, राष्ट्रवादी, मानववादी धर्मज्ञ होकर सब प्रकार से दूसरों की रक्षा करने वाले बनें।

आज मेरे प्यारेमहानन्द जी भी विराजमान हैं !, वह भी अपने कुछ उदार वाक्य प्रकट करेंगे। मैं तो केवल अपना यही आदेश प्रकट करने जा रहा हूँ, कि ऋषि मुनियों का जो सुन्दर मार्ग है, उसे अपनाते हुए अपने जीवन को ऊँचा बनाते चले जाएं। प्रत्येक देवकन्या, प्रत्येक महर्षि मण्डल का यही कर्त्तव्य हो जाता है, कि वेद के उस आदेश को लेकर चलें, जो अनुपम प्रकाश है, जो ज्ञान विज्ञान और सार्वभौम विचारधारा को लाकर हमें सुमार्ग पर लगा देता है। हम उन्हीं आदर्शो को अपनाएं, जिनका महर्षि कणाद, महर्षि गौतम, महर्षि पतंजलि, वेदव्यास आदि आदि ऋषियों ने अपनाया और जिन आदर्शो को अपनाते हुए अपने जीवन को अग्रे बनाया। जैसे यज्ञशाला में अग्नि सामग्री को भस्म कर देती है, इसी प्रकार वेद रूपी अग्नि में अपनी कुरीतियों को नष्ट करके, हम सुमार्ग पर चलने वाले बनें, यह हमारी इच्छा है। हम ऋषियों की परम्परा को अपनाते हुए, अपने जीवन को आदर्शवादी बनाएं। अब मैं अपने आदेशों को समाप्त करने जा रहा हूँ। अब मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ विचार प्रकट करेंगे। !

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् सम् वधाः ब्रह्मे वर्त्ता संगतम् मनः वचतः कृति विश्वनराः

मेरे पूज्यपाद गुरुदेववास्तव में तो पूज्यपाद गुरुदेव नित्यप्रति ज्ञान !मेरे भद्र समाज ! और विज्ञान की चर्चा प्रकट किया करते हैं, जिसे जानता हुआ मानव अपने जीवन को सुन्दर मार्ग पर ले जाता है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई समय से प्रार्थना करता आ रहा था, कि हमें कुछ संक्षिप्त समय प्रदान कीजिए, परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव तो ज्ञान के इतने अथाह सागर में चले जाते हैं कि यह भान भी नहीं रहता, कि किसी ओर को भी कुछ वाक्य उच्चारण करना है क्योंकि ज्ञान का सागर इतना अनुपम है, कि भावुकता में मानव अपनेपन को भी समाप्त कर देता है। जैसे जिज्ञासु जब अपने गुरु के चरणों में ओत प्रोत होता है, तो अपनी मानवता को त्याग देता है। वह गुरु के चरणों में इस प्रकार ओत प्रोत हो जाता है जैसे ऋषि मुनियों के कमल चरणों की रज होती है। उस रज के तुल्य शिष्य बन जाता है क्योंकि भावुक हो जाता है वास्तव में हम तो उस धूलि के तुल्य भी नहीं, परन्तु मैं केवल इन वाक्यों को प्रकट करने नहीं आया। आज हमें उन महान ऋषियों का, महान आत्माओं का, युग

युगान्तरों से जो तपस्वी ऋषि आत्मा इस संसार में आती है और आकर अपना प्रसार करती चली जाती है और वेद का वह सुपथ मार्ग हमें देकर शान्त हो जाती है। आज मैं उनके सम्बन्ध में कुछ प्रकाश देना चाहता हूँ।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी कुछ वेद के शब्दों को उच्चारण करके उनकी कुछ भूमिका बनाई कि ऋषि मुनियों का जो चुना हुआ मार्ग है, उस पवित्र मार्ग को अपनाते चले जाएं। परन्तु वह मार्ग कैसे अपनाया जा सकेगा? उस मार्ग को अपनाने के लिए हमें किस किस सामग्री की आवश्यकता है उस मार्ग को अपनाने के लिए सर्वप्रथम मानव को चरित्र की आवश्यकता है, चरित्र के साथ साथ मानव को वेद की व्याहृतियों के अनुकूल चलकर अपने ज्ञान विज्ञान को उन्नतिशील बनाया है जो वेद कहता है, दर्शन कहते है उसके ऊपर हमें चलना है यह हमारा सुपथ है

परमात्मा से भय

आज जब मैं भौतिकवाद के आँगन में, मानव के अन्तःकरण को दृष्टिपात करता हूँ तो केवल यह प्रतीत होता है कियहाँ कोई भी वाक्य उच्चारण नहीं करना चाहिए जब राष्ट्रीयता पर जाते है तो वहाँ से ओर भी घृणा होती है। हे मानवऋषियों के आदर्श ! पुकारने से ही यह संसार ऊँचा नही बनेगा, अन्तःकरण ऊँचा नही बनेगा। जब तक हम उस मार्ग पर चलने के योग्य नही बनेंगे तब तक हमारा जीवन उच्चारण करने मात्र ही रह जाएगा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तो बड़ी सुंदर चर्चा प्रकट की। कल के आदेशों में विज्ञान की चर्चा प्रकट कर रहे थे आज के संसार में, आज के मानववाद में जब मैं विज्ञान के ऊपर जाता हूँ कि विज्ञान क्या है, तो प्रतीत होता है कि सूर्य चंद्र में जाने वाले यन्त्रों का निर्माण, एक दूसरे को नष्ट भ्रष्ट करने वाले यन्त्रों का निर्माण किया है क्या कहीं मानव ने दूसरों को जीवन शक्ति देने वाला भी कुछ निर्माण किया है? जब मैं इन विचारों पर जाता हूँ तो वहाँ एस प्रतीत होता है कि वाहन जीवन शक्ति नहीं। केवल दूसरों को नष्ट करने कि योजना बनाने में ही अपनी सफलता जानी जाती है। उसमें अभिमान, प्रमाद, आलस्य में संलग्न होते हुए, केवल राष्ट्र को, समाज को हम नष्ट भ्रष्ट करते चले जा रहे हैं।

आज संसार में, मेरी पवित्र माताओं में, सुन्दर कन्याओं में, भद्र पुरुषों में भय प्रतीत होता है। वह भय परमात्मा का नहीं है, जो कुछ सूक्ष्म सा भय है, वह यह समाज का है। यदि आज हम किसी मानव से यह प्रश्न करें, कि क्या तुम्हें परमात्मा का भय है? तो उच्चारण करता है, कि परमात्मा का भय कहाँ? जो मानव परमात्मा से भयभीत होता है, वह संसार में ऋषि बन जाता है। जो समाज से भयभीत होता है, वह भी कुछ सुंदर होता है, परन्तु मानव में पशुता आ जाती है, तो उनका कल्याण न समाज से होगा, न परमात्मा से। इसलिए विचारना चाहिए, कि हम परमात्मा से भयभीत हों। आज यहाँ जिस ऋषि आत्मा के लिए अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने आए हैं, वह परमात्मा से कितना भयभीत होती थी, । आज हम ऋषियों के नियमों को ही लेकर चलें, परन्तु ऋषियों के नियम क्या हैं? ऋषि नियम केवल वही महान आत्मा ही होता है, जो परमात्मा से भयभीत होता है।

आज मानव दूसरों के प्रति घृणा करता है, तो परमात्मा से भय कहाँ है? परमात्मा से भयभीत होने वाले व्यक्ति की न तो दूसरों से घृणा होती और न दूसरों से निन्दा करता है। केवल योगिता में लगा हुआ अपने मानसिक जीवन को ऊँचा बना करके, वह संसार का गुरु कहलाता है क्योंकि उसके हृदय में इतनी नम्रता और उदारता ओत प्रोत हो चुकी होती है, कि केवल समाज के कल्याण की बात विचारता है, घृणा की नहीं, निन्दा की नहीं, क्रोध की नहीं। वह मानव कामुक नहीं होता। उसे तो परमात्मा से भय होता है।

हे मानवआज मैं बहुत से व्यक्तियों को इस प्रकार का दृष्टिपात करता रहता हूँ !, कि आंतरिक भावना कुछ है और बाहरी बड़ी सुन्दर है। परन्तु बाहरी सुन्दर बनने से कार्य नहीं बनेगा। अरे, बाहरी सुन्दर क्यों बनते हो, क्योंकि समाज आकर्षित हो जाए, कि वह बड़ा नम्र है, बड़ा सुन्दर है, सुन्दर बात उच्चारण करता है। अरे, महान आत्मा तुम ऐसे नहीं बनोगे। महान आत्मा बनना है, ऋषि के आदर्श को अपनाना है, तो तुम्हें आंतरिक भावनाओं को ऊँचा बनाना होगा। यदि आंतरिक भावना ऊँची नहीं बनेगी, तो क्या होगा? आज दूसरों को दुराचारी उच्चारण करने से समाज ऊँचा नहीं बनता,

मानव ऊँचा तब बनता है, जब अपने को दुराचारी कहा जाता है। अपने को दुराचारी किस प्रकार कहा जाएगा? जब मानव शान्त मन से, शान्त हृदय से अपनी त्रुटियों पर विचार विनिमय करता है और विचारता है, कि मेरे में कितनी त्रुटियाँ हैं। परमात्मा से भयभीत होता है ऋषि के आदर्शों को अपनाता है। परमात्मा के आँगन में जाता हुआ वह देवपथ को प्राप्त हो जाता है।

हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेवमैं अभी अभी ! क्या उच्चारण कर रहा था? ऋषि चर्चा। मैं दो मूलों की चर्चा प्रकट किया करता हूँ, एक मूलशंकर वह हुए, जिन्होंने आज से वर्ष पूर्व वैदिकता को फैलाया। एक मूल कुछ ही समय हुए 2200, परन्तु दोनों वेद के, परमात्मा के पथ प्रदर्शक माने जाते हैं। जहाँ मैं दोनों महान आत्माओं की तुलना करता हूँ, तो मेरा हृदय गद् गद् हो जाता है। हे परमात्मायह तेरी कृपा है !, कि इस समाज के लिए, इन प्राणियों के लिए, ऐसे ऐसे महान् पुरुष, महान आत्मा, युग युगान्तर की तपस्या करने के पश्चात् संसार में आ करके, वेद का उपदेश देकर यहाँ से चले जाते हैं। दोनों मूलों की मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई स्थानों में चर्चा प्रकट की।

ऋषियों के प्रति धन्यवाद

यह मूलशंकर जो पश्चात् के मूल थे, इनके समय में क्या था? कहीं यवन थे, कहीं ब्राह्मण थे और कहीं देखो, ओर भी हमारे वैदिक साहित्य में नाना प्रकार की त्रुटियाँ थीं। हमारा साहित्य अग्नि के मुख में जा रहा था और एक शंकर वह जो बहुत पूर्व में हुआ। उनके समीप कहीं नास्तिकवाद छाया था, कहीं बौद्धम ब्रह्म कृतास्ते, कहीं बौद्ध की प्रतिभा संसार को व्याकुल कर रही थी। यह दो मूलशंकर हुए, जिन दोनों शंकरों पर विचार विनिमय करता हूँ तो मैं कहा करता हूँ कि हे मेरे मानव समाजतेरे ऊपर ! कितनी दया है, उस प्रभु की, जो ऐसे ऐसे महान् पुरुष तुम्हें उपदेश दे करके इस संसार से चले जाते हैं। आज तुम उन ऋषियों का धन्यवाद देते चले जाओ। परन्तु उनका धन्यवाद क्या है? उनका धन्यवाद वही है जिन कर्मों से, जिस भावुकता से, जिस परमात्मा के आस्तिक होने से, वह तुम्हें आदेश देकर चले गए हैं। उन आदेशों

पर चलना तुम्हारा कर्त्तव्य कहलाता है। यदि नहीं चलोगे और तुमसे नाना मत आ जाते हैं, तुमसे घृणा है, किसी प्रकार के प्रलोभन में आ जाते हो और ऋषियों की उस परम्परा की पद्धति को ठुकराते हो तो निश्चित है कि तुम्हारी जो दो पवित्र मूलों की आत्मा है वह व्याकुल होती हुई कहा करती है कि मेरे अनुयायियोंयह क्या ! करते चले जा रहे हो। मेरा आदर्श क्या था, आज के इस समाज का आदर्श क्या है? इसलिए पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञा लेकर आज मैं कुछ आदेश प्रकट करने जा रहा हूँ।

शंकराचार्य की प्रतिभा क्या थी? उन्होंने इस राष्ट्र में धर्म के प्रसार के लिए, वैदिकता का उत्थान करने के लिए और घृणा को दूर करने के लिए राष्ट्र के चार भाग बनाए। चार आश्रम बना करके यह कहा कि इन आश्रमों से समाज में जो प्रमाद हो, जो त्रुटि हो, अज्ञानता हो उन्हें नष्ट करो प्रसार के द्वारा, तपस्या के द्वारा। जो नाना प्रकार के घृणात्मक मत हैं उन्हें नष्ट भ्रष्ट कर दो। यह शंकराचार्य का सुन्दर मत था। इसी प्रकार उस मूलशंकर का भी यही मत था, परन्तु देखो, जितना कार्य उन्होंने सूक्ष्म समय में किया, अपने मौलिक विचार वह समाज के सम्मुख नहीं निर्मित कर सके, क्योंकि वह परमात्मा को ही प्यारे हो गए। संसार में कुछ संक्षिप्त समय के लिए आ पहुँचे थे।

अब देखों हमें उन्हीं महान आत्माओं के गुणों पर विचार विनिमय करना है। उनकी मौलिक विचारधारा क्या थी? जो मत मतांतरों का खण्डन करने वाले हों, उनकी मौलिक विचारधारा यही होती है, कि मत मतांतरों का खंडन कर, वेदों के प्रति आस्था कर। वेदों के विपरीत जो कार्य होते हैं, उनको दूर करना। यह दोनों मूलों का काम था। आज हमें पुनः से उस कार्य को अवश्य करना चाहिए। हम सभी को विचारना है कि उनका कार्य किस प्रकार पूर्ण कर सकते हैं?

शंकराचार्य के अनुयायियों को देखो, वह तो ब्रह्म बन गए हैं और मूलशंकर के मानने वाले मठाधीश बन गए। तो इस समाज का क्या बनेगा? उन पवित्र आत्माओं की जो वार्त्ता है, उनके जो विचार हैं, आज वह आत्मा व्याकुल होती हुई, तुम्हें पुकार रही है।

अरे, आज हमारे वाक्यों को स्वीकार करके राष्ट्र को, समाज को ऊँचा बनाते चले जाओ। परन्तु यहाँ महान आत्माओं को ठुकराया जाता है और जो दुराचारी होते हैं उनका मान किया जाता है। वह न समाज होता है, न राष्ट्र होता है। जैसा वेद कहता है, जैसा दर्शन कहते हैं उसी के अनुकूल राष्ट्र की पद्धति होनी चाहिए। मनु महाराज ने जो राष्ट्र की पद्धति बनाई है उसी पद्धति के आधार से चलना है वह पद्धति सार्वभौम मानी जाती है। इस आर्यावर्त में जब तक मनु जी की पद्धति रही है, वह धर्मज्ञ रहा। इसके विचार दूसरे राजा अपनाते थे। जैसे महाराजा रघु थे, महाराजा दिलीप थे, महाराजा हर्ष थे, उसके पश्चात् भगवान राम हुए। परन्तु देखो, एक दशरथ ऐसा हुआ, जो आलस्य और प्रमाद में चला गया था। तीन पत्नियाँ गृह में रहती। इसलिए मैं उसका कोई मान नहीं करता। मान देता हूँ भगवान राम को, जिन्होंने अपने राष्ट्र को राम राज्य बनाया। रावण की प्रणाली को नष्ट करके उनके विधाता विभीषण को लंका का स्वामी बनाया।

मनु जी की पद्धति के अभाव में व्याकुलता

इसी प्रकार हमें आज पुनः राम राज्य बनाने के लिए क्या करना है? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव। आज का जो राष्ट्र है, वह राष्ट्र नहीं रहा। मनु जी की पद्धति को त्यागने के पश्चात् आज का संसार दुःखित होता चला जा रहा है। आर्यावर्त ही नहीं, संसार के जितने राष्ट्र हैं, वह सभी व्याकुल हो रहे हैं। इसका कारण मनु जी की पद्धति को त्यागना है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते हैं कि मनु जी ने जब राष्ट्र का निर्माण किया, तो अहिंसा परमोधर्मः की विचारधारा थी। कैसी? राजा के राष्ट्र में जितने पक्षी होते हैं जलचर होते हैं, इनकी हिंसा नहीं करनी चाहिए। इन पर अहिंसा परमोधर्मः से दृष्टिपात करोगे, तो राष्ट्र और समाज दोनों ऊँचे बनेंगे। आज का समाज केवल गो के ऊपर पुकारता चला जा रहा है। आज गो के उत्थान के लिए क्या करना चाहिए? सब प्रजा को सुगठित अपना एक विचार बनाना चाहिए। बुद्धिमान ब्राह्मणों का समाज होना चाहिए। यदि मूर्खो का समाज होगा, तो वह केवल नष्ट भ्रष्ट होने की वार्त्ता बनेगी। राष्ट्र में, आर्यावर्त में जितने बुद्धिमान हैं, वेदाचार्य है, वेदज्ञ हैं, उन सबका समाज

एकत्रित हो करके, वे सब राजा से जाकर कहें, कि हे राजन्या तो अपने राष्ट्र को ! ऊँचा बना, अन्यथा प्रजा में क्रान्ति लाएंगे और तुम्हारे राष्ट्र को नष्ट भ्रष्ट करेंगे। इस प्रकार की विचारधारा ब्राह्मणों में, बुद्धिमानों में रहेगी, तो यह राष्ट्र अनुशासन में रह सकता है, अन्यथा अनुशासन में किसी प्रकार नहीं रह सकेगा।

आज जिसे हम आर्यावर्त कहते हैं, इसमें ब्राह्मण समाज नष्ट हो गया है। इसकी पुकार राजा तक नहीं जाती। क्यों नहीं जाती? क्योंकि उनकी तपस्या नहीं रही। जहाँ ब्राह्मणों में तपस्या का अभाव हो जाता है, केवल वेद के अक्षर बोध से ही उसको वेदज्ञ नहीं कहा जाता। वेदज्ञ वह होता है जो वेद के सुपथ पर चलने वाला ब्रह्मचारी और सदाचारी बन करके वेद की इस महिमा को अपनाता हुआ, तपस्या में परणित होता हुआ, अपनी वाणी पर संयम करता हुआ वह जो भी वाक्य उच्चारण करता है वह वाक्य अशुद्धियों को नष्ट करता चला जाता है।

मुझे स्मरण है महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की तपस्या का आदर्श, जिन्होंने भयंकर वनों में, पर्वतों की कन्दराओं में जाकर अपनी वाणी पर संयम किया और उसके पश्चात् उन्होंने लगभग चौरासी वर्ष तक कोई वाक्य मिथ्या उच्चारण नहीं किया। आज मुझे वह आदर्श स्मरण आता रहता है जहाँ महर्षि लोमश मुनि ने एक सौ बीस वर्ष तक कोई वाक्य मिथ्या उच्चारण नहीं किया। राष्ट्र में जाते तो राष्ट्र उनके वाक्यों को स्वीकार करता। राजा पर्वतों में जाते और कहा करते कि हे भगवानमुझे राष्ट्र के ! विधान की चर्चा प्रकट कीजिए। हमारा राष्ट्र कैसे ऊँचा बनेगा? परन्तु आज कहाँ हैं, वे ब्राह्मण, कहाँ है वह त्याग और तपस्या की भावना?

आज का प्रश्न तो केवल गो का ही प्रश्न है। परन्तु मैं कहा करता हूँ कि कहाँ आर्यावर्त का ब्राह्मण समाज ऊँचा बन जाए और चाहे कि संसार में गो का वध न हो, तो नहीं होगा। परन्तु क्यों नहीं? तपस्या नहीं, आज त्याग और तपस्या की आवश्यकता है, द्रव्य के आँगन में आकर त्याग और तपस्या दूर चली जाती है। इसलिए मैं कहा करता हूँ कि राजा को जाकर कहो, कि राजन्आज तेरे राष्ट्र म !ें अनुशासन नहीं रहा है। क्यों नहीं रहा है? क्या कारण है? यह विचारना होगा। उसका कारण है कि

गुरुओं की पद्धति नष्ट होती चली जा रही है। जहाँ ऋषि मुनियों का चरित्र नष्ट हो जाता है उनके चरित्र की गाथाएं ब्रह्मचारियों से दूर चली जाती हैं, गुरुओं से दूर चली जाती हैं, तो क्या वहाँ अनुशासन आ सकेगा? किसी भी काल में नहीं आएगा। संसार में सौ जन्म धारण करने के पश्चात् भी अनुशासन नहीं आएगा, इसलिए राजा और ब्राह्मणों की विचारना होगा, कि हम किस प्रकार से ऊँचे बनें।

आज मैं एक वाक्य और उच्चारण करना चाहता हूँ कि मूर्खों का चुना हुआ राजा तो मूर्ख ही होता है। जहाँ मूर्खो का चुना हुआ मूर्ख राजा होता है वहाँ कैसे राष्ट्र का उत्थान होगा? समाज का किस किस प्रकार कल्याण होगा? समाज का कल्याण करना है, तो ब्राह्मणों को, उस राजा को चुनना चाहिए, जो त्याग और तपस्या में परणित होने वाला हो, आर्यावर्त की पद्धति आज नष्ट नहीं हुई, बहुत समय हो गया है। लगभग साढ़े पांच हजार वर्ष हो चुके हैं। महाभारत काल के पश्चात्, पद्धति नष्ट होने के पश्चात् महान् आत्मा आई, वह उपदेश देकर चली गई। शंकराचार्य आए, वह उपदेश देकर चले गए। मूलशंकर आए वह उपदेश देकर चले गए। इस समाज ने क्या किया? मुझे स्मरण है आज मूलशंकर जिसको दयानन्द नाम से पुकारते हैं इसको ऋषि कहते हैं। हम भी ऋषि कहते हैं। ऋषि की भावनाओं का आदर करते हैं। देखो, उनकी तेरह जन्मों की तपस्या का परिणाम है कि जिससे यह समाज ऊँचा बना है। जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रकट किया था, इस ऋषि आत्मा का इससे पूर्व जन्म शमीक ऋषि मुनि का था, उससे पूर्व जन्म कोकोत ऋषि महाराज का था, उससे पूर्व का जन्म सोमपान ऋषि का था, उससे पूर्व कुर्केतु ऋषि महाराज का था। इसी प्रकार के तेरह जन्मों की तपस्या की पवित्र आत्मा ने आकर पवित्र आदेश दिया। परन्तु इसके लिए तुम क्या कर रहे हो, यह विचारना होगा। आज मैं केवल अपने कुछ विचारों को प्रकट करने जा रहा हूँ, जिसके ऊपर हमें पुनः पुनः विचार विनिमय करना होगा।

मैं वाक्य उच्चारण कर रहा था, कि उस ऋषि दयानन्द ने अपने वाक्यों में एक वाक्य कहा, कि बुद्धिमान ब्राह्मणों को श्रेष्ठ राजा चुनना चाहिए परन्तु जो मैं दृष्टिपात कर

रहा हूँ, वह ऋषि की भावनाओं के विपरीत हो रहा है। जो साधारण प्रजा है, जो यह नहीं जानती, कि धर्म किसे कहा जाता है, वह राजाओं का चुनाव करती है। तो क्या जो प्रजा यह नहीं जानती, कि धर्म किसे कहते हैं, समाज किसे कहते हैं, राजा किसे कहते हैं, तो उनका चुना हुआ जो राजा होगा, वह मूर्ख होगा या बुद्धिमान? मैं तो यह कहा करता हूँ कि मूर्ख होगा। क्योंकि वह अपने लाभ और हानि को किसी काल में विचारेगा ही नहीं। जो राजा बनने के पश्चात् लाभ और हानि को नहीं विचारेगा, तो क्या परिणाम होगा? उसका परिणाम भयंकर होता है। आज अकाल पड़ रहे हैं। अन्न नहीं उत्पन्न नहीं हो रहा है। वसुन्धरा ने अन्न देना शान्त कर दिया है। इसका कारण क्या है? यह कारण जानना होगा।

कण कण में वेदना

आज जो मेरी पवित्र माता है, जिनके गर्भ से सुन्दर पुत्र और महान कन्याएं जन्म लेती हैं जिनसे कहा जाता है कि निसन्तान बनो और जो जलचर मार्गो में विचारण करने वाले प्राणी हैं, उनसे प्रोत्साहन के लिए राजाजन नाना उदघाटन करते हैं और कहा करते हैं कि इनका भक्षण करो। अरे, विचारों, जहाँ तुम जलचरों का मार्ग में विचरण करने वाले पक्षियों को भक्षण कर जाओंगे, अरे, जिनके चार पाद हैं, उन को भक्षण कर जाओंगे, तो तुम्हारे लिए और क्या रह जाता है? जब तुम इन्हें भक्षण करोगे, तो यह जो पृथ्वी हैं, प्रकृति है, आज इसमें इनकी वेदना, इनकी पुकार, इसके कण कण में ओत प्रोत हो जाती है। इसलिए यह पृथ्वी तुम्हें अन्न किसी भी काल में न दे सकेगी। क्यों नहीं दे सकेगी? क्योंकि देखो, पृथ्वी ने भी अपने मन ही मन में देवताओं से पुकार की है कि यह राष्ट्र और समाज पाप कर रहा है, मैं अन्न नहीं दूंगी। वृष्टि नहीं होगी। जब प्रत्येक मानव हिंसक बन जाता है, तो उसे अन्न क्यों प्राप्त होगा। अन्न उसे प्राप्त होता है, जो मानव अपने भोजन पर निर्धारित रहता है। अपने भोजन पर विश्वास करता है। अरे, जो अपने भोजन पर विश्वास नहीं करता, अन्य प्राणियों के भोजन को अपना लेता है, तो उसका परिणाम क्या होता है? उसका परिणाम भयंकर होता है। राष्ट्र की परिस्थिति भयंकर बन जाती है।

आज तब तुम यह विचारते हो कि हमारे राष्ट्र में भयंकर परिणाम हो रहे हैं, कहीं अकाल हो रहा है, अन्न नहीं हो रहा है। अनावृष्टि हो रही है तो उसका कारण भी तो विचारना है। अपनी रसना के आनन्द में आकर जब तुम एक प्राणी को नष्ट करते हो और नष्ट करके उसकी जो वेदना है, उसे स्वीकार नहीं करोगे, तो मेघों की वेदना को किस प्रकार स्वीकार किया जा सकता है। मेघों की वार्त्ता तो यों ही स्वीकार करनी है, कि समुद्रों से जलों का उत्थान होता है, उत्थान होकर सुन्दर सुन्दर वृष्टि होती है। वनस्पतियां उत्पन्न होती हैं। मनुष्य का आहार मनुष्य को प्राप्त हो जाता है। अन्य प्राणियों का आहार अन्य प्राणियों को प्रदान किया जाता है। यह प्रकृति तो माता है। अरे, इस माता के आँगन में पाप ही करते रहोगे, तो माता तो पाप ही देगी क्योंकि पुण्य कहाँ से आएगा। तुम पुण्य करोगे, तो उसके द्वारा पुण्य एकत्रित होगा और जो पाप करोगे, तो पाप ही प्राप्त होगा। इसलिए अनावृष्टि और अतिवृष्टि है और यह समाज और राष्ट्र विनाश को प्राप्त होता चला जा रहा है। यह तो वैज्ञानिक विचार है। वेद यही तो पुकार रहा है, जिसे आज मैं उच्चारण कर रहा हूँ। वेद कहता है कि किसी की वेदना को जानो कि वेदना क्या है? प्रकृति की वेदना क्या है? समुद्रों की वेदना क्या है? महापुरुषों की वेदना क्या है? जब तुम इन वेदनाओं को विचारोगे तो ऊँचे बनोगे। इन वेदनाओं को ठुकराओगे तो तुम्हारे हृदय में, तुम्हारी मानसिकता में व्याकुलता, उछृंखलता और मूर्खता आती चली जाएगी।

एक वाक्य यह भी प्रकट करता चला जाऊँ, कि जिन शिक्षालयों में भगवान राम, लक्ष्मण, उनके विधाता शत्रुघ्न, भरत इत्यादि सब विराजमान हो करके, एक पंक्ति में भोजन करते थे, आनन्दपूर्वक गुरु के चरणों में बैठते थे, परन्तु आज उन गुरुओं का कितना अपमान, शिक्षकों का कितना अपमान यह क्यों? इसलिए अपमान है, कि शिक्षा में जो वेदों की पद्धति है, ऋषि मुनियों का जो चरित्र है वह ब्रह्मचारियों के समीप नहीं रहा। न होने का परिणाम है, कि राष्ट्र में, समाज में, उनके जीवन में, भयंकर परिणाम होते चले जा रहे हैं। आज इन सब पर विचार विनिमय करना होगा। मैं तो केवल संक्षेप में परिचय दे रहा हूँ। यदि मैं इनकी व्याख्या करूं, तो समय बहुत

लगता चला जाएगा। मैं तो अपने पूज्य गुरुदेव से भयभीत होता रहता हूँ, कि कोई वाक्य इस प्रकार का कटु न हो जाए। जिससे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे मूर्ख उच्चारण न कर दें। परन्तु चलो, कोई बात नहीं। मुझे तो दृष्टिपात हो रहा है, यह वाक्य उच्चारण करना है।

आज मैं उस महान विभूति को, महान पवित्र आत्मा को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हुआ, उन पवित्र आत्माओं को मैं बारम्बार नमस्कार करने जा रहा हूँ, जिन्होंने पवित्र और सुन्दर उपदेश दिए। हमारे यहाँ महाभारत काल के पश्चात् नाना आचार्य और नाना ऋषि हुए। परन्तु मूलशंकर और शंकराचार्य दो ऐसी महान् विभूति हुई जिनकी महानता का कोई प्रमाण नहीं। इसलिए हमें दोनों महान् आत्माओं की वार्त्ता को विचारना है। एक महान् आत्मा को मानने वाले ब्रह्म बन गए। वह तो कहते हैं, कि हम तो ब्रह्म हैं, हमें कोई कार्य करने के लिए नहीं रहा। अरे, मानवकार्य करने ! के लिए तो तब तक रहता है, जब तक तुम संसार में अन्न ग्रहण करते हो। जब तक संसार में अपना कर्त्तव्य रहता है, तब तक ब्रह्म की स्थिति नहीं आ सकती।

मूलशंकर के मानने वाले इतने लालायित हो गए हैं, कि ऋषि के आदर्शों को त्याग करके, केवल कटुता में रह गए हैं, उदारता को इन्होंने त्याग दिया है। इसलिए मैं कहा करता हूँ कि महान् विभूतियों के आदेशों को अपनाओ यज्ञकार्य में, परमात्मा के चिन्तन में, उनके प्रति विश्वासी होने में, अपनी प्रवृत्ति, अपनी मानवता को उसमें ओत प्रोत कराते हुए, उनके आदर्शो पर चलने वाले बनो। मेरा वाक्य यह नहीं, कि सब ऐसा नहीं करते। कुछ इस प्रकार के भी हैं, जो ऋषि के आदर्शो का मान करके अपने जीवन का और समाज का कल्याण भी करते हैं परन्तु सब नहीं।

आज संसार की मूर्खता पर विचार विनिमय करना होगा और जब तक त्याग और तपस्या नहीं बनेंगे इस राष्ट्र और समाज का कल्याण कदापि नहीं होगा। मैं राजा के विषय में उच्चारण कर रहा था, कि राजा का चुनाव हो, तो बुद्धिमानों के द्वारा, ब्राह्मणों के द्वारा, कर्मकांडियों के द्वारा, सन्यासियों के द्वारा। जब इस प्रकार राजा का चुनाव होता है, तो वह राजा श्रेष्ठ होता है और जो राजा साधारण मनुष्यों के मनों से

चुना जाता है वह राजा तो होता ही है और जैसा होता हैं, वह तो सभी जानते हैं, यह मेरा वाक्य नहीं। इसलिए हे बुद्धिमानों, तुम्हारा कर्त्तव्य है, कि राजा से जाकर उच्चारण करो, कि हे राजन्सुन्दर बनो और उस विचारधारा को लाओ !, जिससे तुम्हारा राष्ट्र ऊँचा हो। तुम्हारे राष्ट्र में रहने वाली प्रजा अनुशासन में रहे और तुम्हारे नियमों के अनुकूल चले।

विज्ञान का आधार

आज का संसार विज्ञान के संसार में जा रहा है। वह उच्चारण कर रहा है, कि हम वैज्ञानिक हैं। यह संसार वैज्ञानिक तो है, परन्तु विचारना तो यह है, कि यहाँ विज्ञान कहाँ से आया? न तो मुहम्मद के विचारों में विज्ञान था और न ईसा के विचारों में। यह विज्ञान आया कहाँ से? स्पष्ट है कि यह विज्ञान वेदों से आया, ईसा वाले भी कहते हैं कि यह पृथ्वी गृह है, परन्तु मुहम्मद ने इसके विषय में कुछ उच्चारण ही नहीं किया।

इसलिए जितना विज्ञान है, वेद से आया। आज के आर्यावर्त वालों की बुद्धि कितनी सूक्ष्म है। आर्यावर्त के वैज्ञानिक कहते हैं, कि यह जो हमारा विज्ञान है, यह तो पश्चिम से आया है। परन्तु पश्चिम में विज्ञान कहाँ से आया? उनके धर्म में विज्ञान नहीं, उनके विचारों में विज्ञान नहीं, उनके ईसा में विज्ञान नहीं। उनसे प्रश्न करो कि यह कहाँ से आ गया तो कहते हैं कि न प्रतीत कहाँ से आ गया। उनकी बुद्धि इतनी विकसित हुई। अरे, तुम्हारी बुद्धि कहाँ से विकसित होती, जब मूर्ख राजा का चुनाव करने लगे। यह विज्ञान कहाँ रहता, तुम्हारे समीप। यह विज्ञान तो वे चुनते हैं, जहाँ अच्छे पुरुष राजाओं का चुनाव करते हैं। उनके द्वारा यह विज्ञान आता है। तुम्हारे समीप क्यों रहता? हमारे यहाँ, मुझे तो स्मरण है जब महाराजा अर्जुन मंगल मण्डल में तीन वर्ष रहे, जहाँ इतना विशाल विज्ञान हो, आज वहाँ हम यह उच्चारण करें, कि विज्ञान पश्चिम से आया, पश्चिम में कहाँ से आया? उनके ग्रंथों में नहीं, धर्म में नहीं। इससे स्पष्ट है कि वेदों में संसार का ज्ञान विज्ञान है जो ऋषि आत्मा ने कहा है। उनके आदर्शों को लेकर चलोगे, तो यह वाक्य तुम्हारे आँगन में सहज ही आ जाएगा। अब

मैं अपने आदेशों को समाप्त करने जा रहा हूँ। विज्ञान की चर्चा आधुनिक काल का जो विज्ञान है, इसकी चर्चा किसी काल में करूंगा, यदि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे समय देंगे, तो। आज का यह आदेश समाप्त हो गया। मैं अपने गुरुदेव से क्षमा पाऊंगा। मेरे से कोई त्रुटियाँ अशुद्धता हो, तो उसे वह सुन्दर बना दें और अब मैं आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य के साथवाक्य तो बहुत ही सुन्दर !बेटा ...., परन्तु तुम्हारे वाक्यों में जो होता है वह होता ही है। क्योंकि तुम्हारा स्वभाव ही ऐसा बन गया है, कि दूसरों की आलोचना। वास्तव में उनमें सत्यता होगी। मैं यह उच्चारण नहीं कर रहा, कि सत्यता नहीं है, परन्तु बहुत से शब्दों में इस प्रकार की विचारधारा है, जो कटुता में प्रयोग की जाती हो। बेटायह संसार तो अरबों वर्षो से चला आ रहा है। ! कुछ सूक्ष्म समय रह रहा है। लगभग दो अरब वर्ष हो रहे हैं, इतने समय से यह संसार चला आ रहा है। किसी काल में धर्म ऊँचा है, किसी काल में अधर्म ऊँचा है। यह संसार तो बहुत समय से चलता आ रहा है। इसके ऊपर यदि हम विचार करते चले जाएंगे, तो हम अपने जीवन को उन्नतिशील नहीं बना सकेंगे। हमें तो यह विचार देने हैं, जो सार्वभौम विचार हों। वास्तव में तुम्हारे सार्वभौम विचार भी थे और उनमें कुछ संकुचित्त भी थे। उससे हमें तात्पर्य नहीं, तात्पर्य यह है कि हम अपने जीवन और अपने स्थान को भी विचारें कि हमें यह वाक्य उच्चारण करना है कि नहीं। वास्तव में तुम्हारा वाक्य बहुत सुन्दर है। यहाँ तुमने ज्ञान और विज्ञान की चर्चा प्रकट की है। ज्ञान और विज्ञान तो परमपिता परमात्मा ने वेदों में निहित किया है। उनके ऊपर कोई विचार नहीं करता, यह द्वितीय बात है। जहाँ दर्शनों के, महर्षि कणाद, गौतम, कपिल मुनि के विचारों को लेते हैं, तो यह जितना भी विचार है, सब वेदों के अनन्तर है। इससे कोई ऐसा वाक्य नहीं।

अब आज का यह आदेश समाप्त होने जा रहा है। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने अपने ! बहुत सुन्दर विचार दिए। न प्रतीत आधुनिक काल में ऐसा होता है या नहीं, यह तो महानन्द जी जाने या प्रभु जाने। यदि ऐसा होता है तो यह समाज की और धर्म को

एक बड़ी हानि है। गो माता की जिसकी हमारे ऋषियों मुनियों ने बड़ी पूजा की है, बड़ा मान दिया है उसका इस प्रकार हनन होता है तो यह बड़ी धृष्टता है और एक बड़ा आश्चर्य है। गो तो मानव के जीवन का भूषण है। मानव के जीवन का जो जीवन है वह गो रूपी पशु है। उसको वेद ने, दर्शन ने अग्ने पशु कहा है। किस प्रकार का अग्ने? जैसे अग्नि की ऊर्ध्वागति होती है, इसी प्रकार जो अग्ने रूपी पशु है उनकी भी ऊर्ध्वागति है। जो मानव इनके सम्पर्क में, इनके दिए हुए दुग्ध को पान करता है, उनकी भी ऊर्ध्वागति बन जाती है। महर्षि वशिष्ठ क्या, महर्षि कणाद क्या, महर्षि भृगु क्या, इन सबके आश्रमों में कामधेनु गऊओं का वास रहता था। तो जहाँ ऋषि मुनियों ने इतनी इनकी पूजा की हो, यदि आज का संसार इन्हें बेटाइस प्रकार नष्ट कर ! रहा है, तो यह तो उसका दुर्भाग्य है। वास्तव में यह उस काल का दुर्भाग्य ही कहा जाता है जहाँ मानव अपने लाभ और हानि को नहीं विचारता। हमारे यहाँ रामराज्य में, महाराजा रघु ने, महाराजा दिलीप ने और राजा राम ने गो को राष्ट्रीय पशु माना। रावण के राष्ट्र में अन्य प्राणियों को नष्ट किया जाता था, जिसका यह परिणाम हुआ। आज का जो राष्ट्र है, जो गऊओं को भी नष्ट कर जाता है, उसका परिणाम क्या होगा, यह भगवान जाने। इसको प्रभु ही जान सकता है। इसे हम उच्चारण करें, तो हमारे योग्य वाक्य नहीं। वाक्य यह है, कि जैसा महानन्द जी ने कहा है वह बड़ा सुन्दर कहा है कि ब्राह्मणों को त्यागी और तपस्वी बन करके पूर्व की भांति, यहाँ राम जैसे राजा का चुनाव हो, यहाँ दिलीप जैसों का चुनाव हो, रघु इत्यादियों का चुनाव हो। बुद्धिमान राजा का चुनाव करना बुद्धिमानों का कर्त्तव्य है। बुद्धिमान, सदाचारी और तपस्वी राजा प्रजा को सुख पहुँचा सकता है अन्यथा सुख नहीं पहुँचा सकता है। तो अब मैं अपने आदेशों को समाप्त करने जा रहा हूँ। अब वेदों का पाठ होगा। वेद पाठ।

बी.सी.बी. पार्क, सरोजिनी नगर नई दिल्ली